ISSN 0975-4083

RESEARCH JOURNAL OF ARTS, MANAGEMENT & SOCIAL SCIENCES

HALF YEARLY, BILINGUAL (English/Hindi)

A REGISTERED REVIEWED/REFEREED RESEARCH JOURNAL
Indexed & Listed at: Ulrich's International Periodicals Directory©, ProQuest, U.S.A (Title Id: 715204)

अंक–XVIII-I   वर्ष–09   हिन्दी संस्करण   मार्च, 2018

UGC Sl. No. 2138
Journal No.48774
Impact Factor 2.996

JOURNAL OF
Centre for Research Studies
Rewa-486001 (M.P.) India
Registered under M.P. Society Registration Act, 1973, Reg. No. 1802,Year-1997
www.researchjournal.in

ISSN- 0975-4083

रिसर्च जरनल ऑफ आर्ट्स, मैनेजमेन्ट एण्ड सोशल साइन्सेस

अर्द्धवार्षिक, द्विभाषी (अंग्रेजी/हिन्दी)
पंजीकृत रिव्यूड/रेफर्ड रिसर्च जरनल
UGC Sl. No. 2138, Journal No.48774,
Impact Factor 2.996
Indexed & Listed at: Ulrich's International Periodicals Directory ©,
ProQuest, U.S.A. Title Id : 715204

अंक-XVIII-I	वर्ष-09	हिन्दी संस्करण	मार्च, 2018

प्रमुख सम्पादक
प्रोफेसर ब्रजगोपाल
प्रतिष्ठित भारतेन्दु हरिश्चन्द्र एवार्ड से सम्मानित

ऑनरेरी सम्पादक
डॉ. एस. अखिलेश
प्रतिष्ठित भारतेन्दु हरिश्चन्द्र एवार्ड तथा पं. गोविन्द वल्लभ पंत एवार्ड से सम्मानित

डॉ. संध्या शुक्ल
प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष, राजनीतिविज्ञान
शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा

सम्पादक
डॉ. गायत्री शुक्ल
संयुक्त निदेशक, सेन्टर फॉर रिसर्च स्टडीज, रीवा

सेन्टर फॉर रिसर्च स्टडीज, रीवा
की मुख्य शोध पत्रिका
म.प्र. सोसायटी रजिस्ट्रेशन एक्ट, 1973 के अंतर्गत पंजीकृत
पंजीयन क्रमांक 1802, सन् 1997
www.researchjournal.in

© सेन्टर फॉर रिसर्च स्टडीज

एक अंक रुपये 500.00

-सदस्यता शुल्क -		
अवधि	**व्यक्तिगत सदस्यता**	**संस्थागत सदस्यता**
पांच वर्ष	**2000.00**	**2500.00**
आजीवन (15 वर्ष)	**4500.00**	**5500.00**

सदस्यता राशि गायत्री पब्लिकेशन्स के स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया, ब्रांच–रीवा सिटी (आईएफएस कोड 0004667) के खाता क्रमांक 30016445112 में जमा की जा सकती है। नगद जमा की स्थिति में 75 रु. अतिरिक्त बैंक चार्ज जोड़ा जाय।

विषय विशेषज्ञ/परामर्श मण्डल

1.	डॉ. सत्येन्द्र शर्मा, रीवा	2.	डॉ. राजेश मिश्रा, लखनऊ
3.	डॉ. रामलला शुक्ल, रीवा	4.	डॉ. रामशंकर, जबलपुर
5.	डॉ. प्रियंकर उपाध्याय, वाराणसी	6.	डॉ. अरविन्द जोशी, वाराणसी
7.	डॉ. दीपक पाचपोर, रायपुर	8.	डॉ. दिवाकर शर्मा, सागर
9.	डॉ. शैलजा दुबे, भोपाल	10.	डॉ. डी. एस. राजपूत, सागर
11.	डॉ. प्रहलाद मिश्रा, जबलपुर	12.	डॉ. ए.के. श्रीवास्तव, रीवा
13.	डॉ. एन.पी. पाठक, रीवा	14.	डॉ. आनन्द कुमार, नई दिल्ली
15.	डॉ. जी. के शर्मा, उज्जैन	16.	डॉ. बी.पी. बडोला, धर्मशाला
17.	डॉ. सुनीता द्विवेदी, नईदिल्ली	18.	डॉ. ज्योति उपाध्याय, उज्जैन
19.	प्रो. अंजली बहुगुणा, श्रीनगर	20.	डॉ. के.के. शर्मा, रीवा
21.	डॉ. आर.एन. शर्मा, रीवा	22.	डॉ. सी.एम. शुक्ला, छतरपुर
23.	डॉ. अलका श्रीवास्तव, रायपुर	24.	डॉ. सीमा श्रीवास्तव, बालाघाट
25.	डॉ. आशीष सक्सेना, इलाहाबाद	26.	डॉ. पवन दुबे, कासगंज
27.	प्रो. प्रमिला श्रीवास्तव, कोटा	27.	डॉ. प्रमिला पूनिया, जयपुर

संपादकीय कार्यालय- **एस.एस.डी.-4, 'गोकुल'**
दुर्गा मंदिर के सामने, ए.जी. कॉलेज रोड,
विंध्य विहार कालोनी, रीवा-486001 (म.प्र.)
E-mail- researchjournal.journal@gmail.com
researchjournal97@gmail.com

प्रकाशक- **गायत्री पब्लिकेशन्स,**
रीवा- 486001 (म.प्र.)
www.researchjournal.in

रिसर्च जरनल में प्रस्तुत किये गये विचार और तथ्य लेखकों के हैं, जिनके विषय में सेन्टर फॉर रिसर्च स्टडीज, सम्पादक मण्डल, प्रकाशक तथा मुद्रक उत्तरदायी नहीं हैं। रिसर्च जरनल के सम्पादन एवं प्रकाशन में पूर्ण सावधानी रखी गई है, किन्तु किसी त्रुटि के लिए सेन्टर फॉर रिसर्च स्टडीज, सम्पादक मण्डल, प्रकाशक तथा मुद्रक उत्तरदायी नहीं हैं। सम्पादन का कार्य अव्यावसायिक और ऑनरेरी है। सभी विवादों का न्यायालय क्षेत्र, रीवा जिला रीवा (म.प्र) रहेगा।

सम्पादकीय

आज यह प्रश्न विचारणीय है कि भारत का बैंकिंग सेक्टर कहीं दीवालियापन की ओर तो नहीं बढ़ रहा है, क्योंकि बीते साढ़े पांच वर्षो में बैंकों की 367765 करोड़ की रकम आपसी समझौते के तहत डूब (राइट ऑफ) गई है, वहीं इससे कहीं ज्यादा रकम अब भी डूबते खाते में डालने की मजबूरी दिख रही है। भारतीय रिजर्व बैंक की ओर से जो जानकारी उपलब्ध कराई गई है, वह चौंकाने वाली है. आरबीआई के मुताबिक वर्ष 2012–13 से सितंबर 2017 तक सार्वजनिक और निजी क्षेत्रों के बैंकों ने आपसी समझौते सहित (इन्क्लूडिंग कंप्रोमाइज) के जरिए कुल 367765 करोड़ की रकम राइट ऑफ की है. इसमें से 27 सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक है, वहीं 22 निजी क्षेत्रों के बैंक है, जिन्होंने यह रकम राइट ऑफ की है। सामाजिक कार्यकर्ता चंद्रशेखर गौड़ को आरबीआई से मिले जवाब में बताया गया है कि बैंकों द्वारा राइट ऑफ की जाने वाली रकम लगातार बढ़ती जा रही है।

सिलसिलेवार देखें तो पता चलता है कि वर्ष 2012–13 में राइट ऑफ की गई रकम 32127 करोड़ थी, जो बढ़कर वर्ष 2016–17 में 103202 करोड़ रुपये हो गई। आरबीआई के आंकड़े बताते हैं कि वर्ष 2013–14 में 40870 करोड़, वर्ष 2014–15 में 56144 करोड़, वर्ष 2015–16 में 69210 करोड़ की राशि राइट ऑफ की गई। वहीं वर्ष 2017–18 के सिर्फ शुरुआती छह माह अप्रैल से सितंबर के बीच 66162 करोड़ की राशि आपसी समझौते के आधार पर राइट ऑफ की गई। आरबीआई द्वारा उपलब्ध कराए गए आंकड़े इस बात की गवाही दे रहे हैं कि सार्वजनिक क्षेत्र (पब्लिक सेक्टर) के बैंकों ने निजी क्षेत्र (प्राइवेट सेक्टर) के बैंकों के मुकाबले लगभग पांच गुना रकम राइट ऑफ की है। निजी क्षेत्र के बैंकों ने जहां साढ़े पांच साल में 64187 करोड़ की रकम राइट ऑफ की। वहीं, सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों ने इसी अवधि में 303578 करोड़ की राशि को राइट ऑफ किया है। बैंक खातों को चार श्रेणी में बांटते हैं. यह खाते कर्ज की किस्त जमा करने के आधार पर तय होते है। स्टैंडर्ड (तय समय पर किस्त देने वाला), सब स्टैंडर्ड (कुछ विलंब से किस्त अदा करने वाले), डाउट फुल (कई माह तक किस्त जमा न करने वाले) और लॉस (जिससे रकम की वापसी असंभव). कर्ज लेने वाला अपनी जो संपत्ति दिखाता है, उसके आँकलन के आधार पर कर्ज मुहैया कराया जाता है।

कई उद्योगों में सरकार की ओर से सब्सिडी भी दी जाती है। कई लोग अपनी संपत्ति का आँकलन बढ़ा–चढ़ाकर करा लेते हैं और उस आधार पर उन्हें ज्यादा राशि का कर्ज मंजूर हो जाता है, पहले तो वे सब्सिडी का फायदा लेते हैं, उसके बाद अपने को डिफाल्टर की श्रेणी में डलवाकर या लास खातों की श्रेणी में आ जाते हैं। इतना ही नहीं, उसके बाद जब संपत्ति का आँकलन कराते हैं तो वह पहले की तुलना में काफी कम निकलती है, इस स्थिति में बैंक के पास सिर्फ एक ही चारा बचता है कि वह संबंधित संपत्ति की नीलामी से मिलने वाली रकम को लेकर समझौता करे और शेष बची रकम को राइट ऑफ कर दे। कोई भी बैंक नहीं चाहता कि उसकी बैलेंस शीट में बकाया नजर आए। इसी के चलते राइट ऑफ की रकम बढ़ती जा रही है। ये स्थितियां बैंकिंग के लिए अच्छी नहीं हैं। जो रकम राइट ऑफ की

गई है, वह आम उपभोक्ता के हिस्से की है. इससे उपभोक्ताओं का बैंकों से भरोसा कम होगा। इतना ही नहीं, बैंकों के दिवालियेपन की ओर बढ़ने का यह एक बड़ा संकेत माना जा सकता है।

सरकार को इस संवेदनशील मुद्दे पर गंभीरता से विचार विमर्श करना चाहिए और विपक्ष को भी साथ लेकर कठोर कदम उठाना चाहिए।

रिसर्च जरनल ऑफ आर्ट्स, मैनेजमेन्ट एवं सोशल साइन्सेस का 18वाँ अंक प्रस्तुत करते हुए हमें अत्यंत प्रसन्नता हो रही है। इस अंक से जरनल के नियमित प्रकाशन के 9 वर्ष पूर्ण हो गये हैं। आशा है कि हमें आपका पूर्ववत सहयोग प्राप्त होता रहेगा।

प्रोफेसर ब्रजगोपाल शुक्ल
प्रमुख सम्पादक

अनुक्रमणिका

1. एस.आर.एल.एम. योजना से महिलाओं का सामाजिक एवं आर्थिक उत्थान (रीवा जिले के विशेष संदर्भ में) 09
अखिलेश शुक्ल

2. अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय के तृतीय एवं चतुर्थ श्रेणी कर्मचारियों की सामाजिक एवं आर्थिक समस्याएं 15
के.के. शर्मा
अनामिका शुक्ला

3. महिला सशक्तिकरण के अन्तर्गत महिलाओं का आर्थिक एवं सामाजिक विकास एक अध्ययन (दुर्ग जिले के संदर्भ में) 21
सविता

4. विवाह के बदलते प्रतिमानों का विश्लेषण (रीवा नगर के विशेष संदर्भ में) 26
मधुलिका श्रीवास्तव

5. अम्बेडकर और महिला सशक्तीकरण 35
सीमा श्रीवास्तव

6. गोड़ जनजाति की शैक्षणिक स्थिति एवं आरक्षण के प्रावधानों से होने वाले सामाजिक गतिशीलता का अध्ययन 39
ओमप्रकाश वर्मा

7. स्वामी विवेकानन्द जी के सपनों का भारत : स्त्रियों के संदर्भ में (कतिपय तथ्य) 46
प्रज्ञा मिश्रा

8. विकास की डगर पर जनजातीय समाज 49
मंजूलता कश्यप

9. छत्तीसगढ़ में धमतरी विकासखण्ड के कमार जनजाति की सामाजिक आर्थिक स्थिति का अध्ययन 58
डिकेश्वरी ध्रुव
अमरकान्त पाण्डेय

10. भारतीय राजनीति का अपराधीकरणः न्यायपालिका द्वारा संज्ञान एवं निवारण हेतु प्रयास 64
रामशंकर
चाँदनी नायक

11. गिरफ्तारी बनाम् मानवाधिकार 70
मनीष कुमार, दीप नारायण
आशिक कुमार

12.	भारत में राजनीतिक आधुनिकीकरण की स्थितिः एक विश्लेषणात्मक अध्ययन **बबलु दास**	84
13.	राजनीतिक सहभागिता : एक अवधारणात्मक विश्लेषण **नवल किशोर प्रसाद**	93
14.	आगरा शिखर वार्ता एवं बस कूटनीति : एक मूल्यांकन **सुनील कुमार मिश्रा**	104
15.	पंचायतीराज में महिलाओं की सहभागिता **मीनाक्षी विजय**	107
16.	भारत में केन्द्र राज्य सम्बन्ध **सन्ध्या शुक्ला**	120
17.	स्थानीय संस्कृति तथा दबाव समूह **मनोज कुमार सिन्हा**	124
18.	विश्व में भारतीय अर्थव्यवस्था तरक्की के पथ पर अग्रसर **कुमुद श्रीवास्तव**	137
19.	जनजातियों में राज्य विकास योजनाओं का प्रभाव **अनुराधा तिर्की** **राधा पाण्डेय**	147
20.	छत्तीसगढ़ के बालोद विकासखंड में सार्वजनिक वितरण प्रणाली : एक अध्ययन **ईश्वर लाल** **के. पद्मावती**	154
21.	छत्तीसगढ़ राज्य में सेवा क्षेत्र का विकास **रितु मारवाह** **तपेश चन्द्र गुप्ता**	158
22.	सशक्त ग्रामीण महिलायें तथा समग्र विकास **देवेन्द्र प्रसाद पाण्डेय** **शची गुप्ता**	164
23.	कृषि विकास में विपणन और भाण्डागार **मंजरी अवस्थी**	171
24.	ग्रामीण क्षेत्र में रोजगार की संभावना : परम्परागत उद्योगों के माध्यम से **विभा निगम**	176
25.	जी.एस.टी. : आवश्यकता एवं प्रभाव **अंजू आर्य**	180

26. चम्बल सिंचित क्षेत्र में भूमिगत जल निकास पद्धति की व्यवस्था का किसानों के आय प्रतिरूप पर प्रभाव 186
प्रमिला श्रीवास्तव

27. उद्योग जगत के सामाजिक उत्तरदायित्व : प्रावधान एवं योगदान 193
आर. सी. सिंह
पुरूषोत्तम सिंह

28. कुमाऊँ के गंगावली की नदियाँ : एक ऐतिहासिक एवं भौगोलिक अध्ययन 202
नीरज रुवाली
नरसिंह

29. विन्ध्य क्षेत्र में सोन घाटी का भौगोलिक ऐतिहासिक स्वरूप का दृश्यावलोकन 209
माया देवी

30. महाविद्यालय में कार्यरत पुस्तकालयीन कर्मियों एवं अधिकारियों के आपसी संबंध का अध्ययन 215
सूर्य प्रकाश शुक्ला
सविता देवी क्षत्रिय

31. बादामी गुफाओं के चित्रों का विश्लेषणात्मक अध्ययन 222
अमित सिंह
सुनीता

32. विष्णु पुराण में शिल्प एवं उद्योग का ऐतिहासिक अध्ययन 227
अदिति रत्नावत

33. गुप्तकालीन इतिहास के स्रोत 233
संगीता सिंह

34. गुप्तकालीन चित्रकला – अजन्ता के विशेष संदर्भ में 242
भूपेश

35. चंदेल कालीन जल संग्रहण स्थापत्य 248
चन्द्रमौलि शुक्ल

36. जयपुर राज्य में शिक्षा कार्य व जनचेतना 1920–1947 256
पिंकी यादव

37. नागार्जुन के उपन्यास में सामाजिक यथार्थ 262
सरिता नागवंशी

38. हिमांशु जोशी के साहित्य में आंचलिकता 266
रामनरेश जाटव

39. रस चिन्तन की अवधारणा 270
अरुणा पाठक

40. भारतीय संस्कृति में मृत्यु : एक महोत्सव 274
राजेश कुमार शुक्ल

41. प्रेमचंद के उपन्यासों में नारी पात्रों द्वारा किया गया संघर्ष 279
राजकुमार पाण्डेय

42. छत्तीसगढ़ी लोकगीतों में नारी भावना 284
जी.पी. जायसवाल

43. नारी सशक्तीकरण के विशेष संदर्भ में नागार्जुन के उपन्यासों का अध्ययन 291
इन्दिरा कुमारी

44. परम प्रकाश ने बुलाया 297
प्रज्ञा मिश्रा

Research Journal of Arts, Management and Social Sciences,
Vol. XVIII, Hindi.-I, Year IX, March, 2018
UGC Sl. No. 2138, Journal No.48774, Impact Factor 2.996

एस.आर.एल.एम. योजना से महिलाओं का सामाजिक एवं आर्थिक उत्थान (रीवा जिले के विशेष संदर्भ में)

* अखिलेश शुक्ल

सारांश- राज्य ग्रामीण आजीविका कमीशन अंतर्गत जिले के ग्रामीण बेरोजगार युवकों-युवतियों को प्रशिक्षण प्रदाय कर रोजगार-स्वरोजगार के अवसर उपलब्ध कराये जाते है एवं समय समय पर रोजगार मेले के माध्यम से रोजगार के अवसर प्रदाय किये जाते है। भारत सरकार, ग्रामीण विकास मंत्रालय द्वारा लिये गये निर्णय अनुरुप स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना के स्थान पर चरणबद्ध तरीके से राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन का क्रियान्वयन प्रदेश में वर्ष 2012-13 से किया जा रहा है। म.प्र. राज्य आजीविका फोरम के अन्तर्गत प्रदेश के 10 जिलों में चयनित सघन जिलों में 46 विकासखण्ड एवं 214 विकासखण्डों के लिये गैर-सघन रुप से मिशन का क्रियान्वयन किया जा रहा है।ग्रामीण गरीबों को स्वसहायता समूह के रूप में संगठित कर उन्हें सशक्त, स्थाई बनाने हेतु प्रेरित करना एवं उन्हें लाभप्रद रोजगार के अवसर उपलब्ध कराते हुए उनकी स्थाई आजीविका सुनिश्चित करना इस योजना का उद्देश्य है। रीवा जिले के हितग्राहियों को इस योजना से लाभ पहुँचा है।

मुख्य शब्द– राज्य, ग्रामीण, आजीविका, सामाजिक, आर्थिक उत्थान।

गरीब परिवारों के लिए परिसम्पतियों के सृजन तथा स्वरोजगार हेतु ग्रामीण विकास मंत्रालय, भारत सरकार के कार्यक्रमों की वर्ष 1980 में समेकित ग्रामीण विकास कार्यक्रम आई आरडीपी से शुरूआत की गई थी। इस संबंध में 1999 में एक महत्वपूर्ण बदलाव आया, जब आईआरडीपी को स्वर्णजयंती ग्राम स्वरोजगार योजना एसजीएसवाई के रूप में परिवर्तित किया गया गरीबों को स्व-सहायता समूहों एसएचजी के रूप में संगठित करके स्व-रोजगार उपलब्ध कराना, नई रणनीति का मुख्य अंग था। राज्यों में गरीबी के उन्मूलन हेतु गरीबों को एसएचजी में संगठित करने को एक महत्वपूर्ण आवश्यकता माना जा रहा है। 2.5 करोड़ ग्रामीण बीपीएल परिवारों को संगठित करके एसएचजी नेटवर्क में समाहित किया गया है।

एस.आर.एल.एम. में विभिन्न स्तरों पर समर्पित सहायता संरचनाओं तथा संगठनों के माध्यम से सभी ग्रामीण परिवारों तक पहुंच सुनिश्चित करने और उनकी क्षमता में वृद्धि वितीय स्थिति एवं स्व-प्रबंधित आत्मनिर्भर संगठनों, रोजगार लाभकारी स्व-रोजगार एवं

* सह प्राध्यापक, समाजशास्त्र, शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)

उद्यमों के माध्यम से गरीबी दूर करने का प्रयास किया गया है।

राज्य स्तर पर सहायक संरचना–

एस.आर.एल.एम. सामाजिक विकास तेज करने, संस्थाएं बनाने, क्षमता एवं कौशल निर्माण करने, वितीय समावेशन तथा वितीय सेवाओं तक पहुंच को सुविधागत बनाने, आजीविका और विभिन्न कार्यक्रमों, स्टेक होल्डरों के साथ तालमेल एवं साझेदारी का समर्थन करने के लिए राज्य, जिला, एवं उप जिला स्तरों पर समर्पित सक्रिय सहायक ईकाई के रूप में कार्य करता है।

राज्य स्तर पर राज्य ग्रामीण विकास मंत्री की अध्यक्षता वाली एस.आर.एल.एम. संबंधी सलाहकारी समिति है। इनमें सिविल सामाजिक संगठनों वितीय संस्थाओं का प्रतिनिधित्व करने वाले विख्यात उद्योग संघ एंव शिक्षाविद, विकास एवं आजीविका विशेषज्ञ और राज्य सरकार के प्रतिनिधि शामिल है। नीति निर्माता निकाय के रूप में एस. आर.एल.एम. के समर्ग दृष्टिकोण, निदेशन एवं प्राथमिकताएं निर्धारित करता है और समग्र प्रगति की समीक्षा करता है। सचिव, ग्रामीण विकास, ग्रामीण विकास मंत्रालय की अध्यक्षता वाली एस.आर.एल.एम. समन्वयन समिति एस.आर.एल.एम. सीसी एस.आर.एल. एम. की जांच करते हैं ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि कि इसके उद्देश्य समय पर पूरे कर लिए गए हैं, एस.आर.एल.एम. संबंधी अधिकार संपन्न समिति एस.आर.एल.एम. ईसी राज्य सदर्शी एवं कार्यान्वयन योजना तथा वार्षिक कार्य योजनाओं की समीक्षा एवं अनुमोदन करेगी और राज्य ग्रामीण आजीविका मिशनों को निधियां रिलीज करती है।

जिला स्तर पर सहायक संरचना–

एसआरएलएम की का डीएमएमएयूके एस.आर.एल.एम. के उद्देश्यों को पूरा करने और जिलें में एस.आर.एल.एम. के क्रिया कलापों कों कार्यान्वित करने के लिए जिम्मेदार होती है। डीआरडीए से सपसंबद्ध डीएएमएमयू क्षेत्र संरचनाओ के लिए सुविधा प्रदाता एवं सहायक ईकाई होती है। यह जिला प्रशासन लाइन विभागों बैंकों, गैर सरकारी संगठनों और निगमित एजेसियों के साथ विचार विमर्श करती है और तालमेल स्थापित करती है।

अध्ययन का उद्देश्य–

महिला स्व सहायता समूहों की गुणवत्ता पूर्ण गठन कर समूह सदस्यों को सक्षम स्वरूप देना, ताकि अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति कर अपने आर्थिक एवं सामाजिक स्तर में वृद्धि कर सके एवं महिलाओं के सामाजिक-आर्थिक उत्थान का पता लगाना है।

अध्ययन का क्षेत्र– इस शोध पत्र का अध्ययन क्षेत्र रीवा जिला है।

तथ्यों का विश्लेषण–

अध्ययन के लिए साक्षात्कार अनुसूची का प्रयोग करते हुए 50 परिवारों का अध्ययन करके वर्तमान में ग्रामीण विकास में महिलाओं द्वारा एस.आर.एल.एम. की भूमिका के संबंध में जो परिणाम प्राप्त हुआ है वह निम्न तालिकाओं में दिया गया है।

1. स्व-सहायता समूह से जुड़ने के लिए आपको किस ने प्रेरित किया?

तालिका क्रमांक-1

क्र.	समूह से जुड़ने की प्रेरणा कहां से मिली	आवृत्ति	प्रतिशत (%)
01	एस.आर.एल.एम. के सदस्यों से	30	60%
02	गांव वालों से	10	20%
03	स्वयं	5	10%
04	समूह के सदस्यों से	5	10%
	योग–	50	100%

उक्त तालिका से यह स्पष्ट होता है कि 60 प्रतिशत महिलाओं ने यह बताया कि एस.आर.एल.एम. के सदस्यों ने उन्हें प्रेरित किया। 20 प्रतिशत महिलाओं ने बताया कि गॉव के लोगो ने, 10 प्रतिशत स्वयं जागरूक होकर तथा 10 प्रतिशत ने समूह के सदस्यों के कहने पर इस योजना का लाभ लिया। यहां यह उल्लेखनीय है कि 60 प्रतिशत महिलायें एस.आर.एल.एम. के सदस्यों के कारण इस योजना से जुड़ीं। यह सिद्ध करता है कि एस.आर.एल.एम. के सदस्य जागरूक हैं।

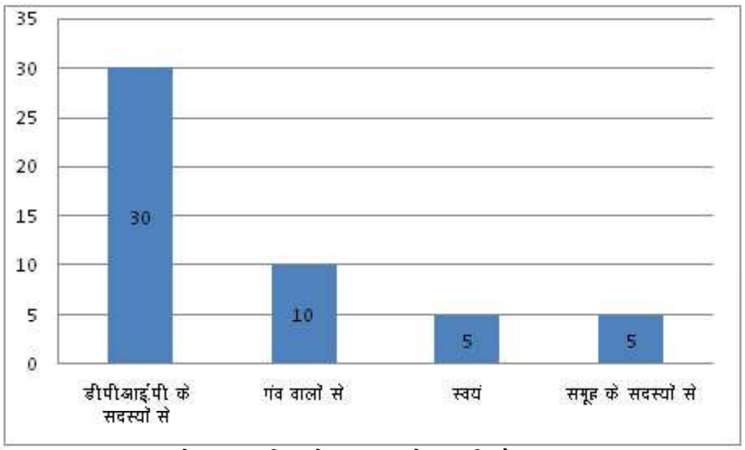

2. स्व-सहायता समूह मे आप कितने समय से जुड़ी है?

तलिका क्रमांक-2

क्र.	समूह से जुड़े हुऐ कितना समय हुआ	आवृत्ति	प्रतिशत (%)
01	2 वर्ष	10	20%
02	1 वर्ष	30	60%
03	6 माह	8	16%
04	अभी–अभी	2	4%
	योग–	50	100%

उक्त तालिका से यह स्पष्ट होता है कि 20 प्रतिशत महिलायें 2 वर्ष से, 60 प्रतिशत महिलायें 1 वर्ष से, 16 प्रतिशत महिलायें 6 माह से तथा 4 प्रतिशत महिलायें हाल ही में इस योजना से जुड़ी हैं। यह तथ्य इस बात की ओर इंगित करते हैं कि समूह में महिलाओं की निरन्तरता बनी हुई है।

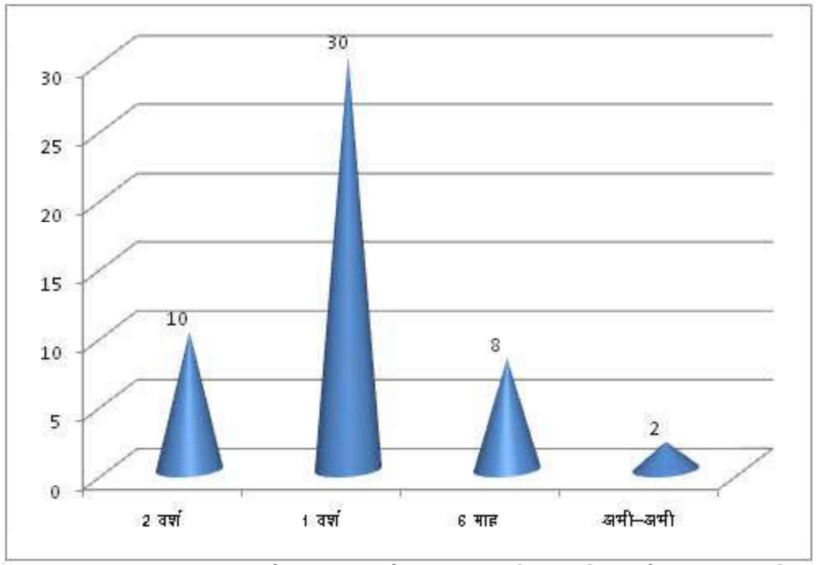

3. क्या एस.आर.एल.एम. के माध्यम से आप ग्रामीण महिलाओं का सामाजिक एवं आर्थिक उत्थान हुआ है?

तलिका क्रमांक-3

क्र.	**स्मूह से जुड़कर लाभ हुआ है**	**आवृत्ति**	**प्रतिशत (%)**
01	हॉ	35	70%
02	नही	10	20%
03	कुछ कह नही सकते	5	10%
योग–		**50**	**100%**

70 प्रतिशत महिलायें यह स्वीकार करती हैं कि इस योजना से उनका सामाजिक, आर्थिक उत्थान हुआ है जबकि 20 प्रतिशत महिलायें यह नहीं मानती। 10 प्रतिशत महिलायें इस सम्बन्ध में कुछ नहीं कहती हैं।

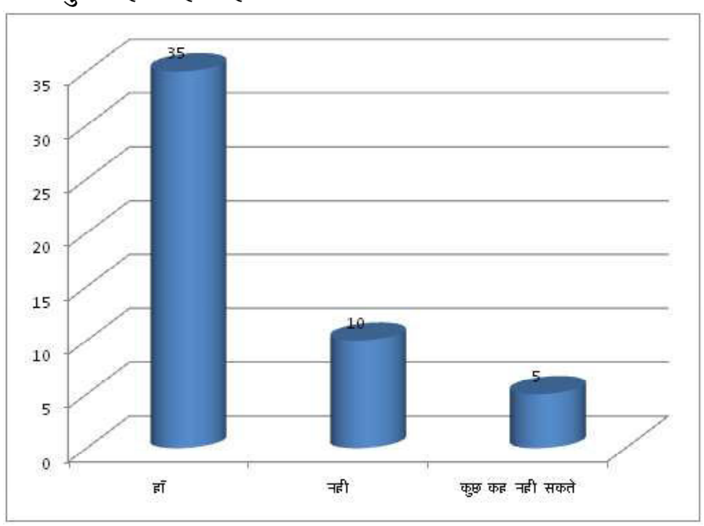

4. एस.आर.एल.एम. के पहले आप लोग कर्ज कहां से पाते थे?

तलिका क्रमांक-4

क्र.	**कर्ज प्राप्त करने की स्थिति पूर्व में**	**आवृत्ति**	**प्रतिशत (%)**
01	साहूकार	30	60%
02	बैंक	10	20%
03	स्व–सहायता समूह	5	10%
04	अन्य	5	10%
	योग–	**50**	**100%**

यहाँ यह तथ्य सामने आया है कि इस योजना से जुड़ने से पहले 60 प्रतिशत महिलायें साहूकारों से, 20 प्रतिशत महिलायें बैंक से, 10 प्रतिशत महिलायें स्व सहायता समूह से 10 प्रतिशत महिलायें अन्य साधनों से कर्ज प्राप्त करती थीं। यहाँ यह उल्लेखनीय कि इस योजना से जुड़ने के पश्चात् 60 प्रतिशत महिलायें साहूकारों के चंगुल से मुक्त हुई हैं।

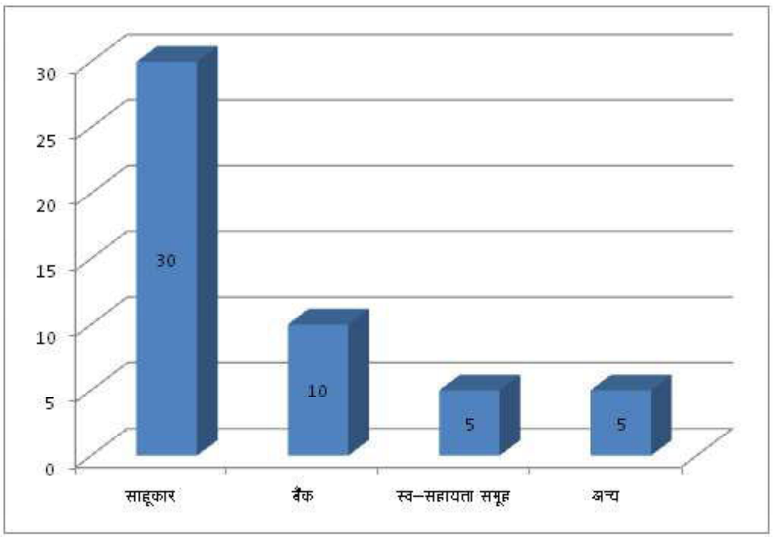

5. वर्तमान आप लोग कर्ज कहां से पाते हैं?

तलिका क्रमांक-5

क्र.	**कर्ज प्राप्त करने की स्थिति वर्तमान में**	**आवृत्ति**	**प्रतिशत (%)**
01	साहूकार	5	**10%**
02	बैंक	10	**20%**
03	स्व–सहायता समूह	30	**60%**
04	अन्य	5	**10%**
	योग–	**50**	**100%**

यह तालिका वर्तमान में कर्ज लेकर रोजगार करने की स्थिति को स्पष्ट करती है।

जहाँ पहले 60 प्रतिशत महिलायें साहूकारों से कर्ज लेती थी वहां अब मात्र 10 प्रतिशत महिलायें ही साहूकारों से कर्ज ले रही हैं। बैंकों से कर्ज लेने का प्रतिशत भी बढ़ा है। स्व-सहायता समूह मजबूत हुये हैं और 60 प्रतिशत महिलायें अब वहां से कर्ज लेने लगी हैं।

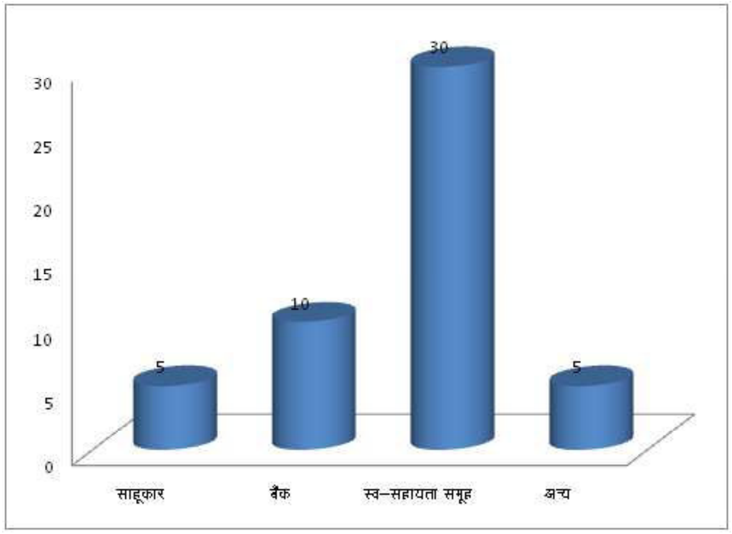

निष्कर्ष– उपरोक्त विषय का अध्ययन करने के बाद यह निष्कर्ष निकलता है, कि एस. आर.एल. योजना से महिलाओं में सामाजिक जागरूकता आयी है और उनका आर्थिक उत्थान भी हुआ है।

ग्रामीण विकास में एस.आर.एल.एम. परियोजना का क्या योगदान है। इसकी जानकारी भी हमने ग्रामीण महिलाओं के द्वारा प्राप्त की गई है कि वह इस योजना से कितना लाभांवित हो रही है एवं उनकी सामाजिक एवं आर्थिक स्तर ऊंचा उठा है इन सभी का अध्ययन किया गया है एवं उनके जीवन में कितना सुधार पहले की अपेक्षा हुआ इन सभी का अध्ययन किया गया है जिससे यह स्पष्ट होता है कि ग्रामीण महिलाओं के जीवन सामाजिक और आर्थिक विकास हो रहा है।

सुझाव–

सरकार द्वारा जितनी भी योजनाएं ग्रामीण विकास के लिए चलाई जा रही है उनका सही समय पर क्रियान्वयन हो जिससे गांव के समस्त महिलाओं को अधिक से अधिक लाभ प्राप्त हो सके एवं गांव की प्रत्येक महिलाओं को शिक्षा संबंधी सभी गतिविधियों के बारे जानकारी प्रदान की जाए एवं महिलाओं को ज्यादा से ज्यादा अच्छी सुविधाओं की व्यवस्था करनी चाहिए।

===============

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची–

1. आहूजा राज, भारतीय समाज, रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर, 2016
2. क्रियान्वयन मार्गदर्शिका 2016
3. ग्राम उत्थान समिति मार्गदर्शिका 2017
4. एस.आर.एल.एम. परियोजना का प्रतिवेदन।
5. पंचायत एवं ग्रामीण विकास म.प्र. शासन से प्राप्त जानकारी

Research Journal of Arts, Management and Social Sciences,
Vol. XVIII, Hindi.-I, Year IX, March, 2018
UGC Sl. No. 2138, Journal No.48774, Impact Factor 2.996

अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय के तृतीय एवं चतुर्थ श्रेणी कर्मचारियों की सामाजिक एवं आर्थिक समस्याएं

* के.के. शर्मा
** अनामिका शुक्ला

सारांश– प्रस्तुत शोधपत्र अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय के तृतीय एवं चतुर्थ श्रेणी कर्मचारियों की आर्थिक-सामाजिक समस्याओं का एक अध्ययन है। कर्मचारी जो विश्वविद्यालय रीवा के समस्त योजनाओं के सफल संचालन में अहम भूमिका निभाते है। विश्वविद्यालयीन कर्मचारी भी भारतीय सामाजिक व्यवस्था का एक अंग होने के कारण विविध समस्याओं से घिरे हुए हैं। चतुर्थ श्रेणी कर्मचारी जटिल आर्थिक समस्याओं से घिरे है। ऋणग्रस्तता का बोझ भी है, तृतीय श्रेणी कर्मचारियों की परिस्थिति समाज मे सामान्य से भी कम है। कर्मचारी किसी संस्था या कार्यालय के रीढ़ के समान होते है। यदि कर्मचारी कार्य कुशल कर्तव्यनिष्ठ हैं तो उस संस्था का विकास अनवरत होता रहेगा। कर्मचारियों कि वेतन व्यवस्था, ऋणग्रस्तता, कार्य के घण्टे की ओर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है।

मुख्य शब्द– कर्मचारी, ऋणग्रस्तता, भीषण, सम्पादन।

अवधारणात्मक विवेचन– वस्तुतः कर्मचारी शब्द बहुत व्यापक अर्थ रखता है। मध्यप्रदेश विश्वविद्यालय अधिनियम[1] 1973 की धारा 4 में वर्णित कर्मचारी से अभिप्रेत है कि विश्वविद्यालय द्वारा नियुक्त किया गया विश्वविद्यालय का अध्यापक तथा कर्मचारी वृन्द आता है। किन्तु कर्मचारी से तात्पर्य गैर शिक्षकीय कर्मचारी से है। कर्मचारी विश्वविद्यालय के प्रमुख अंग हैं। विश्वविद्यालय के विकास में कर्मचारियों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। वर्तमान में कर्मचारियों के समक्ष सामाजिक आर्थिक समस्या, रोजगार सम्बन्धी दशाओं की समस्या कार्यशील घण्टों की समस्या, संस्थान के बाहर एवं भीतर सफाई की समस्या, आवास की समस्या, कल्याण एवं सुरक्षा आदि महत्वपूर्ण है। कर्मचारियों को समय-समय पर प्रशिक्षण की व्यवस्था भी की जानी चाहिए जिससे उन्हे नई-नई जानकारियाँ सीखने को मिले जिससे वे कार्य करने में अपने को ज्यादा से ज्यादा ऊर्जावान महसूस करे। कर्मचारी संगठन वर्ष में अधिवेशन कराए और अधिवेशन माध्यम से सेमींनार एवं संगोष्ठी का आयोजन किया जाय और अन्य विश्वविद्यालयों के कर्मचारियों को इसमें सम्मिलित कर उनके विचारों को सुनकर लाभ उठायें।

मेरिल तथा एल्डरिज के अनुसार सामाजिक समस्याए उस समय उत्पन्न होती है जब गतिहीनता के कारण काफी संख्या में लोग अपने-अपने निर्धारित भूमिकाओं के अनुसार

* प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष, समाजशास्त्र, शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)
** शोधार्थी, समाजशास्त्र, शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)

कार्य करने में असमर्थ होते है। कर्मचारियों की समस्याओं के कुछ पहलू भी होते है जिनकी उपेक्षा नही की जा सकती वेतन का प्रश्न न सिर्फ संस्थान के किसी कार्य के मूल्य को निर्धारित करने से संबंधित होना चाहिए वल्कि मौजूद कर्मचारी के जीवन स्तर से जुड़ा होना चाहिए। हमे न केवल यह दृष्टिकोण रखना चाहिए किसी कर्मचारी की आय क्या है वरन् यह कि ध्यान रखना आवश्यक है कि अन्य कर्मचारी क्या वेतन प्राप्त कर रहे है। कार्य संतुष्टि व स्वास्थ्यकर्मचारी प्रशासन से संबंध सिर्फ वेतन एवं काम के स्थान के भौतिक वातावरण पर निर्भर नही होते वरन् ऐसी दूसरी बातो पर भी निर्भर होते है जैसे कार्य के लिये कर्मचारियों की रुचि तथा अरुचि, कार्य की जगह दोस्ती वाला वातावरण, एक व्यक्ति के रूप में कर्मचारियों के महत्व को स्वीकार किया जाना चाहिए।

पाल लैण्डिस के अनसार- ''सामाजिक समस्याएं व्यक्तियों के कल्याण संबंधी अपूर्ण अकांक्षाएं है''।[2]

विश्वविद्यालय कर्मचारियों का ज्यादा से ज्यादा समय कार्यालय में बीतता हैं अतः वह सामाजिक दायित्वो को पूर्ण नही कर पाते संयुक्त परिवार के विघटन के साथ समूह वाद की भावना समाप्त होती जा रही है और इसके साथ ही साथ व्यक्तिवादी भावना का विकास होता जा रहा है। जिससे कर्मचारियों के पारस्परिक संबंधो में घनिष्टता का अभाव है।

देश में जिस रफ्तार से महगाई बढ़ रही है उस तुलना में कर्मचारियों का वेतन नही बढ़ाया जा रहा जिससे इस भीषण मंहगाई में उन्हे काफी अर्थिक कठिनाईयों का सामना करना पड़ता हैं। आर्थिक दृष्टि से कम आय होने के कारण उनकी आर्थिक समस्याएं जटिल बनी रहती है। कर्मचारी अपने बच्चो का पठन पाठन एवं रहन-सहन की समुचित व्यवस्था नही कर पाते। आय मे सन्तुलन न होने के कारण कर्मचारी ऋणग्रस्त होते जा रहे है। उन्हे अच्छी आवास व्यवस्था नही मिल पाती, चिकित्सा भत्ता भी अपर्याप्त है इन विपरीत परिस्थितियों में कर्मचारी वर्ग संघर्ष कर रहे हैं।

शोध का उद्देश्य-

शोध का उद्देश्य कर्मचारियो की आर्थिक सामाजिक समस्याओं को जानना है। शोध के उद्देश्य निम्न हैं-

* कर्मचारी विश्वविद्यालय कार्य संपादन के साथ सामाजिक दायित्वो का निर्वहन कर पाते है या नही
* आर्थिक स्थिति तृतीय चतुर्थ श्रेणी कर्मचारियों को कितना प्रभावित कर रही हैं।
* क्या कर्मचारी ऋणग्रस्त है।
* वह अपने वेतन से संतुष्ट है या नही।
* कार्यशील घंटो के संबंध में जानकारी प्राप्त करना।

पूर्ववर्ती अध्ययन का विश्लेषण-

पूर्ववर्ती शोध कार्यो का अध्ययन शोधविधि का चयन प्राप्त निष्कर्ष समस्या एवं सुझाव शोध कार्य को मार्गदर्शित करते है। अध्ययन का अत्यधिक स्पष्ट सत्य एवं प्रभावी बनाने में पूर्ववर्ती शोध कार्य के अध्ययन की भूमिका अतिविशिष्ट एवं महत्वपूर्ण होती है। प्रस्तुत शोधपत्र का अध्ययन डॉ. शेषमणि शुक्ल 'मध्य प्रदेश के विश्वविद्यालयों के कर्मचारियों का एक समाजशास्त्रीय अध्ययन'(अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय रीवा के

संदर्भ में 1995) डॉ.शेषमणि शुक्ला ने अपने अध्ययन में कर्मचारियों की पारिवारिक, वैवाहिक, आर्थिक, सामाजिक समस्याओं के बारे में विधिवत अध्ययन किया है। उन्होनें कर्मचारियों की समस्याओं का विश्लेषण किया और उनकी समस्याओं के समाधान में सुझाव भी प्रस्तुत किया है साथ ही छात्र अधिकारी एवं कर्मचारियों के संबंधो का अच्छी तरह से विश्लेषण किया है।

डॉ. श्रीमती रविन्दर कौर ने 'पुस्तकालय में कार्यरत महिला कर्मचारियों का समाजशास्त्रीय अध्ययन' (मध्यप्रदेश के विश्वविद्यालयों एवं महाविद्यालयों के संदर्भ में 1997) किया है। इन्होने पुस्तकालय में कार्यरत महिला कर्मचारियों की सामाजिक स्थिति और उनकी सामाजिक समस्याओं का तथ्यात्मक विश्लेषण किया है। कार्य के समय उनको कौन-कौन सी समस्याएं आती है इसका भी उल्लेख उन्होने अपने अध्ययन में किया है।

डॉ.राजमणि मिश्र 'रीवा जिले के स्वास्थ्य कर्मचारियों का एक समाजशास्त्रीय अध्ययन' 1995 मे किया है उन्होने अपने अध्ययन में पुरुष एवं महिला स्वास्थ्य कर्मचारियों को सम्मिलित किया है उन्होने अपने अध्ययन में स्वास्थ्य कर्मचारियों के पारिवारिक, वैवाहिक, सामाजिक, आर्थिक एवं कार्य के समय आने वाली कठिनाईयों की विधिवत व्याख्या की है।

अध्ययन क्षेत्र एवं अध्ययन पद्धति-

अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय की स्थापना सन् 1968 मे हुई है। विश्वविद्यालय में वर्तमान समय मे कर्मचारी अधिकारी की संख्या 1000 है विश्वविद्यालय में कई विषयों मे स्नातकोत्तर कक्षाएं संचालित होती है और बहुत से स्व-वित्तीय कोर्स भी संचालित है। मैने अपने अध्ययन में अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय के तृतीय एवं चतुर्थ श्रेणी कर्मचारियों के सामाजिक एवं आर्थिक समस्याओं का चयन किया है। 'पद्धति से हमारा तात्पर्य उस अध्ययन विधि से है जिससे विज्ञान अनुभव सिद्ध ज्ञान की प्राप्ति के लिये अपने आधारभूत प्रणालियों को व्यवहार में लाता है तथा उपकरणो एवं प्रविधियों का प्रयोग करता है'।

निदर्शन पद्धति के माध्यम से तृतीय एवं चतुर्थ श्रेणी के कुल कर्मचारियों की संख्या 500 है जिसमें से निदर्शन के सविचार पद्धति से 50 कर्मचारियों का चुनाव किया है जो समस्त का प्रतिनिधित्व करते है। प्रस्तुत शोध कार्य करने के लिये प्रश्नावली, अवलोकन, साक्षात्कार अनुसूची का प्रयोग करके उत्तदाताओं के पास जाकर संबंधित तथ्यों को प्राप्त किया गया है। तथ्यों का विश्लेषण वर्णात्मक एवं विश्लेषणात्मक दोनों है। प्राथमिक एवं द्वितीयक स्रोतो का भी प्रयोग किया गया है तथा तथ्यों के संकलन के बाद साक्षात्कार अनुसूची का प्रयोग करके विश्लेषण किया गया है।

तथ्यों का विश्लेषणात्मक अध्ययन-

प्रस्तुत शोध अध्ययन में साक्षात्कार अनुसूची के द्वारा उत्तरदाताओं से प्रश्न पूछे गये है, उत्तरदाताओं से जो जानकारी प्राप्त हुई है उसका विश्लेषण निम्नलिखित तालिकाओं में किया जा रहा है। जिससे निष्कर्ष निकालने में कठिनाई न हो। तथ्यों का विश्लेषण इस प्रकार है -

सारणी क्र. 1

सामाजिक दायित्वों का निर्वहन

क्र.	दायित्व का निर्वहन	संख्या	प्रतिशत
1	हाँ	42	84
2	नही	8	16
	योग	**50**	**100**

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि सामाजिक दायित्व निर्वहन में 84 प्रतिशत कर्मचारी कार्यालयीन कार्यों के साथ-साथ अपने सामाजिक दायित्वों का निर्वहन कर रहे हैं जो अपने कार्य के व्यस्तता के बावजूद भी सामाजिक कार्यक्रमों में सम्मिलित होते रहते है और सामाजिक कार्यक्रमों के लिये समय निकालते है। जबकि 16 प्रतिशत कर्मचारी जो सामाजिक दायित्वो को पूरा करने में अपने को समर्थ नही पाते है वे अपने कार्यालयीन कार्यो में ज्यादा व्यस्तता का कारण सामाजिक दायित्वो के निर्वहन के लिये बाधक मानते है। कर्मचारियों की यह बाध्यता उनके कार्य को प्रभावित करती है जब वह समाज के अपेक्षाओं को पूरा करने में असमर्थ होते है तब वह तनाव व क्रोध अपने साथी कर्मचारियों अधिकारी तथा शिक्षक छात्रों के ऊपर उतारता है जिससे कभी-कभी वह स्वयं का नुकसान कर बैठते है।

सारणी क्र. 2

आर्थिक स्थिति के संबंध में विवरण

क्र.	विवरण	संख्या	प्रतिशत
1	उच्च	10	20
2	सामान्य	25	50
3	निम्न	15	30
	योग	**50**	**100**

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि उच्च आर्थिक स्थिति बाले कर्मचारी का प्रतिशत 20 है। सामान्य आर्थिक स्थिति बाले 50 प्रतिशत है जबकि निम्न आर्थिक स्थिति वाले कर्मचारी 30 प्रतिशत है अतः कहा जा सकता है कि कर्मचारियों की आर्थिक स्थिति बहुत अच्छी नही है जिसके कारण वे अपने बच्चों को अच्छी शिक्षा नही दे पाते, अच्छे हास्पिटल में दवाई नही करा पाते है। कर्ज के बोझ से दबे रहते है।

सारणी क्र. 3

ऋणग्रस्तता का विवरण

क्र.	विवरण	संख्या	प्रतिशत
1	ऋणग्रस्त है	38	76
2	ऋणग्रस्त नही है	12	24
	योग	**50**	**100**

ऋणग्रस्तता के संबंध में जो तथ्य प्राप्त हुए उनमें ऋणग्रस्त कर्मचारी 76 प्रतिशत है जबकि 24 प्रतिशत कर्मचारी ऋणग्रस्त नही है जो कर्मचारी ऋणग्रस्त है वे अपने बच्चों के

शिक्षा के लिये, उनके स्वास्थ्य के लिये, बच्चों के विवाह के लिये, उनके सस्कारों के लिये ऋण लेते रहते है जिससे उनकी कमाई का अधिकांश भाग ऋण को चुकाने में चला जाता है। कर्मचारियों का वेतन उसकी मूलभूत आवश्यकताओं को पूरा करने के लिये अपर्याप्त होता है जिसका प्रभाव उनके व्यक्तिगत जीवन पर पड़ता है वह अपने इच्छाओं को दबाकर रखते है पारिवारिक कलह मानसिक तनाव और कई बीमारियों का जन्म होता है।

सारणी क्र. 4

वेतन से संतुष्टी संबंधी विवरण

क्र.	विवरण	संख्या	प्रतिशत
1	संतुष्ट नही	40	80
2	संतुष्ट है	10	20
	योग	**50**	**100**

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि 80 प्रतिशत कर्मचारी वेतन व्यवस्था से संतुष्ट नही है। उनका कहना है कि इससे बच्चो की फीस, परिवार के सदस्यों के बीमारी की स्थिति में सुधार करनें के लिये पर्याप्त वेतन नहीं मिलता, जिससे ऋण लेना पड़ता है जबकि 20 प्रतिशत कर्मचारी वेतन व्यवस्था से संतुष्ट है ऐसे कर्मचारी अपने कामों में ज्यादा रुचि नही लेते है इनको कार्य की अवहेलना पत्र अधिकारियों द्वारा मिलता रहता है।

सारणी क्र. 5

कार्यशील घंटो के विषय में विवरण

क्र.	विवरण	संख्या	प्रतिशत
1	संतुष्ट नही है	42	84
2	संतुष्ट है	8	16
	योग	**50**	**100**

उपरोक्त तालिका से कर्मचारियों की कार्यशील घण्टो के प्रति क्या विचार है उसकी जानकारी प्राप्त हुई जिसमें 84 प्रतिशत कर्मचारी संतुष्ट नही पाये गए जबकि 16 प्रतिशत कर्मचारी अपने कार्य के घण्टे से संतुष्ट पाये गयें। विश्वविद्यालयीन कर्मचारी कार्यालयीन समय से ज्यादा समय तक कार्यों को पूरा करने में लगा रहता है जिससे तनाव बढ़ता है उनका स्वास्थ्य भी प्रभावित होता है।

निष्कर्ष–

तथ्यों के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय के तृतीय एवं चतुर्थ श्रेणी कर्मचारियों के आर्थिक एवं सामाजिक समस्याओं के अध्ययन से जो निष्कर्ष निकला उसमें 84 प्रतिशत कर्मचारी कार्यालयीन कार्यों के साथ-साथ अपने सामाजिक दायित्वों का निर्वहन कर रहे हैं, जबकि 16 प्रतिशत कर्मचारी जो सामाजिक दायित्वो को पूरा करने में अपने को समर्थ नही पाते है। आर्थिक स्थिति के विवरण से ज्ञात हुआ कि उच्च आर्थिक स्थिति वाले कर्मचारी का प्रतिशत 20 है सामान्य आर्थिक स्थिति बाले 50 प्रतिशत है जबकि निम्न आर्थिक स्थिति बाले कर्मचारी 30 प्रतिशत है। ऋणग्रस्तता के संबंध में जो तथ्य प्राप्त हुए उनमें ऋणग्रस्त कर्मचारी 76 प्रतिशत है जबकि 24 प्रतिशत कर्मचारी ऋणग्रस्त नही है। 80 प्रतिशत कर्मचारी वेतन व्यवस्था से संतुष्ट नही

है, जबकि 20 प्रतिशत कर्मचारी वेतन व्यवस्था से संतुष्ट है। कार्यशील घण्टों के प्रति विचार से जानकारी प्राप्त हुई जिसमें 84 प्रतिशत कर्मचारी संतुष्ट नही पाये गए, जबकि 16 प्रतिशत कर्मचारी अपने कार्य के घण्टे से संतुष्ट पाये गयें।

तृतीय श्रेणी कर्मचारी अपने स्तर को ऊँचा उठाने के होड़ में ऋणग्रस्त हो जाते है उनका वेतन अच्छा है पर समाज के देखादेखी बच्चों के बेहतर से बेहतर शिक्षा देने तथा नवीन आधुनिकता भरे समाज में स्यवं की इच्छा बढ़ जाती है जिससे ऋणग्रस्तता आड़े आती है। चतुर्थ श्रेणी कर्मचारी विकट आर्थिक संकट से गुजर रहे हैं इनका वेतन उपयुक्त नही है। वह अपने बच्चों को अच्छी शिक्षा नही दे पा रहे महगाई दिन व दिन बढ़ती जा रही है ज्यादातर कर्मचारी अच्छी आवास व्यवस्था भी नही पाते जिससे स्वास्थ्य का स्तर भी गिर रहा है। कर्मचारी अपने पुत्र, पुत्रियों के विवाह आदि कार्यक्रम के सम्पादन तथा स्वास्थ्य संबंधी कारणों से अधिक ऋणग्रस्त है।

सुझाव–

1. कर्मचारियों में नैतिक मूल्यों का विकास करना चाहिये।
2. कर्मचारियों के वेतन के स्तर को बढ़ाना चाहिए जिससे उनके आर्थिक स्तर में वृद्धि हो सके।
3. कर्मचारियों को पर्याप्त आवास सुविधा विश्वविद्यालय परिसर में उपलब्ध कराना चाहिये।
4. चिकित्सा भत्ता पर्याप्त प्रतिमाह प्रदान किया जाना चाहिये।
5. समस्त विश्वविद्यालयों में समान वर्ग के कर्मचारियों को समान वेतन मान एवं सुविधाएं प्रदान की जानी चाहिये।
6. कर्मचारियों के बच्चों की शिक्षा एवं रोजगार के अवसर उपलब्ध कराने चाहिए।

==============

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची–

1. विश्वविद्यालय अधिनियम 1973
2. पाल लैण्डिस- सोशल प्राब्लम पेज -3
3. डॉ.डी.एस.बघेल -भारतीय सामाजिक समस्याएँ।
4. मर्टिनडेल और मोनोकसी ऐलीमेन्टस ऑफ सोशियोलॉजी।
5. कर्मचारियों की वरिष्ठता सूची वर्ष 2017
6. डॉ.डी.एस.बघेल सामाजिक अनुसंधान।

Research Journal of Arts, Management and Social Sciences,
Vol. XVIII, Hindi.-I, Year IX, March, 2018
UGC Sl. No. 2138, Journal No.48774, Impact Factor 2.996

महिला सशक्तिकरण के अन्तर्गत महिलाओं का आर्थिक एवं सामाजिक विकास एक अध्ययन (दुर्ग जिले के संदर्भ में)

* सविता

सारांश– *दुर्ग जिले में महिलाओं के आर्थिक एवं सामाजिक विकास से संबंधित अनेकों कार्यक्रम संचालित है अध्ययन में इन पांच विकास कार्यक्रमों का समावेश किया गया है जिससे महिलाओं का आर्थिक और सामाजिक विकास हो सके अतः निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि स्व सहायता समूह में प्रतिशत परिवर्तन, आगंनबाड़ी कार्यक्रम में प्रतिशत परिर्वतन, महिला सरपंचों की संख्या, मध्यान्ह भोजन कार्यक्रम प्रतिशत परिर्वतन से अधिक है अतः महिलाओं के विकास से संबंधित दुर्ग में जो रोजगारपरक कार्यक्रम चलाये जा रहें है उससे महिलाओं के आर्थिक एवं सामाजिक स्तर में सुधार हो रहा है अतः मध्यान्ह भोजन में महिलाओं की संख्या कम है क्योकि मध्यान्ह भोजन को छोड़कर सभी विकास योजना में प्रतिशत परिवर्तन 100 प्रतिशत से अधिक है मध्यान्ह भोजन में प्रतिशत परिवर्तन कम होने का मुख्य कारण स्कूली बच्चों को साफ सुथरा और सन्तुलित आहार युक्त भोजन का अभाव पाया गया है।*

प्रस्तावना– महिला सशक्तिकरण[1] की पहल 1985 में अर्न्तराष्ट्रीय सम्मेलन नैरोबी में की गई थी। वास्तव में यदि विचार किया जाये तो महिला सशक्तिकरण का सामान्य अर्थ निकलता है कि महिला को शक्ति सम्पन्न बनाना। परन्तु व्यापकता में इसका अर्थ बड़ा ही गूढ़ है। सशक्ति का अभिप्राय सत्ता प्रतिष्ठानों में महिलाओं की साझेदारी से है। निर्णय लेने की क्षमता सशक्तिकरण का एक बड़ा मानक है। महिला सशक्तिकरण उन्हें नये क्षितिज दिखाने का प्रयास है जिसमें नई क्षमताओं का बेहतर समायोजन करेगी। सशक्तिकरण का अर्थ है कि किसी कार्य को करने या रोकने की क्षमता महिला सशक्तिकरण से तात्पर्य महिलाओं को पुरूषों के बराबर वैधानिक, राजनीतिक, शारीरिक, मानसिक, सामाजिक एवं आर्थिक क्षेत्रों में उनमें परिवार, समुदाय समाज एवं राष्ट्र की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि में निर्णय लेने की स्वायत्ता से है। भारत में महिला सशक्तिकरण का प्राथमिक उद्देश्य महिलाओं की सामाजिक एवं आर्थिक दशा को सुधारना है।

आजादी के पूर्व[2] महिलाओं पर खूब अत्याचार व अन्याय हुए। पूरा समाज पुरूष केन्द्रित रहा और इसका दुष्परिणाम यह हुआ की भारत में विकास की गति अन्य देशों की तुलना में कोसो पिछड़ गयी है। आजादी के बाद भारत की तस्वीर बदली। लोगो की चेतना

* अतिथि व्याख्याता, अर्थशास्त्र, शासकीय विश्वनाथ यादव तामस्कर स्वशासी पी.जी. महाविद्यालय दुर्ग

जागृत हुई और शासन तथा समाज सेवी संगठनों के प्रयासों से एक नया आयाम मिला। संविधान का 73 व 74 संशोधन[3] जिसके माध्यम से उन्हे पंचायत तथा नगर पंचायतों में आरक्षण के माध्यम से।

प्रतिनिधित्व का अवसर मिला जिसमें महिलाओं का आर्थिक व सामाजिक स्तर में सुधार हुआ तथा सरकार की ओर से संचालित कार्यक्रमों में उनकी भागीदारी बड़ी, पंचायती राज संस्थाएँ सार्वजनिक जीवन में महिलाओ की राष्ट्रीय नीति के क्रियान्वयन एवं प्रसार में सक्रिय भागीदारी निभाएगी। इसी प्रकार महिला बाल विकास कार्यक्रम एंव

स्व–सहायता समूह कार्यक्रम–

जिसके माध्यम से महिलाएं एक संगठन बनाकर समूह के रूप में कार्य संचालित करती है। स्वयंसिद्ध परियोजना के अन्तर्गत गठित स्वयं सहायता समूहों एवं उनमें प्रतिनिधियों[4] तथा खादी एवं ग्रामोद्योग आयोग की त्म्फ्ण्च योजना से आवश्यक प्रशिक्षण प्रदान करने तथा समूहों द्वारा कुटीर/लघु उद्योगों में उत्पादित वस्तुओं की बिक्री में सहायता प्रदान करने के उद्देश्य से एक रोजगार परक प्रशिक्षण कार्यशाला का आयोजन लखनऊ में किया गया। जिसमें ग्रामीण रोजगार सृजन कार्यक्रम के बारे में बताया गया। तथा महिलाओं के सामाजिक तथा आर्थिक विकास हेतु स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना, आंगनबाड़ी कार्यक्रम, स्कूली बच्चों के लिए मध्यान्ह भोजन कार्यक्रम, जवाहर ग्राम समृद्धि योजना आदि कार्यक्रम सरकार द्वारा संचालित किये जा रहे हैं। जिससे महिलाओ का सामाजिक और आर्थिक विकास हो सकें।

उपलब्ध साहित्य का पुनरीक्षण–

कमला मांकेकर[5] ने इस बात पर ध्यान दिलाया हैं कि, भारत में 9 करोड़ महिला श्रमिको में से 94 प्रतिशत असंगठित क्षेत्रों में कार्यरत हैं, जहाँ उनके लिए बनाये गये सुरक्षात्मक श्रम अधिनियमों की पहुँच नहीं। हो जाती हैं तथा विभिन्न प्रकार के सामाजिक –आर्थिक विकासात्मक कार्यक्षेत्रों में लागू किये जाने के पश्चात् भी महिला श्रमिकों की दशा में गिरावट आई हैं।

शांता कोहली चन्द्रा[6]– भारत में महिला सशक्तिकरण विषय के अन्तर्गत दिल्ली की 20 महिला उद्यमियों का अध्ययन किया गया है। इस अध्ययन का मुख्य उद्देश्य महिला उद्यमियों की आर्थिक स्थिति, सामाजिक पृष्ठभूमि एवं उद्यम की आर्थिक स्थितियों का अध्ययन करना है। अध्ययन से यह पाया गया सर्वाधिक 60 प्रतिशत महिला उद्यमी 31–45 आयु वर्ग की एवं 90 प्रतिशत उद्यमी उच्च शिक्षित हैं। सर्वाधिक प्रथम पीढ़ी के उद्यमी हैं। 60 प्रतिशत उद्यमी 31–45 प्रशिक्षण प्राप्त करने के पश्चात उद्यम की स्थापना की हैं। 50 प्रतिशत उद्यमियों को 4000 रूपये से अधिक मासिक आय उद्यम से प्राप्त हैं। 49 प्रतिशत उद्यमी निर्माण क्षेत्र में कार्यरत हैं। 55 प्रतिशत उद्यमियों ने अपने उद्यम में लाख रूपये निवेश किया हैं। 30 प्रतिशत उद्यमियों ने स्वयं की प्रेरणा से उद्यम की स्थापना की हैं। महिला उद्यमियों ने स्वयं की क्षमता एवं विभिन्न संस्थाओं से प्राप्त सहयोग के कारण उद्यम में सफलता प्राप्त की है।

डी उदय सिंह[7] ने भील समुदाय का अध्ययन किया और अध्ययनोंपरांत यह निष्कर्ष प्राप्त हुये। स्वयंसेवी संगठन और स्वयं सहायता समूहों की गतिविधियों से भील समुदाय में बदलाव आए है अच्छी परम्पराओं के विकसित होने के साथ साथ उनकी आजीविका भी

सुदृढ़ हुई है। ये लोग इस बात को स्वीकारने में लगे है कि कुरीतियाँ उनके विकास में बाधक है यह अपने आप में एक बहुत बड़ा बदलाव है स्वयंसेवी संगठन और स्वंय सहायता समूहों की कर्मठता से उपजी यह सफलता एवं खुशहाली की कहानी झाबुआ जिलें के एक विकासखंड की है। जिसमें भीलों की वर्षो पुरानी परम्पराओं को पुर्नजीवित कर आत्म सम्मान की भावना जागृत की है। जिससें उनके सामाजिक एवं आर्थिक स्तर में सुधार हुआ है।

डॉ. राज कुमार[8] ने भारतीय महिलाओं की समस्याएँ एवं समाधान नामक विषय पर अध्ययन किया और उसका संबंध अधिकतर नारी जाति से होता है विविध समस्याओं और कुप्रथाओं ने नारी जाति को बड़ी हीन अवस्था में पहुचा दिया है यह कहना बिल्कुल सही है कि निम्न वर्ग में नारी की कोई समस्या नहीं। है किन्तु मध्यम वर्ग में जो नारी घर की इज्जत है उसे अपनी इच्छाओं और आशाओं का गला घोंटना पडता है भारतीय महिलाओं समस्याओं और समाधान पर बहस चलना आज की सबसे बड़ी जरूरत है ऐसी परिस्थिति में श्रम विभाजन की पारंपरिक विचारधारा मोड़ना आवश्यक है। हर काम हर एक को करना आना चाहिए नारी निर्भरता और आत्म विश्वास जाग्रत हो।

पुजार वी. एन.[9] ने भारतीय महिलाओं में स्वयं सहासता समूह के संदर्भ में महाराष्ट्र की 968 महिला उधमियों का अध्ययन किया। इसके अर्न्तगत महिलाओं द्वारा संचालित विभिन्न उद्यमों का अध्ययन किया गया। अध्ययन से यह पाया गया कि सर्वाधिक महिलाएं घरेलु उद्यम चलाती है जिसके अन्तर्गत वस्त्र निर्माण, पापड़, बड़ी, अचार, मसाला, मिठाई, फुड एवं टेक्सटाईल उद्यम शामिल है। सर्वाधिक महिलाओं द्वारा घरेलु उद्यम चलाये जाने का सबसे प्रमुख कारण यह है कि जिलों में महिलाएं इंजीनियरींग चमड़ा, विद्युत, आदि उद्यम का संचालन करती है अन्य उद्यमियों की तुलना में इन उद्यमियों की जो कार्य क्षमता है वह असार्थक है। अध्ययन से पाया गया कि औरंगाबाद एवं पुणे में महिला उद्यमियों की संख्या नागपुर की तुलना में अधिक है।

अध्ययन का उद्देश्य-

1. महिला सशक्तिकरण के माध्यम से महिलाओं की आर्थिक एवं सामाजिक दशाओं का अध्ययन करना।
2. महिलाओं हेतु निर्मित योजनाओं में उनकी सहभागिता क्षमता बढ़ाना।
3. महिलाओं को विद्यमान आर्थिक व सामाजिक सेवाओं तक पहुँच में सुधार करना।
4. पंचायती राज व्यवस्था के माध्यम से महिलाओं को पुरूषों के समान राजनैतिक क्षेत्र में अधिकार का अध्ययन करना।
5. स्व सहायता समूह के माध्यम से महिलाओं के रोजगार एवं आय स्तर को सार्थक बनाना।

अध्ययन की परिकल्पना-

1. महिलाओं की आर्थिक एवं सामाजिक दशा में सुधार से घनात्मक प्रभाव पड़ता है।
2. स्व सहायता समूह कार्यक्रम में भागीदारी से महिलाओं के आय एवं रोजगार में वृद्धि होती है।
3. पंचायती राज व्यवस्था कार्यक्रम के माध्यम से ग्रामीण महिलायें राजनैतिक क्षेत्र में प्रवेश करती है।

शोध प्रविधि–

प्रस्तुत शोध पत्र में द्वितीयक समंको का प्रयोग किया गया है जिसमें दुर्ग जिले से संबंधित योजनाओं में महिलाओं के सामाजिक एवं आर्थिक दशा में सुधार से संबंधित योजनाओं में महिलाओं की आर्थिक एवं सामाजिक दशाओं का अध्ययन किया गया है और आकड़ों के विश्लेषण में औसत प्रतिशत का प्रयोग किया गया है और कोटि अंतर विधि का प्रयोग किया गया है।

अध्ययन का क्षेत्र

अध्यायित जिले दुर्ग में 10879 महिला स्व सहायता समूह है जिसमें 142075 सदस्य संख्या है तथा आंगनबाड़ी में 13455 मध्यान्ह भोजन कार्यक्रम में 9789 है स्वर्ण जयंती ग्राम स्व रोजगार योजना में 13485 ग्राम पंचायतों में महिला सरपंचों की संख्या 1429 है। ये योजनाए दुर्ग जिले में संचालित है।

तालिका

क्र.	महिलाओं के विकास से संबंधित कार्य	पूर्व	पश्चात्	अन्तर	प्रतिशत परिर्वतन
1	स्व–सहायता समूह कार्यक्रम	10,547	10,879	+332	103.14
2	आंगन बाड़ी कार्यक्रम	11456	13455	+1999	117.44
3	मध्यान्ह भोजन कार्यक्रम	11788	9789	- 1999	83.04
4	स्वर्ण जयंती ग्राम स्व रोजगार योजना	12989	13485	+ 496	103.81
5	महिला सरपंचों की संख्या	1012	1429	+ 417	141.20

स्त्रोत- द्वितीयक समंक DRDA दुर्ग

समस्या– महिलाओं के सामाजिक एवं आर्थिक विकास हेतु जो योजनाये संचालित की गई है उसमें सर्व प्रमुख समस्या यह है कि ज्यादातर महिला कम पढ़ी लिखी है और अपनी झिझकपूर्ण मानसिकता के कारण योजना में संलग्न नहीं होना चाहती है। दूसरी समस्या यह है कि मध्यान्ह भोजन कार्यक्रम में बच्चों को साफ सुथरा संतुलित भोजन की प्राप्ति नहीं हो पाती है तथा पुरूष प्रधान समाज में ग्रामीण महिला पंच और सरपंच के रूप में पुरूषों की बराबरी नहीं करना चाहती। स्व-सहायता समूह में कार्य करने हेतु यह आवश्यक है कि सदस्यों के बीच आपसी समझ व विश्वास हो यह देखा गया कि महिलाओं के बीच आपसी सहयोग व विश्वास की कमी थी।

सुझाव– स्व सहायता समूहों का सफल संचालन मुख्यत: उनके द्वारा उत्साहित वस्तुओं के बाजार की उपलब्धता पर निर्भर करता है उत्पादित वस्तुओं का बाजार विकसित करने के लिए जिला स्तरीय उद्योग केन्द्रों को योजना में पूर्ण भागीदारी बनाया जाए। मध्यान्ह भोजन कार्यक्रम में स्कुली बच्चों को स्वस्थ और संतुलित आहार का भोजन दिया जाना चाहिए, आंगन बाड़ी कार्यक्रम के सफल संचालन के लिए वहॉ पौष्टिक आहार युक्त सामान उपलब्ध कराये जाये। तथा ग्रामीण महिला के मानसिक, सामाजिक तथा आर्थिक विकास के उन्हें पुरूषों के समान पंचायती राज व्यवस्था कार्यक्रम में भाग लेना चाहिए।

निष्कर्ष– प्रस्तुत शोध पत्र के निष्कर्ष इस प्रकार है कि दुर्ग जिले में महिलाओं के

आर्थिक एवं सामाजिक विकास से संबंधित अनेकों कार्यक्रम संचालित है अध्ययन में इन पांच विकास कार्यक्रमों का समावेश किया गया है जिससे महिलाओं का आर्थिक और सामाजिक विकास हो सके अतः निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि स्व सहायता समूह में प्रतिशत परिवर्तन, आगंनबाड़ी कार्यक्रम में प्रतिशत परिर्वतन, महिला सरपंचों की संख्या, मध्यान्ह भोजन कार्यक्रम प्रतिशत परिर्वतन से अधिक है अतः महिलाओं के विकास से संबंधित दुर्ग में जो रोजगारपरक कार्यक्रम चलाये जा रहें है उससे महिलाओं के आर्थिक एवं सामाजिक स्तर में सुधार हो रहा है अतः मध्यान्ह भोजन में महिलाओं की संख्या कम है क्योकि मध्यान्ह भोजन को छोड़कर सभी विकास योजना में प्रतिशत परिवर्तन 100 प्रतिशत से अधिक है मध्यान्ह भोजन में प्रतिशत परिवर्तन कम होने का मुख्य कारण स्कुली बच्चों को साफ सुथरा और सन्तुलित आहार युक्त भोजन का अभाव पाया गया है।

===============

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची–

1. जैन डी. के ग्रामीण महिलाओं का सशक्तिकरण क्लासिकल पक्लिकेशन नई दिल्ली पेज 35-40 2007
2. Bakshi S.N. Empowerment of Women & Politics of Reservation, jaipur book enclave page 660-68
3. Ganesani's Women work Participation & Empowerment Problem & prospectis jaipur PBSA publication page 2889-289, 2002
4. Choudhary Sangeeta Empowerment of Peasant Women jaipur publication page 336-40, 2008
5. Mankeker Kamla " Women working Against Adds "yojana 1Sep page 44-45 1980.
6. Chandra Shanta Kohli development of women interpreneurship in IndiaA study of public policesAnd programmes mittal publication 1991 page 284-345
7. Dr. Uday Singh- rural development journal Kurujshetra Vol PP 35-39 June 2008
8. भारतीय महिलाओं की समस्यायें एवं समाधान अर्जुन पब्लिक हाऊस नई दिल्ली 110002 वाल्युम 301-412 पेज नं. 180-185 2006
9. Pujar V. N. - Development Of Women Entrepreneurship In India Ed. By Samiuddin - Entrepreneurship Development In India Mittal Publication Delhi 1989.
10. Amol Mandal, women in panchayati raj institution, New Delhi Kanisha Publication, Distributors 2003
11. Anjana Maitra Sinha, women in changing society 1993
12. Ashine Roy, women in powerAnd decision making, New Delhi, Rajat publication 2003.

Research Journal of Arts, Management and Social Sciences,
Vol. XVIII, Hindi.-I, Year IX, March, 2018
UGC Sl. No. 2138, Journal No.48774, Impact Factor 2.996

विवाह के बदलते प्रतिमानों का विश्लेषण (रीवा नगर के विशेष संदर्भ में)

* मधुलिका श्रीवास्तव

सारांश– ***विवाह एवं परिवार समाज का आधार स्तम्भ है, विवाह संस्था परिवार का निर्माण करती है। वर्तमान समय में विवाह और उसके प्रतिमानों पर आधुनिकीकरण के परिणाम स्वरूप परिवर्तन आया है। विवाह के बदलते प्रतिमानों पर आधारित ये शोध-पत्र रीवा नगर के सौरभ नगर पर केन्द्रित है। साक्षात्कार अनुसूची द्वारा तथ्य एकत्रित कर निष्कर्ष प्रस्तुत किए गये हैं। विवाह के प्रतिमानों में परिवर्तन लाने के लिए शिक्षा आधुनिकता तथा नवीन जीवनशैली प्रमुख कारण पाए गये। 100 उत्तरदाताओं को न्यादर्श के रूप में चयनित कर प्राथमिक एवं द्वैतीयक स्रोतों के माध्यम से जानकारी एकत्र की गई है।***

मुख्य शब्द– प्रतिमान, वैवाहिक निषेध आधुनिकीकरण, धार्मिक संस्कार, परिहार।

प्रस्तावना– भारतीय समाज में प्राचीन काल से लेकर आधुनिक काल तक जितनी भी संस्थाएँ निर्मित की गई हैं उनमें विवाह व परिवार का अपना विशेष महत्व है। मनुस्मृति में भी इस बात को स्वीकार किया गया है कि जिस प्रकार सभी प्राणी वायु के सहारे जीवन जीते हैं वैसे ही सभी प्राणी गृहस्थाश्रम से जीवन धारण करते हैं। हिन्दू समाज में प्रारम्भ से ही विवाह की अनिवार्यता को स्वीकार करके इसे धार्मिक संस्कार के रूप में पुरुषार्थ तथा ऋणों से उऋण होने के माध्यम के रूप में स्वीकार किया गया। हिन्दू सामाजिक जीवन में विवाह का रूप जितना पवित्र और स्थायी है, वैसा संसार के किसी दूसरे समाज में देखने को नहीं मिलता।

समाज द्वारा स्वीकृत धार्मिक विधि-विधानों को सम्पन्न करके जब पुरुष या स्त्री पारिवारिक जीवन में प्रवेश करते हैं तो उसे हिन्दू विवाह कहा जाता है। गृहस्थ जीवन में प्रवेश करने का प्रमुख उद्देश्य धार्मिक व सामाजिक कृत्यों को पूर्ण करना होता है। इस प्रकार हिन्दू विवाह वह धार्मिक संस्कार है, जिसको सम्पन्न करने का प्रमुख उद्देश्य सामाजिक जीवन के कर्तव्यों जैसे- धर्म, पुत्र, रति को प्राप्त करना है। इस सम्बंध में प्रो. कपाड़िया का कथन है कि जब हिन्दू विचारकों ने धर्म को विवाह का सर्वोच्च एवं मुख्य लक्ष्य माना तथा सन्तानोत्पत्ति को द्वितीय तो स्वाभाविक है कि विवाह पर धर्म का अधिपत्य हो जाता है। इस कथन से यह कहा जा सकता है कि हिन्दू विवाह को धर्मानुसार कर्तव्यों का निर्वाह करने का मुख्य साधन माना है।

नर और नारी श्रृष्टि के सफल संचालन के आधार स्तम्भ हैं। शरीर की रचना कुछ

* एसोसिएट प्रोफसर, समाजशास्त्र, शास. टी.आर.एस. उत्कृष्ट महाविद्यालय एवं शोध केन्द्र, रीवा, म.प्र.

ऐसी है कि दोनों एक-दूसरे से भिन्न हैं और श्रृष्टि के संचालन में दोनों एक-दूसरे के पूरक हैं। इसी अपूर्णता को समाप्त करने के लिए विवाह स्त्री और पुरुष को पारिवारिक जीवन में प्रवेश करवाने की एक महत्वपूर्ण संस्था है। भारतीय विचारकों ने व्यक्ति के जीवन को चार भागों में विभाजित किया है- ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और सन्यास। गृहस्थ आश्रम में प्रवेश करने के लिए प्रत्येक व्यक्ति को विवाह करना पड़ता है। जब तक विवाह नहीं किया जाता गृहस्थ आश्रम का प्रारम्भ नहीं हो सकता। विवाह संस्था का प्रत्येक समाज में महत्व है। इतना अवश्य है कि विभिन्न समाजों में भिन्नता अवश्य पाई जाती है। विवाह की व्याख्या करते हुए बोगार्डस ने कहा है कि- ''विवाह स्त्री और पुरुष को पारिवारिक जीवन में प्रवेश करवाने की एक संस्था है। गिलिन एण्ड गिलिन ने कहा है कि विवाह एक प्रजनन मूलक परिवार की स्थापना का समाज द्वारा स्वीकृत तरीका है।

विवाह को समाज द्वारा स्वीकृत एक संस्था माना गया है। विवाह सम्बंध बहुत ही व्यापक होते हैं। इनमें एक-दूसरे के प्रति भावनात्मक लगाव, प्रतिबद्धता, सेवाभाव सहायता व एक-दूसरे को निरन्तर सहयोग देना है। हिन्दुओं में विवाह को एक धार्मिक संस्कार माना जाता है। पी. एन. प्रभु ने हिन्दू विवाह को एक धार्मिक संस्कार कहा है जिसके द्वारा व्यक्ति गृहस्थ आश्रम में प्रवेश करता है। वर्तमान समय में विवाह के प्रतिमानों में बदलाव आया है। बाल-विवाहों की संख्या कम हुयी है। प्रेम-विवाहों व अर्न्तजातीय विवाहों को बढ़ावा मिला है।

शोध का उद्देश्य- इस अध्ययन के उद्देश्य इस प्रकार हैं-

1. विवाह के परम्परागत स्वरूपों में क्या बदलाव आया है। इसकी जानकारी प्राप्त करना।
2. जीवनसाथी के चयन में किसकी भूमिका महत्वपूर्ण है, इसका पता लगाना।
3. विवाह में प्रचालित निषेधों की जानकारी प्राप्त करना।
4. विवाह में दहेज की जानकारी प्राप्त करना।
5. विवाह के स्वरूपों में आने वाले बदलावों की जानकारी प्राप्त करना।

अध्ययन क्षेत्र- अध्ययन क्षेत्र के रूप में रीवा नगर के सौरभ नगर (नीम चौराहा) क्षेत्र का चयन किया गया है। जो कि वार्ड क्र. 08 में आता है। जिसकी आबादी 4300 है। यह रीवा नगर शहरी क्षेत्र के अन्तर्गत आता है। जिसमें पुरुषों की संख्या 2300 और महिलाओं की संख्या 2000 है।

अध्ययन पद्धति-

प्रस्तुत शोध-पत्र को तैयार करने में प्राथमिक एवं द्वीतीयक स्रोतों का चयन किया गया है। सविचार उद्देश्यपूर्ण निदर्शन विधि के माध्यम से 100 उत्तरदाताओं का चयन किया गया है।

उपकरण एवं अध्ययन पद्धति-

अध्ययन पद्धति के रूप में अवलोकन साक्षात्कार, अनुसूची पद्धति के माध्यम से तथ्यों का संकलन, वर्गीकरण, सारणीयन व विश्लेषण करके विवाह के प्रतिमानों में होने वाले बदलावों को जानने का प्रयास किया गया है।

उपकल्पना-

1. विवाह के पारम्परिक स्वरूपों में परिवर्तन आया है।

पूर्व साहित्य की समीक्षा–

1. वेस्टर्न मार्क ने 'द स्टोरी ऑफ ह्यूमन मैरिज' में विवाह के बदलते स्वरूपों का उल्लेख किया है। वे इसके लिए सामाजिक परिप्रेक्ष्य को महत्वपूर्ण मानते हैं।
2. के. एम. कपाड़िया ने 1965 में प्रकाशित अपनी पुस्तक 'भारत में परिवार एवं विवाह' में यह बताया है कि विवाह निर्धारण में सामाजिक मूल्य महत्वपूर्ण होते हैं।
3. पी. वी. काणे ने अपनी पुस्तक 'हिस्ट्री ऑफ धर्मशास्त्र' वैल्यूम II P. 531.36 में विवाह में धार्मिक अनुष्ठानों के महत्व को बताया साथ ही इनकी संख्या 39 बताई है। विवाह की पूर्णता के लिए धार्मिक विधि-विधानों एवं अनुष्ठानों को एक निश्चित पद्धति से करना अति आवश्यक माना है। जिसमें सम्पूर्ण विवाह प्रक्रिया धार्मिक विधि-विधान एवं पवित्र मंत्रों के माध्यम से सम्पन्न की जाती है।
4. पी. एन. प्रभु ने 'हिन्दू सोशल ऑर्गेनाइजेशन' में विवाह को एक धार्मिक संस्कार माना है तथा दोनों पक्षों को विभिन्न कर्तव्यों तथा त्यों को पूरा करने का सुअवसर प्रदान करता है।

तथ्यों का संकलन व विश्लेषण–

शोध कार्य के अध्ययन के लिए क्षेत्र का निर्धारित होना आवश्यक है। अध्ययन क्षेत्र के लिए रीवा नगर में सौरभ नगर (नीम चौराहा) का चयन किया गया है। जिसमें विभिन्न उत्तरदाताओं से विवाह में होने वाले परिवर्तनों को जानने के लिए प्रश्न किए गए। साक्षात्कार अनुसूची के माध्यम से सूचनादाताओं से जो भी जानकारियाँ प्राप्त हुयी हैं उन्हें तालिकाओं के माध्यम से स्पष्ट किया गया है जो इस प्रकार हैं-

तालिका क्र.-01

आयु के आधार पर विवाह की स्थिति में परिवर्तन

क्र.	विवरण	संख्या	प्रतिशत
01	15–17 वर्ष	05	10%
02	18–21 वर्ष	18	36%
03	22–25 वर्ष	27	54%
	योग	50	100

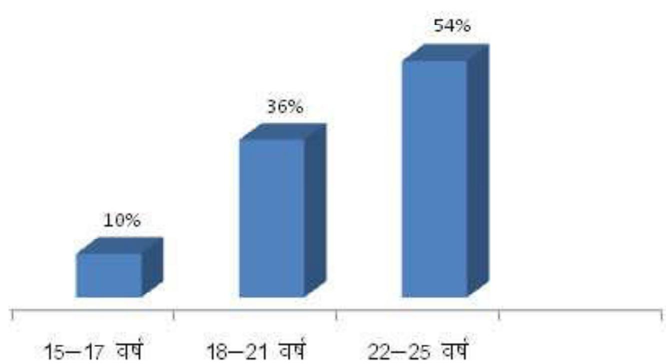

विवाह की आयु 15 से 17 वर्ष के बीच मानने वाले उत्तरदाताओं का प्रतिशत 10

रहा है। इनका कहना है कि अब कम ही लोग छोटी उम्र में लड़कियों का विवाह करने के पक्षधर हैं। इसका मुख्य कारण यह है कि वे भी उन्हें उच्च शिक्षा दिलाना चाहते हैं ताकि वे अपने पैरों पर खड़ी हों और आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर हों।

18 से 21 वर्ष की आयु में विवाह होना चाहिए इसमें 36 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने अपनी सहमति व्यक्त की है। उनका मानना है कि यह उम्र विवाह के लिए कानून व समाज द्वारा मान्य है। 22 से 25 वर्ष के बीच विवाह के पक्षधर 54 प्रतिशत उत्तरदाता रहे। यह सबसे ज्यादा उत्तरदाताओं का प्रतिशत रहा है। उनका कहना है कि इस उम्र तक लड़कियाँ परिपक्व व समझदार हो जाती हैं, वे सभी प्रकार के उत्तरदायित्वों का निर्वहन सही ढंग से कर सकती हैं।

परम्परागत भारतीय समाज में विवाह को एक धार्मिक संस्कार एवं पवित्र बन्धन माना जाता रहा है। विवाह जन्म-जन्मान्तर का सम्बंध माना जाता था। हिन्दू समाज में विधवा पुनर्विवाह व तलाक को मान्यता नहीं थी। परम्परागत विवाहों को ही मान्यता थी।

तालिका क्र.-02

विवाह के बदलते हुए प्रतिमानों की स्थिति

क्र.	स्वरूप	संख्या	प्रतिशत
1	परम्परागत विवाह	30	60%
2	प्रेम विवाह	12	24%
3	अन्तर्जातीय विवाह	04	08%
4	कोर्ट मैरिज	04	08%
	योग	**50**	**100**

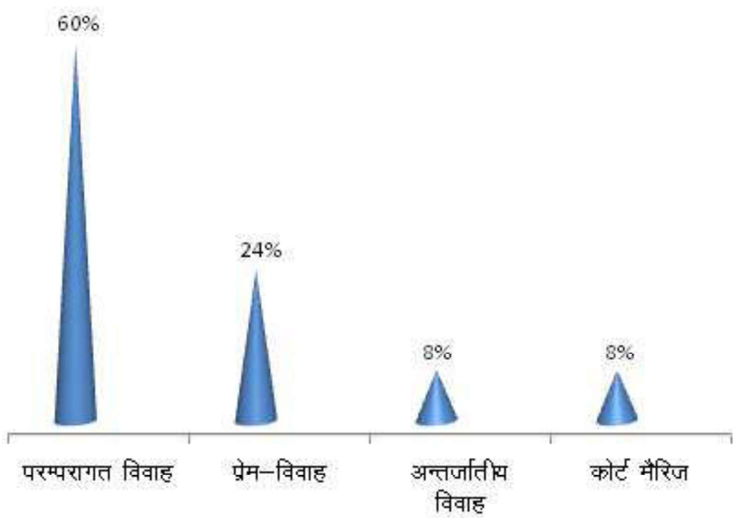

हमारे 60 प्रतिशत उत्तरदाता भी इस बात से सहमत हैं। वर्तमान समय मे सह-शिक्षा औद्योगीकरण, नगरीकरण के फलस्वरूप प्रेम-विवाह व अन्तर्जातीय विवाहों की संख्या में वृद्धि हुई है। 32 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने इसे स्वीकार किया है। 08 प्रतिशत उत्तरदाताओं का कोर्ट मैरिज में विश्वास है।

मानव विकास में शिक्षा की भूमिका अग्रणी है। आधी आबादी महिलाएँ भी शिक्षित होकर विभिन्न क्षेत्रों में परिवर्तन कर रही हैं। भारत में शिक्षा के क्षेत्र में भी क्रान्तिकारी परिवर्तन हुए हैं। शिक्षा सुविधाओं का काफी प्रचार-प्रसार हुआ है। शिक्षा सुविधाओं में वृद्धि के परिणाम स्वरूप रोजगार के अवसरों में भी वृद्धि हुई है तथा लोगों का रहन-सहन ऊँचा हुआ है। महिला शिक्षा का प्रचार-प्रसार होने से उनमें आत्मनिर्भरता बढ़ी है।

तालिका क्र.-03

विवाह के बदलते प्रतिमानों में शिक्षा के प्रभाव की भूमिका

क्र.	शिक्षा का प्रभाव पड़ा है	संख्या	प्रतिशत
1	हाँ	42	84%
2	नहीं	08	16%
	योग	**50**	**100**

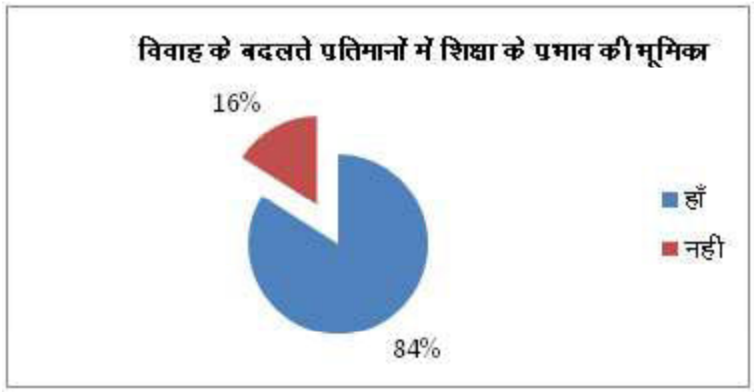

84 प्रतिशत उत्तरदाता ये मानते हैं कि शिक्षा के विस्तार से विवाह के प्रतिमानों में भी बदलाव आया है। 16 प्रतिशत उत्तरदाताओं का मानना है कि शिक्षा का विवाह के प्रतिमानों में प्रभाव नहीं पड़ा।

वर्तमान समय में विवाह के आधारों में परिवर्तन हुआ है। विवाह प्रत्येक समाज की चाहे वह आदिम हो या आधुनिक मौलिक विशेषता है। विवाह वह साधन है जिसके माध्यम से समाज की मौलिक इकाई 'परिवार' का निर्माण होता है। जीवनसाथी चयन के आधारों में परिवर्तन हुआ है।

तालिका क्र.-04

जीवन साथी चयन के आधारों में परिवर्तन

क्र.	चयन के आधारों में परिवर्तन	संख्या	प्रतिशत
1	माता–पिता द्वारा	20	40%
2	मध्यस्थों द्वारा	08	16%
3	माता–पिता एवं स्वयं की सहमति के द्वारा	22	44%
	योग	**50**	**100**

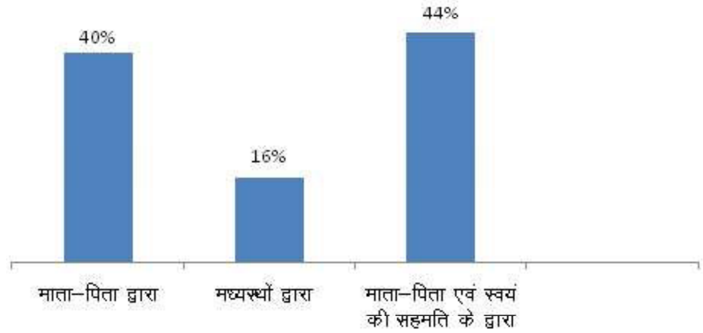

56 प्रतिशत उत्तरदाताओं का मानना है कि जीवनसाथी के चयन में माता-पिता व मध्यस्थों की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। 44 प्रतिशत उत्तरदाता यह मानते हैं कि माता-पिता की सहमति के साथ-साथ स्वयं की सहमति से जीवनसाथी का चयन होता है तो वहाँ सम्बंधों में प्रगढ़ता व मधुरता बनी रहती है, और ये सम्बंध अधिक स्थायी होते हैं।

प्रत्येक समाज में विवाह साथी चुनने के बारे में कुछ निश्चित नियम होते हैं जिनके अन्तर्गत यह बताया जाता है कि उसे जीवनसाथी का चुनाव किन समूहों एवं लोगों में करना है और किनका 'परिहार' करना है। हिन्दू विवाह से सम्बंधित निषेधों में अन्तर्विवाह, वहिर्विवाह, अनुलोम एवं प्रतिलोम विवाह की श्रेणियों में बांटा गया है।

तालिका क्र.-05

हिन्दू विवाह में प्रचलित निषेधों का पालन करते हैं

क्र.	**प्रचलित निषेधों का पालन करते हैं**	**संख्या**	**प्रतिशत**
1	हाँ	26	52%
2	नहीं	24	48%
	योग	**50**	**100**

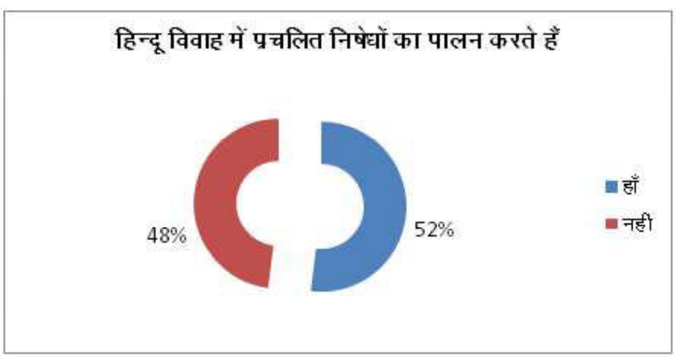

52 प्रतिशत उत्तरदाताओं का कहना है कि लड़का-लड़की के विवाह में प्रचलित निषेधों का पालन करते हैं। जबकि 48 प्रतिशत उत्तरदाता विवाह में प्रचलित निषेधों का पालन नहीं करते हैं। इसके पीछे उनका तर्क यह होता है कि लड़के लड़कियों का साथ-साथ पढ़ना, कार्यस्थल पर काम करना, मेल-जोल के कारण अन्तर्जातीय विवाह,

प्रेम-विवाह हो रहे हैं, जहाँ प्रचलित निषेधों का पालन नहीं किया जाता है।

दहेज तो वह उपहार है जो कन्या के माता-पिता विवाह के उपलक्ष्य में स्वेच्छा से और स्नेहवश देते हैं। हिन्दुओं में विवाह के समय कन्या पक्ष की ओर से कन्या व वर को कुछ वस्तुएँ और धन उपहार में दिये जाते हैं। कन्या का पिता कन्या को वस्त्र अलंकार सहित वर को दान करता है। ऐसे 'धन' या 'उपहार' को 'दहेज' कहते हैं।

तालिका क्र.-06

दहेज-प्रथा के दृष्टिकोंण में परिवर्तन

क्र.	दृष्टिकोंण में परिवर्तन	संख्या	प्रतिशत
1	दहेज लेना चाहिए	15	30%
2	दहेज नहीं लेना चाहिए	35	70%
	योग	**50**	**100**

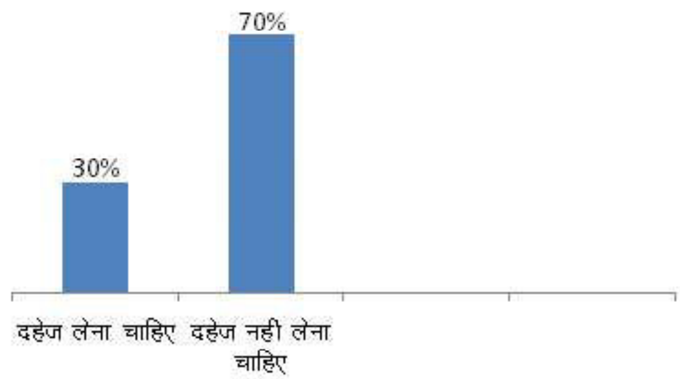

30 प्रतिशत उत्तरदाता इस बात से सहमत हैं कि विवाह में दहेज माता-पिता की स्वेच्छा व सामर्थ्य के हिसाब से दिया जाना चाहिए। जबकि 70 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने कहा कि विवाह में दहेज का लेन-देन नहीं होना चाहिए। जो उनके प्रगतिशील विचारों का प्रतीक है कि आज का युवा वर्ग परिवर्तन को स्वीकार करता है और दहेज को एक कुप्रथा के रूप में स्वीकार करता है। जो उनके प्रगतिशील विचारों का द्योतक है। दहेज प्रथा बुरी नहीं है, क्योंकि दहेज कन्या पक्ष के द्वारा वर और वधू को स्नेहवश बिना किसी दबाव के तथा अपनी सामर्थ्य के अनुसार स्वेच्छा से दिया जाता है। बुरी तो 'वर-मूल्य' प्रथा है। सन् 1961 में 'दहेज निरोधक अधिनियम' पास किया गया जिसका भी उद्देश्य 'वर-मूल्य' प्रथा को रोंकना है।

समाज निरन्तर गतिशील व्यवस्था है, इस गतिशीलता के कारण समाज में परिवर्तन होते हैं। देश-काल और परिस्थितियों में भिन्नता के कारण परिवर्तन के अलग-अलग कारणों का जन्म होता है। किसी भी समाज में परिवर्तन का कोई एक कारण जिम्मेदार नहीं होता है। अनेक कारण मिलकर समाज को परिवर्तित व प्रभावित करते हैं। आधुनिकीकरण का प्रत्यक्ष सम्बंध आधुनिकता से है। यह परिवर्तन की एक प्रक्रिया से सम्बंधित है। वैवाहिक क्षेत्र में भी आधुनिकीकरण का प्रभाव पड़ा है।

तालिका क्र.-07

विवाह के बदलते प्रतिमानों पर आधुनिकीकरण का प्रभाव

क्र.	आधुनिकता का प्रभाव पड़ा है	संख्या	प्रतिशत
1	हाँ	45	90%
2	नहीं	05	10%
	योग	**50**	**100**

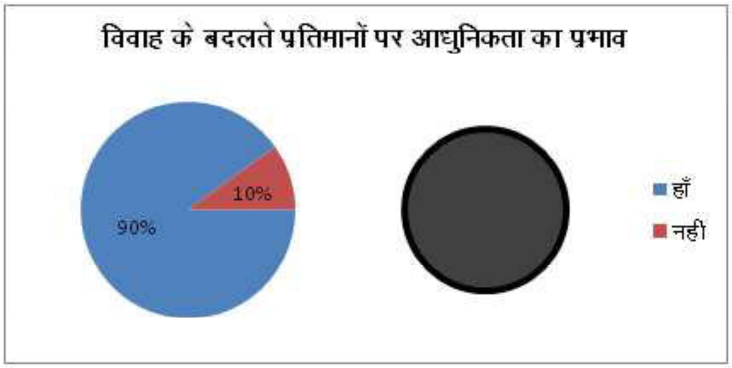

90 प्रतिशत उत्तरदाता यह मानते हैं कि विवाह के उद्देश्यों में परिवर्तन हो रहा है। वर्तमान समय में विवाह धार्मिक भावनाओं से प्रेरित होकर नहीं किए जाते हैं। परिवार नियोजन ने पुत्र की अनिवार्यता को खत्म कर दिया है। प्रेम-विवाह को आधुनिकता व सभ्यता का प्रतीक माना जाने लगा है। देर से विवाह करना आधुनिक सामाजिक जीवन का अंग बनता जा रहा है। 10 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने विवाह के बदलते प्रतिमानों में आधुनिकीकरण को एक सहायक कारण माना है। आज भी ये उत्तरदाता विवाह को एक प्रमुख धार्मिक संस्कार के रूप में मानते है, जो हिन्दू समाज का आधार स्तम्भ है।

निष्कर्ष–

(1) आयु के आधार विवाह की स्थिति में आने वाले बदलाव को 10 प्रतिशत उत्तरदाता ने माना है।36 प्रतिशत उत्तरदाता यह मानते हैं कि विवाह की आयु 18-21 वर्ष होनी चाहिए। जबकि 54 प्रतिशत उत्तरदाता मानते हैं कि विवाह 22-25 वर्ष की आयु से ऊपर की अवस्था में होने चाहिए, क्योंकि इस आयु तक उम्र में परिपक्वता आ जाती है।

(2) विवाह के बदलते प्रतिमानों की स्थिति के बारे में जब उत्तरदाताओं से पूंछा गया तो 60 प्रतिशत उत्तरदाताओं का कहना है कि उनका परम्परागत विवाह होना चाहिए। जबकि 40 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने कहा है कि प्रेम-विवाह, अन्तर्जातीय विवाह, कोर्ट-विवाह के रूप में विवाह के प्रतिमानों में परिवर्तन हुआ।

(3) जब उत्तरदाताओं से यह जानने का प्रयास किया गया कि शिक्षा ने कहाँ तक वैवाहिक प्रतिमानों को प्रभावित किया है तो 84 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने कहा कि शिक्षा ने वैवाहिक प्रतिमानों को काफी हद तक प्रभावित किया है।

(4) जीवनसाथी के चयन के आधारों में 56 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने माता-पिता व

मध्यस्थों की भूमिका को महत्वपूर्ण माना है, और 44 प्रतिशत उत्तरदाता स्वयं के निर्णयों के साथ माता-पिता की सहमति को भी महत्वपूर्ण मानते हैं।

(5) विवाह में प्रचलित निषेधों के बारे में 52 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने स्वीकार किया है जबकि 48 प्रतिशत उत्तरदाता परिवर्तनशील विचारों को मानते हुए वैवाहिक निषेधों को नहीं मानते हैं।

(6) विवाह के बदलते प्रतिमानों में आधुनिकीकरण को एक महत्वपूर्ण कारण माना है। 90 प्रतिशत उत्तरदाता इस बात से सहमत हैं। 10 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने आधुनिकीकरण के साथ अनेक कारणों को भी विवाह के बदलते प्रतिमानों के रूप में स्वीकार किया है।

सुझाव-

1. विवाह परिपक्व अवस्था में किए जाने पर अधिक स्थायी होते हैं, अतः परिपक्व आयु में विवाह की अवधारणा स्वागत योग्य है। समाज में इसका प्रचार-प्रसार किया जाय।
2. वैवाहिक प्रतिमानों में बदलाव सामाजिक मूल्यों के अनुरूप होना चाहिए।
3. वैवाहिक निषेधों का पालन नैतिक मूल्यों को दृष्टिगत रखकर किया जाय।
4. पाश्चात्य संस्कृति के अनुकरण से बचना होगा।
5. महिलाओं द्वारा लिए गये वैवाहिक निर्णयों में आपसी सामंजस्य आवश्यक है।
6. विवाह के बदलते सकारात्मक परिवर्तन समाज द्वारा ग्राह्य किये जाने चाहिए।

===============

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची-

1. गोपाल कृष्ण अग्रवाल, 'भारतीय सामाजिक संस्थाएँ' साहित्य भवन, आगरा, पृ. 209
2. Prof. K. M. Kapadia Marriage and Family in India' 1958 P. 168
3. पी. एन. प्रभु, 'Hindu Social Organization'
4. एम. एल. गुप्ता एवं शर्मा, 'भारतीय समाज' साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा, पृ. 208-209
5. डॉ. डी. एस. बघेल, 'परिवर्तन एवं विकास का समाजशास्त्र' कैलाश पुस्तक सदन, हमीदिया मार्ग, भोपाल, पृ. 16
6. E. S. Bogardus, Sociology, 1957 P. 75
7. वेस्टर्न मार्क, 'The History of Human Marriage' Vol. I, P. 26
8. डॉ. कैलाश शर्मा, 'भारतीय समाज और संस् ति' पृ. 468
9. रवीन्द्रनाथ मुखर्जी, भारत अग्रवाल - शिवलाल अग्रवाल एण्ड कम्पनी, पुस्तक प्रकाशक, खजुरी बाजार, इन्दौर, पृ. 492

Research Journal of Arts, Management and Social Sciences,
Vol. XVIII, Hindi.-I, Year IX, March, 2018
UGC Sl. No. 2138, Journal No.48774, Impact Factor 2.996

अम्बेडकर और महिला सशक्तीकरण

* सीमा श्रीवास्तव

सारांश– *अम्बेडकर ने महिला सशक्तीकरण की दिशा में महत्वपूर्ण कार्य किये। उनका यह मानना था कि एक स्वस्थ समाज का निर्माण एक सशक्त महिला के द्वारा ही संभव है। यह निर्विवाद सत्य है कि महिलायें जो कि आबादी का लगभग आधा हिस्सा है, सदियों से पीड़ित व शोषित रही है। जिसमें हमारी परम्पराओं व रूढ़ियों की मुख्य भूमिका रही है। अतः अम्बेडकर का मानना था कि दकियानूसी परंपराओं, रूढ़ियों व कुरीतियोंा को खत्म कर महिलाओं को सशक्त करना आवश्यक है और तभी किसी भी समाज एवं देश का विकास संभव होगा। गहन चिंतन के पश्चात अम्बेडकर ने जो हिन्दू कोड बिल तैयार किया, उसके माध्यम से उन्होनें महिलाओं की दयनीय स्थिति में सकारात्मक परिवर्तन लाने एवं उन्हें सशक्त बनाने की दिशा में राष्ट्रीय स्तर पर अपना योगदान दिया। कानून मंत्री के रूप में उन्होंने भारतीय महिलाओं को सदियों से चली आ रही निर्योग्यताओं से मुक्त करवा उन्हें सशक्त बनाने की दिशा मे महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन किया।*

मुख्य शब्द– सामाजिक न्याय, सशक्तीकरण, अधिकार

व्यक्ति के विचारों पर अपने आस-पास को वातावरण का बहुत अधिक प्रभाव पड़ता है। अम्बेडकर के विचारों पर तत्कालीन सामाजिक व्यवस्था में प्रचलित परंपराओं, प्रथाओं रूढ़ियों का अत्यधिक प्रभाव पड़ा। जीवन में अपने अनुभवों के आधार पर उन्होंने प्रचलित सामाजिक व्यवस्था में सुधार हेतु अनेक प्रयास किये। इसी क्रम में उन्होंने महिला सशक्तीकरण के संदर्भ में महत्वपूर्ण कार्य किये है। अंबेडकर का यह दृढ़ विश्वास था कि महिलाओं की उन्नति तभी संभव होगी जब उन्हें धर परिवार और समाज में सामाजिक बराबरी का दर्जा मिलेगा।

अम्बेडकर की विचारधारा बुद्ध के विचारों से पूरी तरह प्रभावित थी। प्राचीनकाल में देश के बौद्धिक, सामाजिक एवं राजनैतिक जीवन में महिलाओं की सक्रिय भागीदारी थी किन्तु कालांतर में विभिन्न कारणों से समाज में उनकी स्थिति दयनीय होती चली गई। गौतम बुद्ध स्त्री व पुरूष में अंतर नही करते थे, उन्होंने पुरूषों के समान ही स्त्रियों को भी धार्मिक अधिकार प्रदान किये। संक्षेप में बुद्ध ने स्त्रियों की स्थिति को उठाने के लिये बहुत प्रयास किये। बुद्ध का यह कथन था कि जो व्यक्ति परिवार या समाज स्त्री को स्वतंत्रता एवं अधिकार प्रदान नही करता उसका विनाश हो जाता है।

बुद्ध की शिक्षाओं से प्रेरित अम्बेडकर की विचारधार के मूल में मुख्य बातें इस

* सहायक प्राध्यापक, समाजशास्त्र, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बालाघाट

प्रकार है :-

* स्वतंत्रता ,समता और बन्धुभाव समाज में आवश्यक है।
* सभी मनुष्य समान है।
* सभी को अपने अधिकार जानने का हक है।
* सभी दूसरों के साथ अच्छा व्यवहार करें और दूसरों से भी अपने प्रति अच्छे व्यवहार की अपेक्षा रखें।

उपरोक्त विचारधारा रखने वाले अम्बेडकर ने वर्ष 1951 में ' राइज एण्ड फाल ऑफ हिन्दू वूमेन' नामका लेख में महिलाओं की दयनीय स्थिति को लिये उत्तरदायी कारणों की व्याख्या की। इसके पश्चात उन्होंने समाज में प्रचलित कुप्रथाओं व कुरीतियों की ओर लोगों का ध्यान खींचने के लिये लगातार सभाओं में व्याख्यान दिये, लेख लिखें एवं विभिन्न ग्रन्थों की रचना की। अम्बेडकर के अनुसार भारत में सभी वर्णो की महिलाओं को परंपरागत जीवन में दलितों जैसी दयनीय स्थिति का सामना करना पड़ रहा है। इसके लिये उन्होंने मनुस्मृति को पूरी तरह जिम्मेदार माना है। उन्होंने मनुस्मृति एवं अन्य हिन्दू धार्मिक ग्रन्थों की कटु आलोचना करते हुए कहा है कि इनके कारण ही समाज में महिलाओं के स्वतंत्र अस्तित्व पर प्रतिबंध लगाये गये है। अम्बेडकर ने मनुस्मृति में उल्लेखित इस कथन को महिलाअं पर होने वाले अन्याय का मूल कारण माना है- ''बाल्यकाल में स्त्रियों की रक्षा पिता, यौवन में पति व वृद्धावस्था में पुत्र करें तथा महिलाओं को किसी भी प्रकार की स्वतंत्रता प्रदान न की जाये।''

अम्बेडकर ने अपने व्याख्यानों एवं रचनाओं में भारतीय परिवार व्यवस्था में स्त्रियों की निर्भरता एवं अधीनता की प्रवृत्ति का प्रबल विरोध किया। वे इस बात को दृढ़ता से कहते थे कि ''स्त्रियों को शिक्षा और सामाजिक जीवन के सभी क्षेत्रों में पुरूषों के समान ही अवसर प्राप्त होने चाहिए।'' उनके अनुसार शिक्षा एक ऐसा माध्यम है जिससे दलित एवं महिलाओं में व्याप्त अज्ञान, अशिक्षा एवं अंधविश्वास से मुक्ति मिलती है।

अम्बेडकर के विचारों पर तत्कालीन सामाजिक व्यवस्था का बहुत अधिक प्रभाव पड़ा। चारों ओर व्याप्त कुरीतियों,ऊँच-नीच इत्यादि के लिये वे अशिक्षा को जिम्मेदार मानते थे। अतः शिक्षा के माध्यम से समाज मे परिवर्तन लाना चाहते थे। सदियों से प्रचलित अन्याय व शोषण से पीड़ित महिलाओं की दुर्दशा देखकर उन्होंने महिलाओं की स्थिति में परिवर्तन लाने के अनेक महत्वपूर्ण प्रयास किये जिसमें 'हिन्दू कोड बिल' प्रमुख है।

हिन्दू कोड बिल- अम्बेडकर का मत था कि विवाह तथा संपत्ति पर अधिकार संबंधी प्रचलित कानूनों में परिवर्तन लाये बिना महिलाओं की स्थिति सुधारना संभव नही है। अतः उन्होंने इस दिशा में कार्य करते हुए एक सामाजिक कानून की रूपरेखा बनाई जिसे हिन्दू कोड बिल के नाम से जाना जाता है। हिन्दू कोड बिल के प्रमुख प्रावधान इस प्रकार है-

* कन्या के विवाह की निर्धारित तत्कालीन न्यूनतम आयु में वृद्धि करना।
* पुरूषों के लिये एक विवाह अनिवार्य करना।
* अर्न्तजातीय विवाह को मान्यता देना।
* स्त्रियों को पुरूषों के समान तलाक का अधिकार।
* तलाकशुदा महिला को पति से भरण पोषण का अधिकार।

* विधवा पुर्नविवाह को मान्यता देना।
* स्त्री को पारिवारिक सम्पत्ति पर अधिकार देना
* स्त्री को दत्तक लेने का अधिकार देना।

डॉ.अम्बेडकर ने वर्ष 1951 में कानून मंत्री के रूप में संसद के सम्मुख हिन्दू कोड बिल प्रस्तुत किया किन्तु किन्हीं कारणों से इस बिल पर चर्चा पूरी नहीं हो सकी। हम कह सकते है कि गहन चिंतन के पश्चात अम्बेडकर ने जो हिन्दू कोड बिल तैयार किया, उसके माध्यम से उन्होनें महिलाओं की दयनीय स्थिति में सकारात्मक परिवर्तन लाने एवं उन्हें सशक्त बनाने की दिशा में राष्ट्रीय स्तर पर अपना योगदान दिया। कानून मंत्री के रूप में उन्होंने भारतीय महिलाओं को सदियों से चली आ रही निर्योग्यताओं से मुक्त करवा उन्हें सशक्त बनाने की दिशा मे महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन किया।

अम्बेडकर ने तत्कालीन भारतीय समाज में प्रचलित निम्नांकित कुरीतियों को दूर करने व महिलाओं की समाज में स्थिति बेहतर करने के लिये हिन्दू कोड बिल प्रस्तुत किया-

* विधवा महिलायें पुर्नविवाह नहीं कर सकती थी जबकि पुरूष बहुविवाह भी कर सकते थे।
* बाल विवाह का प्रचलन बहुत अधिक था।
* पैतृक संपत्ति पर स्त्री का कोई अधिकार नही था।
* स्त्री को दत्तक पुत्र अथवा पुत्री लेने का अधिकार नही था।
* स्त्री,बेटी अथवा पत्नी के रूप में उत्तराधिकार से वंचित थी।

इन वंचनाओं से मुक्ति दिलाने के लिये अम्बेडकर ने जो हिन्दू कोड बिल संसद में प्रस्तुत किया , एक तरह से वह महिलाओं को अधिकार देने की शुरूआत थी। अम्बेडकर के अनुसार महिलाओं को पैतृक संपत्ति में बराबर का हिस्सा और उन्हें पुरूषों के समान अधिकार दिये बिना सही मायने में प्रजातंत्र लागू नही माना जा सकता। उनके प्रयत्नों का ही परिणाम था कि सन 1955 में हिन्दू मैरिज एक्ट बना, जिसमें महिलाओं के हित में जो निर्णय हुए वे इस प्रकार है -

* एक से अधिक विवाह गैरकानूनी घोषित किये गये।
* अर्न्तजातीय विवाह को मान्यता मिली।
* तलाक को कानूनी दर्जा मिला।

इसके बाद सन 1956 में हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम, हिन्दू दत्तक ग्रहण और पोषण अधिनियम, हिन्दू अवयस्कता और संरक्षकता अधिनियम लागू हुए। ये सभी कानून महिलाओं की समाज में बराबरी का दर्जा देने के लिये लाये गये थे।

अम्बेडकर के प्रयासों से महिलाओं को सारे अधिकार मिले। यहाँ उल्लेखनीय है कि अम्बेडकर का मानना था कि जातिप्रथा को बनाये रखने में महिलाओं की अहम् भूमिका है अतः हिन्दू कोड बिल के माध्यम से वे महिलाओं को पारंपरिक बंधनों से मुक्त करवा कर एक ओर लिंग पर आधारित असमानता को समाप्त करना चाहते थे तो दूसरी ओर अर्न्तजातीय विवाह को हिन्दू कानून के तहत मान्यता दिलवाकर जाति मुक्त समाज का निर्माण करना चाहते थे। इसी प्रकार वे स्त्रियों को तलाक का अधिकार देकर पुरूष प्रधान समाज के अन्याय से मुक्त करवाना चाहते थे। इसीलिये उन्होंने महिलाओं के लिये व्यापक

आर्थिक और सामाजिक अधिकारों की वकालत की। समाज में महिलाओं को पुरूषों के समान ही अधिकार मिले इसके लिये उन्होंने उनको नेतृत्व में बने संविधान में लिंग के आधार पर होने वाले सामाजिक भेदभाव को समाप्त करने के प्रावधान संविधान के अनुच्छेद 14-16 में किये।

संक्षेप में अम्बेडकर ने भारतीय महिलाओं के सामाजिक, आर्थिक व कानूनी सशक्तीकरण हेतु संवैधानिक एवं व्यवहारिक प्रयास किये।

===============

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची-

1. बाली, एल.आर, ''डॉ.अम्बेडकर जीवन और मिशन'' सुगत प्रकाशन कम्पनी, नागपुर (1987)
2. डॉ.पूरण मल, 'दलित संघर्ष और सामाजिक न्याय' आविष्कार पब्लिशर्स, डिस्ट्रीब्यूटर्स, जयपुर (2002)
3. गुप्ता, एम.एल., समाजशास्त्रियों के विचारों का आधार, साहित्य भवन पब्लिकेशन्स डॉ. डी.डी.शर्मा, आगरा, 2013
4. राउत, डी.डी., नारी उत्थान आन्दोलन के अग्रगण्य दूत डॉ.अम्बेडर, विधायनी, 1979
5. सिंह, डॉ.रामगोपाल, डॉ.अम्बोडकर -सामाजिक आर्थिका विचार दर्शन, म.प्र.हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल, 2016
6. www.samaybuddha.wordpress.com
7. wikipedia B.R.Ambedkar

Research Journal of Arts, Management and Social Sciences,
Vol. XVIII, Hindi.-I, Year IX, March, 2018
UGC Sl. No. 2138, Journal No.48774, Impact Factor 2.996

गोड़ जनजाति की शैक्षणिक स्थिति एवं आरक्षण के प्रावधानों से होने वाले सामाजिक गतिशीलता का अध्ययन

* ओमप्रकाश वर्मा

सारांश- *भारतीय सामाजिक संरचना के निर्माण में ग्रामीण एवं शहरी संस्कृति के अतिरिक्त जनजातीय संस्कृति का भी अमूल्य योगदान रहा है जनजातियॉ दीर्घ अवधि तक वाह्य सम्पर्क से वंचित रही है। अब ये धीरे धीरे अन्य समीपस्थ संस्कृतियों के सम्पर्क में आ रही है। जिसमें उनमें सांस्कृतिक परिवर्तन की प्रक्रिया प्रारम्भ हो गयी है। यह स्वाभाविक भी है कि उनके निकट के पड़ोसियों तथा आस-पास की आर्थिक एवं सामाजिक प्रघटनाओं को उन पर प्रभाव अवश्य पड़ता होगा। संचार एवं यातायात तथा कल्याणकारी योजनाओं के प्रभाव के कारण आधुनिक सामाजिक एवं सांस्कृति परिवर्तनों का भी प्रभाव अपरिहार्य है। ऐसी स्थिति में उनमें सामाजिक-सांस्कृतिक परिर्वतन एवं वास्तविकता है भले ही उसकी दिशा एवं दशा में अन्तर व्याप्त हो। क्योंकि भारत में जनजातियॉ भिन्न-भिन्न वंश तथा भाषा एवं परिवार के रूप में पायी जाती है। उनके भौतिक एवं जैविक परिवेश में भी उतनी ही अधिक विविधता है। इनकी अपनी अलग ही जीवन शैली, रीति-रिवाज, रहन-सहन का तरीका तथा विश्वासात्मक प्रतिमान है। ये सुन्दर वन के पंकिल जंगलों से लेकर हिमालय के उन्न्त शिखरों तक में पाये जाते हैं। ये आसाम के उष्ण कटिबंधीय घने जंगलों से लेकर राजस्थान के रेगिस्तान तक में एकसहज भाव में रहते है। वंश, भाषा, निवास तथा अर्थ तंत्र में एक विस्मय-जनक वैविध्य उनकी संस्कृति में बहुत सम्यक प्रकार से झलकता है। जो कि एक पच्चीकारी के समान उनके पड़ोसियों में उनके प्रति प्रशंसा भाव उत्पन्न करता है, किन्तु विदेशियों को राजनैतिक स्वार्थ साधन का अवसर देता है। ये जनजातियॉ देश के लिए एक साथ ही शक्ति और दुर्बलता के स्रोत है।*

सीधी जिले का संक्षिप्त परिचय- प्राकृतिक संसाधनों से परिपूर्ण सीधी जिला जनजातीय संख्या की अधिकता के कारण विभिन्न क्षेत्रों एवं विषयों के अनुसंधान कर्ताओं को अपनी ओर आकर्षित करता है। सीधी के जनजातीय बहुल्य क्षेत्रों में जनजातियों की आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ती के संसाधन वन सम्पदा है जो आर्थिक विकास के साथ-साथ पर्यावरण संतुलन को भी नियंत्रण करते हैं यहॉ की जनजातियाँ सुदूर, पर्वतो, दुर्गम और बीहण वनों में निवास करती है। इसी पर्यावरण और प्रवेश के कारण सीधी के जनजातियों की जीवन शैली, दिनचर्या शेष समाज से अलग हट कर हैं। म0प्र0 का सीधी जिला जनजातीय दृष्टि से एक महत्वपूर्ण जिला है। यहॉ के चहुँमुखी विकास हेतु आवश्यक

* सीधी (म.प्र.)

हो जाता है कि यहाँ पर निवास करनी वाली सभी जनजातियों का विकास भी हो जो सीधी की जनसंख्या का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है।

मुख्य राष्ट्रीय धारा में जनजातीय समुदाय के समावेश की अनिवार्यता के साथ-साथ भी अनेक ऐसी समस्याओं का उदय हुआ है जिनका निदान होना भारतीय समाज के लिए आवश्यक है। इसके लिए समानता के सिद्धांत के क्रियान्वयन हेत जनजातियों के लिए अनेक बुनियादी सुविधाएँ इनके विकास एवं कल्याण के लिए प्रदान की जाती रही। मूलतः ये जनजातियाँ विकास की धारा में अभी भी पूर्णरूपेण नही जुड़ सकी है। जिले में विभिन्न जाति व धर्म को मानने वाले लोग निवास करते है। यहाँ की कुल जनसंख्या में लगभग 30 प्रतिशत आबादी जनजातियों की है। जनजातीय समुदाय के अधिकांश व्यक्ति आज भी घने जंगलों में अपना जीवन-यापन व्यतीत कर रहे है।

ऐतिहासिक परिचय-

विन्ध्य वसुन्धरा की रम्य एवं सिद्धभूमि सीधी का इतिहास प्राचीन काल से ही महान परम्पराओं से विभूषित रहा है। आदिकाल से लेकर वर्तमान समय तक अनेक धार्मिक मान्यताओं तथा सांस्कृतिक उत्थानों को अपने में सन्निहित किये हुये है। सीधी की पावन भूमि में सभ्यता की लड़ी कभी खण्डित नही होने पाई है। चन्दरेह के मठ एवं शिव मन्दिर व उनकी भित्ति प्रतिमाएँ व उनकी प्राणवान शिल्पकला हमारी प्राचीनतम सभ्यता के प्रकाश स्तम्भ है सिद्ध भूमि सीधी का अतीत विन्ध्य का सांस्कृतिक वैभव है अतः इस पर सभी सोनांचल वासियों का गर्व होना चाहिए। सभ्यता के विकास में विन्ध्यवती के इस भू-भाग की देन गौरवपूर्ण रही है। यहाँ के विभिन्न अंचलों में सटी पट्ट प्रतिमाओं का प्राप्त होना यह प्रमाणित करते है कि कण-कण अपने में त्याग और बलिदान का इतिहास छुपाये हुये है।

सीधी का प्राचीन इतिहास पुरा पाषण काल के मानवों से प्राप्त होता है। उनकी बस्तियों के निसान इस अंचल में बहने वाली नदी सोन एवं उसकी सहायक बनास और महाना नदियों की घाटी क्षेत्र में विशेषकर भँवर सेन, चन्दरेह, पटपरा, सिहावल, हिनौती, बीछी, बघोर, नकझर आदि में मिलते है यह जिला संस्कृत के प्रकाण्ड विद्वान महाकवि वाणभट्ट की साधना स्थली के रूप में जाना जाता है। सम्राट अकबर के नवरत्नो के शिरोमणि मंत्री बीरबल का यह जिला जन्म स्थली है। विश्व प्रसिद्ध सफेद शेर मोहन को पहली बार यहाँ के जंगलो में पकड़ा गया और उसके वंश वृद्धि संवर्धन के लिए प्रयास किये गये।

सीधी जिला का सम्पूर्ण भू-भाग रीवा रियासत के अन्तर्गत बघेल शासको द्वारा शासित रहा बघेल अपने आप को गुजरात के सोलंकी वंश के राजपूत मानते हैं। इस वंश के प्रथम राजा व्याघ्रदेव सिंह जूदेव थे। इनके दो पुत्र हुये कर्णदेव और कंधार देव। कर्णदेव रीवा के महराजा हुये और अपने छोटे भाई कंधार देव को महाराजा की उपाधि से विभूषित करवा कर कसौटा इलाहाबाद का ईलाका प्रदान कर दिये। कंधार देव की आठवीं पीढ़ी मे महाराजा कर्ण सिंह का जन्म हुआ गद्दी के लोभ से विक्रमादित्य की अनुपस्थिती में सन् 1563 ई. से कसौटा की गद्दी पर मेंदनी सिंह ने अपना अधिपत्य स्थापित कर लिया।

भौगोलिक परिचय-

सामान्यतः किसी भी क्षेत्र के सामाजिक एवं आर्थिक विकास में वहाँ कि अनुकूल

भौगोलिक संरचनाएँ मानव के विकास में महत्वपूर्ण गति प्रदान करती है। वही पर प्रतिपूर्ति भौगोलिक संरचना परिस्थितियाँ एवं संरचनाएँ मानव के विकास को अवरूद्ध करती है। वर्तमान युग में विज्ञान एवं प्रद्योगिकी के विकसित होने से समस्त मानव जगत प्रतिकूल परिस्थियों से सामंजस्य स्थापित करने का प्रयास करता है। किसी भी क्षेत्र की भौगोलिक संरचना उस क्षेत्र के भौगोलिक परिदृश्यो के निरीक्षण एवं परीक्षण करने के लिए वहाँ का प्राकृतिक वातावरण मुख्य रूप से सहायक सिद्ध होती है। सीधी जिला संरचना की दृष्टि से अपने आप में विशेषीकृत है प्राकृतिक संम्पदाओ से सम्पन्न सीधी जिले में जगह-जगह पर धरती का उदर विदीर्ण कर पर्वतमालाओं से निकलती हुई नदियों का प्रभाव अत्यन्त मनमोहक दृश्य प्रस्तुत करता है। सीधी में ऊचे पर्वत श्रेणियाँ व गुफाएँ हैं तो कहीं-कहीं पर मैदान, वन क्षेत्र व नदियों के उद्‌गम प्रवाह है, वहीं पर शेर, तेन्दुएँ की गर्जन सुनाई पड़ती है। तो कही-कही पर कोयल के मधुर गीत व मोर के प्रमन्क नृत्य मनोहारी दृश्य प्रस्तुत करते है। अतः इस तरह से यह क्षेत्र प्रकृति के अभूतपूर्व सौन्दर्य से भरपूर है।

आरक्षण एवं संवैधानिक प्रावधान-

भारत के संविधान में पिछड़े वर्गो और विशेष रूप से अनुसूचित जातियों एवं अनु जन जातियों के लिए उपबन्ध और संरक्षण शामिल किये गये है इन संरक्षणो की व्यवस्था इन समुदाय के लोंगो के विकास के लिए सामाजिक आर्थिक, शैक्षिक, सांस्कृतिक और राज्य के अधीन सेवाओं क्षेत्र में है। अनुसूचित जातियों की कौन सी जातियाँ सामिल है और इन जातियों को किस प्रकार से संविधान के अनुछेंद 366 (24) और 341 में सामिल किया गया है।

अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के लिए दिये गये संरक्षण निम्न लिखित है। सामाजिक संरक्षण संविधान के अनुच्छेद 17, 23, 24, और 25 (2) (ख) में राज्यों के अनुसूचित जातियों के लिए सामाजिक संरक्षणो की व्यवस्था की गई है। आर्थिक संरक्षण अनुच्छेद 23, 24 और 46 अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों के व्यक्तियों के लिए आर्थिक सुरक्षा का भाग बनते है।

शैक्षिक और सांस्कृतिक संरक्षण अनुच्छेद 15, (4) राज्य को सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े नागरिको के उन्नति के लिए विशेष उपबंध बनाने की शक्ति देता है। राजनीतिक संरक्षण राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों के स्थानीय निकायों, राज्य की विधान सभाओं और संसद में अनु जातियों/अनुसूचित जन जातियों के लिए सीटों का आरक्षण भारत के संविधान अनुच्छेद 243 (घ) है।

स्थिति-

मध्यप्रदेश के रीवा संभाग के चार जिलों में एक जिला सीधी है सीधी जिला रीवा संभाग के दक्षिण पूर्वी भाग तथा सोन नदी के उत्तर-दक्षिण भाग में फैला हुआ है। इसकी स्थिति 230 47' उत्तरी अक्षांश से 240 42' उत्तरी अक्षांश तथा 810 18' पूर्वी देशान्तर से 820 49' पूर्वी देशान्त के मध्य में स्थित है। जिले की समुद्र तल से निम्नतम ऊचाई 243.68 मीटर तथा अधिकतम ऊचाई 609.60 मीटर है।

शिक्षा द्वारा गतिशीलता-

समाज की प्रकृति ही गतिशील है, और वह परिस्थतियों के अनुरूप अपने आप को ढालता रह गए। मानव समूह बाहरी एवं भीतरी शक्तियों के दबाव में मन्द अथवा तीव्र गति

से अपने आप को परिवर्तित कर लिये हैं। एक सामाजिक समुदाय के सभी सांस्कृतिक लक्षण एक साथ परिवर्तित नहीं होते। विघटनकारी शक्तियों के सम्मुख संस्कृति के केन्द्रीय उपान्तीय लक्षणों की अपेक्षा अधिक देर तक टिकते हैं। संस्कृति लक्षणों का एक संगठित तंत्र है, परिणामस्वरूप जब इनमें से एक परिवर्तित होता है तब अवशेष में भी कुछ परिवर्तन हो जाता है। परिवर्तन की यह लहर भूकम्प के लहर की भांति अपने उद्‌गम स्थल से दूरी के अनुपात से क्रमशः क्षीण होती हुई सम्पर्क तंत्र में एक साथ संचालित हो जाती है।

सबसे बढ़कर इसे सदा इसके विरूद्ध घटना सांस्कृतिक स्थिरता की घटना से जिसे कि उससे मनोवैज्ञानिक पहलुओं के अनुदारता कहा जाता है पृथकृत करना चाहिए।[2] संस्कृतियों के भौतिक पहलुओं में यह कहावत है कि- ''आवश्यकता आविष्कार की जननी है।,'' भी उतना ही सही है। आविष्कार और तज्जनित परिवर्तन की प्रक्रियाएँ कितनी जटिल है यह कई दृष्टिकोणों से स्पष्ट है। यदि किसी संस्कृति के छोटे एवं बड़े परिवर्तनों को बाहर की किसी संस्कृति में हुए परिवर्तन से तुलना की जाए तब भी इसका मेल बैठता ही है। वस्तुतः यहीं पर आविष्कार और खोजों के प्रसारित तत्व मिल जाते हैं और उन्हें नव प्रवर्तनों की श्रेणी में रखा जा सकता है। प्रत्येक नव प्रवर्तन चाहे वह खोजा गया हो या आविष्कृत अथवा प्रवेश कराया गया हो , चेतन मानवीय परीक्षण की प्रवृत्ति और मानवीय कौशल की अभिव्यक्ति है। एक नव प्रवर्तन के तत्काल बाद छोटे परिवर्तन शुरू हो जाते है और परिवर्तन की प्रक्रिया कभी भी बन्द नही होती है।

भारतीय जनजातीय समाज परिवर्तन कठिन दौर से गुजर रहा है। हमारे देश का जनजातीय समाज परम्परागत, एतिहासिक एवं रूढ़िगत धार्मिक विश्ववासों से मिश्रित समाज है। अतः उनमें परिवर्तन की प्रवित्तियॉ निश्चित ही अधिक जटिल विस्तृत और मिश्रित है, फिर भी समाज के आधुनिक बदलते परिवेश से जनजातीय संस्कृति भी परिवर्तन से अछूतो नहीं रह सकती।

शोध अध्ययन का उद्‌देश्य-

प्रस्तुत अनुसंधान का मुख्य उद्‌देश्य सीधी जिले की गोंड जनजाति की शैक्षणिक स्थिति एवं आरक्षण के प्रावधानों से होने वाली सामाजिक गतिशीलता का एक समाजशास्त्रीय अध्यनन के अन्तर्गत गोंड़ों की सामाजिक गतिशीलता के बारे में निम्नलिखित उद्‌देश्य निर्धारित किये गये है-

1. गोड़ जनजाति के शिक्षा का प्रसार होने से जीवन स्तर गतिशील हुआ है। इस समाज के बालक और बालिकाओं में शिक्षा के प्रति रूचि को अध्ययन द्वारा स्पष्ट किया गया है।
2. शैक्षणिक विकास होने से गोड़ जनजातियों में सामाजिक गतिशीलता तीव्र हुई है। रूढ़िवादिता व अंधविश्वास में कमी आयी है जिसे अध्ययन द्वारा स्पष्ट किया गया है।
3. संवैधानिक आरक्षण मिलने, शिक्षा के प्रति रूचि बढ़ने से गोड़ जनजाति मे शिक्षा का स्तर व साक्षरता में हुये परिवर्तन को अध्ययन द्वारा विश्लेषित किया गया है।
4. शैक्षणिक विकास द्वारा गोड़ जनजाति के युवाओं में वरिष्ठ और विशिष्ट पदों तक पहॅुचने के लिए आरक्षण सुविधाओं का विश्लेषण अध्ययन द्वारा किया गया है।
5. गोड़ जनजाति के युवाओं में सामाजिक, आर्थिक स्थिति सुधारने व गुणात्मक

विकास हेतु शिक्षा के प्रति जागरूकता का अध्ययन किया गया है।

6. आरक्षण नीति ने गोड़ जनजाति के सार्वजिक जीवन में होने वाले परिवर्तन को अध्ययन द्वारा स्पष्ट किया गया है।

7. गोड़ जनजातियों के जीवन को समर्थ और अधिक उपयोगी बनाने में शिक्षा के प्रभावकारी अध्ययन द्वारा विश्लेषित किया गया है।

साहित्य सर्वेक्षण–

जनजातीय समुदाय की संस्कृति के परिवर्तन के संदर्भ में अनेकोनेक अनुसंधान प्रतिपादित किये गये हैं। जनजातीय समाजों में परिवर्तन के संदर्भ में संरचनात्मक एवं प्रकार्यात्मक अध्ययन पाश्चात्य एवं भारतीय मानवशास्त्रियों का प्रमुख विषय रहा है। कतिपय मानवशास्यिों ने जनजातीय समुदाय में समसामयिक परिवर्तनों की ओर अपना ध्यान आकर्षित किया है और इस दिशा में मूल्यात्मक निष्कर्ष ज्ञापित किया गया है। इस श्रेणी में आने वाले जिन प्रमुख अध्येताओं के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं, उनमें पाश्चात्य मानवशास्त्री मैलिनोस्की (1944), फ्रेजर (1941), ब्राउन (1931), फर्थ (1929), बोऑस (1897), बेनेडिक्ट (1935), क्रोबर (1953), गिग्सन (1946), मीड (1955), हर्सकोबिट्स (1952), बार्नेट (1953), लिण्टन (1945), ओपलर (1941), मेण्डलबाम (1941), एटकिन्सन (1973), एल्विन (1947), लिण्टन (1947), गुर्डान (1914), रसेल (1975) इत्यादि। इन विद्वानों ने जनजातीय समुदयों की संस्कृति का प्रकार्यात्मक क्षेत्रीय अनुसंधान परम्परा से सम्बद्ध विश्लेषण प्रस्तुत किया है।

आरक्षण–

किसी इकाई या समूह के लिए किसी स्थान को सुरक्षित किया जाना आरक्षण का यह प्रावधान समाज में व्याप्त जातिगत विभेद के कारण उत्पन्न सामाजिक अक्षमता का परिमार्जन करने के लिए किया गया है अर्थात सामाजिक विषमता को समाप्त करने का प्रयास है। जिन जातियों को आरक्षण में शामिल किया है, वह उनके सामाजिक उत्थान के लिए किया गया है।

शैक्षणिक स्थिति–

शिक्षा से ही किसी जाति व्यक्ति और समाज का सर्वांगीण विकास होता है। गोंड़ परिवारों में 32 प्रतिशत सदस्य शिक्षित है तथा 68 प्रतिशत सदस्य अशिक्षित हैं यह शिक्षा का तात्पर्य केवल स्कूली शिक्षा से नही है अपितु साक्षरता भी सम्मिलित है। सरकारी प्रयासो व लाभो के कारण गोड़ अपने पुत्र एवं पुत्रियों दोनो को स्कूलों में भेजने लगे हैं लेकिन कुछ समय बाद पुत्रियों की शिक्षा पर ध्यान नही दिया जाता। तथा जल्दी ही उनका विवाह कर दिया जाता है परन्तु फिर भी कहा जा सकता है कि शिक्षा का प्रतिशत पहले की अपेक्षा बढ़ा है। गोड़ परिवारो में साक्षरो की संख्या 32 प्रतिशत है प्राथमिक तक 11. 67 कक्षा 6 से 8 तक के मध्य 9.33 प्रतिशत हाई स्कूल तक संख्या 5 प्रतिशत हायर सेकण्ड्री तक की शिक्षा 2.33 प्रतिशत स्नातकोत्तर शिक्षा 1.33 प्रतिशत है। वर्तमान में शासकीय योजनाओं के असर गोड़ जनजाति पर दिखाई दे रहा है। वे शिक्षा में रूचि ले रहे है आदिवासी बालक बालिकाओं के लिए निःशुल्क शिक्षा के साथ छात्रवृत्ति व अन्य प्रोत्साहन योजनाओं के कारण गोड़ समाज अपने बच्चों को उच्च शिक्षा दिलाने का प्रयास कर रहे है।

सामाजिक गतिशीलता– व्यक्तियों, परिवारों या अन्य श्रेणी के लोगो का समाज के एक वर्ग से दूसरे वर्ग में गति सामाजिक गतिशीलता कहलाती है। इस गति के परिणामस्वरूप उस समाज में उस व्यक्ति या परिवार की दूसरों के सापेक्ष सामाजिक स्थिति (स्टैटस) बदल जाता है। समाजशास्त्रीय अध्ययन में गतिशीलता से तात्पर्य एक सामाजिक व्यवस्था में एक स्थिति को पा लेने से है जिसके फलस्वरूप इस स्तरीकृत सामाजिक व्यवस्था में गतिशीलता को पा लेने से है, जिसके फलस्वरूप इस स्तरीकृत सामजिक व्यवस्था में गतिशील व्यक्ति का स्थान ऊँचा उठता है व नीचे चला जाता है। एक स्थान से ऊपर उठकर दूसरे स्थान को प्राप्त कर लेना जो उससे ऊँचा है, निस्संदेह गतिशीलता है। सरल शब्दों में यह कहा जा सकता है कि समाजशास्त्र में सामाजिक गतिशीलता का अभिप्राय है किसी व्यक्ति, समूह या श्रेणी की प्रतिष्ठा में परिवर्तन।

शोध विधि तंत्र–

प्रस्तुत शोध कार्य में संख्यात्मक एवं गुणात्मक दोनों विधियों का प्रयोग किया जाना प्रस्तावित है ताकि समग्र का उचित प्रतिनिधित्व प्राप्त हो सकें। जिले के समस्त विकास खण्ड़ो को सम्मिलित करते हुए गोड़ जनजाति की जनसंख्या को आधार मानकर अध्ययन इकाईयों का चुनाव कर सामग्री संकलित की गई है तथा अध्ययन को वैज्ञानिक, वस्तुपरक व यथार्थ बनाने का प्रयास किया गया है।

प्राथमिक तथ्य संकलन हेतु साक्षात्कार अनुसूची को प्रयुक्त किया गया है। द्वितीय तथ्यों के संकलन हेतु संबंधित सन्दर्भ ग्रन्थों, शोध आलेखों, सरकारी व गैर सरकारी प्रकाशनों व साहित्य सर्वेक्षण आदि के माध्यमों से सूचनाएँ संकलित की गई है। तत्पश्चात संकलित तथ्यों का संपादन, निर्वचन एवं सारणियन करते हुए व्याख्या और विश्लेषण के द्वारा निष्कर्ष, सुझाव एवं सामान्यीकरण प्रस्तुत किया गया है।

अध्ययन इकाईया का निर्धारण

क्र.	**विकासखण्ड**	**इकाईयों की संख्या**
1.	गोपद बनास	50
2.	सिहावल	50
3.	मझौली	50
4.	रामपुरनैकिन	50
5.	कुसमी	100
	योग	**300**

इस प्रकार जिले के चार विकास खण्डों (गोपद बनास, सिहावल, मझैली, रामपुर नैकिन) से 50×0 = 200 एवं कुसमी से 100 इकायों को सम्मिलित कर कुल 300 इकाईयों को सविचार निदर्शन विधि से चयन किया गया है।

निष्कर्ष–

आदिम जन जातियों का सर्वागीण विकास स्वतंत्र भारत की एक ज्वलन्त समस्या रही है। इसके लिए सवैधानिक प्रावधान किये गये है जिसके तहत गोड़ जन तथा अन्य आदिवासियों को अनुसूचित जन जाति कहा गया है। विभिन्न अध्ययनों के निष्कर्ष के अनुसार गोड़ भारत के मूल निवासी है उनका प्रकृति से गहन अर्न्त सम्बंध रहा है। वे अपनी

सुविधा के अनुसार प्रकृति का उपभोग करते रहे है। जिसके कारण इनकी जीविका में प्रकृति का प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है इसी कारण प्राकृतिक से जुड़ाव और भय के बीच उनके रीति रिवाज पल्लवित होते रहे है। अध्ययन से प्राप्त तथ्यों के आधार पर गोड़ जनजाती की अपनी सत्ता व राज्य व्यवस्था रही है। विदेशी शासको तथा उनसे प्रताड़ित होकर वे वन विहणो में शरण ले लिये थे। जिसकी बजह से वे वाहृय सम्पर्क से अछूते रह गये एवं कुन्ठा गस्त जीवन यापन हेतु विबश हो गये। अनुसूचित जातियों को ऊपर उठाने के लिए कई प्रयासो से आरक्षण महत्वपूर्ण है आरक्षण शासन की नीति का एक अंग है। शासन की नीतियों एवं इनके लिए प्रवधानित आरक्षण को परीक्षण एवं प्रयोग के रूप में अनुसूचित जन जातियों के समस्यायों के समाधान हेतु निर्धारित किया गया है। जिसका हर जनजाति वर्ग में कितना प्रभाव व परिवर्तन हुआ है क्या अध्ययन व निष्कर्ष की प्राप्ति समसासयिक आवश्यकता है। सीधी जिले के गोड़ जनजाति की शैक्षणिक स्थिति एवं आरक्षण के प्रावधानो से होने वाली सामाजिक गतिशीलता का अध्ययन किया गया है। जिनमें उनके परिवार रहन सहन शैक्षणिक, राजनीतिक, आर्थिक अध्ययन से जो तथ्य प्रकाश में आये है उनका अध्ययन प्रस्तुत शोध लेख में किया गया है।

===============

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची–

1. गुप्ता एवं शर्मा सामाजिक संरचना प्रक्रिया एवं परिवर्तन 1987 पृ0 111, 112,
2. आदिम जाति कल्याण विभाग का वार्षिक प्रतिवेदन, 2012
3. सीधी गजेटियर पृष्ठ - 24
4. डी.डी. झा एवं ए.के. सिंह, फेस लाइट आनन्द, प्री हिस्ट्री ऑफ सीधी डिस्ट्रिक, जनरल ऑफ एम.पी. इतिहास परिषद अंक-11 वर्ष 1980, पृष्ठ 61, 62
5. रीवा स्टेट गजेटियर, 1907 पृष्ठ 80
6. अशर्फीलाल सिंह, सीधी जिले का उपयोग।
7. गुप्ता एवं शर्मा, सामाजिक संरचना प्रक्रिया एवं परिर्वतन 1987, पृ0 178
8. भारती की जनगणना 2011, भारत में अनुसूचिज जातियाँ द्वारा भारत के महा निबंधक।
9. भारत का संविधान।
10. डॉ. आर.जी. सिंह भारतीय दलितो की समस्याएँ एवं उनका समाधान।
11. सिंह इन्द्रजीत 1976: गोड़वाना एण्ड दियर गोड्स बम्बई।

Research Journal of Arts, Management and Social Sciences,
Vol. XVIII, Hindi.-I, Year IX, March, 2018
UGC Sl. No. 2138, Journal No.48774, Impact Factor 2.996

स्वामी विवेकानन्द जी के सपनों का भारत : स्त्रियों के संदर्भ में (कतिपय तथ्य)

* प्रज्ञा मिश्रा

सारांश– ***स्वामी विवेकानन्द जी ने महर्षि वाल्मीकि की सीता की तरह सर्वगुण सम्पन्न एवं धैर्यवान त्यागी नारी की कामना भावी भारत के लिये की है। एक आदर्श नारी शिक्षित माता एवं बहादुर बेटी पुनः भारत को विश्व गुरु तक पहुँचा सकती है।***

यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः।
यत्रैतास्तु न पूज्यन्ते सर्वास्तत्राफलाः क्रियाः।।

स्वामी विवेकानन्द के सपनों के स्वर्णिम भारत में स्त्रियों की स्थिति वेदों के समान सम्मानजनक, शिक्षित, आदर्श, सर्वगुण सम्पन्न एवं ऋषिकाओं के रूप में परम पावन एवं सर्वोपरि है।

भारतीय स्त्रियों को जैसा होना चाहिए, सीता उनके लिए आदर्श हैं। स्त्री-चरित्र के जितने भारतीय आदर्श हैं, वे सब सीता के ही चरित्र से उत्पन्न हुए हैं और समस्त आर्यावर्त भूमि में सहस्त्रों वर्षो से वे स्त्री-पुरुष, बालक की पूजा पा रहीं हैं।

भारत में जो कुछ पवित्र है, विशुद्ध है, जो कुछ पावन है, उन सबका 'सीता' शब्द ही परिचायक है। इसलिए जब ब्राह्मण किसी कुल-वधू को आशीर्वाद देते हैं, तो कहते हैं- 'सीता बनों'। वे सब सीता की सन्तान हैं- जीवन में उनका एकमेव प्रयत्न यही होता है कि वे सीता बनें- सीता सी शुद्ध घोर और सर्वसहा, सीता सी पति परायण और पतिव्रता बने। सीता भारतीय आदर्श भारतीय भाव की प्रतिनिधि हैं, मूर्तिमयी भारतमाता है।

हमारी नारियों को आधुनिक भावों में रँगने की जो चेष्टाएँ हो रही है, यदि उन सब प्रयत्नों में उनको सीता-चरित्र के आदर्श से भ्रष्ट करने की चेष्टा होगी, तो वे सब असफल होंगे, जैसा कि हम प्रतिदिन देखते हैं। भारतीय नारियों से सीता के चरण चिह्नों का अनुसरण कराकर अपनी उन्नति की चेष्टा करनी होगी, यही एकमात्र पथ है।

मैं दिव्य दृष्टि से देख रहा हूँ कि यदि भारत की नारियाँ देशी पोशाक पहने भारतीय ऋषियों के मुँह से निकले हुए धर्म का प्रचार करें तो एक ऐसी बड़ी तरंग उठेगी जो सारे पश्चिमी संसार को डुबा देगी।

क्या मैत्रेयी, खना, लीलावती, सावित्री और उभयभारती की इस जन्मभूमि में किसी और नारी को यह करने का साहस नहीं होगा? प्रभु ही जानता है। इंग्लैण्ड पर हम लोग आध्यात्म के बल से अधिकार कर लेंगे, उसे जीत लेंगे- नान्यः पन्थाः विद्यतेघ्यनाय- इसके सिवाय मुक्ति का और दूसरा मार्ग ही नहीं। अपने विजेताओं की अपनी अध्यात्म-शक्ति से

* प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष, संस्कृत विभाग, म.गाँ.चि.ग्रा.वि.वि. चित्रकूट, सतना (म.प्र.)

हमें देवता बनाना होगा।

हजार वेदज्ञ ब्राह्मणों की सभा में गार्गी ने गर्व के साथ याज्ञवल्क्य को ब्रह्मज्ञान के शास्त्रार्थ के लिए आह्वान किया था। इन सब आदर्श विदुषी स्त्रियों को जब उस समय अध्यात्म ज्ञान का अधिकार था, तब फिर आज स्त्रियों को वह अधिकार क्यों न रहेगा? एक बार जो हुआ है, वह फिर अवश्य ही हो सकता है। इतिहास की पुनरावृत्ति हुआ करती है। हम स्त्री और पुरुष हैं, हमें यही न सोचकर सोचना चाहिए कि हम मानव हैं, जो एक दूसरे की सहायता करने और एक दूसरे के काम आने के लिए जन्में हैं। किसी भी राष्ट्र की प्रगति का सर्वोत्तम परिमाण है, वहाँ की महिलाओं के साथ होने वाला व्यवहार।

स्त्रियों को पढ़ने एवं पुरुषों के समान अच्छी शिक्षा प्राप्त करने की स्वाधीनता मिले। अज्ञान एवं दासत्व के रहते व्यक्तिगत विकास असम्भव है। पहले अपनी स्त्रियों को शिक्षित करने की व्यवस्था करो और उन्हें स्वयं की चिन्ता करने दो, तत्पश्चात वे स्वयं ही तुम्हें बता देंगी कि उन्हें किन समाज सुधारों की आवश्यकता है। उनके मामलों में हस्तक्षेप करने वाले तुम कौन होते हो?

कन्याप्येवं पालनीया शिक्षणीयातियत्नतः।

जैसे 30 वर्ष तक ब्रह्मचर्य-पालन-पूर्वक पुत्रों की शिक्षा होनी चाहिए, इसी तरह पुत्रियों की भी शिक्षा होनी चाहिए। इसका ध्यान रखो कि प्रत्येक को किसी न किसी ऐसी कला का ज्ञान हो जाय, जिसके द्वारा आवश्यकता पड़ने पर वे अपनी जीविका अर्जन कर सकें।

हमें नारियों को ऐसी स्थिति में पहुँचा देना चाहिए, जहाँ वे अपनी समस्या को अपने ढंग से स्वयं सुलझा सकें। उनके लिए यह काम न कोई कर सकता है और न किसी को करना ही चाहिए और हमारी भारतीय नारियाँ संसार की अन्य किन्हीं भी नारियों की भाँति इसे करने की क्षमता रखती हैं।

क्या 'स्त्री' संज्ञा केवल भौतिक शरीर मात्र को ही दी जाने के लिए है? हिन्दू मन उन आदर्शों के प्रति सशंकित रहता है, जिनमें यह कहा जाता है कि मांस को मांस से ही संलग्न रहना चाहिए। नहीं, नहीं, देवि! मांसलता से संबद्ध किसी भी वस्तु से तुम्हें संलग्न नहीं किया जायगा। तुम्हारा नाम तो सदा ही पवित्रता का प्रतीक रहा है, जिसके पास वासना कभी फटक भी नहीं सकती?

इस प्रकार हम भारत की आवश्यकता के लिए महान निर्भीक नारियाँ तैयार करेंगे। नारियाँ जो संघमित्रा, लीला, अहल्याबाई और मीराबाई की परम्पराओं को चालू रख सकें-नारियाँ जो वीरों की माताएँ होने के योग्य हों, इसीलिए कि वे पवित्र और आत्मत्यागी हैं और उस शक्ति से शक्तिशाली है, जो भगवान के चरण छूने से आती हैं।

इस प्रकार स्वामी विवेकानन्द जी ने महर्षि वाल्मीकि की सीता की तरह सर्वगुण सम्पन्न एवं धैर्यवान त्यागी नारी की कामना भावी भारत के लिये की है। एक आदर्श नारी शिक्षित माता एवं बहादुर बेटी पुनः भारत को विश्व गुरु तक पहुँचा सकती है।

मूँगा मोती मुक्ता माणिक रत्न नहीं ममता बन जाओ।
स्त्री वनिता नारी महिला अंश नहीं माता बन जाओ।।
जीजाबाई बनो तुम मैया बेटी शिवा बनाओ।
आतंक खतम करके तुम मैया रामराज ले आओ।।

===============

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची-

1. विवेकानन्द साहित्य

Research Journal of Arts, Management and Social Sciences,
Vol. XVIII, Hindi.-I, Year IX, March, 2018
UGC Sl. No. 2138, Journal No.48774, Impact Factor 2.996

विकास की डगर पर जनजातीय समाज

* मंजूलता कश्यप

==

सारांश– *हमारे देश की संस्कृति में जनजातियों का विशेष महत्व है। भारत में जनजातियों की जनसंख्या कुल जनसंख्या का 8.2 प्रतिशत है। लम्बी अवधि तक उपेक्षित अविकसित रहने के कारण स्वतंत्र भारत के संविधान के अनुच्छेद 342 द्वारा राष्ट्रपति को अधिकार दिया गया कि उनके द्वारा किसी भी पिछड़े आदिम समुदाय को जनजाति घोषित किया जा सकता है।*

==

मुख्य शब्द– जनजातीय समाज, पिछड़ेपन के कारण, भावी रणनीति

अनुसूचित जनजाति का निर्धारण निम्नलिखित कसौटियों के आधार पर किया जाता है-

* जिस जनजाति की उत्पत्ति किसी जनजातीय समुदाय द्वारा हुई हो।
* भौगोलिक रूप से पृथक किसी पिछड़े क्षेत्र में उसका निवास हो।
* जिसका जीवन आदिम विशेषताओं से युक्त हो।
* जो जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में पिछड़ी हुई हो।

इन सिद्धांतो का वर्णन मानवशास्त्री - वेरियर ऐलविन की पुस्तक - ए फिलासफी ऑफ नार्थ इस्टर्न फ्रंटियर एरिया (नेफा) की प्रस्तावना में नेहरू जी ने किया था।

प्रथम प्रधान मंत्री पं. जवाहर नेहरू ने जनजातीय विकास के लिए पॉच सूत्रीय कार्यक्रम का उल्लेख किया जिन्हे ''जनजातीय पंचशील'' कहा जाता है। इसके आधार पर 1956 में जनजातियों के विकास की रूपरेखा बनायी गई।

* जनजातीय जनसंख्या को अपने परिवेश में ही विकसित होने दिया जाना चाहिए। उन पर कुछ भी आरोपित करने से बचा जाए।
* जनजातीय क्षेत्रों की भूमियों और वनो पर जनजातियों का अधिकार उचित है।
* जनजातियों के प्रशासन और विकास के लिए उन्ही लोगों की टीम विकसित करनी चाहिए।
* जनजातीय क्षेत्रो में प्रशासन की गहनता पर विशेष जोर नहीं देना चाहिए। इनकी धार्मिक और सामाजिक मान्यताओं को ध्यान में रखकर कार्य करना चाहिए।
* जनजातीय क्षेत्रो में किए गए विकास कार्यो का मूल्यांकन विकसित किए गए मानवीय पूंजी एवं चरित्र के आधार पर किया जाना चाहिए न कि व्यय की गयी राशि और उत्पादन आंकड़ो के आधार पर।

जनजातीय क्षेत्रों एवं जनजातियों का चहुँमुखी विकास तभी होगा जब स्थानीय

=========================

* सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र), ठाकुर छेदीलाल शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय जांजगीर, जिला-जांजगीर चाम्पा (छ.ग.)

परम्परा, हस्तशिल्प क्षेत्रीय संसाधनों को सुरक्षित रखते हुए आधुनिक विकास के पथ पर चला जाए। जनजातीय जनसंख्या के विकास प्रक्रिया को इस प्रकार निर्धारित करना चाहिए ताकि वे अपनी सांस्कृतिक और क्षेत्रीय विरासत अक्षुण्ण बनाए रखते हुए राष्ट्रीय विकास की मुख्य धारा में अपना सम्यक स्थान बना सके। भूमिहीन आदिम जनजातीय परिवारों को उनके गांवो के नजदीक सरकार को भूमि आबंटन करना चाहिए। जिससे वे समाज के मुख्यधारा में शामिल हो सके। इनके लिए चलाए जा रहे कार्यक्रमों एवं नीतियों की उपयोगिता का मूल्यांकन किया जाना चाहिए एवं आवश्यकतानुसार समय- समय पर नीतियों में संशोधन करना चाहिए।

अध्ययन का उद्देश्य– जनजातीय समाज की स्थिति विकास, पिछड़ेपन के कारणों को जानना। विकास के लिए भावी रणनीति।

अध्ययन विधि– द्वितीय सामंको पर आधारित।

भारत की स्वतंत्रता की लड़ाई में जनजातियों की निर्णायक भूमिका रही लेकिन भारत के विकास में उन्हे उनकी भागीदारी से वंचित रखा गया। इसकी एक झलक तो भारतीय इतिहास लेखन में ही पा सकते है। जहाँ लम्बे समय तक उन्हे स्थान ही नहीं दिया गया। जब इतिहास लेखन में 'नीचे से देखने' (सबाल्टर्न) के दृष्टिकोण विकसित हुआ तब उनकी भूमिका सामने आ सकी। उनकी अपनी विशिष्ट संस्कृति, उत्पादन के भिन्न तरीके, जीवन जीने की शैली और आधुनिकीकरण से दूरी तथा आर्थिक दृष्टिकोण में उनके स्थान का निर्धारित न हो पाना, आधुनिक विकास से दूरी के लिए प्रमुख कारण बना। यद्यपि भारतीय संविधान में उन्हे पर्याप्त संरक्षण और सहयोग देने के उद्देश्य से कुछ सुरक्षा उपाय और पंचवर्षीय योजनाओं के अंतर्गत भारत की विकास की रणनीति में उनके विकास को काफी महत्व दिया गया है। इसके बाद भी वें ''वंचित'' की श्रेणी से ज्यादा आगे बढ़ नहीं पाए है।

भारत में ही नहीं बल्कि पूरी दुनिया में जनजातियों के संदर्भ में विकास और प्रयास तो दूर उनके विषय मे स्पष्ट और सुलझे विचारों का भी अभाव रहा है। यही कारण है कि आपैनिवेशिक काल से लेकर अब तक कई बार उन्हे भिन्न-भिन्न नामों से चिन्हित या इंगित किया गया। कभी उन्हे क्षेत्रीयता के आधार पर जानने की कोशिश की जाती है तो कभी जातीयता या नस्ल के आधार पर। कभी इन्हे आर्थिक समस्याओं के आधार पर एकत्रित किया जाता है तो कभी संस्कृति के आधार पर। इन जनजातियों की सही गणना भी नहीं हो पाती। इसलिए वास्तविकता तो यह है कि इनकी सही स्थिति का अनुमान लगाना कठिन कार्य होता है। भारत में अधिकांश जनजातियाँ आज भी वनो में निवास करती है और वे वन्य, प्राकृतिक, साधनों पर ही निर्भर करती है। कुछ कबीलों की अर्थव्यवस्था, खाद्य पदार्थो की संग्रह और पिछड़ी कृषि के बीच की है। तीसरी आर्थिक श्रेणी में देश की अधिकांश जनजातीय जनसंख्या को रखा जा सकता है, यह श्रेणी उन जनजातियों की है जिनके जीविकोपार्जन का मुख्य साधन कृषि है लेकिन जिन्होने वनों की निकटता के कारण संग्रह को दूसरे मुख्य व्यवसायों के रूप में अपना लिया है।

वर्तमान में भारत में जनजातियों की संख्या देश की कुल जनसंख्या के 8 प्रतिशत के आसपास हैं। उल्लेखनीय है कि इस जनजातीय जनसंख्या का 90 प्रतिशत से भी ज्यादा ग्रामीण है। 8 प्रतिशत शहरी क्षेत्र में निवास करता है। भारत की जनजातियों का सर्वाधिक

संकेन्द्रण मध्यप्रदेश (1.22 करोड़) में है पश्चात् महाराष्ट्र (85.77 लाख), उड़ीसा (81,45), गुजरात (74.81 लाख) तथ राजस्थान (70.77 लाख) का स्थान आता है। लेकिन यदि जनसंख्या में कुल जनजातीय प्रतिशतता को देखे तो वह मिजोरम (94.5 प्रतिशत) और लक्षद्वीप (94.51 प्रतिशत) में सर्वाधिक है। इसके पश्चात् नागालैण्ड (89.1 प्रतिशत) और मेघालय (85.9 प्रतिशत) आते है। देश की 68 प्रतिशत जनजातीय जनसंख्या केवल 7 राज्यों में निवास करती है। (स्रोत-योजना जनवरी 2016, पृ. क्र. 43)

जनजातीय कल्याण हेतु सरकार द्वारा किए गए प्रयास–

स्वतंत्रता से पूर्व– जनजातियों को शोषण से मुक्ति दिलाने एवं उनकी सांस्कृतिक धरोहर को सुरक्षित रखने के उद्देश्य से 1874 में ब्रिटिश सरकार ने शेड्यूल्ड डिस्ट्रिक्ट एक्ट लागू किया। इस एक्ट द्वारा जनजातियों के अधिकारों को सुरक्षा दी गई। सन् 1918 में मांटेग्यू चेम्सफोर्ड ने सुझाव दिया कि जनजातीय क्षेत्रों को प्रांतीय सरकारों के अधिकार क्षेत्र से बाहर रखा जाए। भारत सरकार ने 1919 में एक अधिनियम बनाकर जनजातीय क्षेत्रों को दो भागों में विभाजित कर दिया। इसके अंतर्गत दूरदराज के कुछ क्षेत्रों को अत्यधिक पिछड़ा क्षेत्र मानते हुए प्रशासनिक सुधारों से मुक्त रखा गया। जबकि अन्य क्षेत्रों को अत्यधिक संघीय व प्रांतीय सरकारों में विभाजित कर दिया गया। साइमन कमीशन ने जनजातियों को शिक्षित एवं जागरूक बनाने पर बल दिया।

स्वतंत्रता के पश्चात्– पहली पंचवर्षीय योजना में 43 विशेष बहुउद्देशीय जनजातीय परियोजनाएं बनाई गई। दूसरी पंचवर्षीय योजना में इन्हे जारी रखा गया। तृतीय पंचवर्षीय योजना में उन सामुदायिक विकास खण्डों को जनजातीय विकासखण्डों में बदल दिया गया जिनमें जनजातीय जनसंख्या 66 प्रतिशत या अधिक थी। जनजातीय समस्याओं के अध्ययन के लिए केन्द्र सरकार ने 1971 में श्री एस.के. बाबा की अध्यक्षता में एक अध्ययन दल नियुक्त किया था। इस अध्ययन दल ने जनजातीय क्षेत्रों में बहुउद्देशीय सहकारी समितियों (लैम्प्स) की स्थापना की सिफारिश की थी। लैम्प्स का मुख्य उद्देश्य जनजातियों को एक ही स्थान पर विभिन्न सुविधाएं उपलब्ध कराना है। 1972 में प्रसिद्ध समाजशास्त्री एस.सी दुबे की अध्यक्षता वाली समिति की सिफारिश पर पांचवी पंचवर्षीय योजना में जनजातीय क्षेत्रों के सर्वांगीण विकास के लिए जनजातीय उपयोजना शुरू की गई, जो आज भी जारी है। छठवीं योजना में लैम्प्स मुख्य रूप से पहाड़ी और जनजातीय क्षेत्रो में ही क्रियाशील थे। 1985 से गरीबी उन्मूलन कार्यक्रमों के माध्यम से जनजातीय परिवारों को ऊपर उठाने का प्रयास किया गया। 1987 में जनजातीय सहकारी विपणन संघ तथा 1989 में राष्ट्रीय अनुसूचित जाति तथा अनुसूचित जनजाति वित्त एवं विकास निगम स्थापित किया गया। अनुसूचित जनजाति अधिनियम 30 जनवरी 1990 से लागू है। जनजातीय सशक्तिकरण तथा उनके कल्याण और विकास कार्यक्रमों को सुदृढ़ करने के लिए 1999 में जनजातीय मामलों का पृथक मंत्रालय स्थापित किया गया। जनजातियों के लिए 2001 में पृथक राष्ट्रीय अनुसूचित जनजाति वित्त एवं विकास निगम स्थापित किया गया। जनजातियों को अपने अधिकार क्षेत्र से संबद्ध वन भूमि पर खेती करने के अधिकार दिलाने के उद्देश्य से अनुसूचित जनजाति और अन्य पारम्परिक वनवासी (वन अधिकारों को मान्यता) कानून 2006 को संसद में 18 दिसम्बर 2006 को पारित किया गया। इसे लागू करने के लिए 31 दिसम्बर 2007 को अधिसूचना जारी की गई। जनजातीय समुदायों पर राष्ट्रीय नीति 2006

का प्रारूप 21 जुलाई 2006 को जनजातीय कार्य मंत्रालय द्वारा जारी किया गया। 'मनरेगा' अप्रैल 2008 से देश के संपूर्ण ग्रामीण जिलो में लागू कर दिया गया है। इस योजना से जनजातियों को उनके निवास स्थान से 5 कि.मी. की परिधि में रोजगार उपलब्ध हो रहा है साथ ही स्थानीय आवश्यकताओं के अनुरूप निर्माण कार्य भी संपन्न हो रहे है।

जनजातीय समुदायों पर राष्ट्रीय नीति 2006– इस नीति का प्रारूप 21 जुलाई 2006 को जनजातीय कार्य मंत्रालय द्वारा जारी किया गया।

* इन क्षेत्रों एवं समुदायों का समग्र विकास किया जाए जिससे सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, भौगोलिक एवं प्रशासनिक प्रयास सम्मिलित हो।
* शिक्षा को प्राथमिकता देते हुए पोषण, रोजगार छात्रावास, कौशल स्वरोजगार तथा सहजता को ध्यान में रखा जाए।
* परम्परागत उपचार पद्धतियों का मानकीकरण कर उसे व्यवस्थित रूप दिया जाए।
* विस्थापन की समस्या का समाधान एकीकृत रूप से किया जाए। विस्थापन की स्थिति में इन्हे पर्याप्त भूमि, संसाधन वित्तीय सहायता, मुआवजा तथा पुनर्वास, सुविधाएं मिले।
* वनो के साथ इनके सहजीवी संबंधो को देखते हुए इन क्षेत्रो में बैंक, स्कूल, अस्पताल तथा अन्य संस्थागत लाभ आदि उपलब्ध हो।
* भूमि पर इनके मालिकाना हक को सुनिश्चित करते हुए बॅटाई खेती के क्षेत्र में पर्याप्त सुधार किया जाए।
* भूमि संबंधी रिकार्ड बनाकर, पंचायत में उनका प्रस्तुतीकरण करके, रिकार्ड के अभाव में मौखिक गवाही को मानकर ऐसी व्यवस्था की जाए, कि जनजातीय लोगों की भूमि का गैर जनजातीय व्यक्तियों तक स्थानांतरण न हो।
* जनजातीय लोगों की बौद्धिक संपदा का वैधानिक एवं संस्थागत प्रयासों से संरक्षण किया जाए।
* जनजातीय भाषाओं (बोलियों) का संरक्षण एवं प्रलेखीकरण किया जाए।
* आदिम जनजातीय समूहों का विकास एवं कल्याण सुनिश्चित किया जाए।
* अनुसूचित क्षेत्रो में प्रशासन को सुशासन, शांति भाईचारा, विकास तथा कौशल निर्माण में सुदृढ़ किया जाए।
* आदिवासी परिवेश, इनकी समस्याओं एवं विकास के संदर्भ में शोध कार्यो को प्रोत्साहन दिया जाए।
* इन क्षेत्रो के विकास एवं कल्याण में स्वयं सेवी संस्थाओं से सहयोग लिया जाए।

(1) **राष्ट्रीय अनुसूचित जनजाति वित्त एवं विकास निगम द्वारा संचालित योजनाएँ**–

* **कृषि क्षेत्र से संबंधित योजनाएँ**– ट्रेक्टर-ट्राली योजना, बकरी पालन योजना, मुर्गी पालन योजना, सुअर पालन योजना, डेयरी फार्मिंग योजना, कृषि उत्पादकता बढ़ाओ योजना, लघु वनोंपज क्रय-विक्रय योजना।
* **यातायात क्षेत्र से संबंधित योजनाएं**– मिनी ट्रक योजना, जीप टैक्सी योजना, डम्पर योजना, मिनी बस योजना, ऑटो-रिक्शा योजना, ट्रक योजना, बस योजना, साइकल रिक्शा योजना, ट्रेवल एजेन्सी।

* **सेवा क्षेत्र से संबंधित योजनाएँ**– फोटो कापीयर योजना, जनरल स्टोर योजना, मिनी राईस मिल योजना, आटा चक्की योजना, एस.टी.डी./पी.सी.ओ. योजना, टेंट हाउस योजना, मेडिकल स्टोर योजना, पान दुकान योजना।
* **उद्योग क्षेत्र से संबंधित योजनाएं**– ईट निर्माण योजना, झाडू निर्माण योजना, प्रिंटिग प्रेस योजना, ढाबा योजना, कालीन बुनाई योजना, बॉस टोकरी योजना।

(2) **नाबार्ड योजना**– नाबार्ड योजना के अंतर्गत बैंको के माध्यम से ऋण स्वीकृत कराकर निगम द्वारा अनुदान दिया जाता है। सिंचाई योजना को छोड़कर इस योजना में अनुदान राशि योजना लागत का 50 प्रतिशत या अधिकतम 10000 रू. है। सिंचाई योजनाओं में योजना लागत का 50 प्रतिशत अनुदान दिया जाता है। इसमें कोई वित्तीय सीमा नहीं है।

(3) **विशेष पिछड़ी जनजाति हेतु छात्रवृत्ति**– बैगा, सहरिया, भारिया में शिक्षा के स्तर को देखते हुए कक्षा पहली से 5वीं तक के छात्रों के लिए छात्रवृत्ति योजना वर्ष 2005-06 से प्रारंभ की गई है।

(4) **शिक्षा के क्षेत्र में संबंधित योजनाएँ**– विद्यालयों में सुसज्जित प्रयोगशालाएँ, समृद्ध पुस्तकालय, आवश्यक खेल सामग्री सहित अनुभवी एवं सुयोग्य प्राचार्य का मार्गदर्शन तथा विद्वान शिक्षकों द्वारा अध्यापन की व्यवस्था की गई है।

सर्वश्रेष्ठ विद्यालय छात्रावास एवं आश्रमों का चयन कर उन्हे पुरस्कृत करने की योजना वर्ष 2005-06 से प्रारंभ की गई है। विशेष पिछड़ी जनजाति के बालकों को निःशुल्क गणवेश प्रदान किए जाते है।

विकासखण्ड मुख्यालयों पर भी उत्कृष्टता शिक्षा केन्द्र प्रारंभ किए गए है। जिनमें निवास करने वाले विद्यार्थियों को समस्त आवश्यक सुविधाएं तथा विशेष प्रशिक्षण का प्रावधान रखा गया है।

विदेश अध्ययन छात्रवृत्ति योजना में यदि कोई आदिवासी विद्यार्थी विदेश में जाकर उच्च शिक्षा प्राप्त करना चाहता है, तो उस पर आने वाले संपूर्ण व्यय का भार विभाग वहन करता है।

छात्रावासों एवं आश्रमों में समस्त सुविधाओं की उपलब्धि सुनिश्चित करने के लिए इनका सुदृढ़ीकरण किया गया है।

जनजातीय महिलाओं के लिए शैक्षणिक योजनाएं–

1. शालाएं, छात्रावास/आश्रम, उत्कृष्ट शिक्षा केन्द्र का संचालन।
2. छात्रवृत्ति, छात्रावासों में अतिरिक्त छात्रवृत्ति पोस्ट मेट्रिक छात्रवृत्ति केन्द्र।
3. निःशुल्क गणवेश, साइकिल प्रदाय योजना।
4. कन्या साक्षरता प्रोत्साहन- जनजातीय बालिकाओं को शिक्षा हेतु प्रोत्साहन देने के उद्देश्य से कक्षा 5वीं, 8वीं एवं 10वीं परीक्षा पास कर अगली कक्षा में नियमित रूप से प्रवेश लेने वाली छात्रा को क्रमशः 500, 1000 एवं 2000 रू. की प्रोत्साहन राशि दी जाती है।
5. सिविल सेवा प्रोत्साहन योजना- संघ लोक सेवा आयोग द्वारा आयोजित की जाने वाली सिविल सेवा परीक्षाओं में विभिन्न स्तरों पर सफल होने वाली प्रतियोगियों के

लिए प्रोत्साहन राशि का प्रावधान है। ऐसे प्रतियोगी जिनके माता/पिता/अभिभावकों की वार्षिक आय 1.20 लाख से अधिक न हो उनको प्रारंभिक परीक्षा उत्तीर्ण करने पर 20000 रू. मुख्य परीक्षा उत्तीर्ण करने पर 30000 रू. तथा चयन होने पर 25000 रू. की प्रोत्साहन राशि प्राप्त करने की पात्रता होगी।

जनजातीय महिला विकास के लिए तीन प्रमुख आधार है - प्रथम - आर्थिक आत्म निर्भरता, द्वितीय - घरेलू जीवन में महिलाओ को आदर, तृतीय- पुरूषो के दृष्टिकोण में सुधार। आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर व्यक्ति शेष सभी अधिकार प्राप्त करने में सक्षम होता है, यदि जनजातीय महिला आर्थिक दृष्टिकोण से आत्मनिर्भर है तो वह राजनीतिक पारिवारिक सामाजिक, स्वतंत्रता एवं अधिकार प्राप्त कर सकती है। सामाजिक-पारिवारिक सम्मान एवं मान्यता तथा पुरूष वर्ग के सकारात्मक दृष्टिकोण के अभाव में आर्थिक आत्मनिर्भरता भी पूर्ण नहीं हो सकती।

वर्तमान स्थिति–

अनुसूचित जनजातियों के लिए सरकार द्वारा किए जा रहे प्रयासों के बावजूद आज भी जनजातियों का मानव विकास सूचकांक शेष जनसंख्या की तुलना में बहुत ही निम्न है। अपने अधिकारों की जानकारी नहीं होने के कारण उन तक इनका लाभ नहीं पहुंच पा रहा है। परिणामस्वरूप आज भी वे अपने प्राकृतिक आवास एवं भूमि से बेदखली के भय और काश्तकारी असुरक्षा के माहौल में जी रहे है। स्वास्थ्य सुविधाओं के लाभ भी उन तक नहीं पहुंच पा रहे है, जिससे शिशु मृत्यु दर काफी अधिक है।

करता है कि जनजातियों का विकास उनकी अपनी प्रतिभा की सीमाओं में ही संभव है। इससे पृथक अब यही स्वीकृत किया जाने लगा है कि जनजातियों की विशिष्टताओं को बचाए रखते हुए उन्हे राष्ट्रीय विकास की मुख्यधारा से जोड़ा जाना चाहिए।

जनजातियों को समाज के हाशिए पर रखे जाने का इतिहास बहुत पुराना है। औपनिवेशिक काल में ऐसे अनेक कानून बनाए गए जो जनजातीय लोगों को भूमि, वन और अन्य प्राकृतिक संसाधनों से वंचित करते थे। 1927 के भारतीय वन अधिनियम के माध्यम से ''रेस नलियस'' का सिद्धांत लागू किया गया जिसका अर्थ यह था कि सरकार किसी भी ऐसी सम्पत्ति को अपने कब्जे में ले सकती थी जिसके लिए मालिकाना हक का कोई वैधानिक दस्तावेज प्रस्तुत न किया जा सके। इस सिद्धांत का इस्तेमाल करते हुए ब्रिटिश सरकार ने विस्तृत भू-भाग वन विभाग को सौंप दिए थे जिसकी स्थापना इस कानून को लागू करने के लिए की गई थी। इसी प्रकार ''एमिनेन्ट डोमेन'' के विधान ने सरकार

का अधिग्रहण कर सकती थी। इस कानून की उत्पत्ति 1894 के भूमि अधिग्रहण अधिनियम से हुई थी।

उद्योग लगाने, खनन कार्यों, बड़े बांधो में निर्माण जैसी विभिन्न विकास परियोजनाओं के लिए जनजातियों को विस्थापित और अधिकारों से वंचित किया जाता रहा है। कुछ अनुमानों के अनुसार देश में ऐसी विकासात्मक गतिविधियों को अंजाम देने के कारण करीब एक करोड जनजातियों को विस्थापित किया गया और उन्हे अपनी आजीविका गॅवानी पड़ी।

जनजातियों के पिछड़ेपन के कारण–

जनजातियों का एक बड़ा हिस्सा भूमिहीन है। ये प्राचीन पद्धति से कृषि कार्य करते है एवं साधनों का अभाव है। सिंचाई सुविधा एवं पेयजल का संकट है। आज भी रूढ़िवादी अंधविश्वास से घिरे हुए है। ऋण के बोझ से दबे है एवं साहूकारों के शोषण का शिकार है। इनके गॉवों तक जाने के लिए अधिकांश जगह आज तक सड़के नहीं बनी है। अधिकांश जनजातीय गॉव उग्रवाद से प्रभावित है जो विकास न होने का एक प्रमुख कारण है। वनो की निरन्तर अवैध कटाई एवं जंगली जानवरों का अवैध शिकार जारी है। ये लोग समाज के अन्य वर्गों से अलग थलग है। सरकारी विकास कार्यक्रम से अधिकांश लोग अनभिज्ञ है।

भावी रणनीति– इनके सामाजिक आर्थिक विकास में निम्नलिखित सुझाव सहायक सिद्ध हो सकते है–

जनजातियों के गॉवो तक पहुंचने के लिए संपर्क मार्ग का निर्माण करना चाहिए। सभी विकास कार्यक्रमों का क्रियान्वयन नियोजित तरीके से किया जाना चाहिए एवं नियोजन में युवकों को पूर्ण भागीदार बनाना चाहिए। जिससे ये विकास कार्यक्रमों से लाभान्वित हो सके। कार्यक्रम के क्रियान्वयन में सम्मिलित व्यक्तियों एवं संस्थाओ की जिम्मेदारी सुनिश्चित की जानी चाहिए। कार्यक्रम में सम्मिलित व्यक्ति एवं संस्था को जनजातीय भाषा की जानकारी होनी चाहिए जिससे इनसे संवाद स्थापित किया जा सके। सरकार को सिंचाई सुविधा के साथ-साथ सभी कृषि सुविधाएं उपलब्ध करानी चाहिए। कृषि के आधुनिक तरीके अपनाने हेतु प्रेरित करना चाहिए। जनजातियों को उनके स्वभाव के अनुसार उनकी आर्थिक स्थिति ठीक करने हेतु छोटे-छोटे व्यवसायों से जुड़ने के लिए सकारात्मक पहल करनी चाहिए। जैसे - जंगली जड़ी बूटी, पत्तल, मधुमक्खी पालन, बॉस से निर्मित वस्तुएं आदि। उन्हे छोटे-छोटे ऋण की सुविधा प्रदान की जाए, सरकारी एजेन्सियों से ऋण लेने के लिए प्रेरित करना चाहिए। भूमिहीन जनजातीय परिवारो को उनके गॉवो के समीप भूमि आबंटन करना चाहिए जिससे वे समाज की मुख्यधारा में सम्मिलित हो सके। बंजर भूमि पर वृक्षारोपण को प्रोत्साहित करना चाहिए। बच्चों को स्कूल भेजने के लिए धीरे-धीरे प्रोत्साहित करना चाहिए। सरकार को वनो की अवैध कटाई एवं जानवरों के अवैध शिकार को रोकने के लिए कड़े कदम उठाना चाहिए। गैर-सरकारी संस्थाओं को इनके विकास में योगदान देने के लिए सहायता प्रदान करनी चाहिए एवं प्रोत्साहित करना चाहिए। वन विभाग के अधिकारियों एवं कर्मचारियों को उनके साथ अपने संबंधो को और सुधारने के लिए प्रयास करने चाहिए जिससे वे लोग अपनापन महसूस कर सकें। सरकार को इनके गॉवों को उग्रवाद मुक्त करने के लिए प्रयास करने चाहिए। इनके लिए चलाये जा रहे कार्यक्रमों एवं नीतियों की उपयोगिता का मूल्यांकन किया जाना चाहिए एवं आवश्यकतानुसार समय-समय पर नीतियों में संशोधन करना चाहिए।

जनजातियों के प्रत्येक परिवार को कृषि के लिए इतनी भूमि दी जानी चाहिए जो खाद्यान्न में आत्मनिर्भर बना दे। कृषि के आधुनिक उन्नत तरीको की जानकारी एवं प्रशिक्षण दिया जाए। झूम या स्थानांतरित कृषि पद्धति पर पूर्ण रोक लगा दी जाए। वन संपत्ति के दोहन के लिए आदिवासी सहकारी समितियों की स्थापना की जाए। जनजातियों को उनके पुश्तैनी उद्योग धंधों को बढ़ाने में मदद की जाए। नए उद्योगों का उचित प्रशिक्षण

दिया जाए। घरेलू उद्योगों की स्थापना के लिए आर्थिक सहायता दी जाए। सहकारी संस्थाएं अधिकाधिक संख्या में खोली जाए। जिससे वैयक्तिक ऋणदायी संस्थाएं उनका शोषण न कर सके। जनजातीय बालिकाओं के लिए बालिका विद्यालय खोले जाए। प्रारंभिक शिक्षा के बाद उनको व्यवसायिक प्रशिक्षण मिलै।

जनजातीय महिलाओं की स्थिति को सामान्य करने हेतु योग्यता, साहस एवं प्रतियोगिता के साथ उन्हे विशेष संरक्षण की आवश्यकता है। विकास कार्यक्रमों का क्रियान्वयन नियोजित तरीके से किया जाना चाहिए, एवं नियोजन में युवकों को पूर्ण भागीदार बनाना चाहिए, जिससे ये विकास कार्यक्रमों से लाभान्वित हो सके। कार्यक्रम के क्रियान्वयन में सम्मिलित व्यक्तियों एवं संस्थाओं की जिम्मेदारी सुनिश्चित की जानी चाहिए। सरकारी एजेन्सियों से ऋण लेने के लिए प्रेरित करना चाहिए। गैर सरकारी संस्थाओं को इनके विकास में योगदान देने के लिए सहायता एवं प्रोत्साहन देना चाहिए। लड़कियों के लिए बालिका विद्यालय खोले जाए। प्रांरभिक शिक्षा के बाद उनकों व्यवसायिक प्रशिक्षण मिले जिससे वे सरकारी और गैर सरकारी संस्थाओ में काम कर सके। कृषि कार्य में लगे जनजातियों को उन्नत बीज, उपयुक्त खाद तथा आधुनिकतम उपकरण उपलब्ध कराएं तथा ऋण देने की व्यवस्था करें। जनजातियों के परम्परागत ज्ञान की रक्षा की जाए और उसका उन पर वैधानिक अधिकार प्रदान किया जाए।

आज आवश्यकता इस बात की है कि विकास प्रक्रिया का स्वरूप उन लोगों के प्रति अधिक अनुक्रियाशील बनाया जाए जो आर्थिक दृष्टि से अत्यंत पिछड़े रह गए है। उनके परम्परागत ज्ञान की रक्षा की जाए और उसका उन पर वैधानिक अधिकार प्रदान किया जाए।

जहाँ तक जनजातियों के अधिकारों का प्रश्न है संविधान की अनुसूचियों को ''संविधान के भीतर संविधान' समझा जाता है। पंचायत अधिनियम जनजातीय लोगों को प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन और स्वशासन के बारे में व्यापक अधिकार प्रदान करता है। वन अधिकार अधिनियम भी साझा संसाधनों पर सामुदायिक अधिकार प्रदान करता है। यह कानून वंचितों में भी अति वंचित लोगों का जीविका का अधिकार देने के साथ ही संरक्षण का दायित्व भी पूरा करने के दृष्टिकोण से बनाया गया है। भूमि अधिग्रहण अधिनियम - ''अनुसूचित क्षेत्रो में स्थानीय स्वशासन संस्थानों की सहमति के बिना भूमि के अधिग्रहण पर पाबंदी लगाता है और इस तरह हाशिए पर पड़े लोगों के भूमि पर अधिकार और आजीविका के मुद्दों पर कुछ चिंताओं का समाधान करने का प्रयास करता है।

मार्शल सहलिन्स ने शिकार करने वाले मूल निवासियों और देशज लोगों को ''मूल संपन्न समाज'' की संज्ञा दी थी जो सीमित और चंद आवश्यकताओं लेकिन गरिमापूर्ण जीवन के लिए आवश्यक पर्याप्त सामग्री के साथ समृद्धि के विशिष्ट क्षेत्र में रहते है। इसके विपरीत समृद्धि का आधुनिक पश्चिमी ''गलब्रेथियन मार्ग'' सीमित साधनों के साथ मानव की असीमित आवश्यकताअें पर आधारित है। हमें यह अंतराल जनजातीय और वंचित तथा हाशिए पर रह रहे लोगों के कष्टो के जरिए पूरा करने की कोशिश नहीं करनी चाहिए क्योंकि लम्बे समय तक जब्त किया गया ऑसू हमारे चमकीले स्वप्नों को दु:स्वप्नों में बदल सकता है।

===============

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची–

1. योजना, जून 2000, अक्टूबर 2000, मार्च 2001, मार्च 2002, अक्टूबर 2002, अगस्त 2008, नवम्बर 2008, दिसम्बर 2008, सितम्बर 2009, अप्रैल 2011, अगस्त 2015, जनवरी 2016,
2. कुरूक्षेत्र, अक्टूबर 2001, अप्रैल 2002, अप्रैल 2004, सितम्बर 2004, दिसम्बर 2004, दिसम्बर 2005, सितम्बर 2008, दिसम्बर 2008, अगस्त 2009, नवम्बर 2010, सितम्बर 2011
3. उद्योग व्यापर पत्रिका, मार्च 2011

Research Journal of Arts, Management and Social Sciences,
Vol. XVIII, Hindi.-I, Year IX, March, 2018
UGC Sl. No. 2138, Journal No.48774, Impact Factor 2.996

छत्तीसगढ़ में धमतरी विकासखण्ड के कमार जनजाति की सामाजिक आर्थिक स्थिति का अध्ययन

* डिकेश्वरी ध्रुव
** अमरकान्त पाण्डेय

सारांश– *भारत देश विभिन्न प्रजातीय सामाजिक समूहों का संगम स्थल है। भारत देश के विभन्न क्षेत्रों में अनेक ऐसे मानव समूह निवास है जो कि आज भी सभ्य समाज से दूर जंगली पहाड़ी या पठारी क्षेत्रों में निवासरत हैं। प्रत्येक क्षेत्र में ये लोग अत्यधिक पिछड़े हुए हैं। इन्हें वन्य जाति, जनजाति, आदिवासी आदि के नाम से पुकारा जाता है। कमार जनजाति समुदाय के उत्पादन की किया सामाजिक एवं आर्थिक दोनों पर ही प्रभावशील है। जिनसे कई कमार जनजाति आज भी निम्न जीवन स्तर के जीवन यापन करने के लिये मजबूर हैं। यह शोध दैव निदर्शन पर आधारित है। छ.ग. के धमतरी जिला में चार विकासखण्ड है जिसमें से एक नगरी विकासखणड का चयन किया गया है। न्यायदर्श ग्राम में कुल 110 कमार परिवार से प्रश्नावली के द्वारा जानकारी एकत्र की गई है जिसमें नगरी विकासखण्ड के 10 ग्रामो का चयन प्रत्येक गांव से 10 कमार परिवार का निदर्श के रुप में चयन किया गया है। इसलिए इन कमारों के ग्राम में प्रत्यक्ष रूप से संपर्क कर इसमें आधुनिक सुविधाएं एवं रोजगार प्रदान किया जाए जिससे इनका सतत् विकास होने से कमार परिवारों के जीवन स्तर तथा शिक्षा में भी बदलाव आएगा तथा उनके सामाजिक-आर्थिक स्थिति में सुधार होगा। प्रस्तुत शोध में कमार परिवारों के आय के स्तर को दर्शाया गया है जिसमें 100-500 रुपये के आय-वर्ग में परिवारों की संख्या 39 है जो कुल आय का 31.97 प्रतिशत है। जिसमें सबसे अधिक 1000-2000 रुपये के आय-वर्ग में परिवारों की संख्या 71 है जो कुल प्रतिशत का 58.18 है। इसी प्रकार 5000-10000 के आय-वर्ग में परिवारों की संख्या 0.3 है, जिसका प्रतिशत सबसे कम 2.46 प्रतिशत है।*

प्रस्तावना– भारत देश विविधताओं का देश है। यह विभिन्न सामाजिक सांस्कृतिक समूहों का संगम स्थल भी रहा है। इससे समाज की आर्थिक व सामाजिक विकास का पता चलता है जो उसके जीवन के प्रत्येक पक्ष को प्रभावित करते हैं। इस देश की एक और विशेषता यह है कि कुछ विशिष्ट भौगोलिक क्षेत्रों में भी विभक्त है। जिनका प्रभाव उस क्षेत्र के निवासियों पर पड़ता है। इस प्रकार भारत में एक ओर विभिन्न क्षेत्रों में अनेक ऐसे मानव समूह निवास करते हैं, जो कि सभ्य समाज से दूर जंगली पहाड़ों एवं पठारी क्षेत्रों में निवास करते हैं। प्रत्येक क्षेत्र में वे लोग अत्यधिक पिछड़े हुए हैं। इन्हें वन्य जाति, आदिम

* शोधार्थी, अर्थशास्त्र अध्ययनशाला, पं. रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय, रायपुर (छ.ग.)
** प्रोफेसर, अर्थशास्त्र अध्ययनशाला, पं. रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय, रायपुर (छ.ग.)

जाति, आदिवासी एवं जनजाति के नामों से संबोधित किया जाता है। स्वतंत्रता के पश्चात् भारतीय संविधान में ऐसे लोगों को अनुसूचित जनजाति का नाम दिया गया। दक्षिण अफ्रीका के बाद सर्वाधिक जनजातियों की जनसंख्या भारत में पाई जाती है।

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है और मानव जीवन में सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति या दशाओं का प्राथमिक स्थान है जो कि जीवन का प्रमुख आधार है। जनजाति समुदाय मानव समाज का ही एक अंग है। जनजाति समुदाय मानव समाज की आर्थिक एवं सामाजिक समुदाय की सामाजिक आर्थिक व्यवस्था का एक हिस्सा है। समाज की आर्थिक स्थिति आकार में छोटी होती है। वे साधारण तथा परम्परागत तकनीकों का प्रयोग करते हैं और उनकी सामाजिक व आर्थिक व्यवस्था सभ्य समाज से अलग होती है। इनकी अर्थव्यवस्था प्रमुख रूप से वनों पर आधारित है।

भारत के संविधान के अनुच्छेद 342 के अंतर्गत संपूर्ण भारत में अधिसूचित 700 से अधिक जनजातियां है, जो कि देश के विभिन्न राज्यों तथा संघ राज्य क्षेत्रों में फैली हुई है। अनेक जनजातियां एक से अधिक राज्यों में मौजूद है। अनुसूचित जनजाति के 62 जनजाति समुदाय मौजूद है। जनंसख्या के आधार पर जनजाति आबादी की बाहुलता मध्य भारत के 6 राज्यों मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, ओड़िसा, राजस्थान, झारखण्ड और छत्तीसगढ राज्यों में मौजूद है। जो कि कुल आबादी का 8.6 प्रतिशत है। छत्तीसगढ़ जनजातीय बाहुल्य राज्य है। जनगणना 2011 के अनुसार यहां जनजातियों की जनसंख्या 78.22 लाख है जो कुल जनसंख्या का 30.62 प्रतिशत है। वहां पर सरकार द्वारा 42 जनजातियों समूहों का पहचान किया गया है।

धमतरी जिले के नगरी विकासखण्ड के अन्तर्गत अधिक संख्या में जनजातियाँ निवास करती है और इसकी कुल जनसंख्या 179505 है। जिसमें 110099 जनजाति है जो कि अलग-अलग वर्गो में विभाजित है। यहाँ पर कमार, हल्बा, बैगा तथा गोंड़ जनजातियाँ निवासरत है। कुल जनजातियों का प्रतिशत 61.33: है। इसी प्रकार विशेष पिछड़ी जनजाति कमार की कुल जनसंख्या 4173 है जिसमें पुरुष 2068 तथा महिला 2105 है तथा ग्रामों की संख्या 94 है जहाँ पर निवासरत हैं एवं इनके परिवारों की संख्या 1029 है। (सांख्यिकी विभाग धमतरी (छ.ग.)

2. अध्ययन का उद्देश्य-

(1) कमार जनजाति की सामाजिक. आर्थिक स्थिति का अध्ययन करना।

(2) कमार जनजाति की आय एवं रोजगार का अध्ययन करना।

3. शोध प्रविधि-

(1) **आँकडो़ं का संकलन**- प्रस्तावित अध्ययन प्राथमिक आँकडो़ं पर आधारित है, आवश्यकता पड़ने पर द्वितीयक आँकडो़ं का भी उपयोग किया गया है। प्राथमिक आँकडो़ं का संकलन प्रत्यक्ष साक्षात्कार अनुसूची के माध्यम से किया गया है। प्राथमिक समंको के संकलन हेतु अनुसूची एवं साक्षात्कार द्वारा जानकारी एकत्र की गई है। कुल 110 कमार परिवार से जानकारी एकत्र की गई है। इसके नगरी विकासखण्ड के 10 ग्रामों का चयन किया गया है। प्रत्येक गांव से 10 कमार जनजाति परिवार का निदर्श के रूप में चयन किया गया है एवं जानकारी एकत्र की गई है। आवश्यकतानुसार द्वितीयक समंको का भी उपयोग किया जाएगा। प्रतिशत एवं औसत विधि तथा अन्य सांख्यिकी विधियों का

प्रयोग किया गया है। आवश्यकतानुसार रेखाचित्र का भी उपयोग किया गया है।

4. अध्ययन का विश्लेषण–

(1) सामाजिक-आर्थिक स्थिति का विश्लेषण

तालिका क्रमांक -1

आयु समूह के अनुसार कमार जनजाति की जनसंख्या वितरण

क्र.	आयु समूह	कुल		जनसंख्या	
		पुरुष	प्रतिशत	महिला	प्रतिशत
1	0—15	96	39.67	81	36.33
2	15—30	70	28.93	74	33.18
3	30—45	44	18.18	40	17.94
4	45—60	25	10.33	22	9.86
5	60 से अधिक	7	2.89	06	2.69
	योग	**242**	**100**	**223**	**100**

स्त्रोत- व्यक्तिगत सर्वेक्षण।

कमार जनजाति की जनसंख्या का विश्लेषण किया गया है जिसमें 0-15 आयु समूह वाले पुरुष वर्ग की संख्या 96 सबसे अधिक है जो कुल प्रतिशत का 39.67 प्रतिशत है इसी प्रकार 60-75 आयु समूह वाले पुरुष की संख्या 7 है जो कि कुल प्रतिशत का 2.89 है इसी प्रकार महिलाओं में 0-15 आयु समूह की संख्या 81 है जो कुल प्रतिशत का 36.33 है। 60-75 आयु वाली महिला सबसे कम 6 है जो कि कुल प्रतिशत का 2.69 है।

सारणी क्रमांक 2.

सर्वेक्षित परिवारों की साक्षारता दर का विवरण

क्र.	साक्षरता का स्तर	कुल		जनसंख्या	
		पुरुष	योग	महिला	योग
1	साक्षर	28	13.66	31	15.27
2	निरक्षर	45	21.95	67	33.01
3	प्राथमिक	63	30.73	53	26.11
4	माध्यमिक	49	23.91	43	27.18
5	हाईस्कूल	18	8.78	9	4.43
6	हायर सेकेण्डरी	1	0.49	—	–
7	स्नातक	1	0.49	—	–
8	स्नातकोत्तर			—	–
	योग	**205**	**100**	**203**	**100**

स्त्रोत- व्यक्तिगत सर्वेक्षण।

सारणी क्रमांक 2 में साक्षरता दर का विश्लेषण किया गया है जिसमें साक्षर पुरुष 28 है जो कि कुल प्रतिशत का 13.66 है। महिला साक्षर 31 है जो कुल प्रतिशत का 15. 27 है इसी प्रकार निरक्षर पुरुष 45 है जो कुल प्रतिशत का 21.95 है निरक्षर महिला 67 है जो कि कुल प्रतिशत का 33.01 है। प्राथमिक शिक्षा में पुरुष की संख्या 63 है जो कि कुल प्रतिशत का 30.23 है, महिलाओं का 53 है जो कि कुल प्रतिशत का 26.11 प्रतिशत है। माध्यमिक स्कूल में पुरुषों की संख्या 49 है जिसका प्रतिशत 23.91 है, महिलाओं की

संख्या 53 है जिसका प्रतिशत 26.11 है। हाई स्कूल में पुरुष की संख्या 18 है जिसका प्रतिशत 8.73 है। महिला की संख्या 9 है जिसका प्रतिशत 4.43 है ।

तालिका क्रमांक 3.

सर्वेक्षित ग्रामों के कमार जनजाति के मासिक आय का विवरण

क्र.	**आय का स्तर (रूपयें में)**	**संख्या**	**प्रतिशत**
1.	100—500	39	31.97
2.	1000—2000	71	58.19
3.	2000—5000	6	4.92
4.	5000—10000	3	2.46
5.	10000 से अधिक	3	2.46
	योग	**122**	**100%**

स्त्रोत- व्यक्तिगत सर्वेक्षण।

कमार जनजाति के आय स्तर को दर्शाया गया है जिसमें 100-500 रुपये के आय वाले की संख्या 39 है जो कुल प्रतिशत का 31.97 है जिसमें सबसे अधिक 1000-2000 रुपये के आय वाले 71 है जो कुल प्रतिशत का 58.18 है, इसी प्रकार 10000 से अधिक आय वाले 3 है जो कि कुल प्रतिशत का 2.64 है।

कमार जनजाति के लोगों की सामाजिक, आर्थिक स्तर सरल एवं निम्न स्तरो पर आधारित है और वे अपने आर्थिक विकास के लिए जरुरत के सामानो पर ही व्यय करते है इस प्रकार कमारों का आय का पूरा भाग अपनी मूलभूत आवश्यकताओं की वस्तुओं पर व्यय करतें है।

साराणी क्रमांक 5.

कमारो के द्वारा उपभोग किये गये व्यय का विवरण

क्र.	**उपभोग पर व्यय**	**प्रतिशत**
1.	राशन / साग सब्जी	12.40
2.	कपड़ा	12.40
3.	पारिवारिक आवश्यकता	12.40
4.	बिजली	12.40
5.	त्यौहार / उत्सव	12.40
6.	कृषि भूमि के मजदूरी के लिए	3.49
7.	ऋण व ब्याज के लिए	6.43
8.	कृषि दवाई के लिए	3.49
9.	मद्यपान हेतु	11.28
10.	पशुओं के लिए	3.16
11.	सायकल मरम्मत के लिए	10.15
	योग	**100%**

स्त्रोत- व्यक्तिगत सर्वेक्षण।

कमार जनजाति के लोग अपने आय का पूरा हिस्सा अपने उपभोग की वस्तुओं में लगा देतें है और बचत के लिए उनके पास पैसा ही नही रहता, तथा ज्यादातर वे मद्यपान व नशे के लिए ही उपयोग करते हैं तथा बचत करना वे जरुरी ही नही समझतें हैं क्योंकि वे लोग अपनी जरुरतों के हिसाब से कमा लेतें हैं, उनके पास उतना आय भी नही रहता कि कुछ हिस्सा को बचत के लिए रख सकें।

निष्कर्ष– निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि कमार परिवारों की आर्थिक अर्थव्यवस्था मुख्य रूप से बांस की बनी वस्तुओं व वनोपज पर आधारित है। बांस एवं बर्तन शैली परम्परागत होने के कारण व्यवसाय में संतुष्टि नहीं मिल पाती है। यदि इन कमारो के ग्राम में प्रत्यक्ष रूप से संपर्क कर इसमें आधुनिक सुविधाएं एवं प्रशिक्षण प्रदान किया जायेगा तो इन कमार परिवारों के जीवन स्तर तथा शिक्षा में भी बदलाव आयेगा और उनके बारे में जानकारी प्राप्त होगी। अतः सरकार की जो योजनाओं को इन कमार लोगों तक पहुचाया जाना चाहिए तथा इस प्रकार से क्रियान्वित किया जाय कि इन कमारों की अस्मिता भी बची रही और उनका विकास भी हो तथा इन लोगों का निवास स्थान अन्य लोगों के साथ रहन-सहन होगा तो उनके आर्थिक एवं सामाजिक स्थिति में सुधार होगा।

समस्याएं :-

- कृषि संबंधी समस्या अभी भी बहुत से कमार परिवार भूमि हीन है। जिनके पास जीविका के कोई साधन नहीं है।
- सिंचाई के साधन का अभाव है जिससे उनको कृषि कार्य के लिए पर्याप्त पानी नही मिल पाता हे।
- शिक्षा संबंधी अनेक समस्याएं है क्योंकि कमार जंगल में निवास करते है पाठशाला दूर है इस कारण सरकार को कमार परिवार के लिए उनके ग्रामों तक शिक्षा की व्यवस्था करवानी चाहिए।
- प्राथमिक स्तर के बाद बाहर जाना पड़ता है जिसके कारण वे शिक्षा से वंचित रह जाते है।
- स्वास्थ्य संबंधी सुविधा का अभाव के कारण उन्हें अपने पास के दूर दराज गांवों तक जाकर ईलाज करना पड़ता है।

सुझाव–

- कमार जनजातियों के बीच शिक्षा को लोकप्रिय बनाने तथा अधिकारिक संख्या में इन्हें विद्यालयों की ओर आकर्षित करने के लिए प्रयास किया जाये।
- कृषि की नयी प्रविधि का प्रचार-प्रसार करना चाहिए।
- पेयजल के घोर संकट को शासकीय जल योजना द्वारा समाधान करना चाहिए।
- क्षेत्रीय ग्राम में शिक्षा व्यवस्था पर विशेष ध्यान देना चाहिए।
- ऋण की सुविधा के संबंध में ग्राम पंचायत द्वारा आमसभा रखना चाहिए।
- समाज में पढ़ने वाले बच्चों को प्रोत्साहन देना चाहिए।
- आवागमन की व्यवस्था पर अधिक ध्यान देना चाहिए।
- गांव की साफ-सफाई व जल व्यवस्था पर विशेष ध्यान आकर्षित किया जाना चाहिए।

===============

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची–

1. प्रा, साधना (1997) : ''जनजातीय विकास एवं विकास की समस्याऐं'' सामाजिक सहयोग शोध प्रबंधन अभिषद श्री ष्ण संस्थान उज्जैन, अंक 24 पृ. क्र. 22-28
2. चौबे कैलाश (1998) : ''मध्यप्रदेश में बस्तर के जनजातियों पर एक वोट'' आदिवासी पत्रिका अंक 02 पेज नं. - 06
3. शुक्ला, अर्चना (1999) : ''मध्यप्रदेश में आदिवासी समाज व विभिन्न योजनाऐं, शोध प्रकल्प, अंक 07, पृ.

क्र. 13-17

4. प्रधान, अशोक (2001) : ''छत्तीसगढ़ के सवरा जनजाति का आर्थिक जीवन एक अध्ययन, आदिवासी स्वास्थ्य प्रत्रिका, वर्ष - 49, अंक - 03, पेज नं. 41-46

5. नायडू, पी.आर. (2001) : '' बस्तर के आदिवासी आज भ्ज्ञी एक शताब्दी पीछे'' शोध प्रकल्प अंक - 14-15 पृ.क्र. 18-19

Research Journal of Arts, Management and Social Sciences,
Vol. XVIII, Hindi.-I, Year IX, March, 2018
UGC Sl. No. 2138, Journal No.48774, Impact Factor 2.996

भारतीय राजनीति का अपराधीकरणः न्यायपालिका द्वारा संज्ञान एवं निवारण हेतु प्रयास

* रामशंकर
** चाँदनी नायक

सारांश– *भारतीय राजनीति में बढ़ता अपराधीकरण देश की अस्मिता एवम् सम्मान की प्रतीक संसद पर बेहद बदनुमा काले दाग के समान है, राजनीति का अपराधीकरण लोकतंत्र के लिये घातक है, आज ईमानदार तथा सज्जन व्यक्तियों की अपेक्षा हिंसात्मक एवम् संदिग्ध चरित्र वाले व्यक्तियों का राजनीति में प्रवेश हो रहा है। चुनाव में धनबल, बाहुबल और अपराधी तत्वों का बोलबाला है, नेताओं एवम् अपराधियों की दिनोंदिन बढ़ती साँठ–गाँठ चिंतित करने वाली है लोकसभा एवं विधानसभा चुनावों में स्वयं अपराधी ही नेता बनकर सत्ता पर बैठने लगे हैं। इस राजनीति के अपराधीकरण पर अंकुश लगाने के लिये न्यायपालिका ने संज्ञान लेते हुए कई बार लाठियाँ भी बरसाई और इसके निवारण हेतु न सिर्फ आदेश–निर्देश जारी किये बल्कि ऐतिहासिक निर्णयों के माध्यम से राजनीति के अपराधीकरण पर लगाम लगाने का प्रयास भी कर रही है।*

मुख्य शब्द– अपराधीकरण, न्यायपालिका, लोकतंत्र, धनबल, बाहुबल, ईमानदार।

प्रस्तावना– भारत में राजनीतिक अपराधीकरण का इतिहास अत्यधिक पुराना है, ब्रिटिश शासन काल में अंग्रेजों ने देश के सिंहासन पर राज करने के लिये 'फूट डालो और शासन करो' की नीति अपनाई थी। तथा देश में साम्प्रदायिक हिंसा फैलाने के लिये आपराधिक तत्वों का सहारा लिया किन्तु स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् देश के राजनेताओं ने भारत को एक मजबूत अर्थव्यवस्था एवम् आदर्श राज्य बनाने का सपना देखा था। इस प्रकार बुद्ध, महावीर, राम, कृष्ण एवम् महात्मा गाँधी जैसे महापुरूषों की भारत की यह पुण्य-भूमि सदियों से सिद्धांत, अनुशासन, सत्य और अहिंसा की राह दुनिया को दिखाती रही है। भारतीय राजनीति में जैसे-जैसे समय व्यतीत होता गया वैसे-वैसे देश के आम चुनावों में अपराधी तत्वों का प्रयोग करके मतदाताओं को डराने-धमकाने की अनेक घटनाएँ सामने आने लगी और राजनीतिक उद्देश्यों की पूर्ति के लिये अपराधियों, बाहुबलियों की मदद ली जाने लगी। वर्तमान समय में, भारतीय राजनीति में अपराधी गिरोहों एवम् माफियाओं का जोर साफ दिखाई दे रहा है। चुनाव में बढ़ता धनबल, बाहुबल और अपराधीकरण लोकतंत्र को अंदर–ही–अंदर खोखला करते जा रहे हैं, राजनीति का अपराधीकरण और अपराध का

* निदेशक, अम्बेडकर स्टडी सेन्टर, आचार्य, राजनीति शास्त्र विभाग रा.दु.वि.वि.जबलपुर (म.प्र.)
** शोध छात्रा, राजनीति विज्ञान विभाग, रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

राजनीतिकरण एक-ही स्थिति के दो पहलू हैं तथा यह दोनों ही स्थिति शासक वर्ग की राजनीतिक संस्कृति का लक्षण बन गई है। जब कानून के निर्माता और रखवाले ही अपराध में लिप्त होंगे तो उनसे भला कैसे उम्मीद की जा सकती है, कि वे लोकतंत्र को स्वस्थ रख सकेंगे। क्योंकि प्रत्येक लोकसभा एवम् विधानसभा के चुनाव के पश्चात् इन सदनों में आपराधिक पृष्ठभूमि वाले सांसदों एवम् विधायकों की संख्या लगातार बढ़ती जा रही है। इस प्रकार पहले देश के लोकसभा एवं विधानसभा चुनावों में नेताओं के द्वारा आपराधिक गतिविधियों वाले तथ्यों का सहारा लिया जाता था किन्तु अब अपराधी ही नेता बनकर स्वयं सत्ता पर बैठने लगे हैं।

राजनीति के अपराधीकरण के संबंध में विधिवेत्ता और विचारक ननी ए.पालकीवाला के शब्दों में, ''मैं नहीं सोचता कि भारतवर्ष अपने पाँच हजार वर्ष के इतिहास में कभी अधोगति की ऐसी स्थिति में पहुँचा जिस स्थिति में वह आज पहुँच गया है, आज महान राष्ट्र नैतिक पतन से ग्रस्त है जिसके अनेक लघु प्रतिबिम्बों में से तीन है- अपराध, घोर अव्यवस्था और भ्रष्टाचार। राजनीति का अपराधीकरण इस स्थिति का स्वाभाविक परिणाम है।'' राजनीति के अपराधीकरण के संदर्भ में यह सवाल हमेशा-ही उठता है। पहला, राजनीतिक दल आपराधिक छवि वाले व्यक्तियों को आखिर अपना उम्मीदवार क्यों बनाते हैं? दूसरा जनता ऐसे आपराधिक छवि वाले व्यक्तियों को मतदान देकर उन्हें अपना जन-प्रतिनिधि क्यों चुनती है?

राजनीति का अपराधीकरण से आशय-

राजनीति के अपराधीकरण से अभिप्राय है, कि अपराधियों का राजनीतिक दलों एवम् संसद सहित समस्त विधायी तथा कार्यकारी संस्थाओं में सीधे प्रवेश करना और राजनीतिक व्यवस्था, क्रियाकलापों एवम् चुनावों इत्यादि को प्रभावित करने के लिये आपराधिक तौर-तरीकों का प्रयोग करना। यह सभी राजनीति के अपराधीकरण के अन्तर्गत आते हैं। इस प्रकार राजनीति में आगे बढ़ने एवम् सत्ता हथियाने के लिये अपराध का सहारा लेना ही राजनीति को अपराध प्रधान बना देता है, और जब राजनीतिक महत्वाकांक्षाओं की पूर्ति के लिये अपराध राजनीति का अंग बन जाता है, तब इसे ही 'राजनीति के अपराधीकरण' की संज्ञा दी जाती है।

भारतीय राजनीति आज पूरी तरह अपराध से ग्रसित है। केन्द्रीय जाँच ब्यूरो की रिपोर्ट में कहा गया था कि- ''समस्त भारत में अपराधी तत्वों के गिरोह अपने नियम कानून चला रहे हैं, यहाँ तक कि ग्रामीण क्षेत्रों और कस्बों तक में बाहुबल वाले लोग अपना आतंक जमाते दिखाई देते हैं, अपराधी गिरोहों, पुलिस, नौकरशाही और राजनीतिज्ञों के गठजोड़ का षडयंत्रकारी रूप देश के विभिन्न भागों में सामने आ रहा है।''[1]

विश्लेषण-

भारत में स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् संविधान निर्माताओं ने यह उम्मीद की थी, कि जब देश में आधुनिक व्यवस्थाएँ अपनी जड़े जमा लेगी तब जाति, धर्म, भाषा, क्षेत्र इत्यादि का सवाल उतना हावी नहीं रहेगा। लेकिन आज इसके बिना भारतीय राजनीति की कल्पना भी नहीं की जा सकती है, आज हम 'मूल्यों के संकट' और 'नैतिक पतन के गर्त' की स्थिति से गुजर रहे हैं तथा इस अवस्था में देश के सम्मुख जो समस्याएँ व्याप्त हैं, उनमें एक प्रमुख समस्या है- राजनीति का अपराधीकरण। देश की सियासत भ्रष्टाचार, अपराध और

हिंसा से लबालब है, राजनीति में धनबल, बाहुबल और अपराधी तत्वों की पकड़ लगातार मजबूत होती जा रही है तथा चुनाव धनी एवम् शक्तिशाली लोगों के लिये खेल बनता जा रहा है। ऐसोसिएशन ऑफ डेमोक्रेटिक रिफार्म (एडीआर) और नेशनल इलेक्शन वॉच (एनईडब्ल्यू) के सर्वे में यह बात स्पष्ट हुई है। सर्वे में पाया गया है कि चुनावों में साफ-सुथरी छवि वाले लोगों के जीतने की उम्मीद जहाँ 12 फीसदी रहती है वहीं गंभीर आपराधिक छवि वालों के लिये चुनावी राह अपेक्षाकृत ज्यादा आसान होती है, चुनावों में ऐसे लोगों के जीतने की संभावना 23 प्रतिशत बताई गई है।[2]

देश की राजनीतिक प्रणाली की सबसे चौंका देने वाली बात यह है, कि राजनीति में आज आपराधिक गिरोहों और माफियाओं का जोर साफ दिखाई देता है। राजनीति के अपराधीकरण की चर्चा पिछले दो-तीन आम चुनावों से ज्यादा इसलिये होने लगी कि राजनीतिक उद्देश्यों की पूर्ति के लिये अपराधियों की मदद ली जाने लगी कालान्तर में राजनीतिज्ञों को मदद करने वाले अपराधी जब अपनी अहमियत समझने लगे तो वे स्वयं राजनीति में कूद पड़े और प्रशासन में भागीदार भी बनने लगे। ये आपराधी धनबल और भुजबल के सहारे राजनीति में इस तरह हावी हो गये है कि इनके आगे साधारण व्यक्ति राजनीति से दूर होते चले गये तथा राजनीति में धनबल का वर्चस्व हो गया इससे भ्रष्टाचार को बल मिला और फलस्वरूप प्रशासन की नीति-निर्माण का चेहरा बदल गया। जनता के प्रति प्रशासन की संवेदनशीलता कम होती गई और राजनीतिज्ञों एवम् ऊँचें पदों पर बैठे अधिकारियों को आपराधिक तत्व प्रभावित करने लगे।[3]

भारतीय राजनीति में सन् 1989 के आसपास ही संसद एवम् अपराधी तत्वों ने प्रवेश कर लिया था। प्रारंभ में उत्तरप्रदेश एवम् बिहार राजनीतिक अपराधीकरण के प्रमुख गढ़ माने जाते थे किन्तु धीरे-धीरे मध्यप्रदेश, पश्चिम बंगाल, महाराष्ट्र, गुजरात, आन्ध्रप्रदेश तथा उत्तर-पूर्व के राज्य सहित समस्त भारत की राजनीति अपराधीकरण की चपेट में आ गई, आज स्थिति यह है कि ग्रामीण स्तर पर पंचायतें एवम् नगरीय निकाय भी राजनीति के अपराधीकरण से अछूते नहीं है। हमारे लोकतंत्र की सबसे बड़ी कमजोरी यह है कि, आपराधिक पृष्ठभूमि वाले सांसद एवम् विधायक ही आम जनता के लिये कानून बना रहे हैं,ऐसे आपराधिक छवि वाले नेता लोकतंत्र पर एक दाग की तरह हैं,यह न तो जनता और लोकतंत्र का भला करते हैं,और न ही देश को अच्छा कानून दे सकते हैं।

एसोसिएशन फॉर डेमोक्रेटिव रिफॉर्म्स (एडीआर) ने अपनी रिपोर्ट में बताया है, कि देश के 33 फीसदी सांसद एवम् विधायक ऐसे हैं, जिनके विरूद्ध आपराधिक मामले चल रहे हैं। एडीआर की मानें तो 15वीं लोकसभा में 543 सांसदों में से 162 पर गंभीर मामले दर्ज थे और 16वीं लोकसभा में इनकी संख्या अत्यधिक बढ़ गई। वर्ष 2014 के आम चुनावों पर नजर डालें तो 543 सीटों के लिये मतदान में उतरे 8230 प्रत्याशियों में से 17 फीसदी पर आपराधिक आरोप थे और 11 फीसदी पर गंभीर अपराध के मामले दर्ज थे। साथ-ही वर्ष 2014 के केन्द्र सरकार के मंत्रिमंडल में 27 फीसदी मंत्रियों पर आपराधिक मामले एवम् गंभीर मुकदमें दर्ज हैं, जिनमें हत्या का प्रयास करना, दंगे भड़काना, रिश्वतखोरी, अश्लील भाषा का प्रयोग करना इत्यादि शामिल है।[4]

इसी तरह वर्ष, 2017 के राष्ट्रपति चुनाव के निर्वाचक मण्डल में शामिल लगभग 33 फीसदी दागदार सांसदों एवम् विधायकों ने घोषणा पत्र में स्वयं के खिलाफ आपराधिक

मामलों की जानकारी प्रदान की है। द एसोसिएशन फॉर डेमोक्रेटिक रिफॉर्म तथा नेशनल इलेक्शन वॉच की रिपोर्ट के अनुसार, लोकसभा के 543 सांसदों में से 184, राज्यसभा के 231 सांसदों में से 44 तथा समस्त राज्यों एवम् केन्द्र शासित प्रदेशों के 4078 विधायकों में से 1353 विधायकों ने अपने घोषणा पत्रों में स्वयं के खिलाफ आपराधिक मामलों की घोषणा की है।[5] राजनीति के अपराधीकरण के संदर्भ में यदि विधायिका एवम् कार्यपालिका अपने कर्त्तव्यों का निर्वहन करने की अपेक्षा मौन रहती है, तब ऐसी स्थिति में न्यायपालिका ही एकमात्र आशा की किरण बनकर सामने आती है। यह कहा जाता है कि यदि किसी देश में विधायिका और कार्यपालिका बहुत अच्छी हो, परंतु स्वतंत्र एवम् निष्पक्ष न्यायपालिका न हो, तो उस देश के संविधान का अधिक मूल्य नहीं रह जाता है।

वर्तमान समय में, अधिकांश देशों में 'विधि के शासन' सिद्धांत को मान्यता प्रदान की गई है, जिसका अर्थ होता है कि प्रत्येक व्यक्ति कानून के अधीन है और कोई भी व्यक्ति अथवा संस्था इसके ऊपर नहीं है, बल्कि कानून की नजर में राजा-रंक सभी बराबर हैं, और सभी को समान अपराध के लिये, समान दण्ड मिलना चाहिये।[6] भारतीय राजनीति में इसी अपराधीकरण पर अंकुश लगाने के लिये सर्वोच्च न्यायालय ने 10 जुलाई, 2013 को ऐतिहासिक फैसला सुनाया। सुप्रीम कोर्ट ने अपने निर्णय में कहा था कि यदि किसी भी सांसद/विधायक के विरूद्ध अपराध सिद्ध होने पर अथवा दोषी पाये जाने पर उन्हें निचली अदालत से भी यदि दो वर्ष अथवा इससे अधिक वर्षों की सजा सुनाई जाती है तो ऐसे सांसदों एवम् विधायकों की संसद एवम् विधानसभा सदस्यता स्वतः ही समाप्त हो जायेगी तथा वे 6 वर्ष तक चुनाव भी नहीं लड़ पायेंगे। चारा घोटाले में लालू प्रसाद यादव तथा मेडिकल एडमिशन फर्जीवाड़ा मामले में रशीद मसूद भी सर्वोच्च न्यायालय के इसी आदेश का शिकार हुये थे। सुप्रीम कोर्ट के आदेश के मुताबिक, संसद सदस्यता गवाने वाले रशीद मसूद पहले सांसद थे। साथ ही न्यायालय ने जनप्रतिनिधित्व कानून की धारा 8(4) को संविधान में प्रदत्त अनुच्छेद 14 के तहत समानता के अधिकार और जनप्रतिनिधित्व विधेयक की मूल भावना के विरूद्ध मानते हुये उसे रद्द कर दिया था।[7]

न्यायालय की यह सक्रियता संसद को पसंद नहीं आई और सर्वोच्च न्यायालय के इस फैसले से पूरी सियासी बिरादरी में खलबली मच गई। सरकार ने धारा 8(4) की तरफदारी करते हुये यह दलील दी थी कि अदालत से दोषी ठहराये गये सांसद एवम् विधायकों को अपील पर अंतिम फैसला होने तक सदन का सदस्य बने रहने की छूट देने वाला कानून सही और जरूरी है। यूपीए सरकार इस फैसले के विरूद्ध जनप्रतिनिधत्व कानून को समाप्त करने के लिये अध्यादेश लाने की तैयारी कर चुकी थी परंतु इसी बीच सुप्रीम कोर्ट ने अपने एक बड़े फैसले में कहा था कि निचली अदालतों को सांसदों एवम् विधायकों पर चल रहे आपराधिक मुकदमों का निपटारा आरोप पत्र दाखिल होने के साल भर के अंदर करना होगा।[8]

इस प्रकार सर्वोच्च न्यायालय का यह फैसला सजायाता नेताओं के किसी भी चुनाव में भाग लेने पर पूरी तरह से अंकुश लगाता है और यह लोकतंत्र के हित में है। भारतीय राजनीति की छवि साफ सुथरी बनाने एवम् राजनीति के अपराधीकरण पर अंकुश लगाने के लिए न्यायालय ने सक्रिय होकर अनेक उदाहरण प्रस्तुत किये हैं, न्यायालय ने सासाराम के सांसद की सदस्यता आपराधिक साजिश के आरोप में रद्द की दी, तो वही सीवान के

पूर्व सांसद मो. शहाबुद्दीन को हत्या के आरोप में उम्र कैद की सजा सुनाई। हाल ही के दिनों में यूपी सरकार के मंत्री गायत्री प्रजापति पर अपराध सिद्ध होने के बावजूद उन्हें राज्य सरकार द्वारा पूरा संरक्षण दिया जा रहा था लेकिन सुप्रीम कोर्ट की सख्ती के बाद ही उन पर मुकदमा दर्ज किया गया। राजनीति के अपराधीकरण पर लगाम लगाने के लिये सर्वोच्च न्यायालय ने 27 सितंबर, 2013 को मतदाताओं को ईवीएम मशीन में 'नोटा' का विकल्प भी उपलब्ध कराया। और अब सर्वोच्च न्यायालय ने दोषी पाये गये सांसदों एवम् विधायकों पर आजीवन चुनाव लड़ने से प्रतिबंधित करने के मामले में केन्द्र सरकार से जबाव माँगा है। इस प्रकार भारतीय राजनीति में बढ़ती हुई आपराधिक गतिविधियों को न्यायालय ने समय-समय पर उजागर किया है और इसके निवारण के लिए भी प्रयास कर रहा है।

सवाल यह उठता है, कि राजनीतिक के अपराधीकरण के लिये जिम्मेदार आखिरकार कौन है? सरकार, राजनीतिक दल अथवा मतदाता। यदि देखा जाये तो राजनीतिक दल, राजनीति को अपराधीकरण से मुक्त करने की बात अवश्य करते हैं, लेकिन चुनाव के दौरान स्वयं ही आपराधिक छवि वाले व्यक्तियों को उम्मीदवार बनाते हैं। एक विचारशील सांसद जयपाल रेड्डी ने सन् 1997 में संसद मे कहा था कि- ''सभी राजनीतिक दलों का अपराधियों के साथ गठबंधन है, इस संबंध में विभिन्न राजनीतिक दलों में केवल मात्रात्मक अंतर है, कोई गुणात्मक अंतर नहीं है, सभी राज्यों में यह स्थिति है, प्रकृति का अंतर हो सकता है।''[9] राजनीति के अपराधीकरण की शुरूआत राष्ट्रीय दलों की तुलना में क्षेत्रीय दल अपराध जगत से अधिक जुड़े प्रतीत होते हैं। अपराधी तत्व क्षेत्रीय दलों की राजनीति में जातीय, साम्प्रदायिक और क्षेत्रीय प्रश्नों से जुड़ी राजनीति में अपेक्षाकृत अधिक सरलता और शीघ्रता से प्रवेश पा लेते हैं।

सुझाव-

प्रथम, समस्त राजनीतिक दलों को स्वार्थ हित की अपेक्षा देशहित को ध्यान में रखते हुये आपराधिक पृष्ठभूमि वाले व्यक्तियों को उम्मीदवार नहीं बनाना चाहिये। दूसरा, चुनाव आयोग के समक्ष जिन प्रत्याशियों के खिलाफ अपराधों में लिप्त होने के पुख्ता प्रमाण हो, उन्हें चुनाव प्रक्रिया से बेदखल कर देना चाहिये। तीसरा, राजनीति को अपराधीकरण से मुक्त करने के लिये संसद में सर्वसम्मति से कठोर कानून बनाया जाना चाहिये, जिसमें अपराधियों के विरूद्ध सजा-ए-मौत का प्रावधान हो। चौथा, चुनाव आयोग द्वारा चुनावी घोषणा-पत्र में उम्मीदवारों की शैक्षणिक योग्यता के साथ-साथ उनकी अपराधिक पृष्ठभूमि दर्ज करानी चाहिये। पाँचवा, राजनीतिक दलों की अपनी कोई व्यापक आचार-संहिता होनी चाहिये, जिसका पालन प्रत्येक स्थिति में किया जाना चाहिये। छटवाँ, समस्त न्यायालयों द्वारा अपराधी सांसदों एवम् विधायकों के खिलाफ लंबित मुकदमों की सुनवाई अतिशीघ्र करके उन्हें कठोर दण्ड दिया जाना चाहिये। सातवाँ, मतदाताओं को आपराधिक चरित्र वाले प्रत्याशियों को अपना मत देकर उन्हें अपना जनप्रतिनिधि नहीं चुनना चाहिये।

निष्कर्ष-

भारतीय राजनीति का अपराधीकरण और न्यायपालिका द्वारा संज्ञान एवं निवारण पर इतने विचार मंथन के पश्चात् यह कहा जा सकता है, कि लोकतंत्र के पवित्र मंदिर में राजनीतिक दलों की पाखंड की राजनीति के कारण ही अपराधी सांसदों एवम् विधायकों का ग्राफ लगातार बढ़ता जा रहा है जो लोकतंत्र के हित में नहीं है। भले-ही राजनीति का

अपराधीकरण पूरी तरह समाप्त नहीं हुआ है लेकिन इसमें न्यायालय की बढ़ती सक्रियता एवम् आदेश-निर्देश के कारण अपराधी सांसदों एवं विधायकों तथा सजायाता नेताओं के राजनीतिक भविष्य पर प्रश्नचिन्ह अवश्य लग गया है। आवश्यक यह है कि देश का प्रत्येक राजनीतिक नेतृत्व लोगों को जाति, धर्म, क्षेत्र में बाँटने एवम् स्वयं अपराध का सहारा लेकर लोकतंत्र का स्वरूप नष्ट करने की अपेक्षा राष्ट्रीय हित का संकल्प लें क्योंकि इससे न सिर्फ लोकतंत्र स्वस्थ्य रहेगा बल्कि सामाजिक स्वरूप में आश्चर्यजनक परिवर्तन भी आयेगा।

===============

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची-

1. नारायण, इकबाल, भारतीय सरकार एवम् राजनीति, राजस्थान, हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर, 1974, पृष्ठ-87
2. राज एक्सप्रेस, 04 अक्टूबर, 2013, जबलपुर संस्करण, पृष्ठ-13
3. इण्डिया टुडे, 24 नवम्बर, 1999, पृष्ठ-19
4. राज एक्सप्रेस, 1 सितम्बर, 2017, जबलपुर संस्करण, पृष्ठ-6
5. राज एक्सप्रेस, 15 जुलाई, 2017, जबलपुर संस्करण, पृष्ठ-12
6. सिंह, वीरकेश्वर प्रसाद, राजनीति शास्त्र के मूल सिद्धांत, ज्ञानदा प्रकाशन, पटना, 1978, पृष्ठ-29
7. राज एक्सप्रेस, 4 अक्टूबर, 2013, जबलपुर संस्करण, पृष्ठ-13
8. राज एक्सप्रेस, 4 अक्टूबर, 2013, जबलपुर संस्करण, पृष्ठ-13
9. दि हिन्दुस्तान टाइम्स, 29 अगस्त, 1997, पृष्ठ-8

Research Journal of Arts, Management and Social Sciences,
Vol. XVIII, Hindi.-I, Year IX, March, 2018
UGC Sl. No. 2138, Journal No.48774, Impact Factor 2.996

गिरफ्तारी बनाम् मानवाधिकार

* मनीष कुमार, ** दीप नारायण
*** आशिक कुमार

==

सारांश– *गिरफ्तारी का तात्पर्य है कि–"किसी व्यक्ति की व्यक्तिगत स्वतंत्रता पर रोक लगाना या उससे वंचित करना।" गिरफ्तारी उसी समय से प्रारंभ हो जाता है जब किसी व्यक्ति की व्यक्तिगत स्वतंत्रता पर विघ्न या बाधा डाला जाता है। गिरफ्तारी में मुख्यतः दो तत्व होते हैं-प्रथम, सक्षम प्राधिकारी द्वारा गिरफ्तारी का आशय होना और द्वितीय विधिक रूप से किसी व्यक्ति की व्यक्तिगत स्वतंत्रता पर आक्षेप करना। गिरफ्तारी की प्रक्रिया द०प्र०सं० की धारा–46 में उपबंधित है। अवैध गिरफ्तारी का तात्पर्य है पुलिस अधिकारी द्वारा किसी व्यक्ति को विधि द्वारा स्थापित उचित प्रक्रिया के बिना गिरफ्तार करना। अवैध गिरफ्तारी करना, मनमानापन है, विधि के आासन का एवं मानवाधिकार तथा मौलिक अधिकार का अतिक्रमण है, जो भा०द०सं० 1860 के विभिन्न धाराओं तहत दंडनीय अपराध है।*

==

मुख्य शब्द– गिरफ्तारी, आत्मरक्षा, अवैध गिरफ्तारी, सदोष अवरोध, सदोष परिरोध।

प्रस्तावना– "गिरफ्तारी" शब्द की द०प्र०सं० में कहीं भी परिभाषित नहीं किया गया है। गिरफ्तारी शब्द अंग्रेजी भाषा के शब्द Arrest का हिन्दी रूपांतरण है, जो फ्रेंच भाषा के शब्द Arrester से व्युत्पन्न हुआ है, जिसका अर्थ होता है To Stop" or "Stay"। नेचुरल सेंस में गिरफ्तारी का अर्थ है किसी व्यक्ति की व्यक्तिगत स्वतंत्रता पर रोक लगाना या उससे वंचित करना। लीगल सेंस में गिरफ्तारी का तात्पर्य है कानूनी प्राधिकार द्वारा किसी व्यक्ति को किसी अपराध के कथित आरोप के प्रत्युत्तर हेतु या अपराधिक कार्यों की कारित करने से रोकने के लिए पकड़ना या हिरासत में लेना। जेनरल सेंस में गिरफ्तारी का अर्थ है-"किसी व्यक्ति की व्यक्तिगत स्वतंत्रता पर, उचित, ऋजु एवं युक्तियुक्त शक्ति द्वारा रोक लगाना या उससे वंचित करना। भारत संघ बनाम पदम नारायण[1] के वाद में अभिकथित किया गया था कि-"गिरफ्तारी को कोर्ट का आदेश या एक विधिवत अधिकारी के निष्पादन के रूप में परिभाषित किया जा सकता है।" गिरफ्तारी उसी समय प्रारंभ हो जाती है जब व्यक्ति के व्यक्तिगत स्वतंत्रता पर विघ्न डाला जाता है न कि उस समय से जब उसे लेखबद्ध (अभिलिखित) किया जाता है या रिकार्ड (अभिलेख) पर प्रविष्टि की जाती है। गिरफ्तारी में मुख्यतः दो बातें रहती हैं-प्रथम, सक्षम प्राधिकारी द्वारा गिरफ्तारी करने का आशय और द्वितीय, किसी व्यक्ति की व्यक्तिगत स्वतंत्रता पर कानूनी रूप से आक्षेप।

========================

* रिसर्च स्कॉलर (पीएच०डी०), राजनीतिशास्त्र विभाग, मगध विश्वविद्यालय, बोध गया
** एलएल०बी०, एलएल०एम०, यू०जी०सी०-नेट, सेंट्रल यूनिवर्सिटी साउथ बिहार, गया

गिरफ्तारी एवं आत्मरक्षा का अधिकार–

गिरफ्तारी किये जाने वाले व्यक्ति के संज्ञान बोध में यह बात होना भी अत्यन्त आवश्यक है कि उसे किसी सक्षम प्राधिकार द्वारा विधिक रूप से निरुद्ध किया जा रही है, नहीं तो वह गिरफ्तारी का बलपूर्वक विरोध करने के लिए एवं आत्मरक्षा के अधिकार का प्रयोग करने के लिए पूर्णतः स्वतंत्र है[2], अतएव गिरफ्तारी कर रहे पुलिस अधिकारी का यह विधिक दायित्व है कि वह गिरफ्तार किये जाने वाले व्यक्ति को यह बतायें कि उसकी गिरफ्तारी विधिक रूप से की जा रही है और यदि गिरफ्तारी वारंट के आधार पर किया जा रहा है तो वारंट उसे दिखाएँ, जिसमें उसका नाम, उम्र, पता एवं अपराध के बारे में अंकित हो एवं कोर्ट के पीठासीन अधिकारी के हस्ताक्षर एवं न्यायालय की मोहर लगी हो। नजीर बनाम रेक्स[3] के वाद में अभिनिर्धारित किया गया कि द०प्र०सं० की धारा-46 के अन्तर्गत की गई गिरफ्तारी के विरुद्ध आत्मरक्षा प्रतिरक्षा का विधिक अधिकार अभियुक्त को प्राप्त नहीं है। एस०वी० दुसाध बनाम इम्परर[4] के वाद में अभिनिर्धारित किया गया कि-"चोरी करने वाले अभियुक्त को, चोरी का अपराध कारित करते वक्त, यदि गिरफ्तार करने का प्रयास किया जाता है तो अभियुक्त की आत्मरक्षा का अधिकार प्राप्त नहीं है।" भा०द०सं० की धारा-99 सहपठित धारा-100 के तहत अभियुक्त को गिरफ्तारी के विरुद्ध बलपूर्वक एवं हिंसात्मक तरीके का भी प्रयोग करने का अधिकार है किन्तु इसके लिए यह जान लेना आवश्यक है कि-"गिरफ्तार करने वाला व्यक्ति या पुलिस अथवा अन्य अधिकारी, उसे गिरफ्तार करने के लिए विधिक रूप से प्राधिकृत है, अथवा नहीं, यदि वह गिरफ्तारी के लिए विधिक रूप से प्राधिकृत है तो प्रतिरक्षा के अधिकार का प्रयोग नहीं किया जा सकता है, इसके विपरीत यदि गिरफ्तार करने वाले व्यक्ति उस व्यक्ति को गिरफ्तार करने के लिए विधिक रूप से प्राधिकृत नहीं है तो गिरफ्तारी अवैध होगी एवं गिरफ्तार किये जाने वाले व्यक्ति को या गिरफ्तार कर लिये गये व्यक्ति को अपनी प्रतिरक्षा का अधिकार प्राप्त होगा। नन नानडा बनाम इम्परर[5] के वाद में पुलिस अधिकारी ने गिरफ्तारी को पूर्ण करने के लिए अभियुक्त के सिर पर रिवाल्वर से फायर किया। अभियुक्त नीचे झुक गया, जिससे गोली ऊपर से निकल गई और उसके सिर में चोट नहीं आयी, उसने घूमकर, पुलिस अधिकारी पर हमला कर दिया। अभिनिर्णीत किया गया कि अभियुक्त को प्रतिरक्षा का अधिकार था।

गिरफ्तारी की प्रक्रिया–

गिरफ्तारी करने वाले पुलिस अधिकारी या अन्य व्यक्ति जो गिरफ्तारी कर रहा है, गिरफ्तार किये जाने वाले व्यक्ति के शरीर को वस्तुतः छुएगा या परिरूद्ध करेगा, जब तक कि वह वचन से या कर्म से से वह स्वयं को अभिरक्षा में समर्पित ने कर दें।[6] द०प्र०सं० की धारा-46 कोई आदेशात्मक प्रावधान उपबंधित नहीं करता है कि पुलिस अधिकारी गिरफ्तारी के वक्त निश्चित रूप से अभियुक्त के शरीर को छुए। शब्द एवं क्रिया-कलापों द्वारा गिरफ्तारी के वक्त निश्चित रूप से अभियुक्त के शरीर को छुए। शब्द एवं क्रियाकलापों द्वारा गिरफ्तारी पर्याप्त होगी।[7] पुलिस अधिकारी गिरफ्तारी के समय गिरफ्तार करने वाले व्यक्ति के शरीर को तभी हाथ लगायेगा (छुएगा), जब अभियुक्त अपनी गिरफ्तारी से बचने का प्रयास करेगा या गिरफ्तारी के विरोध में कोई प्रतिरोध उत्पन्न करेगा।[8] गिरफ्तारी कार्यान्वयन अथवा सम्पादन के लिए किसी औपचारिकता की आवश्यकता

नहीं है, सिर्फ वचनों एवं क्रियाकलापों से हिरासत में लेना पर्याप्त है।[9] गिरफ्तारी को पूर्णरूपेण सम्पादित होने के लिए गिरफ्तार व्यक्ति को इस बात का एहसास होना चाहिए कि उसे गिरफ्तार किया गया है।[10] यदि गिरफ्तार करने वाले व्यक्ति, गिरफ्तार किये जाने वाले व्यक्ति से कहता है कि-"तुम्हें गिरफ्तार किया जाता है" तो मात्र यह कह देने से गिरफ्तारी की संरचना नहीं होती है, इस शब्द के उच्चारण के बाद यदि व्यक्ति अपने आप को हिरासत में समर्पित नहीं करता है तो उसे पकड़ना अनिवार्य हो जाता है।[11] पुलिस से घिरा होना, गिरफ्तारी नहीं है अपितु गिरफ्तारी के लिए यह आवश्यक है कि वह पुलिस की अभिरक्षा में हो।[12] पुलिस द्वारा किसी व्यक्ति पर निगरानी रखना[13] गिरफ्तार का निर्माण नहीं करता है, गिरफ्तारी का पूर्णरूपेण सम्पादित करने के लिए अभियुक्त के शरीर को छुआ एवं प्रभाव में लिया जाता है। धारा-46 में उपबंधित पद "परिरूद्ध" का तात्पर्य है-गिरफ्तार किये जाने वाले व्यक्ति की कोशिशों, चेष्टाओं या उसकी शारीरिक गतिविधियों को हथकड़ी, रस्सा या किसी अन्य वस्तु से बांधकर या किसी स्थान में बन्द करके उसे रोक देना। किन्तु इस प्रक्रिया से गिरफ्तारी सिर्फ तभी की जाएगी जब गिरफ्तार किया जानेवाला व्यक्ति अपने आपको वचन से या कर्म से अभिरक्षा में समर्पित न कर दे। यदि कोई व्यक्ति गिरफ्तार करने वाले पुलिस अधिकारी को अपने समर्पण का एहसास करा देता है और उसके साथ चलने के लिए तत्पर हो जाता है, तो उसे हथकड़ी या रस्सा आदि लगाने की आवश्यकता नहीं है।[14] प्रेमशंकर शुक्ल बनाम दिल्ली प्रशासन[15] के वाद में निर्णय किया गया कि हथकड़ी या रस्सा का प्रयोग तभी किया जा सकता है जब कैदी के पुलिस अभिरक्षा से भागने का "स्पष्ट और वर्त्तमान खतरा" हो और यदि ऐसा हो, तो उसके कारणों और औचित्यों का स्पष्ट उल्लेख किया जाना आवश्यक है। इस प्रकार विशिष्ट परिस्थितियों में ही हथकड़ी का प्रयोग किया जा सकता है, यदि अभिरक्षक प्राधिकारी हथकड़ी लगाने के कारण एवं औचित्यों का उल्लेख नहीं करता है, तो वह अनु०-21 के तहत विहित प्रक्रिया के विरुद्ध होने के कारण अनुचित एवं अवैध हो जाएगी।

महिलाओं की गिरफ्तारी-

यदि किसी महिला की गिरफ्तारी करनी है तो वहाँ जब तक कि परिस्थितियाँ प्रतिकूल न हो, तब तक गिरफ्तारी मौखिक सूचना पर अभिरक्षा में उसके समर्पण की उपधारणा की जाएगी, और जब तक कि परिस्थितियाँ अन्यथा अपेक्षा न करे, या जब तक महिला पुलिस अधिकार न हो, पुलिस अधिकारी, किसी महिला की गिरफ्तारी करने के लिए उसके शरीर को स्पर्श नहीं करेगा[16] तथा असाधारण परिस्थिति के अलावे, किसी महिला को सूर्यास्त के पश्चात् और सूर्योदय के पूर्व गिरफ्तार नहीं किया जा सकता है, और जहाँ ऐसी असाधारण परिस्थिति विद्यमान है, वहाँ महिला पुलिस अधिकारी, लिखित रिपोर्ट करके, ऐसे प्रथम श्रेणी के न्यायिक मजिस्ट्रेट की पूर्व अनुज्ञा प्राप्त करेगी; जिसकी स्थानीय अधिकारिता के भीतर अपराध किया गया है या गिरफ्तारी की जानी है।[17] इसका इसका अर्थ यह हुआ कि-"असाधारण परिस्थिति में महिलाओं को सूर्यास्त के बाद एवं सूर्योदय के पहले (पूर्व) भी गिरफ्तार किया जा सकता है, और जहाँ "परिस्थितियाँ प्रतिकूल" हो, वहाँ पुरुष पुलिस अधिकारी भी, किसी महिला के शरीर को स्पर्श करके गिरफ्तारी करने के लिए विधि द्वारा विधिक रूप से प्राधिकृत हो जाता है। यह मानवाधिकारों की दृष्टि से उचित नहीं कहा जा सकता है। पुलिस अधिकारी अपने इस अधिकारी का प्रयोग महिलाओं

के साथ छेड़-छाड़ एवं दुर्व्यवहार करने के लिए धड़ल्ले से करते हैं, जो लैंगिक न्याय पर साफ-साफ आक्रमण है, जबकि प्रावधान यह होना चाहिए कि महिलाओं को किसी भी परिस्थिति में सिर्फ और सिर्फ महिला पुलिस या अन्य महिला अधिकारी द्वारा ही गिरफ्तारी एवं पूछताछ किया जाना चाहिए और महिला पुलिस अधिकारी की अभिरक्षा में ही रखा जाना चाहिए। पुरुष पुलिस अधिकारी सिर्फ सहायक कर्मी के रूप में उपस्थित रहें। राजकुमारी बनाम एस०एच०ओ०, नोइडा[18] के वाद में निर्णति किया गया कि "यदि अन्वेषण अधिकारी इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि "पिटिशनर (कर्त्री राजकुमारी) ने संज्ञेय अपराध किया है तो उसका यह अधिकार था कि वह उस (पिटिशनर) को गिरफ्तार करता और उसके इस कार्य के इस अनुक्रम में कोई भी अपवाद बाधक नहीं बन सकता है। इस प्रकरण में पिटीशनर कर्त्री राजकुमारी का कथन था कि उसे रात्रि के डेढ़ बजे (1:30 खण्ड) में गिरफ्तार किया गया था, अतः गिरफ्तार अविधिपूर्ण है।

गिरफ्तार के दौरान बल का प्रयोग-

गिरफ्तार के दौरान यदि गिरफ्तार किये जाने वाले व्यक्ति, अपनी गिरफ्तार का बलपूर्वक विरोध/प्रतिरोध करता है, तो ऐसा पुलिस अधिकारी या अन्य व्यक्ति, गिरफ्तार करने के लिए "आवश्यक सभी साधनों" का उपयोग कर सकता है।[19] "आवश्यक सभी साधनों" पद के अन्तर्गत गिरफ्तारी के दौरान "अन्य लोगों"[20] की सहायता प्राप्त करना या "प्राइवेट व्यक्ति"[21] द्वारा गिरफ्तारी करना भी शामिल है। इसके अलावे उसे मारा-पीटा[22] जा सकता है, धमकी दी जा सकती है, भयभीत किया जा सकता है, आदि। किन्तु बल का प्रयोग उतना ही किया जाना आवश्यक है जितना की परिस्थिति के अनुसार गिरफ्तार के लिए आवश्यक हो, आवश्यकता से अधिक बल को प्रयोग नहीं किया जा सकता है। बल का इतना प्रयोग नहीं किया जा सकता है कि गिरफ्तार किये जाने वाले व्यक्ति की मृत्यु हो जाए। धारा-46 (द०प्र०सं०) की कोई बात ऐसे किसी व्यक्ति की, जिस पर मृत्युदंड या आजीवन कारावास के दण्ड से दंडनीय अपराध का अभियोग/ आरोप नहीं है, उसकी मृत्यु कारित करने का अधिकार नहीं देती है।[23] इसका अर्थ यह हुआ कि जिस व्यक्ति पर आजीवन कारावास या मृत्युदंड के दंड से दंडित अपराध का आरोप है, उसे जान से मारने का अधिकार पुलिस को विधिक रूप से प्राप्त करता है। यह प्रावधान मानवाधिकार एवं नैसर्गिक न्याका घोर उल्लंघन है, क्योंकि जिस पर सिर्फ दांडिक अपराध का आरोप हो, उसे तब तक अपराधी नहीं माना जा सकता है जब तक कि उस पर लगाए गए आरोप को सक्षम अधिकारिता वाले न्यायालय द्वारा अपराध साबित न कर दिया गया हो।[24] जबकि होना यह चाहिए कि गिरफ्तारी के दौरान बल का प्रयोग जबकि होना यह चाहिए कि गिरफ्तारी के दौरान बल का प्रयोग करके सिर्फ उतना ही क्षति कारित करना चाहिए, जिससे किसी व्यक्ति की मृत्यु न हो, ज्यादा से ज्यादा उसे जख्मी या घायल किया जा सकता है। मृत्यु कारित सिर्फ उसी परिस्थिति में किया जाना चाहिए, जब गिरफ्तार किये जाने वाले व्यक्ति घातक आयुधों से, गिरफ्तार करने वाले पुलिस अधिकारी या अन्य अधिकारी पर अंधाधुन फायरिंग शुरू कर देता है, तभी पुलिस को आत्मरक्षा में जवाबी फायरिंग करना चाहिए। नवाज अली बनाम इम्परर[22] के वाद में एक निहायत खतरनाक अभियुक्त को गिरफ्तार करने के लिए उसके सिर पर एक गोली चलानी पड़ी। निर्णति किया गया कि गिरफ्तारी वैध थी।

वारंट के बिना गिरफ्तारी–

पुलिस को बिना वारंट (प्राधिकार-पत्र) के भी गिरफ्तारी का अधिकार है और शक या संदेह के आधार पर भी गिरफ्तारी करने की शक्ति प्राप्त है कोई पुलिस अधिकारी मजिस्ट्रेट के आदेश के बिना और वारंट के बिना किसी ऐसे व्यक्ति को गिरफ्तार कर सकता है, जो पुलिस अधिकारी की उपस्थिति में कोई संज्ञेय अपराध कारित करता है[26], जिसके विरुद्ध कोई युक्तियुक्त परिवाद किया गया है या विश्वसनीय सूचना प्राप्त हुई है या युक्तियुक्त संदेह विद्यमान है कि उसने ऐसी अवधि के कारावास से, दंडनीय संज्ञेय अपराध कारित किया है जो 7 वर्ष से कम या 7 वर्ष से अधिक की हो सकती है, चाहे जुर्माना सहित हो या जुर्माना रहित, यदि निम्न शर्तें का समाधान/तसल्ली हो जाता है[27], अर्थात् पुलिस अधिकारी का ऐसा परिवाद, सूचना या संदेह के आधार पर यह विश्वास करने का कारण है कि ऐसे व्यक्ति ने उक्त अपराध किया है[28] और यदि पुलिस अधिकारी का यह समाधान हो जाता है कि ऐसी गिरफ्तारी निम्न प्रायोजनों के लिए आवश्यक है-ऐसे अपराधी को कोई अग्रेतर अपराध को करने से रोकने के लिए[29], अपराध के उचित अन्वेषण के लिए[30], साक्ष्य मिटाने या साक्ष्य के साथ छेड़-छाड़ करने से दूर (निवृत्त) रखने के लिए[31], या ऐसे व्यक्ति को तथ्यों से परिचित किसी व्यक्ति को उत्प्रेरित करने धमकी देने या वचन देने से दूर रखने के लिए[32] या ऐसे व्यक्ति की न्यायालय में उपस्थिति सुनिश्चित करने के लिए।[33] पुलिस अधिकारी ऐसी गिरफ्तार करने दौरान लिखित में अपने कारणों को लेखबद्ध करेगा, परन्तु जहाँ गिरफ्तार करना इस धारा का प्रावधानों के अधीन अपेक्षित नहीं है, वहाँ गिरफ्तारी नहीं करने के कारणों को लिखित में लेखबद्ध करेगा।[34] जिसके विरुद्ध यह विश्वसनीय सूचना प्राप्त हुई है कि उसने ऐसा संज्ञेय अपराध कारित किया है जो ऐसी अवधि के कारावास से दंडनीय है जो 7 वर्ष से अधिक जुर्माना सहित या जुर्माना रहित या मृत्युदंड तक हो सकती है, से दंडनीय संज्ञेय अपराध कारित किया है और पुलिस अधिकारी का उस सूचना के आधार पर यह विश्वास करने का कारण है कि ऐसे व्यक्ति ने उक्त अपराध कारित किया है[35], जो द०प्र०सं० के अधीन या राज्य सरकार के आदेश द्वारा उद्घोषित अपराधी घोषित किया जा चुका है[36], अथवा जिसके पास (कब्जे) में कोई ऐसी वस्तु प्राप्त होती है जिसके चुराई हुई सम्पत्ति होने का उचित रूप से संदेह किया जा सकता है, और जिस पर ऐसी वस्तु के बारे में अपराध करने का उचित रूप से संदेह किया जा सकता है[37], अथवा जो पुलिस अधिकारी को उस समय बाधा पहुँचाता है जब वह अपना कर्त्तव्य कर रहा है या जो विधिपूर्ण अभिरक्षा से निकल भागा हो या निकल भागने का प्रयत्न करता है[38], या जिस पर संघ के सशस्त्र बलों में किसी से अभित्याजक/भगोड़ा होने का उचित संदेह हो[39], अथवा जो भारत के बाहर किसी स्थान पर, किसी ऐसे कार्य किये जाने से, जो यदि भारत में किया गया होता तो अपराध के लिए दंडनीय होता, और जिसके लिए वह प्रत्यर्पण संबंधी किसी विधि के अधीन या अन्यथा भारत में पकड़े जाने या अभिरक्षा में विरुद्ध किये जाने का भागी है, संबद्ध रह चुका है या जिसके बारे में उचित परिवाद किया जा चुका है या विश्वसनीय इत्तिला (सूचना) प्राप्त हो चुकी है या उचित संदेह विद्यमान है कि वह ऐसे सम्बद्ध रह चुका है[40], अथवा जो छोड़ा गया दोषसिद्ध होते हुए भी धारा-356(5) द०प्र०सं० के अधीन बनाये गये किसी नियम को भंग करता है[41] अथवा जिसकी गिरफ्तार के लिए किसी अन्य पुलिस अधिकारी से लिखित या मौखिक अध्यपेक्षा प्राप्त हो चुकी है, परन्तु यह

तब जबकि अध्यपेक्षा में उस व्यक्ति का, जिसे गिरफ्तार किया जाना है, और उस अपराध का या अन्य कारण का, जिसके लिए गिरफ्तारी की जानी है विनिर्देश है और उससे यह दर्शित होता है कि अध्यपेक्षा जारी करने वाला अधिकारी द्वारा बिना वारंट के वह व्यक्ति विधिपूर्वक गिरफ्तार किया जा सकता है।[42] धारा-42 के प्रावधानों के अधीन किसी भी व्यक्ति का असंज्ञेय अपराध से सम्बद्ध है या जिसके विरुद्ध परिवाद किया गया है या विश्वसनीय सूचना प्राप्त की गई है या उसके इस प्रकार सम्बद्ध होने का युक्तियुक्त संदेह विद्यमान है, मजिस्ट्रेट के अधिपत्र या आदेश के सिवाय गिरफ्तार नहीं किया जा सकता है।[43]

पुलिस के समक्ष उपस्थित होने का नोटिस-

यदि पुलिस धारा-41 के अधीन किसी व्यक्ति को अपने समक्ष उपस्थित होने के लिए नोटिस जारी करती है, वहाँ नोटिस का अनुपालन करने वाले व्यक्ति को नोटिस में निर्दिष्ट अपराध के लिए तब तक गिरफ्तार नहीं किया जा सकता है जब तक लेखबद्ध किये गये कारणों से पुलिस अधिकारी की यह राय न हो कि उसे गिरफ्तार किया जाना चाहिए।[44] और जहाँ व्यक्ति ऐसे नोटिस के निबंधनों (शर्त्तों) का अनुपालन नहीं करता है या अपनी पहचान कराने का इच्छुक नहीं है तो पुलिस इस निमित्त सक्षम न्यायालय द्वारा जारी आदेशों के अधीन, नोटिस में उल्लेखित अपराध के लिए उसको गिरफ्तार कर सकता है।[45]

नाम, पता नहीं बताने पर गिरफ्तारी-

यदि किसी व्यक्ति ने पुलिस अधिकारी की उपस्थिति में असंज्ञेय अपराध किया है या जिस पर पुलिस अधिकारी की उपस्थिति में असंज्ञेय अपराध करने का अभियोग लगाया गया है, उस अधिकारी की मांग पर नाम एवं पता (निवास स्थल) नहीं बताने पर या ऐसा नाम या पता बताता है जिसके बारे में उस अधिकारी को यह विश्वास करने का कारण है कि वह मिथ्या है, तब उसे गिरफ्तार किया जा सकता है ताकि उसका नाम और पता अभिनिश्चित किया जा सके।[46] यदि ऐसे व्यक्ति का नाम एवं पता अभिनिश्चत कर लिया जाता है तब उसे प्रतिभुओं के सहित या रहित बंध पत्र के निष्पादन करने पर छोड़ दिया जाएगा, परन्तु ऐसा व्यक्ति का भारत में निवास नहीं है तो बन्धपत्र भारत में निवास करने वाले प्रतिभू या प्रतिभुओं द्वारा प्रतिभूत किया जाएगा। यदि उसने मजिस्ट्रेट के समक्ष उपस्थित होने की अपेक्षा की गई है तो वह उसके समक्ष जाहिर होगा।[47] यदि गिरफ्तार के 24 घंटे के अन्दर ऐसे व्यक्ति का सही नाम एवं पता (निवास) अभिनिश्चित नहीं किया जा सकता है या वह बन्धपत्र निष्पादित करने में या अपेक्षित किये जाने पर पर्याप्त प्रतिभूत देने में असफल रहता है तो वह अधिकारिता रखने वाले निकटतम मजिस्ट्रेट के पास तत्काल भेज दिया जाएगा।[48] पद-"विश्वसनीय सूचना" के अन्तर्गत वे सभी सूचनाएँ आती है जिन पर साधारणतया विश्वास किया जा सकता है युक्तियुक्त संदेह एवं विश्वसनीय सूचना पर पुलिस अधिकारी को स्वयं विचार करना चाहिए, उसके बाद ही गिरफ्तार की जानी चाहिए।[49]

जोगिन्दर सिंह के मामले में दिये गये दिशा-निर्देश-

जोगिन्दर सिंह बनाम उत्तर प्रदेश राज्य[50] के वाद में अभिनिर्धारित किया गया कि किसी व्यक्ति को किसी अपराध के सहभागी होने के संदेह मात्र पर गिरफ्तार नहीं किया जा सकता। किसी व्यक्ति की गिरफ्तार करते समय पुलिस अधिकारी को इस बात से

संतुष्ट होना आवश्यक है कि उसे गिरफ्तार करने का युक्तियुक्त औचित्य है। न्यायालय ने इस संबंध में निम्न सिद्धांत विहित किया-गिरफ्तार व्यक्ति को यदि वह प्रार्थना करता है तो उसके किसी ऐसे मित्र, संबंधी या किसी अन्य व्यक्ति को जिसे वह जानता है या जिससे उसके कल्याण में हित हो सकता है, उसकी गिरफ्तार तथा उस स्थान की जहाँ उसे निरुद्ध किया गया है, यथासंभव शीघ्र सूचना दे।[50।] पुलिस अधिकारी उसे थाने में लाने पर यह बताएगा कि उसे उक्त अधिकार प्राप्त है[50ठ] तथा पुलिस डायरी (स्टेशन डायरी) में इस बात की प्रविष्टि की जाएगी कि इस संदर्भ में किस व्यक्ति को सूचित किया गया था।[50ड]

डी०के० बासू के मामले में दिये यह दिशा-निर्देश-

डी० के० बासू बनाम पश्चिम बंगाल राज्य[51] के वाद में यह अभिनिर्धारित किया गया कि किसी भी प्रकार का उत्पीड़न या क्रूर अमानवीय अपमानजनक व्यवहार चाहे जांच के दौरान, प्रश्न-पूछने के दौरान या अन्य स्थान पर हो अनु०-21 का अतिक्रमण करता है अतः वर्जित है। न्यायालय ने गिरफ्तारी के संदर्भ में मार्गदर्शक सिद्धांत प्रतिपादित किये और कहा कि जब तक विधानमंडल इस संदर्भ में कोई विधि नहीं बनाता है, निम्नलिखित सिद्धान्तों का पालन किया जाएगा-गिरफ्तारी करने वाले या जाँच अथवा पूछताछ करने वाले पुलिस कर्मी अपने नाम तथा पदनाम वाले, सही स्पष्ट एवं दृश्यमान नेम प्लेट वर्दी के ऊपर धारण करेंगे।[52] ऐसे सभी पुलिस कर्मी जो गिरफ्तार व्यक्ति से पूछताछ करते हैं, उसका विवरण रजिस्टर में दर्ज किया जाना चाहिए। गिरफ्तार करने वाले पुलिस अधिकारी, गिरफ्तारी के समय गिरफ्तारीनामा बनाएगा।[53] जिसे कम से कम 2 साक्षियों द्वारा प्रमाणित किया जाएगा जो गिरफ्तार व्यक्ति के परिवार के सदस्य होंगे या जहाँ गिरफ्तारी की गई हो उस क्षेत्र (स्थान) का प्रतिष्ठित व्यक्ति होंगे।[54] इस गिरफ्तारी नामा को गिरफ्तार व्यक्ति द्वारा भी प्रतिहस्ताक्षरी किया जाएगा[55] तथा इसमें गिरफ्तारी का स्थान, समय, तिथि भी स्पष्टरूपेण से अंर्तवृष्ट होना चाहिए। जिस व्यक्ति को गिरफ्तार या निरुद्ध किया जाए उसे यह अधिकार होगा कि एक मित्र या संबंधी या किसी अन्य व्यक्ति जिसको वह जानता है या जिसे उसकी कुशलता (कल्याण) में दिलचस्पी (रुचि) हो, को, यथासंभव सूचित किया जाए कि वह गिरफ्तार है और उसे अमुक स्थान पर निरुद्ध किया गया है[56], यदि 'गिरफ्तारी नामा' को गिरफ्तार किये गये व्यक्ति के परिवार के सदस्य या मित्र के द्वारा सत्यापन (अनुप्रमाणन) किया गया हो, तो उसे गिरफ्तारी की सूचना भेजना आवश्यक नहीं है। गिरफ्तार किये गये व्यक्ति के परिवार के सदस्य या मित्र, जिला या नगर से बाहर रहता है, तो गिरफ्तार करने वाले पुलिस अधिकारी, गिरफ्तारी का समय, स्थान और अभिरक्षा के स्थान की सूचना, उसके मित्र या परिजन (रिश्तेदार) को विधिक सहायता केन्द्र या उस क्षेत्र के पुलिस केन्द्र के माध्यम से तार द्वारा गिरफ्तारी के 8 से 12 घंटे के अन्दर अवश्य भेजी जाएगी। गिरफ्तार व्यक्ति को जैसे हवालात में रखा जाता है उसे इस अधिकार के बारे में सूचना दी जाएगी उसकी गिरफ्तार या निरोध के बारे में सूचना उसके किस परिवार (रिश्तेदार) या मित्र को दे दी गई है।[57] निरोध के स्थान पर गिरफ्तारी की सूचना डायरी में दर्ज की जाएगी, जिसमें उस व्यक्ति के नाम का भी उल्लेख होगा, जिसे गिरफ्तारी के बारे में सूचित किया गया है[58] तथा उन पुलिस कर्मियों के नाम एवं विवरण का उल्लेख होगा, जिसकी अभिरक्षा में गिरफ्तार व्यक्ति को रखा गया है। गिरफ्तार व्यक्ति के मांग (अनुरोध) पर गिरफ्तार के समय उसकी मेडिकल जांच करवाई जाएगी[59] और उसके शरीर में पाई गई

सभी छोटी-बड़ी चोटें यदि हो, तो उन्हें अभिलिखत करके, मेडिकल जांच का ज्ञापन बनाकर[60] उसे गिरफ्तार व्यक्ति और गिरफ्तार करने वाले पुलिस अधिकारी द्वारा हस्ताक्षरित चाहिए। इस ज्ञापन की एक प्रति गिरफ्तार व्यक्ति को भी उपलब्ध करना चाहिए।[61] व्यक्ति की गिरफ्तारी के 48 घंटे में प्रशिक्षित डॉक्टरी द्वारा जो कि सम्बन्धित राज्य या केन्द्र शासित प्रदेश के स्वास्थ्य सेवा के निर्देशक द्वारा अनुमोदित डॉक्टरों के पैनल में से किसी डॉक्टर द्वारा मेडिकल जांच करना चाहिए।[62] सभी दस्तावेज जिसमें मेमो (गिरफ्तारी मेमो एवं मेडिकल टेस्ट मेमो) भी शामिल है, की प्रतिलिपियाँ उस क्षेत्र के मजिस्ट्रेट को अभिलेख (रिकार्ड) के लिए मामले में कार्यवाही करने हेतु भेजी जाएगी। गिरफ्तार व्यक्ति को पूछताछ के दौरान के दौरान अपने अधिवक्ता से मिलने दिया जाएगा[63], यद्यपि पूछताछ के पूरे दौरान में यह आवश्यक नहीं है। सभी जिलों[64] एवं राज्य[65] के हेड क्वाटर में पुलिस नियंत्रण कक्ष बनाया जाना चाहिए, जहाँ गिरफ्तारी और उसकी अभिरक्षा के स्थान की सूचना गिरफ्तार करने वाले पुलिस कर्मी को 12 घंटे के अन्दर देना होगा और उसे पुलिस नियंत्रण कक्ष में स्पष्ट स्थान पर सहजदृश्य नोटिस बोर्ड पर प्रदर्शित करना होगा।[66] इस मार्गदर्शक सिद्धांत की अवहेलना पर संबंधित पुलिस कर्मी विभागीय दंड के अलावे न्यायालय अवमानना के लिए भी दंडित किये जायेंगे। उपर्युक्त अपेक्षाएँ संविधान के अनु०-21 एवं 22 (7) में निहित है और ऐसे कठोरता से पालन किया जाना चाहिए।

गिरफ्तार व्यक्तियों के अधिकार-

बिना वारंट के गिरफ्तार व्यक्ति की गिरफ्तारी का कारण एवं आधार के बारे में गिरफ्तारी के तुरंत बाद बताया जाएगा।[67] यदि जमानतीय अपराध के आरोप में गिरफ्तार किया गया है तो गिरफ्तार करने वाले पुलिस अधिकारी या अन्य व्यक्ति उसे जमानत के अधिकार के बारे में बतायेंगे।[68] गिरफ्तार व्यक्ति को यह सूचित किया जाएगा कि उसे अपने रिश्तेदार या मित्र को अपनी गिरफ्तारी की सूचना देने का अधिकार है।[69] गिरफ्तार व्यक्ति को पूछताछ के दौरान मिलने दिया जाएगा[70], यद्यपि सम्पूर्ण पूछताछ के दौरान नहीं। गिरफ्तार व्यक्ति को उससे अधिक अवरुद्ध नहीं किया जाएगा, जिनता कि उसे निकल भागने से रोकने के लिए आवश्यक हो।[71] गिरफ्तार व्यक्ति के रिश्तेदार एवं मित्र को गिरफ्तारी के तुरन्त बाद, गिरफ्तारी के स्थान एवं निरुद्ध रखे जाने वाले स्थान के बारे में सूचना देगा।[72] जैसे ही गिरफ्तार व्यक्ति को थाना लाएगा उसे यह सूचित किया जाएगा कि उसकी गिरफ्तारी की सूचना किसे दी गई है[73], यदि उसकी गिरफ्तारी की सूचना किसी को, किसी विशेष कारणवश नहीं दी जा सकी तो उसके गिरफ्तार व्यक्ति के राय पर नामित व्यक्ति को ऐसी सूचना दी जाएगी। इस तथ्य की प्रविष्टि पुलिस थाने में रखी गई डायरी में किया जाएगा कि व्यक्ति की गिरफ्तारी की सूचना किसे दी गई है।[74] यदि मजिस्ट्रेट के समक्ष गिरफ्तार व्यक्ति को प्रस्तुत किया जाता है तो मजिस्ट्रेट का यह कर्त्तव्य होगा कि वह इस बात की तसल्ली कर ले कि गिरफ्तारी की सूचना गिरफ्तार व्यक्ति के रिश्तेदार अथवा मित्र को दी गई है या नहीं? तथा दी गई है तो किसको? एवं क्या गिरफ्तार व्यक्ति को यह पता है कि उसकी गिरफ्तारी की सूचना अमुख व्यक्ति को दी गई है?[75] किसी व्यक्ति की अभिरक्षा में रखने वाले व्यक्ति का यह कर्त्तव्य होगा कि वह अभियुक्त की स्वास्थ्य एवं सुरक्षा का युक्तियुक्त ध्यान रखें।[76] जब किसी व्यक्ति को गिरफ्तार किया जाता है तो गिरफ्तारी के तुरन्त बाद उसका मेडिकल चेक अप (चिकित्सकीय परीक्षण) सरकारी डॉक्टर

से करवाया जाएगा, और यदि महिला को गिरफ्तार किया जाता है तो उसके शरीर का परीक्षण सरकारी महिला चिकित्सक गिरफ्तार और उसके उपलब्ध न होने की स्थिति में कोई पंजीकृत महिला डॉक्टर द्वारा किया जाएगा।[77] ऐसे परीक्षण के दौरान गिरफ्तार व्यक्ति पर किसी क्षति या हिंसा के चिन्ह (जख्म, चोट या अन्य निशान) और उस अनुमानित समय जब ऐसी क्षतियां या हिंसा के चिन्ह कारित किये गये हों, का उल्लेख करते हुए अभिलेख तैयार करेंगे[78], तथा ऐसे परीक्षण के रिपोर्ट की एक प्रति डॉक्टर द्वारा गिरफ्तार व्यक्ति या उसके द्वारा नामित व्यक्ति को प्रदान की जाएगी।[79] थाने के भार साधक अधिकारी या कोई अन्य पुलिस अधिकारी, अपने किसी अधीनस्थ पुलिस अधिकारी से किसी ऐसे व्यक्ति की गिरफ्तारी की अपेक्षा करता है जिसे बिना वारंट के गिरफ्तार किया जा सकता है तो गिरफ्तार करने वाले अधीनस्थ पुलिस अधिकारी उसे लिखित आदेश जिसमें उस अपराध या अन्य कारण विर्निदिष्ट को, जो उसे अपने वरिष्ठ अधिकारी से प्राप्त हुआ है, उस आदेश का सार गिरफ्तार करने वाले व्यक्ति को, गिरफ्तारी से पहले सूचित करेगा एवं व्यक्ति (अभियुक्त) की मांग पर उसे वह आदेश दिखाएगा।[80] जब बिना वारंट के गिरफ्तारी की जाती है तो गिरफ्तार करने वाले पुलिस अधिकारी बिना अनावश्यक विलंब के और जमानत के संबंध मे अर्न्तविष्ट उपबंधों के अधीन रहते हुए, गिरफ्तार व्यक्ति के समक्ष अधिकारिता वाले मजिस्ट्रेट या पुलिस थाने के भार साधक अधिकारी के समक्ष ले जाया जाएगा या भेजेगा।[81] कोई पुलिस अधिकारी वारंट के बिना गिरफ्तार किये गये व्यक्ति को उससे अधिक अवधि के लिए अभिरक्षा में निरुद्ध नहीं रखेगा, जो उस मामले की सब परिस्थितियों में उचित है तथा ऐसी अवधि, मजिस्ट्रेट के धारा-167 के अधीन विशेष आदेश के अलावे में गिरफ्तारी के स्थान से मजिस्ट्रेट के न्यायालय तक यात्रा के लिए आवश्यक समय को छोड़कर 24 घंटे से अधिक नहीं होगी।[82] पुलिस थाने के भार साधक अधिकारी को या जिला मजिस्ट्रेट को अथवा या उनके निदेश पर उपखंड मजिस्ट्रेट को, अपने थाने की सीमाओं के अन्दर बिना वारंट के गिरफ्तार किये गये सभी व्यक्तियों के मामलों की रिपोर्ट करेंगे, चाहे उन व्यक्तियों की जमानत से ली गई हो या नहीं।[83] पुलिस द्वारा गिरफ्तार किये गये किसी व्यक्ति का उन्मोचन उसी के बन्धपत्र या जमानत या मजिस्ट्रेट के विशेष आदेश के अधीन ही किया जाएगा, अन्यथा नहीं।[84] कोई भी गिरफ्तारी द०प्र०सं० या गिरफ्तारी का प्रावधान करने के लिए तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि के अनुसार ही की जाएगी, अन्यथा नहीं।[85]

अवैध गिरफ्तारी, मानवाधिकार हनन एवं दांडिक कानून-

जो कोई किसी दूसरे व्यक्ति को किसी ऐसी दिशा में जाने से रोकने के लिए अपनी मर्जी से (स्वेच्छाया) रुकावट (बाधा) डालता है जिधर जाने का अधिकार उस व्यक्ति के पास है, जाने से गलत तरीके से रोकता (निवारित करता) है, तो उस व्यक्ति का सदोष अवरोध[86] करता है तथा जो कोई किसी व्यक्ति को गलत तरीके से इस प्रकार रोकता (सदोष अवरोध) करता है, कि वह एक निश्चित सीमा से बाहर नहीं जा सके, तो वह उस व्यक्ति का सदोष परिरोध[87] करता है। "अवैध गिरफ्तारी" का तात्पर्य ऐसे गिरफ्तारी से है, जिसमें पुलिस द्वारा गिरफ्तारी के लिए विधि द्वारा विहित उचित प्रक्रियाओं, का पालन नहीं किया जाता है। इम्परर बनाम गोपालिया[88] के वाद में अभिनिर्धारित किया गया कि-"अवैध तरीके से यदि कोई व्यक्ति गिरफ्तार किया जाता है तो गिरफ्तार करने वाला व्यक्ति सदोष

परिरोध के अपराध का दोषी होगा। यदि वह विधिक रूप से बंधे होने के कारण कार्य करता है और ऐसे करने में तथ्य की भूल के कारण गिरफ्तारी अवैध हो जाती है, तो वह दोषी नहीं होगा। किन्तु यदि ऐसा करने में वह विधि की भूल करता है तो सदोष परिरोध का दोषी माना जाएगा, क्योंकि "विधि की भूल क्षम्य नहीं है"।

गिरफ्तारी के दौरान अवैध तरीकों का प्रयोग करना, सार्वभौमिक मानवाधिकार घोषणा के अनु०-9 एवं भारतीय संविधान के अनु०-21 एवं 22 का उल्लंघन है तथा द०प्र०सं० की धारा 46 का भी उल्लंघन है, जो भा०द०सं० की धारा-220[89] एवं 348[90] के तहत दंडनीय है तथा न्यायालय अवमान अधिनियम 1971 की धारा-12[91] के तहत दंडनीय है। यदि गिरफ्तार करने वाला व्यक्ति पुलिस अधिकारी है तो उपरोक्त दंड के अलावे भारतीय पुलिस अधिनियम 1861 की धारा-29 एवं भा०द०सं० की धारा-166[92], 188[93] के तहत भी दंडित किया जाएगा। गिरफ्तार व्यक्ति को गिरफ्तारी का कारण एवं आधार नहीं बताना, मानवाधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा के अनु०-9 एवं भारतीय संविधान के अनु०-21 एवं 22(1) तथा द०प्र०सं० की धारा-50(1) का उल्लंघन है, जो भा०द०सं० की धारा-166, 188, 220 एवं 348 तथा न्यायालय अवमान अधिनियम 1971 की धारा-12 तहत दंडित किया जाएगा। गिरफ्तार व्यक्ति को बिना किसी पर्याप्त कारण के हथकड़ी या रस्सा लगाना, सड़कों पर घुमाना, प्रदर्शन करना मानवाधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा के अनु०-5 एवं भारतीय संविधान के अनु०-14 एवं 21 का अतिक्रमण है, तथा द०प्र०सं० की धारा-49 का भी उल्लंघन है जो कि भा०द०सं० की धारा-166, 188 एवं न्यायालय अवमान अधिनियम-1971 की धारा-12 के के तहत है दंडनीय है। बिना मजिस्ट्रेट के धारा-167 के तहत प्राप्त आदेश के गिरफ्तार व्यक्ति को 24 घंटे से अधिक समय तक हिरासत में रखना अवैध परिरोध माना जाएगा, एवं यह कृत्य मानवाधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा के अनु०-5 एवं भारतीय संविधान के अनु०-14, 21 एवं 22(1) तथा द०प्र०सं० की धारा-57 का उल्लंघन है, जो भा०द०सं० की धारा-166, 188, 220, 348 के तहत् दंडनीय है। गिरफ्तार व्यक्ति की मांग पर उसका मेडिकल चेक-अप नहीं करवाना, मानवाधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा के अनु०-3 एवं भारतीय संविधान के अनु०-21 तथा द०प्र०सं० की धारा-54 का भी उल्लंघन है, जो भा०द०सं० की धारा-166, 188, तथा न्यायालय अवमान अधिनियम 1971 की धारा-12 के तहत दंडनीय है। गिरफ्तारी की सूचना थाने के भार साधक अधिकारी या मजिस्ट्रेट को नहीं देना, मानवाधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा के अनु०-9 एवं भारतीय संविधान के अनु०-14 एवं 21 तथा द०प्र०सं० की धारा 56 एवं 58 का उल्लंघन है। जो भा०द०सं० की धारा-166, 188, 220, 348, 365[94], के तहत एवं न्यायालय अवमान अधिनियम 1971 की धारा-12 के तहत दंडित किया जाएगा। गिरफ्तारी की सूचना गिरफ्तार व्यक्ति के परिजन (रिश्तेदार) या मित्र को नहीं देना, मानवाधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा के अनु०-9 एवं संविधान के अनु०-14 एवं 21 का तथा द०प्र०सं० की धारा-50-क का उल्लंघन है, जो भा०द०सं० की धारा-166, 188, 348, 365 के तहत एवं न्यायालय अपमान अधिनियम-1971 की धारा-12 के तहत दंडनीय है। गिरफ्तार व्यक्ति को पूछताछ के दौरान अधिवक्ता से नहीं मिलने देना, मानवाधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा के अनु०-7 एवं 9 का एवं भारतीय संविधान के अनु०-14, 21 एवं 22(1) तथा द०प्र०सं० की धारा-41-घ, का उल्लंघन है जो

भा०द०सं० की धारा-166, 188, 348 के तहत एवं न्यायालय अवमान अधिनियम-1971 की धारा-12 के तहत दण्डनीय अपराध है। गिरफ्तार के साथ मार-पीट करना, गाली-गलौज करना, अपमानजनक बात कहना, यातना देना, क्रूर एवं अमानवीय व्यवहार करना या अन्य प्रकार से थर्ड डिग्री का प्रयोग करना मानवाधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा के अनु०-3 एवं 5 तथा भारतीय संविधान के अनु०-14 एवं 21 तथा द०प्र०सं० की धारा-55-क का भी उल्लंघन है जो कि भा०द०सं० की धारा-166, 188, 307[95], 330[96], 331[97], के तहत एवं न्यायालय अवमान अधिनियम 1971 की धारा-12 के तहत दंडनीय है। गिरफ्तारी के दौरान फर्जी मुठभेड़ दिखा कर गोली मारना, मानवाधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा के अनु०-3 एवं भारतीय संविधान के अनु०-21 के तहत प्रदत्त प्राण के अधिकार का घोर उल्लंघन है, जो भा०द०सं० की धारा-166, 188 एवं 302[98] के तहत एवं न्यायालय अवमान अधिनियम-1971 की धारा-12 के तहत दंडनीय है।

Complaints, Inquiries & Cases Registered against police personnel during-2011 to 2015[99]

Year	No. of Complaints received/ alleged during the year	No. of Inquiry Instituted			Complaint/ case declared false/ unsubstantiated	No. of case registered during the year	No. of cases sent for trial/ charge-sheeted
		Depart-mental	Magist-erial	Judicial			
2011	61,765	21,144	282	246	28,789	11,171	913
2012	57,363	19,440	352	252	30,875	2,289	839
2013	51,120	14,928	247	655	26,640	1,989	799
2014	47,774	11,711	67	351	20,126	2,601	1,268
2015	54,916	16,308	94	319	20,405	5,526	4,367
Total	**272,938**	**83,581**	**1,042**	**1,823**	**126,835**	**23,576**	**8,186**

Number of police personnel under trial, convicted and acquitted during-2011 to 2015[100]

Year	No. of Police personnel sent for trial	No. of Police Personnel whose cases withdrawn or otherwise disposed of	No. of Police Personnel in whose cases trial was completed	No. of Police Personnel	
				Conviced	Acquitted
2011	1,229	475	439	47	392
2012	1,147	633	158	42	116
2013	1,250	412	154	53	101
2014	1,166	146	126	44	82
2015	1,122	115	92	25	67
Total	**5,914**	**1,781**	**969**	**211**	**758**

Departmental Action & punishment awarded to Police Personnel during 2011 to 2015[101]

Year	No. of Personnel			Major punishment awarded	Minor punishment awarded
	Against whom disciplinary action initiated	whose cases withdrawn or otherwise disposed of	dismissed/ removed from service		
2011	26,736	8,500	873	4,482	15,004
2012	23,720	7,477	608	4,199	11,900
2013	24,217	7,021	544	3,980	13,724
2014	29,726	5,890	416	4,637	12,549
2015	35,240	5,523	447	3,754	14,249
Total	**1,39,639**	**34,411**	**2,888**	**21,052**	**67,426**

==============

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची–

1. (2008)13 SCC 305
2. इनरी पेडूडा मुन्नी रेड्डी-AIR 1948 Madras, 472
3. AIR 1951 Allahabad, 3
4. AIR 1948 Allahabad 103
5. 21 Cr.L.J. 97
6. धारा-46(1) द०प्र०सं०; रोशन बीबी बनाम सचिव तमिलनाडु राज्य 1984, Cr.L.J. 134
7. उत्तर प्रदेश राज्य बनाम देवमन-AIR 1960 SC 1125
8. करम सिंह बनाम हरिदयल सिंह-1979 Cr.L.J. 124
9. सर्वजीत सिंह बनाम पंजाब राज्य-AIR 1980 SC 1632
10. रोशन बीबी बनाम सचिव तमिलनाडु राज्य (1984)1 Cr.L.J. 134 Madras
11. हरमोहन लाल बनाम इम्परर (1929) 30 Cr.L.J. 128
12. कालाजी रामजी बनाम गुजरात राज्य-1966 Cr.L.J. 331
13. जीवच्छा लाल बनाम बिहार राज्य 1968 P.L.J.R. 145
14. पंधी खाँ नन्दी खाँ बनाम इम्परर 1948 Cr.L.J. 178
15. AIR 1980 SC 1535
16. धारा-46(1), प्रथम परन्तुक; द०प्र०सं०
17. धारा-46(4); द०प्र०सं०
18. (2003)11 SCC 500(महाराष्ट्र राज्य बनाम क्रिश्चियन कम्युनिटी कौंसिल ऑफ इंडिया (2003)8 SCC 546
19. धारा-46(2) द०प्र०सं०
20. Supra Note 3
21. Supra Note 4
22. दखी सिंह बनाम राज्य AIR 1955 Allahabad 329
23. धारा-46(3), द०प्र०सं०
24. अनु०-20(1), भारत का संविधान, अनु०14(2) सिविल और राजनीतिक अधिकारों की अन्तर्राष्ट्रीय प्रसंविदा-1966
25. AIR 1933 Sindh 193
26. धारा-41(1)(क) द०प्र०सं०
27. धारा-41(1)(ख) द०प्र०सं०
28. धारा-41(1)(ख)(i) द०प्र०सं०
29. धारा-41(1)(ख)(ii)(क) द०प्र०सं०
30. धारा-41(1)(ख)(ii)(ख) द०प्र०सं०
31. धारा-41(1)(ख)(ii)(ग) द०प्र०सं०
32. धारा-41(1)(ख)(ii)(घ) द०प्र०सं०
33. धारा-41(1)(ख)(i)(ङ) द०प्र०सं०
34. धारा-41(1)(ख); प्रथम परन्तुक, द०प्र०सं०
35. धारा-41(1)(खक) द०प्र०सं०
36. धारा-41(1)(ग) द०प्र०सं०
37. धारा-41(1)(घ) द०प्र०सं०
38. धारा-41(1)(ङ) द०प्र०सं०
39. धारा-41(1)(च) द०प्र०सं०
40. धारा-41(1)(छ) द०प्र०सं०
41. धारा-41(1)(ज) द०प्र०सं०
42. धारा-41(1)(झ) द०प्र०सं०
43. धारा-41(2) द०प्र०सं०
44. धारा-41-क(3), द०प्र०सं०
45. धारा-41(क)(4) द०प्र०सं०
46. धारा-42(1) द०प्र०सं०

47. धारा-42(2) द०प्र०सं०
48. धारा-42(3) द०प्र०सं०
49. सेडिलो बनाम इम्परर AIR 1934 Sindh 197
50. (1994)4 SCC 260
50A. धारा-50-क(1), द०प्र०सं०
50B. धारा-50-क(2), द०प्र०सं०
50C. धारा-50-क(3), द०प्र०सं०
51. AIR 1997 SC 610
52. धारा-41-ख(क) द०प्र०सं०
53. धारा-41-ख(ख) द०प्र०सं०
54. धारा-41-ख(ख)(i) द०प्र०सं०
55. धारा-41-ख(ख)(ii) द०प्र०सं०
56. Supra Note 50A
57. Supra Note 50B
58. Supra Note 50C
59. धारा-54(1), द०प्र०सं०
60. धारा-54(2), द०प्र०सं०
61. धारा-54(3), द०प्र०सं०
62. Supra Note 59
63. धारा-41(घ) द०प्र०सं०(अनु०-22(1) भारत का संविधान
64. धारा-41-ग (i) (क) द०प्र०सं०
65. धारा-41-ग (i) (ख) द०प्र०सं०
66. धारा-41-ग(2)
67. धारा-50(1)
68. धारा-50(2)
69. धारा-41-ख(ग)
70. Supra Note 63
71. धारा-49
72. Supra Note 50A
73. Supra Note 50B
74. Supra Note 50C
75. धारा-50-क (4)
76. धारा-55-क द०प्र०सं०
77. Supra Note 59
78. Supra Note 60
79. Supra Note 61
80. 55(1) द०प्र०सं०
81. 56 द०प्र०सं०
82. 57 द०प्र०सं०
83. 58 द०प्र०सं०
84. 59 द०प्र०सं०
85. 60क. द०प्र०सं०
86. धारा-339 भा०द०सं०
87. धारा-340 भा०द०सं०
88. AIR 1924 Bombay 333
89. असंज्ञेय, जमानतीय, 7 वर्ष के लिए कारावास, या जुर्माना या दोनों
90. संज्ञेय, जमानतीय, 3 वर्ष के लिए कारावास और जुर्माना
91. 6 माह तक का कारावास अथवा 2 हजार रुपया जुर्माना या दोनों
92. असंज्ञेय, जमानतीय, 1 वर्ष का कारावास या जुर्माना या दोनों

93. संज्ञेय, जमानतीय, 1 माह का कारावास या 200/- रुपया जुर्माना या दोनों; यदि ऐसी अवज्ञा से मानव जीवन, स्वास्थ्य या क्षेम (health or safety) आदि को संकट कारित करे, तो संज्ञेय, जमानतीय, 6 माह कारावास या 1 हजार रुपया जुर्माना या दोनों

94. संज्ञेय, अजामनतीय, 7 वर्ष के लिए कारावास और जुर्माना

95. संज्ञेय, अजामनतीय, 10 वर्ष का कारावास और जुर्माना, यदि ऐसे कार्य से किसी व्यक्ति को अपहृति (hurt) कारित हो जाए, तो संज्ञेय, अजमानतीय, आजीवन कारावास या 10 वर्ष तक का कारावास और जुर्माना

96. संज्ञेय, जमानतीय, 7 वर्ष के लिए कारावास और जुर्माना

97. संज्ञेय, अजमानतीय, 10 वर्ष के लिए कारावास और जुर्माना

98. संज्ञेय, अजमानतीय, मृत्युदंड या आजीवन कारावास और जुर्माना

99. Crime in India-2015, Table-16(A) & Self Modification

100. Ibid, Table-16(B) & Self Modification

101. Ibid., Table-16(C) & Self Modification

Research Journal of Arts, Management and Social Sciences,
Vol. XVIII, Hindi.-I, Year IX, March, 2018
UGC Sl. No. 2138, Journal No.48774, Impact Factor 2.996

भारत में राजनीतिक आधुनिकीकरण की स्थितिः एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

* बबलु दास

सारांश– *एक अवधारणा के रूप में आधुनिकीकरण (Modernization) का आशय किसी परम्परागत समाज के एक निश्चित दिशा में सम्रग परावर्तन (Total Transformation) से है। परिवर्तन आधुनिकीकरण की पूर्व दशा है जो इस बात का संकेत करता है कि कोई ऐसी व्यवस्था या तन्त्र विद्यमान है जिसमें परिवर्तन लाना है।*

डब्लू. सी. स्मिथ का मानना है कि आधुनिकीकरण के तीन अनिवार्य घटक हैंः ज्ञान, विकल्पों के बीच चयन की स्वतन्त्रता तथा कार्यान्वयन की क्षमता, किसी भी परिवर्तन के लिए यह जानना आवश्यक है कि किस प्रकार का परिवर्तन लाना है? यह ज्ञान शिक्षा के द्वारा ही सम्भव है। इसलिए स्मिथ के अनुसार शिक्षा आधुनिकीकरण की पहली शर्त है। ज्ञान के साथ ही विभिन्न विकल्पों के बीच चयन की स्वतन्त्रता होना भी आवश्यक है अर्थात सम्बन्धित समाज अपने ज्ञान और आवश्यकताओं के अनुसार अपने विकास की दिशा को निर्धारित कर सके। कार्यान्वयन की क्षमता अर्थात आवश्यक साधनों की उपलब्धता किसी भी प्रकार के परिवर्त्तन या आधुनिकीकरण की तीसरी शर्त है।

सिरिल ब्लेक ने लिखा है कि "आधुनिक समाजों की प्रमुख विशेषता नवीन ज्ञान का विकास है जिसके लिए ऐसे व्यक्तियों का होना आवश्यक है जिनमें प्रकृति के रहस्यों को समझने और इस नए ज्ञान को मानवीय समस्याओं पर लागू करने की प्र्याप्त क्षमता हो"। माइरन वीनर के अनुसार आधुनिकीकरण सोचने का वह नया ढंग है जो मनुष्यों के लिए आधुनिक उद्योगों, आधुनिक समाज और आधुनिक सरकार के निर्माण को सम्भव बनाता है" इसका अर्थ यह है कि आधुनिकीकरण समाज के बहुमुखी विकास तथा सर्वागीण परिवर्तन का नाम है, क्योंकि इसका मूल कारक नवीन ज्ञान का विकास है और जब मनुष्य के ज्ञान तथा जानकारी में वृद्धि होती है, तो वह इसका प्रयोग जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में और प्रत्येक समस्या को सुलझाने के लिए करता है। जिसके परिणामस्वरूप जीवन के प्रत्येक क्षेत्र का आधुनिकीकरण होता है।

आधुनिकता एक नयी मानसिक स्थिति का दूसरा नाम है। जब कोई व्यक्ति, समूह या समाज अपनी स्थिति या समस्या को तर्कसंगत आधार पर समझने की चेष्टा करता है तो ऐसी मानसिक क्रियाशीलता को आधुनिकता का प्रतीक माना जा सकता है अर्थात् आधुनिकता को ऐसा दर्शन कहा जा सकता है जो किसी प्रकार की पूर्व-कल्पनाएँ नहीं बनता। माइरन वीनर का कथन है कि ''आधुनिकीकरण का अर्थ सोचने का वह नया ढंग

* शोध-छात्र (आर0जी0एन0एफ0) राजनीति विज्ञान, जय प्रकाश विश्वविद्यालय, छपरा (बिहार)

है जो मनुष्यों के लिए आधुनिक उद्योगों, आधुनिक समाज और आधुनिक सरकार के निर्माण को सम्भव बनाता है" इसका अर्थ यह हुआ कि आधुनिकीकरण समाज के बहुमुखी विकास तथा परिवर्तन का नाम है, क्योंकि इसका मूल आधार नवीन ज्ञान का विकास है और जब मनुष्य के ज्ञान तथा जानकारी में वृद्धि होती है, तो वह इसका प्रयोग जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में और प्रत्येक समस्या सुलझाने के लिए करता है जिसके परिणामस्वरूप जीवन के प्रत्येक क्षेत्र का आधुनिकीकरण होता है।

आधुनिकीकरण एक जटिल सम्मिश्र तथा बहुस्तरीय सम्प्रत्यय है। सामाजिक परिवर्तन तथा विकास की एक प्रक्रिया के रूप में यह कम विकसित या विकासशील देशों द्वारा अधिक विकसित देशों के संरचनात्मक लक्षणों तथा आर्थिक विशेषीकरण, नगरीकरण, प्रदत्त प्रस्थिति की समाप्ति, औपचारिक शिक्षा व गतिशीलता में वृद्धि, उच्च विभेदीकृत राजनीतिक संरचना का विकास, जीवन के सभी पहलुओं में राजनीति का विस्तार, परम्परागत विशिष्ट जनों के राजनीतिक नियंत्रण में कमी, राजनीतिक सहभागिता में वृद्धि, सांस्कृतिक व मूल्य व्यवस्था में विभेदीकरण तथा संचार साधनों में विकास आदि के उपार्जन की प्रक्रिया है।

आधुनिकीकरण के सम्प्रत्यय का प्रयोग आर्थिक, सामाजिक एवं राजनीतिक संस्थाओं के पूर्ण रूपान्तरण को इंगित करने के लिए किया जाता है। यहाँ तक की कुछ विद्वानों ने व्यक्ति के आधुनिकीकरण की बात भी कही है। आर्थिक क्षेत्र में इसे आर्थिक एवं औद्योगिक विकास का पर्याय माना जाता है(सामाजिक क्षेत्र में इसका अभीष्ट परिवार, विवाह, व्यवसाय, धर्म आदि के मामलों में वैयक्तिक स्वतंत्रता के अतिरिक्त अवसरों की समानता तथा स्तरीकरण की मुक्त व्यवस्था है। राजनीतिक क्षेत्र में इसका प्रयोग धर्मनिरपेक्ष एवं कल्याणकारी राज्य की स्थापना के प्रयत्नों को इंगित करने के लिए किया जाता है। जबकि व्यक्ति के स्तर पर इसे व्यक्ति के लौकिक, विश्ववादी, तर्कसंगत, वैज्ञानिक तथा जीवन एवं इसकी समस्याओं के प्रति विशाल एवं व्यापक दृष्टिकोण वाला बनाने के रूप में देखा गया है। यह तदनुभूति (Empathy), गतिशीलता तथा उच्च सहभागिता को बढ़ाता है।

आधुनिकीकरण का सही अर्थ समझने के लिए इससे मिलते-जुलते कुछ शब्दों जैसे 'परिवर्तन' तथा 'पश्चिमीकरण' आदि से इसका विभेद समझना आवश्यक है, क्योंकि कभी-कभी इन्हें गलत तरीके से आधुनिकीकरण के पर्यायवाची के रूप में प्रयुक्त किया जाता है। निस्संदेह 'परिवर्तन' आधुनिकीकरण की पूर्व शर्त है, परन्तु प्रत्येक परिवर्तन आधुनिकीकरण की श्रेणी में नहीं आता। परिवर्तन एक प्रक्रिया है और आधुनिकीकरण एक गुणात्मक स्थिति अथवा लक्ष्य है। इसलिए कोई परिवर्तन आधुनिकीकरण है अथवा नहीं, उस परिवर्तन की प्रकृति, उसके उद्देश्य और लक्ष्य पर निर्भर करता है। आधुनिकीकरण के कुछ अपने मूल्य और मान्यताएं होती हैं। यदि कोई परिवर्तन उन मूल्यों के अनुरूप होता है तभी वह आधुनिकीकरण कहलाएगा, क्योंकि परिवर्तन ऐसा भी हो सकता है जो परम्परावादी मान्यताओं को अपनाने के लिए लाया गया हो।

इस बात को लेकर बड़ा विवाद है कि 'पश्चिमीकरण' (Westernization) और 'आधुनिकीकरण' में क्या सम्बन्ध है? क्योंकि मूलतः आधुनिकीकरण की अवधारणा द्वितीय विश्वयुद्धोत्तर विश्व में अमरीकी समाज वैज्ञानिकों द्वारा विकसित की गई। द्वितीय

विश्वयुद्ध के उपरान्त यूरोप के विभिन्न राष्ट्रों और विकासशील राष्ट्रों में अमरीकी प्रशासकों, चिकित्सकों, इन्जीनियरों और अध्यापकों द्वारा किए जा रहे पुनर्निर्माण (Reconstruction) के कार्यों के सन्दर्भ में इस अवधारणा का विकास किया गया। इसका अभीष्ट अभिप्राय यह है कि अपेक्षाकृत कम विकसित समाज पाश्चात्य समाज की संस्थाओं और मूल्यों को अपने यहाँ अपनाकर आधुनिकीकरण का मार्ग चुन सकते है। इस प्रकार के दृष्टिकोण के पीछे यह अवधारणा है कि समस्त वैज्ञानिक उन्नति और नए अन्वेषणों का आरम्भ पश्चिमी देशों से हुआ और संसार के समस्त आधुनिकीकृत समाजों ने पश्चिम से ही नई राजनीतिक प्रणालियों, आर्थिक संस्थाओं, सामाजिक व्यवस्था, सांस्कृतिक परिवर्तन आदि को ग्रहण किया है। इसलिए आधुनिकीकरण का अर्थ पश्चिमी देशों का अनुसरण करना है। परन्तु सामान्यतया इस दृष्टिकोण को मान्यता नहीं प्राप्त है। पश्चिम आधुनिकीकरण का मार्गदर्शक तो हो सकता है, उसका एकमात्र आदर्श नहीं। डब्ल. सी. स्मिथ ने इस सन्दर्भ में दो महत्त्वपूर्ण तर्क दिए है। पहला तो यह कि कोई भी देश चाहते हुए भी पश्चिम का पूर्ण अनुसरण नहीं कर सकता, क्योंकि प्रत्येक देश का इतिहास, संस्कृति, आवश्यकताएं तथा मान्यताएं भिन्न-भिन्न होती है। दूसरे, पश्चिम को भी आधुनिकीकरण का एक मात्र मॉडल नहीं माना जा सकता, क्योंकि यह स्वयं भी निरन्तर परिवर्तन की स्थिति में है। प्रख्यात भारतीय समाजशास्त्री एम. एन. श्रीनिवास भी इस साम्य को उचित मानते। श्रीनिवास मानते है कि हम आधुनिकीकरण के किसी ऐसे मॉडल को भी अपना सकते है जो किसी पश्चिमी देश का अनुकरण करने के स्थान पर रूस, टर्की या जापान का अनुसरण करता हो। श्रीनिवास का यह भी कहना है कि 18वीं और 19वीं शताब्दी की पश्चिमी संस्कृति के सभी तत्वों का प्रादुर्भाव स्वयं पश्चिम यूरोप में नहीं हुआ।

राजनीतिक आधुनिकीकरण आधुनिक मूल्यों के अनुकूल राजनीतिक व्यवस्था या राजनीतिक संस्थाओं का समग्र रूपान्तरण है। जेम्स सी. कोलमैन के अनुसार राजनीतिक आधुनिकीकरण के सम्प्रत्यय का प्रयोग तीन सन्दर्भों- ऐतिहासिक (Historical), प्रारूपिक (Typological) और उद्विकासीय (Evolutionary) सन्दर्भों में किया जाता है। ऐतिहासिक दृष्टि से इसे 16वीं एवं 17 वीं शताब्दी के पश्चिमी यूरोप के देशों की राजनीतिक संरचना एवं संस्कृति में परिवर्तनों के रूप में, जो कालान्तर में अनियमित एवं अपूर्ण रूप से संसार के अन्य देशों में फैले देखा गया है। प्रारूपिक दृष्टि से राजनीतिक आधुनिकीकरण को परम्परागत अथवा पूर्व आधुनिक राज्यव्यवस्था के आधुनिक राज्यव्यवस्था में रूपान्तरण की प्रक्रिया के रूप में परिभाषित किया जा सकता है, जबकि उद्विकासीय दृष्टि से इसका आशय व्यक्ति की राजनीतिक समस्याओं के समाधान या उनका सामना करने के लिए संरचनाओं का मुक्त विकास करने, निरन्तर परिवर्तन से अनुकूलन करने या परिवर्तनों को आत्मसात् करने की क्षमताओं में वृद्धि करने से है।

राजनीतिक आधुनिकीकरण के लक्षणों के बारे में विद्वत्जनों में मतविभेद है, फिर भी सामान्यतया इसके 4 (चार) लक्षण माने जाते है जिसकी विस्तार से चर्चा लूसियन पाई ने की है :

(क) **विभेदीकरण**- यह राजनीतिक आधुनिकीकरण का अनिवार्य लक्षण है जो संरचना, संस्था एवं कार्यों को विशेषीकरण (Specialization) एवं श्रम विभाजन (Division of Labour) के नियम के आधार पर स्तरीकृत करता है। इसका अर्थ राजनीतिक व्यवस्था

का खण्ड़ीकरण नहीं है वरन् यह एकीकरण के लिए एक व्यवस्थित प्रयास है, ताकि लक्षणों को कुशलतापूर्वक प्राप्त किया जा सके। इसका सम्बन्ध संस्थाओं की स्वायत्तता से है, ताकि वे अपना कार्य अधिकतम कार्यकुशलता से कर सकें।

(ख) **समानता**– इसे राजनीतिक आधुनिकीकरण की आत्मा कहा जाता है। इसका आशय सबको समान अवसर उपलब्ध होने से है। दूसरे शब्दों में यह वह स्थिति है जिसमें समाज भर्ती, चयन, प्रशासकीय एवं राजनीतिक भूमिकाएँ सौंपने में जाति, प्रजाति, रंग, धर्म, प्रादेशिकता के आधार पर कोई भेदभाव नहीं करता।

(ग) **सार्वभौमिकता**– इसका अभिप्राय बिना किसी भेदभाव के कानून के सबके ऊपर लागू होने से है। इसे विधि का शासन भी कहते है। विधि के शासन के समक्ष सभी नगारिक, चाहे वे कितने भी साधन सम्पन्न हों या विपन्न, अपने कार्यों के लिए समान रूप से उत्तरदायी होते है।

(घ) **परिवर्तन की क्षमता**– राजनीतिक संरचना के पास अपने निर्णयों को समाज एवं अर्थव्यवस्था प्रवर्तित करने, नीति के निर्माण तथा उन्हें कियान्वित करने के लिए पर्याप्त शक्ति का होना अनिवार्य है। राजनीतिक आधुनिकीकरण के लिए व्यवस्था में इस प्रकार की क्षमता होना अनिवार्य है। जिससे कि वह प्रगति एवं जनकल्याण की उपेक्षा किए बिना आर्थिक विकास एवं सामाजिक परिवर्तन की शक्तियों को उत्पन्न कर सके।

चूँकि उपर्युक्त सभी लक्षण लोकतांत्रिक व्यवस्थाओं के भी है। अतएव कुछ विद्वानों का यह विचार है कि राजनीतिक आधुनिकीकरण केवल लोकतंत्र में ही सम्भव है, परन्तु तार्किक दृष्टि से यह बात पूर्णतया उचित नहीं प्रतीत होती, क्योंकि ऐसे राष्ट्रों का भी राजनीतिक आधुनिकीकरण हुआ है जहाँ शासन का स्वरूप राजतंत्रात्मक था। उदाहरण के लिए जापान को राजनीतिक आधुनिकीकरण का एक प्रमुख मॉडल माना जाता है और यह आधुनिकीकरण सम्राट मेजी के कार्यकाल में हुआ। इसी प्रकार पूर्व-सोवियत संघ का राजनीतिक आधुनिकीकरण जार के काल में, टर्की का आधुनिकीकरण सुल्तान महमूद के शासनकाल में हुआ, जबकि इनमें से किसी भी राष्ट्र में लोकतांत्रिक शासन नहीं था। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि राजनीतिक आधुनिकीकरण के लिए सरकार के स्परूप का कोई विशेष महत्त्व नहीं होता है।

राजनीतिक आधुनिकीकरण का अर्थ राजनीतिक समस्याओं को विवेक तथा तर्क-विर्तक द्वारा समझना और हल करना होता है, परम्परागत समाज में राज्य और सरकार का आधार विवेक से अधिक विश्वास होता है, परन्तु कमशः मनुष्य के मानसिक विकास के परिणामस्वरूप राजनीतिक क्षेत्र में महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए जिनमें राज्य के कार्य क्षेत्र का विस्तार, सामाजिक सेवाओं की वृद्धि, राज्य के प्रति नागरिकों के दायित्वों का बढ़ना और राजनीति में विश्वव्यापकता तथा समानता के तत्वों का प्रवेश आदि उल्लेखनीय है। रॉबर्ट ई. वार्ड तथा डी. ए. रस्तोव राजनीतिक आधुनिकीकरण की निम्नलिखित विशेषताएं बताई है-

1. परम्परावादी समाज में एक ही व्यक्ति कई पदों का दायित्व एक साथ ग्रहण कर सकता है, जबकि राजनीतिक दृष्टि से आधुनिकीकृत समाज में कार्यात्मक दृष्टि से अत्यधिक विभेदीकृत शासकीय संगठनों की व्यवस्था की जाती है। राज्यों के उद्देश्यों में विस्तार होने के परिणामस्वरूप सरकार के कार्यों में वृद्धि होती जाती है। इन बढ़ते हुए

कार्यों का सम्पादन अलग-अलग व्यक्तियों एवं संस्थाओं द्वारा किया जाता है।

2. आधुनिकीकृत व्यवस्था में शासकीय संरचनाओं में अत्यधिक एकीकरण पाया जाता है। इसका अर्थ यह होता है कि यद्यपि सरकार के विभिन्न अंग, संस्थाएं तथा पदाधिकारी पृथक हैं और अपने विशिष्ट कार्यों का निर्वहन करते हैं तथापि उनके बीच सामन्जस्य तथा एकीकरण पाया जाता है।

3. राजनीतिक आधुनिकीकरण की तीसरी विशेषता धर्मनिरपेक्ष प्रक्रिया तथा तर्क-संगत तरीकों को अपनाया जाना है। आधुनिकीकरण राजनीतिक व्यवस्था में जो भी निर्णय लिए जाते हैं वे तर्क-वितर्क से उद्‌भूत होते हैं और उनका कोई धार्मिक आधार नहीं होता।

4. राजनीतिक आधुनिकीकरण की एक और विशेषता व्यक्ति की निष्ठा (Loyalty) का अतिविस्तृत होना है। इसके विपरीत परम्परागत समाज में व्यक्ति की निष्ठा अति-संकीर्ण होती है। आधुनिकीकृत समाज में व्यक्ति की निष्ठा का आयाम कम से कम राष्ट्रीय और कभी-कभी तो अन्तर्राष्ट्रीय होता है।

5. राजनीति में जनसाधारण की सहभागिता राजनीति आधुनिकीकरण की एक और विशेषता है। समस्त आधुनिक राजनीतिक व्यवस्थाओं में राजनीतिक सत्ता का अंतिम स्त्रोत जनसाधारण को माना जाता है। ज्ञातव्य हो कि परम्परावादी व्यवस्थाओं में राजनीतिक क्रियाकलापों में भाग लेने का अधिकार जनसाधारण को नहीं होता था, बल्कि यह एक वर्ग विशेष या वंश विशेष तक ही सीमित होता था जिसमें शासन का अधिकार साधारणतया वंशानुगत रूप से प्राप्त होता था और राजनीतिक निर्णय में जनसाधारण की कोई भाग नहीं होता था।

6. क्षमता तथा योग्यताओं के आधार पर भूमिकाओं का वितरण राजनीतिक आधुनिकीकरण की अति महत्वपूर्ण विशेषता है। आधुनिकीकृत समाज एवं राजव्यवस्था में प्रत्येक व्यक्ति को समान माना जाता है और सामाजिक स्थिति का निर्धारण इस बात से नहीं होता कि वह किस परिवार, जाति या वंश में पैदा हुआ है, बल्कि उसकी क्षमता एवं योग्यता ही व्यवस्था में उसकी भूमिका का निर्धारण करती है।

7. आधुनिकीकृत समाज में राजनीतिक शक्ति एवं सत्ता के परम्परागत आधार यथा धर्म, जाति आदि का कोई महत्व नहीं होता। विधि के समक्ष समानता एवं विधि का समान संरक्षण आधुनिकीकृत व्यवस्था की मौलिक विशेषता मानी जाती है।

भारत में राजनीतिक आधुनिकीकरण की प्रक्रिया का श्रीगणेश शिक्षा, विधायी उपागमों और प्रशासन के माध्यम से हुआ और कमोबेश इस प्रक्रिया को प्रारम्भ करने का श्रेय ब्रिटिश जनों को दिया जा सकता है, क्योंकि पूर्व ब्रिटिशकालीन भारत में धर्म की सर्वोच्चता, जाति-व्यवस्था का प्राबल्य, असमानता, निरक्षरता, स्थानीय हितों की प्रधानता, राष्ट्रीयता के अभाव, राजनीति में जनसाधारण की असंलग्नता, विधि और न्याय के परम्परागत स्वरूप आदि के कारण वह वातावरण ही नहीं था जिसमें राजनीतिक आधुनिकीकरण की प्रक्रिया प्रारम्भ की जा सके। ब्रिटिश जन अपने साथ नया ज्ञान, नई संस्थाएं, नई टेक्नालॉजी, नए मूल्य और नए विश्वास लाए। इसलिए सम्भवतः यह कहना गलत न होगा कि भारत में राजनीतिक आधुनिकीकरण अंग्रेजों के आने के समय से प्रारम्भ हुआ। प्रो. एम. एन. श्रीनिवास (सोशल चेंज इन मॉडर्न इण्डिया, 1966) में लिखा है "19वी शताब्दी में अंग्रेजों ने धीरे-धीरे एक आधुनिक राज्य का शिलान्यास किया, उन्होंने भूमि का

सर्वेक्षण करवाया(भूमि-कर का निर्धारण किया(एक नए प्रकार का नौकरशाही, सेना, तथा पुलिस को जन्म दिया(न्यायालयों की स्थापना की, विधियों का संहिताकरण किया; शिक्षा-संस्थाओं की तथा संचार-साधनों अर्थात् रेलवे, डाक और तार, सड़को, नहरों आदि का विकास किया। किसी भी प्रकार के आधुनिकीकरण के लिए ज्ञान एक पूर्व-शर्त है। ज्ञान की प्राप्ति शिक्षा के द्वारा ही हो सकती है। ब्रिटिशजनों ने शिक्षा के माध्यम से भारतवासियों में मानसिक परिवर्तन लाने का प्रयास किया। सन् 1830 में मैकाले ने नई शिक्षा व्यवस्था का प्रारम्भ किया जो अपने स्वरूप में पाश्चात्य थी और जिसका माध्यम अंग्रेजी थी। अभी तक शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार समाज की उच्च जातियों को ही प्राप्त था। अंग्रेजों ने शिक्षा को समाज के सभी व्यक्तियों और वर्गों के लिए सुलभ कर दिया। पाश्चात्य शिक्षा ग्रहण करने का कारण भारतीयों को यूरोप में होने वाले वैज्ञानिक विकास का ज्ञान हुआ और वे पश्चिमी सभ्यता और संस्कृति, औद्योगिक एवं तकनीकि विकास, सामाजिक संरचना एवं राजनीतिक मूल्यों से परिचित हुए। पाश्चात्य शिक्षा प्राप्त यह शिक्षित वर्ग ही भारत के राजनीतिक आधुनिकीकरण (या किसी भी प्रकार के आधुनिकीकरण में) सबसे आगे रहा। कमोबेश रूप से ब्रिटिश शासन ने भी भारत में लोक कल्याणकारी राज्य के आदर्श को अपनाया (यद्यपि यह कार्य करते हुए उन्होंने अपने दीर्घकालिक हितों को भी ध्यान में रखा) और जनसाधारण का समर्थन प्राप्त करने के लिए नई-नई सेवाएं और सुविधाएं देने की व्यवस्था की।

राज्य के कार्यों में वृद्धि होने के साथ-साथ शासन के स्वरूप एवं आकार में परिवर्तन आना स्वाभाविक था। ब्रिटिशजनों ने एक नई प्रशासकीय व्यवस्था को स्थापित किया और एंग्लो-सैक्सन विधि (Anglo-Saxon Legal System) व्यवस्था पर आधारित न्यायिक व्यवस्था को जन्म दिया। भारत में पहली बार दीवानी और फौजदारी कानूनों की रचना की गई, कानून के समक्ष समानता और विधि की एकरूपता के सिद्धान्त को मान्यता दी गई। भारतीय शासन और प्रशासन में यह महत्वपूर्ण परिवर्तन था, क्योंकि ब्रिटिश शासन ने व्यक्ति की प्रस्थिति निर्धारण जाति के आधार पर करने की प्रथा को बिल्कुल समाप्त कर दिया। अब यह निर्धारण व्यक्ति की योग्यता एवं क्षमता के आधार पर किया जाने लगा जिसका आधार देश या जाति न होकर शिक्षा थी। परिणामतः प्रशासनिक दृष्टि से समाज में किसी हद तक समानता स्थापित हुई।

इसी के समानान्तर ब्रिटिश शासकों ने समाज के सभी सदस्यों को समान रूप से कतिपय नागरिक स्वतंत्रताएं प्रदान की। छापेखाने का आविष्कार हुआ और नागरिकों को सभा करने और लिखित रूप से अपने विचार व्यक्त करने का अवसर उपलब्ध हुआ। ब्रिटिश शासन ने भारत में प्रतिनिधियात्मक संस्थाओं की स्थापना की और राजनीतिक दलों का निर्माण हुआ। ब्रिटिश संसदीय प्रणाली के आधार पर भारत में भी संसदीय प्रणाली की आधारशीला रखी गई। प्रतिनिधियात्मक संस्थाओं की स्थापना और जनसधारण को सीमित मताधिकार मिलने के फलस्वरूप देश की शासन व्यवस्था में भारतीयों की रूचि बढ़ना स्वाभाविक था।

ब्रिटिश शासन के दौरान भारत के राजनीतिक आधुनिकीकरण की कतिपय विशेषताएं इंगित की जा सकती है-

(क) आधुनिकीकरण का आशय कमोबेश रूप से पश्चिमीकरण से लिया गया अर्थात्

ब्रिटिश राजनीतिक संस्थाओं तथा मूल्यों को ही भारतीय परिवेश में निर्देशित किया गया। इस बात पर कम ही ध्यान दिया गया कि सम्बन्धित राजनीतिक संस्थाएं और मूल्य भारतीय परिवेश के उपर्युक्त है अथवा नहीं?

(ख) यह राजनीतिक आधुनिकीकरण ऊपर से आरोपित (Imposed from Above) था यद्यपि आधुनिकीकरण की इस प्रक्रिया के संवाहक न्यूनाधिक रूप से भारतीय नेता ही थे। सामान्यता ये नेता उच्च जातियों (अधिकांशतः ब्राह्मण) के थे जिन्हें पाश्चात्य शिक्षा के सम्पर्क में आने का सबसे पहले अवसर प्राप्त हुआ था।

(ग) भारत का शिक्षित अभिजन वर्ग कभी-कभी इस प्राथमिकता के निर्धारण में भी असमर्थ रहा कि पहले भारत का सामाजिक आधुनिकीकरण हो या राजनीतिक आधुनिकीकरण। एक वर्ग का यह मानना था कि सामाजिक आधुनिकीकरण की प्रक्रिया का श्रीगणेश होगा, जबकि दूसरे वर्ग का यह तर्क था कि राजनीतिक आधुनिकीकरण के समानान्तर ही सामाजिक आधुनिकीकरण की प्रक्रिया को चलाया जा सकता है। यह वर्ग निरन्तर संवैधानिक सुधार, स्वशासन और बाद में पूर्ण स्वतन्त्रता की माँग करता रहा।

स्वतंत्रता के पश्चात् भारत में राजनीतिक आधुनिकीकरण की गति तीव्र होती गई। इसे सहभागिता का चरण कहना अधिक उपयुक्त होगा। क्योंकि स्वतंत्र भारत के संविधान के अन्तर्गत भारत में गणतंत्रात्मक शासन की स्थापना की गई जिससे जनसम्प्रभुता के सिद्धान्त को मान्यता दी है। सार्वभौमिक मताधिकार के सिद्धान्त को अपनाकर जनसाधारण को राजनीति में भाग लेने के लिए आमंत्रित किया गया। संविधान ने सामाजिक और राजनीतिक समानता को मान्यता दी और अस्पृश्यता को असंवैधानिक घोषित किया गया। विधि के शासन को स्वीकार करते हुए सभी व्यक्तियों के लिए एक कानून और एक न्याय प्रणाली की स्थापना की गई(धर्मनिरपेक्ष राज्य की स्थापना की गई। संविधान के अन्तर्गत सभी व्यक्तियों को समान रूप से कतिपय मूलभूत स्वतंत्रताएं प्रदान की गई। अनेक राजनीतिक संगठनों का निमार्ण हुआ जिन्होंने जनसाधारण को राजनीतिक शिक्षा देने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया। लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण (Democratic Decentralization) के कारण जनसामान्य को राजनीति और शासन में भाग लेने का अधिक अवसर प्राप्त हुआ। पंचायती राज संस्थाओं को संवैधानिक रूप देना इस दिशा में महत्वपूर्ण प्रयास है। पंचायतों से लेकर राज्य विधानमण्डल तक लगभग सभी संस्थाएं जनसाधारण द्वारा प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से निर्वाचित होती है। परिणामस्वरूप वे लोग जो पहले कभी राजनीति में भाग लेने की सोच भी नहीं सकते थे, लोकतंत्रीय प्रक्रिया से परिचित होकर राजनीति में प्रवेश कर रहे है। धीरे-धीरे ये लोग पंचायतों से ऊपर की प्रतिनिध्यात्मक संस्थाओं में भी सफलतापूर्वक प्रविष्ट हो रहे है। इस प्रकार एक ओर ग्रामीण क्षेत्रों में और दूसरी ओर पिछड़े वर्गों में भी प्रतियोगी राजनीति (Competetive Politics) का प्रारम्भ हुआ।

प्रतियोगी राजनीति की इस शुरूआत का ही परिणाम है कि आज अनुसूचित जाति और जनजाति एवं पिछड़े वर्गों में राजनीतिक गतिशीलता (Political Mobility) अपने पूर्ण प्रखर रूप में परिलक्षित हो रही है। भारत के विभिन्न भागों में उपर्युक्त वर्ग प्रभु जातियों (Dominant Castes) के 'सत्ता गलियारों' (Corridors of Power) में अपनी पहुँच सुनिश्चित करने के लिए कड़ा संघर्ष कर रहे हैं। यद्यपि इसके साथ एक ऋणात्मक विकास समग्र

आधुनिकीकरण प्रक्रिया के सन्दर्भ में यह भी हुआ कि व्यक्ति की जातिगत पहचान और मान्यताएं एक बार फिर सतह पर आ गई है जो किसी भी प्रकार के आधुनिकीकरण के मार्ग में बाधा है।

भारत में राजनीतिक आधुनिकीकरण की प्रक्रिया की अध्येताओं की यह एक सर्वसम्मत राय है कि यद्यपि भारतीय संविधान में जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में राजनीतिक आधुनिकीकरण को क्रियान्वित करने की पर्याप्त व्यवस्था की है। लेकिन व्यावहारिक रूप से भारतीय समाज उसको पूरी तौर से प्राप्त नहीं कर सका है।

लॉयड रूडॉल्फ तथा हॉब रूडाल्फ का मानना है कि भारतीय राजनीतिक व्यवस्था एक मिश्रित व्यवस्था है जिसमें परम्परावाद और आधुनिकता के तत्वों का सम्मिश्रण पाया जाता है। यह दृष्टिकोण काफी हद तक सही है। अधिकांश विद्वानों का यही मानना है कि प्रत्येक समाज में, चाहे वह कितना भी आधुनिक क्यों न हो, परम्परावादी तत्व किसी न किसी रूप में अवश्य पाए जाते हैं। यद्यपि भारतीय संविधान ने जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में आधुनिकीकरण के आदर्शों को कार्यान्वित करने की व्यवस्था की है। लेकिन व्यावहारिक रूप से भारतीय समाज उनको पूरी तरह से नहीं प्राप्त कर सका है। उदाहरण के लिए भारतीय संविधान द्वारा सामाजिक समानता की स्थापना की गई है, लेकिन व्यावहारिक धरातल पर भारतीय समाज आज भी धर्म और जाति के आधार पर विभाजित है। सत्ता के येन-केन प्रकारेण प्राप्ति के प्रयास में सत्तारूढ़ तथा अन्य राजनीतिक दल स्वयं ही इस प्रकार के परम्परावादी तत्वों को बढावा दे रहे है। हाल के समय में जिस प्रकार से धर्म और जातिगत तत्वों को हवा देकर राजनीतिक दल सत्ता में आ रहे हैं, उससे भारत में राजनीतिक आधुनिकीकरण की प्रक्रिया को करारा धक्का लगा है। यहॉं तक कि सामाजिक न्याय के नाम पर जो संरक्षणवादी व्यवस्थाएं की जा रही हैं, उनके पीछे सम्बन्धित वर्गों के समुन्नयन की मंशा कम और वोट बटोरने की मानिसकता अधिक है।

इसी पकार भारतीय संविधान द्वारा सार्वभौमिक मताधिकार के सिद्धान्त को मान्यता दी गई है और इस प्रकार जनसाधारण को राजनीति में सहभागिता का अवसर प्रदान किया गया है, लेकिन व्यावहारिक रूप से देश की जनसंख्या का एक बड़ा भाग अब भी शासन और राजनीति के प्रति उदासीन है रजनी कोठारी ने इस स्थिति को ध्यान में रखकर भारत को जेनस लाइक मॉडल (श्रमदने स्पाम डवकमसद्ध की संज्ञा दी है। जेनस एक समुद्री जानवर है। जिसके आगे और पीछे, दोनों ओर आँखे होती हैं और वह दोनों ओर एक साथ देखता है। इस उपमा का अर्थ यह है कि भारतीय राजनीतिक व्यवस्था न तो पूरी तरह अतीत से ही सम्बन्ध-विच्छेद कर पाई है और न ही पूर्णरूप से आधुनिक बन पाई है।

भारत के राजनीतिक आधुनिकीकरण के मार्ग में कतिपय अन्तर्निहित बाधाएं है :

1. शिक्षा और उससे प्राप्त जागरूकता किसी भी प्रकार के आधुनिकीकरण की पूर्व-शर्त है। भारत सरकार के तमाम प्रयासों के बावजूद भारत की एक तिहाई जनसंख्या आज भी अशिक्षित है। स्वाभाविक है, निरक्षरता का प्रभाव सामाजिक विकास के पहलुओं पर पड़ता है और राजनीतिक जीवन भी इसके दुष्प्रभावों से वंचित नहीं रहा है। मताधिकार का प्रयोग न करना, मतों को बेच देना, प्रत्याशी की योग्यता और पार्टी के कार्यक्रम के स्थान पर धर्म और जाति के आधारपर वोट देना, अपने अधिकार का समुचित ज्ञान न होना, कर्तव्यों के प्रति उदासीन होना, इन सबका मुख्य कारण निरक्षरता है।

2. **परम्परावादी सामाजिक प्रतिमान** (Tranditional Social Patterns), **जातिवाद, धार्मिक अंधविश्वास तथा संकीर्ण निष्ठाएं-** भारतीय समाज को विरासत में मिले है। संविधान ने समानता के सिद्धान्त को मान्यता देते हुए धर्म से राजनीति को पृथक रखने का प्रावधान किया है, लेकिन व्यवहार में धर्म का प्रभाव अभी तक जनता के मस्तिष्क से हटा नहीं है। यही स्थिति जाति के सन्दर्भ में भी है। उदाहरण के लिए निर्वाचन के अवसर पर विभिन्न राजनीतिक दल अपने राजनीतिक स्वार्थों की पूर्ति के लिए धार्मिक और जातिगत आधार पर प्रत्याशियों का चुनाव और मतदान की अपील करते है(निर्वाचनों में धर्म और जाति विशेष के नेताओं की सहायता लेकर अशिक्षित जनता की भावनाओं को उद्वेलित करके मतों को प्राप्त करने की कोशिश की जाती है। मंत्रिमंडल के गठन में धर्म और जाति के आधार पर प्रतिनिधित्व देने का प्रयास किया जाता है। जाति और धर्म के बढ़ते प्रभाव के कारण भारत में जाति-निरपेक्ष और धर्म-निरपेक्ष राजनीति का विकास नहीं हो सका है जो निश्चय ही राजनीतिक आधुनिकीकरण के मार्ग में बहुत बड़ी बाधा है।

3. भारतीय राजनीति में क्षेत्रवाद और विच्छेदन की प्रवृत्ति, जो अपने में संकीर्ण मान्यताओं का परिणाम है, भी राजनीतिक आधुनिकीकरण के मार्ग में बाधा है।

4. सामान्यतया किसी भी व्यवस्था में राजनीतिक दल राजनीतिक आधुनिकीकरण के संवाहक होते है। भारत में राजनीतिक दलों के येन-केन प्रकारेण सत्ता प्राप्त करने की अपनी रणनीति के तहत् प्रायः ऐसी नीतियाँ अपनाई हैं जिनसे आधुनिकीकरण की प्रक्रिया में महती बाधा पैदा की है।

रजनी कोठारी का यह मत सत्य के काफी निकट प्रतीत होता है कि भारत में राजनीतिक आधुनिकीकरण की प्रक्रिया अभी भी अधूरी है। आज भी भारतीय समाज और राज्य व्यवस्था में परम्परावादी प्रणाली के पर्याप्त लक्षण विद्यमान है। ऐसी आशा की जा सकती है कि शिक्षा के प्रसार, आर्थिक स्थिति में सुधार तथा राजनीतिक दलों द्वारा सार्थक रणनीति अपनाए जाने के साथ ही आधुनिकीकरण की गति तेज होगी। हाल के दिनों में शिक्षा के प्रचार-प्रसार, सूचना-प्रोद्योगिकी की व्यापकता, मीडिया की बढ़ती पहुँच की वजह से भारत में राजनीतिक आधुनिकीकरण की प्रक्रिया में काफी तेजी आयी है।

==============

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची-

1. एस. ए. ब्लैक, चेंज एज ए कंडीशन ऑफ मार्डन लाइफ, 1966, पृ.-18.
2. माइरन बीनर, माडर्नाइजेशन- दि डायनामिक्स ऑफ ग्रोथ, वी. ओ. ए. फोरम लेक्चर्स,1966, पृ. 08.
3. तथैव, पृ. 06.
4. एम. एन. श्रीनिवास, सोशल चेंज इन मॉडर्न इंडिया, एलाएड पब्लिशर्स, 1966, पृ. 50.
5. जे0 सी0 कोलमैन, माडर्नाइजेसन- पॉलिटिकल एस्पेक्ट्स, मुम्बई, 1969, पृ0-98.
6. लुसियन पाई, एस्पेक्ट्स ऑफ पालिटिकल डेवलपमेंट, बोस्टन, लिटिल ब्राउन,1972, पृ. 29.
7. आर. ई. वार्ड एवं डी. ए. रस्तोब, पॉलिटिकल माडर्नाइजेशन इन जपान एंड टर्की, प्रिंसटन यूनि0 प्रेस, 1964, पृ. 07.
8. रूडोल्फ एंड रूडोल्फ, दि माडर्ननिटी ऑफ ट्रेडीशन, 1969, पृ. 88.
9. रजनी कोठारी, पॉलिटिक्स इन इण्डिया, आरिएंट एंड लांगमैन, 1970, पृ. 192.

Research Journal of Arts, Management and Social Sciences,
Vol. XVIII, Hindi.-I, Year IX, March, 2018
UGC Sl. No. 2138, Journal No.48774, Impact Factor 2.996

राजनीतिक सहभागिता : एक अवधारणात्मक विश्लेषण

* नवल किशोर प्रसाद

सारांश– *राजनीतिक सहभागिता वर्त्तमान समय में प्रत्येक प्रकार की राजनीतिक व्यवस्था का अनिवार्य तत्व है खासकर लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था का तो यह बुनियाद ही है। लोकतंत्र में राजनीतिक सहभागिता अत्यंत महत्वपूर्ण है क्योंकि इसके माध्यम से सरकार को जन सहमति हासिल होती है। अगर किसी व्यवस्था में अधिकांश जनता को राजनीतिक सहभागिता का अवसर नहीं दिया या इससे वंचित रखा जाता है तो वहाँ विस्फोटक स्थिति उत्पन्न हो सकती है। यही कारण है कि गैर–लोकतांत्रिक व्यवस्थाओं में भी राजनीतिक सहभागिता को प्रोत्साहित किया जाता है। एक सैनिक तानाशाह भी अपने निरंकुश एवं स्वेच्छाचारी निर्णयों को राजनीतिक सहभागिता के किसी माध्यम द्वारा जनसहमति से ढकने का प्रयास करता है। वस्तुतः राजनीतिक सहभागिता एक ऐसी प्रक्रिया है जो राजनीतिक गतिविधियों, नीतियों, निर्णयों आदि को संवैधानिकता का जामा पहना कर उसे वैधता एवं स्वीकार्यता प्रदान करता है।*

राजनीतिक गतिविधियों में यदि आमजन की भागीदारी न हो तो राजनीति निष्प्राण हो जाएगी। जहाँ तक राजनीतिक सहभागिता के अर्थ का सवाल है तो राजनीतिक सहभागिता एक प्राचीन अवधारणा है, जो दो शब्दों 'राजनीति' व 'सहभागिता' से मिल कर बनी है। हिन्दी का शब्द 'राजनीति' मूलतः संस्कृत भाषा से सम्बन्धित है जिसका अर्थ 'राजा की नीति' है किन्तु वर्तमान संदर्भ में इस शब्द का जिस अर्थ में प्रयोग होता है, वह इससे भिन्न और अधिक व्यापक है। 'राजनीति' शब्द का अंग्रेजी का अनुवाद 'पोलिटिक्स' है।[1] अंग्रेजी का 'पोलिटिक्स' शब्द ग्रीक भाषा के 'पोलिस' शब्द से निकला है[2] जो प्राचीन यूनानी 'नगर राज्य' का सूचक था।[3] इन नगर राज्यों की एक विशेषता यह थी कि इनके नागरिक बहुधा स्वयं अपना शासन चलाते थे। ये नागरिक राज्य के सदस्यों और संचालकों के रूप में जो भूमिका निभाते थे, उससे सम्बन्धित गतिविधियों को प्राचीन यूनानी विचारकों ने 'पॉलिटिक्स' की संज्ञा दी। इन गतिविधियों के व्यवस्थित अध्ययन को भी उन्होंने इसमें सम्मिलित किया है। प्राचीन ग्रीस में यह मान्यता थी कि जो नागरिक राजनीति में भाग नहीं लेता है और निजी-व्यक्तिगत जीवन व्यतीत करता है वह पशुतुल्य है अथवा बेवकूफ है। प्लेटों के समय में इसका सम्बन्ध सार्वजनिक कामों में अपनी जिम्मेदारी को बांटने से था। यूनानी विचारक अरस्तु के अनुसार मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है व राजनीति मनुष्य के सम्पूर्ण अस्तित्व को समेट लेती है। अरस्तु ने राजनीति को सर्वोच्च विज्ञान का दर्जा दिया क्योंकि यह मानव समाज के अन्तर्गत विभिन्न सम्बन्धों को

* शोध-छात्र, राजनीति विज्ञान, जय प्रकाश विश्वविद्यालय, छपरा (बिहार)

व्यवस्थित करने में निर्णायक भूमिका निभाता है।[4] राजनीति की सहायता से मनुष्य इस धरती पर अपनी नियति को वश में करने का प्रयास करते हैं। अतः राजनीति के अन्तर्गत समाज के सारे सदस्यों के ऊपर सता का प्रयोग किया जाता है, सबके लिये नियम बनाये जाते है और निर्णय किये जाते हैं, सबके अधिकार, कर्तव्य और दायित्व निर्धारित किये जाते हैं और सार्वजनिक जीवन को उन्नत करने के उपाय किये जाते हैं। ये नियम और निर्णय सबके जीवन को दूर-दूर तक प्रभावित करते है। मैक्स बेबर, जार्ज केटलिन, हेराल्ड लॉसवेल तथा रार्बट डहल आदि विचारकों ने राजनीति को संघर्ष के रूप में देखा है। चार्ल्स मेरियम, केपलान और मार्ग्रेन्थाउ राजनीति में शक्ति सिद्धांत का प्रतिपादन करते हैं। प्रो. वाइजमैन व प्रो. रफेल ने राजनीति को सीमित साधनों का बंटवारा करने की प्रक्रिया के रूप में देखा है। डेविड ईस्टन इसे मूल्यों के 'प्राधिकृत विनिधान' कहते हैं।[5] प्रो. टी. ब्रेवन राजनीति को 'संभाव्य की कला' कहकर पुकारते हैं। उदारवादी लेखक राजनीति को विभिन्न सामाजिक समुदायों या वर्गों के बीच तालमेल बिठाने का साधन मानते हैं। लॉसवेल के शब्दों में राजनीति के अन्तर्गत हम यह अध्ययन करते हैं कि राजनीतिक शक्ति का क्या स्वरूप है और उसमें कौन-कौन भागीदार है।

सहभागिता अंग्रेजी के शब्द Participation का हिन्दी रूपान्तर है। सामान्यतः इसका अर्थ भाग लेने की क्रिया से है।[6] अधिकांशतः राजनीतिक सहभागिता का अर्थ समय परिवर्तन और राज्यों की भूमिका के साथ बदल जाता है। 18वीं सदी में तानाशाही अथवा अल्पतंत्र के विकास के विकल्प स्वरूप लोकतंत्र के विकास के कारण सहभागिता के महत्व को स्वीकार किया गया है। अतः मूलतः यह एक आधुनिक परिकल्पना है हालांकि अत्यंत प्राचीन सभ्यताओं यथा ग्रीस में भी लोकतंत्र व राजनीतिक सहभागिता विद्यमान थी। यह प्रजातंत्र और आधुनिकीकरण का प्रमाणक चिन्ह है। परम्परागत समाज में शासन और राजनीति संकीर्ण अभिजनों से सम्बन्धित थी। इसके विपरीत अधिक आधुनिक राष्ट्रों ने सक्रिय नागरिकता के सिद्धांत को स्वीकार किया है। अतः राजनीतिक सहभागिता प्रजातंत्र और प्रतिनिधित्व के सिद्धांत से घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित है। राजनीतिक सहभागिता को प्रजातांत्रिक राजनीति का एक महत्वपूर्ण साधक समझा जाता है।[7] प्रजातंत्र की सफलता सहभागिता के विस्तार पर, विशेष रूप से स्थानीय स्तर पर निर्भर करती है,[8] परंतु गैर प्रजातंत्रात्मक व्यवस्थाओं में भी शासक राजनीतिक सहभागिता का दिखावा करना आवश्यक समझते हैं।

अतः माईनर वीनर के अनुसार राजनीतिक सहभागिता कोई भी स्वैच्छिक कार्य सफलतापूर्वक या असफलतापूर्वक, संगठित अथवा असंगठित, भागों में अथवा लगातार, उचित अथवा अनुचित तरीकों से प्रमुख अधिकारियों को प्रभावित करके सार्वजनिक नीतियों का चयन करना है। राजनीतिक सहभागिता में आमतौर से दो निर्णय आवश्यक हैं। पहला यह निश्चित करना कि काम करना या नहीं करना और दूसरा इस कार्य की दिशा को निश्चित करना।[9]

मूलतः राजनीतिक सहभागिता दो प्रकार की होती है- सक्रिय और निष्क्रिय। यह वर्गीकरण समाज में राजनीतिक भागीदारी में समय, शक्ति और साधनों के व्यय के आधार पर किया जाता है। सभी लोग राजनीतिक कार्यों में समय, शक्ति अथवा धन नहीं लगाना चाहते हैं। ऐसे लोगों को सक्रिय भागीदार नहीं कहा जा सकता है, इसको निष्क्रिय भागीदार

कहा जाना चाहिए। दूसरे शब्दों में यह सिर्फ तमाशबीन है, जबकि राजनीतिक तमाशा करने वाले सक्रिय भागीदार हैं। आमण्ड और वर्वा ने इन दोनों के अन्तर को समझाते हुये अपनी पुस्तक 'दी सिविक कल्चर' में लिखा है कि इन दोनों में अन्तर विशिष्ट राजनीतिक गतिविधियों के आधार पर किया जाता है। राजनीतिक दलों की बैठकों में सम्मिलित होना, प्रचार करना व उनके लिए काम करना सक्रिय सहभागिता है जबकि राजनीति के बारे में जानकारी रखना और मतदान के समय वोट देना निष्क्रिय सहभागिता के नाम से जानी जाती है।[10] राजनीतिक भागीदारी का एक अन्य वर्गीकरण उनके प्रयोजन के अनुसार किया गया है। प्रयोजन की दृष्टि से राजनीतिक भागीदारी के दो प्रकार है साधनात्मक और अभिव्यंजक। पहले प्रकार में निश्चित लक्ष्यों को प्राप्त करने का उद्देश्य होता है जैसे राजनीतिक दल की चुनावों में विजय अथवा संसद में कोई विधेयक पास कराना अथवा विशिष्ट नेता का प्रभाव क्षेत्र बढ़ाना इत्यादि। दूसरी ओर अभिव्यंजक राजनीतिक भागीदारी का उद्देश्य कोई निश्चित लक्ष्य प्राप्त करना नहीं होता बल्कि संतोष प्राप्त करना अथवा अनुभूति का अभिव्यंजन करना मात्र होता है। इस प्रकार कुछ लोग इसलिये वोट देते हैं क्योंकि उन्हें किसी को जिताना है जबकि अधिकांश मतदाता केवल अपने मतदान के अधिकार के प्रयोग से संतोष के लिये मतदान करते हैं। यहाँ यह याद रखना आवश्यक है कि राजनीतिक भागीदारी के ये प्रकार एक दूसरे से बिल्कुल अलग नहीं होते। यह कहना ठीक नहीं होगा कि जो व्यक्ति किसी दल का सक्रिय सदस्य नहीं है अथवा जिसका कोई स्पष्ट इरादा किसी को जिताना नहीं है वह चाहे जिसको वोट दे आता है। वास्तव में कोई भी मतदान केवल अभिव्यंजना मात्र तो हो ही नहीं सकता। उसमें कोई न कोई राजनीतिक उद्देश्य अवश्य छिपा रहता है। अस्तु राजनीतिक भागीदारी के उपरोक्त प्रकार केवल भागीदारी में सापेक्ष अन्तर दिखलाने के लिये ही उपयुक्त है। माईरन कीन ने भी दो प्रकार की सहभागिता ही बताई है, पर उसे दूसरे नाम दिये है। इनके अनुसार राजनीतिक सहभागिता के दो प्रकार हैं - स्वायत्त व परियोजित। स्वायत्त सहभागिता से तात्पर्य उस सहभागिता से है जो व्यक्ति की स्वेच्छा से प्रेरित होती है। व्यक्ति की ऐसी सहभागिता में राजनीतिक कृत्य की प्रेरणा तो कई प्रकार से आ सकती है किन्तु अन्ततः व्यक्ति का कृत्य स्वयं ही इच्छा से स्वतंत्रतापूर्वक होता है। ऐसी सहभागिता में व्यक्ति के राजनीतिक कार्य का छलयोजन या उसके लिये जोड़-तोड़ नहीं होती है। यह व्यक्ति का स्वाभाविक और सचेतन कृत्य है जो वह सोच विचार कर ही करता है। परियोजित सहभागिता में प्रेरणा शक्ति शासनतंत्र से आती है। यह ऐसी सहभागिता है जो सरकार के आदेशों के अधीन संगठनों का निर्माण करके प्राप्त की जाती है। हर देश में सरकार यह प्रयत्न करती है कि वह अपने कार्यक्रम में अधिक से अधिक नागरिकों का समर्थन प्राप्त करे। इसके लिये यह आवश्यक होता है कि निर्णय लेने की प्रक्रिया से लेकर कार्यक्रम को लागू करने तथा उनको व्यवहारिक रूप देने में नागरिकों का सहयोग प्राप्त किया जाये। अतः सरकारें इसमें जनसहभागिता प्राप्त करने के लिये अनेक विधियों का प्रयोग करती हैं। ऐसी सहभागिता में छलयोजन होता है। वह चाहे गुप्त से हो या प्रकट रूप से, इसके दोनों ही रूपों में सरकार की उपर्युक्त प्रेरणा रहती है।

राजनीतिक सहभागिता के प्रभावक तत्व– राजनीतिक सहभागिता एक जटिल तत्व है और उसमें अनेक कारक काम करते हैं। युग और देश के बदलने के साथ-साथ

ये कारक भी बदलते रहते हैं। यही कारण है कि एक ही काल में भिन्न-भिन्न देशों में और एक ही देश में भिन्न-भिन्न कालों में राजनीतिक भागीदारी बदलती रहती है।

अ) **मनोवैज्ञानिक कारक**– राजनीतिक भागीदारी को निम्नलिखित मनोवैज्ञानिक कारक प्रभावित करते हैं –

1. **एकाकीपन**– राजनीतिक एकाकी मनुष्य को अन्य लोगों से साहचर्य के अवसर प्रदान कर सकती है। राजनीति बहाना हो सकती है तथा आवश्यकता एकाकीपन का भय हो सकती है। लोग राजनीति में इस लिये भाग लेते है क्योंकि उन्हें अकेलापन खलता है और वे दूसरों से मिलना जुलना चाहते है।[11]

2. **अचेतन संघर्ष और तनाव**– किन्तु अकेलेपन के अतिरिक्त राजनीतिक भागीदारी में अचेतन मनोवैज्ञानिक तत्वों का भी योगदान हो सकता है। उदाहरण के लिये राजनीति अचेतन स्तर पर उत्पन्न होने वाले तनावों और मानसिक संघर्षों को अभिव्यक्त करने का महत्वपूर्ण साधन है। राजनीतिक सहभागिता से तनाव दो प्रकार से दूर होते हैं या तो उससे व्यक्ति आन्तरिक संघर्ष से हट जाता है अथवा वह आन्तरिक संघर्ष को अभिव्यक्त करने का माध्यम बन जाती है, दोनों ही हालातों मे ंवह आन्तरिक तनाव निकालती है। वास्तव में राजनीतिक भागीदारी नेता को जीवन का ऐसा तरीका देती है जिससे वह आन्तरिक संघर्ष से दूर रहता है।

3. **शक्ति की खोज**– संघर्ष और तनाव को दूर करने के अतिरिक्त राजनीतिक भागीदारी का एक महत्वपूर्ण कारक शक्ति की खोज है। मनुष्य सदैव शक्ति चाहता रहा है। उसे शक्तिशाली अनुभव होने के आनन्द मिलता है। बहुधा शक्ति की यह प्रेरणा अचेतन स्तर पर काम करती है। किसी भी समाज में राजनीतिक कार्यों को जितना ही अधिक मूल्य दिया जायेगा, उतना ही वे लोगों को आकर्षित करेंगे।

4. **राजनीतिक उद्दीपन**– राजनीतिक उद्दीपन और राजनीतिक सहभागिता में घनिष्ठ सम्बन्ध है। जिन लोगों का राजनीति की ओर अधिक सकारात्मक रूझान होता है वे अधिक उद्दीपन प्राप्त करते है तथा राजनीति में अधिक भाग लेते हैं। व्यक्ति के अन्दर यह उद्दीपना जनसंचार मार्गों, चुनाव अभियान, साहित्य, वैयक्तिक विचार विनिमय तथा सभाओं से आती है।

ब) **सामाजिक कारक**– मनोवैज्ञानिक कारकों के अतिरिक्त सामाजिक कारक भी राजनीतिक भागीदारी के निर्णय में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। सामाजिक कारक अनेक हैं और वे व्यक्ति के सामाजिक परिवेश के अंग हैं। इनका सामाजिक स्थिति पर प्रभाव पड़ता है। इनमें सर्वाधिक महत्वपूर्ण कारक हैं शिक्षा, व्यवसाय, आय, आयु, आवास, गतिशीलता, लिंग, धर्म, प्रजाति और वर्ग इत्यादि।

1. **शिक्षा**– शिक्षा मनुष्यों की रूचियों का क्षेत्र व्यापक कर देती है। शिक्षित व्यक्ति में नागरिक कर्तव्य व नागरिक उत्तरदायित्व के प्रति जागरूकता, आत्मविश्वास और योग्यता होती है। अतः उसमें राजनीतिक कुशलता भी होती है और वह अपने विचारों को आसानी से प्रसारित कर सकता है। जे0 एफ0 फौस्टक के अध्ययनों से यह पता चला है कि सामान्य आय वाले व्यक्तियों में शैक्षिक स्तर भिन्न होने पर राजनीतिक भागीदारी की मात्रा बदल जाती है। विकसित लोकतंत्रात्मक देशों में यह पाया गया है कि शिक्षित व्यक्तियों की राजनीतिक सहभागिता अधिक होती है।

2. **व्यवसाय**– व्यापारियों और टैक्नीकल नौकरियों के लोगों को भी राजनीति पर ध्यान देना पड़ता है क्योंकि उनके व्यवसायों पर राजनीति का प्रभाव पड़ता है। कुछ व्यवसायों में लगे व्यक्तियों को परस्पर मिलने का अवसर आता है क्योंकि उन्हें बहुत कुछ एक सी समस्याओं को झेलना पड़ता है। ये लोग राजनीति में अधिक भाग लेते हैं।[12]

3. **आय**– शिक्षा और व्यवसाय के अतिरिक्त आय का राजनीतिक भागीदारी पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता हैं क्योंकि ऊँची आय से अवकाश बढ़ता है, चिन्तायें नहीं रहती और व्यक्ति को राजनीति के सम्पर्क में आने का अधिक अवसर मिलता है। इसी कारण अधिकतर देशों में राजनीतिक नेता उच्च वर्ग से आते हैं। विकसित लोकतांत्रिक देशों में उच्च वर्ग के लोगों की राजनीतिक सहभागिता अधिक होती है परंतु भारत में इसके विपरीत देखा गया है कि निम्न आय वर्ग के लोगों की राजनीतिक सहभागिता मध्यम व उच्च वर्ग के लोगों की तुलना में अधिक होती है।

4. **सामाजिक स्थिति**– सामाजिक स्थिति का भी राजनीतिक भागीदारी पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है। सामान्य रूप से निम्न सामाजिक स्थिति के लोगों की तुलना में उच्च सामाजिक स्थिति के लोग अधिक राजनीतिक भागीदारी दिखलाते हैं किन्तु इसमें लिंग और आयु का प्रभाव स्पष्ट दिखलाई पड़ता है क्योंकि पुरूषों की तुलना में स्त्रियों की और वयस्कों की तुलना में अवयस्कों की राजनीतिक स्थिति निम्न होती है और इसलिये उनमें राजनीतिक भागीदारी भी कम होती है।

5. **आयु**– आय एवं सामाजिक स्थिति के प्रभाव के अतिरिक्त आयु का भी राजनीतिक भागीदारी पर प्रभाव पड़ता है। विभिन्न आयु में बालकों और वृद्धों की तुलना में मध्य आयु में अधिक सुरक्षा स्थायित्व, योग्यता तथा उत्तरदायित्वशीलता पायी जाती है। बालकों, युवाओं और वृद्धों की तुलना में मध्य आयु के नर-नारी अधिक राजनीतिक भागीदारी दिखलाते हैं। अवकाश प्राप्त लोगों में जीवन के अन्य क्षेत्रों में सक्रियता कम हो जाती है किन्तु राजनीतिक नेता इसके अपवाद हैं। यद्यपि अपनी आयु के अन्य लोगों के समान उनकी शारीरिक और मानसिक शक्ति भी घटती जाती है किन्तु राजनीतिक सम्मान, राजनीतिक प्रभाव तथा राजनीतिक शक्ति बढ़ती है।

6. **लिंग**– परम्परागत समाजों में व्यक्ति की राजनीतिक सहभागिता को प्रभावित करने वाला कारक लिंग भी होता है। इन समाजों में स्त्रियों के लिये पर्दा करना तथा गैर पुरूषों से दूरी बनाये रखना आवश्यक समझा जाता है। अतः भारत जैसे परम्परागत परंतु लोकतांत्रिक पद्धति वाले देशों में स्त्रियों की राजनीतिक सहभागिता पुरूषों की तुलना में कम होती है।[13]

7. **जाति व सजाति**– भारत जैसे जाति प्रधान राष्ट्रों में राजनीतिक सहभागिता को प्रभावित करने वाला एक प्रमुख कारक जाति होता है। यहाँ देखा गया है कि कुछ जातियां राजनीतिक रूप से ज्यादा सक्रिय होती है। जबकि कुछ अन्य देशों में तथा भारत के कुछ प्रदेशों में (जैसे उत्तर पूर्वी) सजाति राजनीतिक सहभागिता को प्रभावित करने वाला एक प्रमुख कारक है। पश्चिम के देशों में प्रजाति का राजनीतिक भागीदारी पर महत्वपूर्ण प्रभाव दिखलाई पड़ता है। कुछ देशों में काले लोगों की तुलना में गोरे लोगों में अधिक राजनीतिक भागीदारी देखी जाती है।

8. **आवास**– राजनीतिक सहभागिता को प्रभावित करने वाला एक अन्य सामाजिक

कारक स्थाई आवास है। यह एक सामान्य बात है कि किसी भी गाँव अथवा नगर में बाहर से आने वाले व्यक्ति को राजनीतिक नेतृत्व करने का अवसर नहीं मिल सकता। इसके लिये उसका विशिष्ट क्षेत्र में स्थाई आवास होना चाहिये। स्थाई आवास से वह स्थानीय राजनीति से भलीभांति परिचित हो जाता है। और उसका लम्बे काल तक स्थानीय लोगों से घनिष्ठ सम्पर्क भी रहता है। उसकी आदतें, तौर तरीके, चरित्र, भाषा, समस्यायें, आकांक्षायें तथा सोचने के ढ़ंग आदि स्थानीय क्षेत्र के अनुरूप होते हैं। अतः उसे राजनीतिक भागीदारी का अधिक अवसर मिलता है।

9. **धर्म**– भारतवर्ष में जब कभी धर्म से संबंधित कानून बनाने का प्रयास किया गया तब उस धर्म के अनुयायियों में अधिक राजनीतिक सक्रियता दिखलाई देती है क्योंकि अधिकतर लोग अपने धार्मिक मामलों में किसी तरह का हस्तक्षेप सहन करना नहीं चाहते। अनेक बार तो धार्मिक क्षेत्र में सुरक्षा बनाये रखने के लिये ही कुछ राजनीतिक दलों की राजनीतिक गतिविधियां तीव्र हो जाती है।[14]

10. **समूह**– मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। वह राजनीतिक भागीदारी सीखता है। इसमें समूह की सदस्यता का विशेष योगदान है। समूह सदस्य की राजनीतिक गतिविधियों को व्यापक रूप से प्रभावित करता है। व्यक्ति को उचित अनुचित की कसौटी तथा राजनीतिक निर्णय के आधार समूहों से ही प्राप्त होते हैं। समूह की राजनीतिक और सामाजिक परिवेश बनाता है। समूह में स्थिति व्यक्ति की राजनीतिक स्थिति निर्धारित करती है। सामाजिक नेता आसानी से राजनीतिक नेता बन जाते हैं।

11. **परिवारवाद व राजनीतिक विरासत**– कुछ देशों में व्यक्तियों की राजनीतिक सहभागिता उनके परिवार पर भी निर्भर करती है। कुछ परिवार राजनीतिक रूप से ज्यादा सक्रिय होते हैं। उदाहरण के लिये भारत में गाँधी-नेहरू, पाकिस्तान में भुट्टों-जरदारी परिवार आदि। इन परिवारों में एक राजनीतिक नेता की मृत्यु पर परिवार का ही कोई सदस्य राजनीति में रूचि न होने पर भी राजनीति में अत्यंत सक्रिय भूमिका निभाता है व नेतृत्व के लिये स्वयं को प्रेषित करता है।

स) **राजनीतिक कारक**– निम्नलिखित राजनीतिक कारक भी राजनीतिक भागीदारी के महत्वपूर्ण निर्णायक हैं -

1. **सरकार की अभिवृत्ति**– यदि किसी देश में राजनीति का क्षेत्र इतना लम्बा और चौड़ा है कि विभिन्न भागों में पर्याप्त सन्देशवहन और आवागमन सम्भव नहीं है तो राजनीतिक भागीदारी कम दिखलाई पड़ती है। दूसरी ओर किसी भी देश में शक्ति के लिये प्रतिद्वन्द्विता करने की जितनी ही अधिक खुली छूट होती है वहाँ राजनीतिक भागीदारी भी उतनी ही अधिक होती है। मतदान के नियम सरल होने पर अधिक लोग मतदान में भाग लेते हैं। यदि सरकार मतदाताओं को मतदान देने के लिये उकसाती है तो वे अधिक संख्या में मतदान करते हैं किन्तु यदि सरकार लोगों को निरूत्साहित करती है तो उसमें राजनीतिक भागीदारी कम हो जाती है। सरकार में अविश्वास और सरकार में अतिविश्वास दोनों ही राजनीतिक भागीदारी को कम करते हैं। राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय संकट राजनीतिक भागीदारी बढ़ाते हैं।

2. **राजनीतिक दल**– राजनीतिक दलों का भी राजनीतिक भागीदारी में महत्वपूर्ण योगदान है। राजनीतिक दल जनता की आकांक्षाओं को सरकार तक पहुँचाते है। वे जनता

की माँगों को अभिव्यक्त करने का साधन होते हैं। वे राजनीतिक शिक्षा प्रसारित करते हैं और लोगों को राजनीति में भाग लेने के लिये उकसाते हैं। वे राजनीतिक समस्याओं को उजागर करते हैं और उनके समाधान भी सुझाते हैं। चुनाव के अवसरों पर वे चुने जाने के लिये अपने प्रतिनिधि खड़े करते हैं, चुनाव क्षेत्रों में प्रचार करते हैं, चुनाव की प्रक्रिया समझाते हैं, राजनीतिक निर्णय लेने में सहायता करते हैं और चुनाव स्थल पर वास्तविक रूप से मतदान करने में भौतिक सहायता करते हैं। राजनीतिक भागीदारी का स्तर राजनीतिक दलों की गतिविधि के स्तर के साथ बढ़ता और घटता है। राजनीतिक दल समय-समय पर राजनीतिक आन्दोलन छेड़ते हैं जिनमें कभी-कभी अत्यधिक तटस्थ लोग भी सक्रिय हो जाते हैं।

3. **राजनीतिक व्यवस्थापन**– राजनीतिक व्यवस्थापन भी राजनीतिक सहभागिता को प्रभावित करता है। राजनीतिक व्यवस्थापन का अर्थ है सम्पूर्ण राजनीतिक संस्कृति। इसमें सम्पूर्ण राजनीतिक संस्कृति में मुख्य रूप से राजनीतिक खेल के नियम (वोट देने का अधिकार कितने लोगों को प्राप्त है, इस पर क्या प्रतिबन्ध है, मतदान गुप्त है या खुला, मताधिकार के सम्बन्ध में क्या प्रतिबन्ध है, पंजीकृत कराने के क्या नियम है इत्यादि) दल प्रथा (एक दलीय व्यवस्था, द्विदलीय व्यवस्था, बहुदलीय व्यवस्था) दलों के बीच पायी जाने वाली प्रतिस्पर्धा तथा दलों के जनता तक पहुँचने के साधन, निर्वाचन की विशेषताएँ राजनीतिक तन्त्र के अन्तर्गत पाये जाने वाले क्षेत्रीय विवाद तथा अनेक राजनीतिक व्यवस्थापन के गैर निर्वाचक तथा गैरदलीय कारकों को शामिल किया जा सकता है। ये बातें राजनीतिक सहभागिता को निर्धारित करती है। यही कारण है कि विश्व के सर्वाधिक शक्तिशाली जनतंत्र संयुक्त राज्य अमेरिका तक में आस्ट्रेलिया की तुलना में राजनीतिक भागीदारी की दर बहुत कम है। आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैण्ड, ग्रेट ब्रिटेन नार्वे और स्वीडन में राजनीतिक भागीदारी की दर कहीं अधिक संतोषजनक है। इस अन्तर का प्रमुख कारण यह है कि राजनीतिक भागीदारी केवल किसी देश में जनतंत्रात्मक राजनीतिक व्यवस्था होने पर ही निर्भर नहीं करती बल्कि उसे अन्य अनेक कारक भी प्रभावित करते हैं।[15]

4. **मतदान**– राजनीतिक दलों के अतिरिक्त मतदान की प्रणाली और प्रक्रिया का भी राजनीतिक भागीदारी पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है। मतदान चुनाव एवं निर्वाचकीय से सम्बन्धित एक पहलू है। डोनाल्ड ई0 स्टोक्स के अनुसार मतदान व्यक्तिगत प्राथमिकताओं का सामूहिक निर्णयों में समाहार करने का एक साधन है। मतदान आचरण से अभिप्राय प्रायः मतदाता के मत देने तथा इसे प्रभावित करने वाले कारकों के अध्ययन से है। मतदाताओं के मतदान आचरण का विश्लेषण करना एक कठिन कार्य है। भारत जैसे देश में मतदान आचरण का अध्ययन और भी अधिक गम्भीर समस्या है क्योंकि अधिकांश मतदाता इससे सम्बन्धित प्रश्नों का उत्तर ही नहीं देते तथा अपने दलीय सम्बन्धों को (केवल सक्रिय कार्यकताओं को छोड़कर) स्पष्ट रूप से बताने में संकोच करते हैं। एक मतदाता अपने तथा अपने समूह के हितों की रक्षा के लिये अथवा किसी प्रत्याशी के दल से सम्बन्धित नीतियों को समझकर मत दे सकता है अथवा वह केवल एक संस्कार के रूप में भी मतदान कर सकता है। कुछ मतदाता प्रजातंत्रीय व्यवस्था में अपनी आस्था एवं निष्ठा व्यक्त करने के लिये भी अपने मताधिकार का प्रयोग करते हैं।

राजनीतिक सहभागिता के अभाव के कारण– प्रत्येक राजनीतिक व्यवस्था में

जनसंख्या का एक भाग राजनीति के प्रति उदासीन होता है। प्रजातांत्रिक व्यवस्थाओं में भी सभी नागरिक राजनीति में भाग नहीं लेते हैं। राबर्ट डहल का कहना है कि शिक्षा के विस्तार, समान अधिकारों एवं प्रजातांत्रिक व्यवस्थाओं के बावजूद राजनीति में भाग लेने वाले अल्पसंख्यक है।[16] राजनीतिक सहभागिता के सन्दर्भ में विवेचित राजनीतिक उदासीनता के सामाजिक-आर्थिक कारणों के अलावा इसके कतिपय सामाजीय-मनोवैज्ञानिक कारण भी हैं जो सामाजीय आर्थिक कारणों के उपोत्पादन हैं। इस संदर्भ में मोरिस रोजनबर्ग का अध्ययन सर्वाधिक अन्तर्दृष्टि पूर्ण है। रोजनवर्ग ने अमरीका के इथाका तथा न्यूयार्क नगरों के निवासियों का गुणात्मक साक्षात्कार किया है। इस साक्षात्कार में रोजनवर्ग के जिन निष्कर्षो को निकाला है। वे सर्वव्यापक प्रतीत होते हैं। उनके अनुसार राजनीतिक उदासीनता के निम्नलिखित कारण है -

1. **राजनीतिक कार्यो के हानिकारक परिणामों का भय**- राजनीतिक उदासीनता का एक कारण लोगों की सोच भी है कि अन्य क्रियाओं की अपेक्षा राजनीतिक क्रियाओं के अर्न्तग्रतता कम लाभकारी है तथा वे अपनी अन्तर्ग्रतता द्वारा निर्णयों एवं परिणामों को प्रभावित कर सकते हैं। अगर कोई व्यक्ति यह सोचता है कि राजनीति में उसकी अन्तर्ग्रतता के बिना भी परिणाम संतोषजनक होंगे तो उसमें भी राजनीति के प्रति उदासीनता की सम्भावना अधिक होती है।

2. **अन्तवैंयक्तिक सम्बन्धों पर खतरा**- राजनीतिक विचारों को प्रकट करने में लोगों के उदासीनता सामाजीय-मनोवैज्ञानिक कारणों की वजह से होती है। इस सामाजिक मनोवैज्ञानिक कारणमें में एक महत्वपूर्ण कारण अन्तव्यैक्तिक सम्बन्धों के टूटने का भय होता है। लोगों को आशंका होती है कि उनके राजनीतिक विचारों के प्रकटीकरण से लोग उनसे नाराज हो जायेंगे और उनके व्यक्तित्व के प्रति उनका पुराना बिम्ब खत्म हो जायेगा।

3. **व्यावसायिक सफलता पर खतरा**- सामान्यतः लोगों में दूसरा भय अपने व्यवसाय पर खतरा उपस्थित होने का होता है। ऐसे लोगों में व्यापारियों की संख्या अधिक होती है। रोजनवर्ग का मानना है कि व्यापार में संलग्न लोग सामान्यतः राजनीतिक विचारों को प्रकट कर विरोधी विचारों के ग्राहकों को असंतुष्ट करना नहीं चाहेंगे। भारत में बड़े-बड़े पूंजीपतियों के परिदेय सूची में साम्यवादी दलों का होना सम्भवतः इसी तथ्य का पोषक है।

4. **राजनीतिक कार्यो की व्यर्थता का अहसास**- लोगों में राजनीतिक उदासीनता का एक अन्य कारक यह विश्वास होता है कि उनके राजनीतिक कार्यो में भाग लेने के बावजूद कोई अनुकूल परिणाम नहीं निकलने वाले। भारत में शिक्षित एंव मध्यम वर्ग के लोगों की राजनीतिक उदासीनता को यह कारक स्पष्ट करता है।

5. **वैयक्तिक अयोग्यता पर आधारित व्यर्थता का अहसास**- कुछ लोगों का विश्वास इस रूप में प्रकट होता है कि वे अपने आप में इतना दुर्बल, शक्तिहीन तथा अकुशल हैं कि राजनीति में भाग लेकर वे न तो अपने उद्देश्यों और न ही समाज के उद्देश्यों की पूर्ति कर सकते है। उसका वस्तुपरक विश्वास इस रूप में प्रकट होता है कि राजनीतिक प्रतिनिधि के माध्यम से चुनाव प्रणाली दोषपूर्ण है तथा राजनीतिक संगठनों में इतना दम नहीं है कि वे उन्हें राजनीति में क्रियाशील बनाकर उनके आदर्शो, हितों एवं

विश्वासों को वास्तविकता में परिवर्तित करवा सकते हैं।

6. **राजनीतिक शक्तिधारियों का सामना करने में असहायपन का बोध**– इसका एक आधारभूत कारण समाज में राजनीतिक तथा आर्थिक शक्तियों का कुछ लोगों के हाथों में केन्द्रित होना है। इस स्थिति में अधिकांश लोग अपने आपको असहाय तथा दुर्बल महसूस करते हैं। इसका दूसरा कारण समष्टि के समक्ष व्यक्ति को अपनी कमजोरी का अहसास होना है। लोग यह सोचते हैं कि वे समष्टि के मात्र एक अंश हैं। इसलिये उनके कुछ करने या नहीं करने से कुछ फर्क नहीं है।

7. **राजनीतिक परिणामों पर नियंत्रण नहीं होने का बोध**– रोजनवर्ग ने माना कि बहुत से लोग न केवल अपने आपको पर्यावरण से विलग मानते हैं बल्कि ऐसे लोग अपने आपको राजनीतिक शक्तियों पर नियंत्रण करने में अक्षम समझते हैं। उनका विश्वास है कि वे अपने प्रतिनिधियों, राजनीतिक यन्त्र, सरकार तथा अन्य सत्ताधारियों के संगठनों पर प्रभाव नहीं डाल सकते क्योंकि ये व्यक्ति और संस्थाएँ अपने हित के अनुसार जनता के नाम पर जनता के लिये निर्णय लेते हैं। अतः ऐसी परिस्थितियों में उनके लिये राजनीतिक कारवाईयों के परिणाम व्यर्थ हैं। इस प्रकार लोगों को विश्वास हो जाता है कि सरकार तथा अन्य सत्ताधारी संगठनों सहित इनके नाम पर बोलने वाले प्रतिनिधि उनके लिये कुछ नहीं कर सकते हैं। फलतः वे सरकार के निर्णय को घटित निष्कर्ष मान लेते हैं।

8. **आदर्श और वास्तविकता की खाई का बोध**– सरकार में अविश्वास उनमें आदर्श तथा वास्तविकता के बीच बड़ी खाई का अहसास दिलाने वाले कारणों में है जो राजनीतिक उदासीनता का अन्य सामाजीय मनोवैज्ञानिक कारण है। उदाहरण के लिये कुछ लोग जनतंत्र के समाजीय राजनीतिक मूल्यों एवं आदर्शों में विश्वास तथा सरकार की ईमानदारी पर भरोसा कर सकते हैं। लेकिन जब वे सरकार की नीतियों के विपरीत परिणामों से परेशान होते हैं और जब वे यह देखते है कि जनतांत्रिक पद्धति का नाम लेकर शासक अपने स्वार्थ की पूर्त्ति करने लगे हैं तो उनके मन में राजनीति के प्रति विरक्ति पैदा होती है जो राजनीतिक उदासीनता का दूसरा नाम है।

9. **राजनीतिक क्रियाओं की ओर उन्मुख करने वाले प्रभाव के अभाव का अहसास**– बहुत से लोग राजनीति में रूचि इसलिये नहीं ले पाते कि उन्हें इसे पर्याप्त प्रेरणा नहीं मिल पाती है। इस तरह की भावना वैयक्तिक एवं वास्तविक दोनों तरह की होती है। यह वैयक्तिक इसलिये होती है कि कुछ लोगों के लिये राजनीतिक क्रिया मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से आकर्षक नहीं प्रतीत होती हे। चूँकि राजनीतिक संस्थाओं का सम्बन्ध किसी खास व्यक्ति की समस्याओं के बदले सम्पूर्ण समाज की समस्या से होता है। इसलिये उनकी क्रियायें लोगों के लिये अवैयक्तिक या अमूर्त प्रतीत होती हैं। इसके लिये राजनीतिक पद्धतियों में प्रचार, जनसम्पर्क इत्यादि के माध्यम से समाज की समस्याओं को वैयक्तिक धरातल पर रूपान्तरित करने का प्रयत्न किया जाता है फिर भी कुछ लोगों के लिये अमूर्त एवं अनाकर्षक प्रतीत होती है।

10. **राजनीतिक परिणामों से लाभ नहीं होने का अहसास**– राजनीतिक क्रियाओं के माध्यम से प्रत्यक्ष अथवा आवश्यक जरूरतों की पूर्ति नहीं हो पाती है। सामान्य लोग दिन प्रतिदिन की आवश्यकताओं की पूर्ति में संलग्न रहते हैं क्योंकि यह उनके दैनिक जीवन के लिये आवश्यक है। राजनीतिक क्रियाओं से दैनिक आवश्यकताओं की न तो पूर्ति

ही होती है और न ही मनुष्य के पास उनके दूरगामी परिणामों का लाभ उठाने का आकर्षण या उत्साह ही रह जाता है। इस कारण से मर्दों की अपेक्षा औरतों में राजनीतिक उदासीनता का पाया जाना स्वाभाविक ही है।

11. **राजनीति में रूचि लेने की वैयक्तिक पसन्द का अभाव**– सरकारी संस्थाओं के कार्यों में कुछ लोगों के लिये वास्तविकता का अभाव होने के दो कारण है- पहला गैर उपादनीय संतुष्टि का अभाव तथा दूसरा राजनीतिक क्रियाओं द्वारा प्रत्यक्ष तथा आवश्यक जरूरतों की पूर्ति की विफलता जिसके कारण लोगों में राजनीतिक रूचि कम हो जाती है और राजनीतिक उदासीनता की मात्रा अधिक हो जाती है।

उपर्युक्त विश्लेषण से यह स्पष्ट हो जाता है कि जनतांत्रिक राजनीतिक पद्धतियों में भी नागरिकों का एक बड़ा भाग राजनीतिक सहभागिता के प्रति उदासीन रहता है। मतदान में भाग लेना ही अपने आप में राजनीतिक सहभागिता का द्योतक नहीं है। मतदान के अलावा राजनीतिक कार्यों में हिस्सा बँटाना भी राजनीतिक सहभागिता का एक महत्वपूर्ण पहलू है। लेकिन राजनीतिक सहभागिता के लिए साधन एवं अवसर सभी लोगों में समान रूप से उपलब्ध नहीं होते। फिर सभी लोगों में राजनीतिक पात्रता भी समान नहीं होती है। राजनीतिक सहभागिता एक सतत प्रक्रिया है जो राजनीतिक पात्रता, साधनों व अवसरों की वृद्धि, आधुनिकीकरण, राजनीतिक विकास आदि के साथ क्रमशः बढ़ती जाती है। ज्यों-ज्यों व्यवस्था एकतंत्र से लोकतंत्र की ओर अग्रसर होती है, राजनीतिक सहभागिता की मात्रा भी बढ़ती जाती है। दूसरी महत्वपूर्ण बात यह है कि जो लोग व्यवस्था परिवर्तन में अपने को असमर्थ पाते हैं, वे राजनीति के प्रति उदासीन हो जाते हैं। जो कुछ भी हो, इतना तो तय है कि राजनीतिक सहभागिता की अवधारणा प्रत्येक राजनीतिक व्यवस्था का केन्द्रीय विषय है और इसका स्तर किसी समाज के नागरिकों की राजनीतिक जागरूकता, लोकतंत्र के प्रति राजनीतिक प्रतिबद्धता और अपने अधिकार के प्रति सजगता का मापदंड है। इस दृष्टिकोण से राजनीतिक सहभागिता के महत्व को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है।

===============

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची–

1. गोखले, बी. के., पालिटिकल साइंस : थ्योरी एंड गवर्नमेंटल मशीनरी, हिमालय पब्लिशिंग हाउस, मुम्बई, 2001, पृ. 04.
2. डरिटी, डब्लू, ए., इनसाइक्लोपीडिया ऑफ द सोशल साइंस, थामसन गेले, न्यूयार्क, 2008, पृ. 319.
3. टाहेलन एंड कारलोटा, पालिटिकल साइंस : एन इन्ट्रोडक्शन, मेकमिलन प्रेस, न्यूयार्क, 1964, पृ. 6.
4. अर्नेस्ट बार्कर, दि पालिटिक्स ऑफ अरिस्टोटल, आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, लंदन, 1948, पृ. 10.
5. डेविड इस्टन, द पालिटिकल सिस्टम, मेकमिलन प्रेस, न्यूयार्क, 1960, पृ. 129.
6. पाठक, आर. सी., भार्गव डिक्शनरी, भार्गव बुक डिपो, वाराणसी, 2004, पृ. 435.
7. धर्मदासानी, एम. डी., पालिटिकल पारटिशिपेशन इन साउथ एशिया, शालीमार पब्लिशिंग हाउस, वाराणसी, 1984, पृ. 01.
8. पूर्णिमा मोहन, इनसाइक्लोपीडिया ऑफ वुमन, इंडियन पब्लिशर्स, दिल्ली, 2000, पृ. 302.
9. तथैव, पृ. 303.
10. वाजपेयी, डी. के., मोडर्नाइजेशन एंड सोशल चेंज इन इंडिया, मनोहर पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 1997, पृ. 73.
11. लेन आर. आई, पालिटिकल लाइफ, फ्री प्रेस, न्यूयार्क, 1961, पृ. 168.
12. फास्केट, जे. एम., सोशल स्ट्रक्चर एंड सोशल पार्टिशिपेशन, अमेरिकन सोशियोलॉजिकल रिव्यू, दि फ्री प्रेस, न्यूयार्क, 1955, पृ. 434.
13. अकिंचन, एस. कास्ट, क्लास एंड इमजिंग हारिजन्स ऑफ पालिटिकल सोशियोलॉजी, ज्ञान पब्लिशिंग हाउस,

नई दिल्ली, 1995, पृ. 86.
14. लिपसेट, एस. एल., पालिटिकल मैन, अर्नोल्ड हैनीमैन, लंदन, 1973, पृ. 196.
15. एलडरवेल्ड, एस. जे., थ्योरी एंड मेथड इन वोटिंग, विहेवियर रिसर्च, अमेरिन्ड पब्लिशिंग, नई दिल्ली, 1972, पृ. 267.
16. डाल. आर. ए., साइज एंड डेमोक्रेसी, स्टेनफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1973, पृ. 53.

Research Journal of Arts, Management and Social Sciences,
Vol. XVIII, Hindi.-I, Year IX, March, 2018
UGC Sl. No. 2138, Journal No.48774, Impact Factor 2.996

आगरा शिखर वार्ता एवं बस कूटनीति : एक मूल्यांकन

* सुनील कुमार मिश्रा

सारांश- *बस कूटनीति के माध्यम से पकिस्तान के साथ रिश्ते सुधारने के भारत के प्रयास को विश्व भर के नेताओं ने सराहा एवं प्रशंसा की, किन्तु इस यात्रा के दौरान हुई लाहौर घोषणा की व्याख्या पाकिस्तान द्वारा जिस तरह से अगले दिन की गई उससे पूरी बस कूटनीति की सफलता पर बड़ा प्रश्नवाचक चिन्ह लग गया। बाघा चेक पोस्ट पर भारतीय प्रधानमंत्री एवं शिष्टमण्डल के स्वागत कार्यक्रम से पाकिस्तानी सेना प्रमुख एवं सेना की बेरूखी इस बात के संकेत दे रही थी की परदे के पीछे कोई और कहानी चल रही, जिसकी जानकारी पाक प्रधानमंत्री को थी या नहीं आज तक स्पष्ट नहीं हो पाया वह कहानी थी करगिल घुसपैठ जो हम पर थोपी गई इस तरह संबंधों को सुधारने की बस कूटनीति असफल सिद्ध हुई और हमे यह संदेश मिल गया कि पाकिस्तान मित्रता और दोस्ती एवं भाईचारे की भाषा नहीं समझता और उससे इसकी अपेक्षा बेमानी होगी।*

भारत और पाकिस्तान जो कभी एक ही देश हुआ करते थे, 14 अगस्त 1947 तक। इसके पश्चात पाकिस्तान एक स्वतंत्र इस्लामिक राष्ट्र के रूप में विश्व के मानचित्र पर उदित हुआ। चूँकि पाकिस्तान का निर्माण भारत के प्रति परस्पर घृणा और वैमनश्यता के आधार पर हुआ था, इसलिये दोनो देशों के बीच संबंध प्रारम्भ से ही मधुर नहीं रहे, इसीलिये मशहूर पत्रकार कुलदीप नैयर ने दोनों देशों को दूरस्थ पड़ोसी की संज्ञा दी है। पाकिस्तान के निर्माण के साथ ही भारत और पाकिस्तान के संबंधों को सुधारने हेतु विभिन्न समय पर कई शिखर वार्ताएं एवं कूटनीतिक प्रयास हुये। जिसमें क्रिकेट कूटनीति, सांस्कृतिक कूटनीति, बस कूटनीति आदि हुई जिनके माध्यम से संबंधों के सुधार में कुछ प्रगति हुई। 14 जुलाई 2001 को पाकिस्तान के राष्ट्रपति जनरल परवेज मुशर्रफ भारतीय प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी बाजपेयी के निमंत्रण पर अपनी पत्नी के साथ भारतीय दौरे पर आये। करगिल युद्ध के बाद जनरल मुशर्रफ की इस भारत यात्रा पर सम्पूर्ण दुनिया की नजर थी। मुशर्रफ के साथ एक 19 सदस्यीय प्रतिनिधि मण्डल भी आया था, जिसमें पाकिस्तान के विदेश मंत्री अब्दुल सत्तार भी थे, इस दौरे पर द्विपक्षीय वार्ता की भी योजना थी। द्विपक्षीय वार्ता हेतु किसी पाकिस्तानी राष्ट्राध्यक्ष की पिछले 16 वर्षों में पहली यात्रा थी। प्रस्तुत शोध पत्र आगरा शिखर वार्ता एवं बस कूटनीति का मूल्यांकन है।

जनरल मुशर्रफ को भारत पहुँचने पर सीधे उन्हें राष्ट्रपति भवन ले जाया गया जहाँ 21 तोपों की सलामी के साथ उनका परम्परागत तरीके से स्वागत किया गया जिसके पश्चात श्री मुशर्रफ सपत्नी राजघाट गये जहाँ राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी जी की समाधि पर

* अतिथि विद्वान (राजनीति विज्ञान) शासकीय महाविद्यालय देवसर जिला सिंगरौली (म.प्र.)

श्रद्धा सुमन अर्पित करने वाले वह पहले पाकिस्तानी राष्ट्राध्यक्ष बने।

आगरा शिखर वार्ता के लिये जितने व्यापक स्तर पर तैयारियाँ भारत द्वारा की गई थी तथा जितनी अपेक्षाएँ इस वार्ता से की गई थी वे सब वार्ता के दौरान रेत के महल की तरह ढह गई। दोनों पक्षों के बीच चली कई दौर की वार्ता अंततः बिना किसी परिणाम के ही समाप्त हो गयी। भारत सरकार इस वार्ता में जहाँ विभिन्न मुद्दों को शामिल करने की पक्षधर थी, वहीं पाकिस्तान पक्ष कश्मीर पर ही केन्द्रित रहा, वार्ता में उपजे मतभेदों का आकलन इससे किया जा सकता है कि इसकी समाप्ति पर जारी किये जाने वाले संयुक्त घोषणा पत्र के मसौदे पर भी दोनों पक्षों में सहमति नहीं हो सकी जिससे बहुप्रतिक्षित आगरा घोषणा पत्र जारी न किया जा सका, विश्वभर के पत्रकारों की लंबी प्रतीक्षा के बावजूद संयुक्त पत्रकार सम्मेलन भी सम्बोधित नहीं किया जा सका। 16 जुलाई 2001 को मुशर्रफ आगरा से सीधे इस्लामाबाद के लिये रवाना हो गये। स्वदेश जाने से पूर्व श्री मुशर्रफ ने भारतीय प्रधानमंत्री को पाकिस्तान यात्रा का निमंत्रण भी दिया, जिसे उन्होंने स्वीकार किया।

बिना किसी निष्कर्ष के समाप्त हुई आगरा शिखर वार्ता को दोनों देशों की सरकारों ने विफल कहने के बजाय अनिर्णित कहा, शिखर वार्ता को विफल न मानते हुये इसे शांति व सदभाव की दिशा में एक और संदर्भ बताते हुये विदेशमंत्री जसवंत सिंह ने कहा कि वार्ता तब तक जारी रहेगी जब तक शांति का काफिला अपने मुकाम पर नहीं पहुँच जाता।

आगरा शिखर वार्ता की उपलब्धि नाम मात्र की है, पाकिस्तानी राष्ट्रपति वास्तव में पर्यटन यात्रा पर आये थे, न कि किसी कुटनीतिक यात्रा पे। वे भारत में घूमें ताजमहल देखा अपनी पुस्तैनी हवेली देखा तथा भारतीयों से अच्छी मेहमाननवाजी करवाई भारत केवल मुशर्रफ के स्वागत में लगा रहा तथा बड़े सपने देखता रहा, लेकिन परिणाम के नाम पर आगरा शिखर वार्ता से भारत को कुछ प्राप्त नहीं हुआ और न ही संबंधों की सुधार की दिशा में कोई प्रगति। इस तरह से आगरा शिखर वार्ता एक असफल कूटनीति साबित हुई।

बस कूटनीति–

भारत-पाक संबंध के सुधार में बस कूटनीति के द्वारा दोनों देशों के मध्य परस्पर भाई चारे की संभावना बनती नजर आ रही थी। दिल्ली लाहौर बस सेवा की कूटनीति से दोनों देशों के मध्य संबंधो में नया मोड़ आने की संभावना थी 20 फरवरी 1999 को इस बस सेवा की कूटनीति से भारतीय प्रधानमंत्री भारत रत्न श्री अटल बिहारी वाजपेयी ने इस बस सेवा जिसे 'सदा-ए-सरहद' नाम दिया गया था, अमृतसर से लाहौर तक की यात्रा की इस यात्रा में प्रधानमंत्री के साथ एक प्रतिनिधि मण्डल जिसमें ख्याति प्राप्ति विभूतियाँ थी, इनमें विदेश मंत्री जसवंत सिंह पंजाब के मुख्यमंत्री प्रकाश सिंह बादल, विदेश सचिव के0 रघुनाथ प्रधानमंत्री के सचिव श्री बृजेश मिश्र पाकिस्तान में भारतीय उच्च आयुक्त जी0 पार्थ सारथी तथा कला संस्कृति एवं खेल से जुड़ी अन्य विभूतियाँ शामिल थी। शान्ति वार्ता के लिये पाकिस्तान की यात्रा करने वाले श्री बाजपेयी दूसरे प्रधानमंत्री थे। इसके पूर्व श्री राजीव गॉधी ने शान्ति वार्ता हेतु पाकिस्तान की यात्रा की थी। डी.टी.सी. की सुनहरे रंग की बस ने जैसे ही बाघा चेक पोस्ट को पार किया उस समय के माहौल को देखकर ऐसा लगा जैसे दोनों देशों के मध्य सीमाओं का बंधन टूट गया है।

बस कूटनीति के माध्यम से पकिस्तान के साथ रिश्ते सुधारने के भारत के प्रयास को

विश्व भर के नेताओं ने सराहा एवं प्रशंसा की, किन्तु इस यात्रा के दौरान हुई लाहौर घोषणा की व्याख्या पाकिस्तान द्वारा जिस तरह से अगले दिन की गई उससे पूरी बस कूटनीति की सफलता पर बड़ा प्रश्नवाचक चिन्ह लग गया। बाघा चेक पोस्ट पर भारतीय प्रधानमंत्री एवं शिष्टमण्डल के स्वागत कार्यक्रम से पाकिस्तानी सेना प्रमुख एवं सेना की बेरूखी इस बात के संकेत दे रही थी की परदे के पीछे कोई और कहानी चल रही, जिसकी जानकारी पाक प्रधानमंत्री को थी या नहीं आज तक स्पष्ट नहीं हो पाया वह कहानी थी करगिल घुसपैठ जो हम पर थोपी गई इस तरह संबंधों को सुधारने की बस कूटनीति असफल सिद्ध हुई और हमे यह संदेश मिल गया कि पाकिस्तान मित्रता और दोस्ती एवं भाईचारे की भाषा नहीं समझता और उससे इसकी अपेक्षा बेमानी होगी।

===============

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची-

1. दैनिक जागरण 21 फरवरी 1999 पृ. 1
2. टाइम्स ऑफ इण्डिया 21 फरवरी 1999 पृ. 1
3. इण्डियन एक्सप्रेस 21 फरवरी 1999 पृ. 1
4. जे.एन.दीक्षित भारत-पाक संबंध, युद्ध और शांति में 2005 पृ. 524
5. जे.एन. दीक्षित भारत-पाक संबंध, युद्ध और शांति में 2005 पृ. 464, 465, 467, 468, 469
6. नवभारत टाइम्स 20 जुलाई 2001
7. जनता 19 जुलाई 2001
8. टाइम्स आफ इण्डिया 22 जुलाई 2001
9. मिश्रा, सुनील कुमार 'भारत पाक संबंध एवं भारतीय विदेश नीति' 1947 से 2007 एक विश्लेषणात्मक अध यन शोध प्रबंध 2008 अ.प. सिंह. विश्वविद्यालय रीवा

Research Journal of Arts, Management and Social Sciences,
Vol. XVIII, Hindi.-I, Year IX, March, 2018
UGC Sl. No. 2138, Journal No.48774, Impact Factor 2.996

पंचायतीराज में महिलाओं की सहभागिता

* मीनाक्षी विजय

===

सारांश– *राष्ट्रीय क्षितिज पर महात्मा गांधी के आगमन से पूर्व जितने भी सुधारवादी आंदोलन चले, उनका उद्देश्य महिलाओं को उचित स्थान व सम्मान दिलाने का था, किन्तु महिलाओं को स्थानीय, राज्य व केन्द्र स्तर पर निर्णय लेने की प्रक्रिया में भागीदारी मिले, इसके लिए कोई विशेष प्रयास नहीं हुए। महात्मा गांधी ने पहली बार स्वतंत्रता आंदोलन को महिलाओं की मुक्ति से जोड़ा। 1925 में उन्होंने स्वीकारा था– जब तक भारत की महिलाएं सार्वजनिक जीवन में भाग नहीं लेंगी, तब तक इस देश को मुक्ति नहीं मिल सकती। मेरे लिए ऐसे स्वराज का कोई अर्थ नहीं, जिसको प्राप्त करने में महिलाओं ने अपना भरपूर योगदान न दिया हो।*

===

गांधीजी की पहल पर पहली बार महिलाएं व्यापक स्तर पर सार्वजनिक जीवन में सक्रिय हुई। उन्होंने अपने अस्तित्व की सार्थकता प्रमाणित की। यह भी सिद्ध किया कि भारत के पिछड़ेपन का एक कारण उनकी उपेक्षा भी है।[1] पंचायतों में महिलाओं की भागीदारी के बारे में संविधान सभा का उल्लेख करना आवश्यक है। प्रथम तो संविधान सभा में पंचायतों को संविधान का अंग ही नहीं बनाया जा रहा था क्योंकि डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने गांवों को स्थानीय कूप, अज्ञान, संकीर्णता व साम्प्रदायिकता की गुफा बताकर पंचायतों का विरोध किया था। किन्तु गांधीजी के प्रभाव व अन्य दबावों के कारण अंततः पंचायतें संविधान का अंग बनीं। फिर भी पंचायतों में महिलाओं की भागीदारी सुनिश्चित हो, इसके बारे में कोई सविस्तारित चर्चा नहीं हुई। संविधान सभा में पंचायतों की बात तो दूर, विधान मंडल व संसद में भी महिलाओं की भागीदारी सुनिश्चित करने की बात चली तो उसे भी समता, लिंग व भेदभाव के विपरीत बताकर रद्द कर दिया।[2]

भारत में महिलाएं सामाजिक परिवर्तन के विभिन्न दौर से गुजरी हैं। जाति-व्यवस्था व लिंग-भेद ने उन्हें समाज के साथ सार्थक संवाद स्थापित करने व अपने आप को अभिव्यक्त करने के समुचित अवसर प्रदान नहीं किए। पुरुषों से पृथक् महिलाओं की अपनी कोई पहचान नहीं रही। पुरुषों द्वारा उन्हें प्रताड़ित करने तथा हिंसा का मानो विधिसम्मत अधिकार मिल गया। अतीत में भी भारत में पंचायतें थीं, इसके अनेक प्रमाण मिलते है। किन्तु इनमें महिलाओं की भागीदारी भी थी-इसके प्रमाण नहीं मिलते हैं।

डॉ. वी. पी. वैश्य के अनुसार-"उत्तर भारत में वही व्यक्ति पंचायत में चुना जा सकता था जिसके पास कर देने योग्य अर्थात् बेली (बेली 6.35 एकड़ के बराबर होती थी)

========================

* लेक्चरर, राजनीति विज्ञान विभाग, एस.एस.जैन सुबोध कॉलेज ऑफ ग्लोबल एक्सिलेंस, सीतापुरा, जयपुर

की एक-चौथाई भूमि हो, उसके पास अपना मकान हो तथा वह शिक्षा ग्रहण योग्य हो। अगर उसके पास बेली का एक बटा आठ भूमि हो तो उसे एक बेल व चार भाषाओं में से एक का ज्ञान आवश्यक था। साथ ही उसे दूसरों को समझाने में भी उनका ज्ञान परिपक्व होना अपेक्षित था। वह व्यवसाय करना जानता हो तथा यह भी आवश्यक है कि उसने अपना धन ईमानदारी से कमाया हो।"[3]

पंडित जवाहरलाल नेहरू ने अपनी पुस्तक 'भारत की खोज' में भी इस तरह का संकेत करते हुए उद्धृत किया है कि ग्रामीण समितियां एक वर्ष के लिए गठित होती थीं और महिलाएं भी ऐसी समितियों के लिए सदस्य हो सकती थीं। इन दो संदर्भों से यह तो ज्ञात होता है कि महिलाएं भी ग्रामीण समितियों की सदस्य बन सकती थीं, किन्तु ऐसा प्रावधान यदि था भी तो उसका प्रचलन नहीं था। महिलाओं की जीवन शैली इस तरह की होती थी कि उसे किसी समिति की सदस्य बना पाना अत्यन्त कठिन था। इन समितियों को अनेक सार्वजनिक सामाजिक उत्तरदायित्वों का निर्वाह करना पड़ता था, इसलिए महिलाएं इनसे संबंध नहीं रखती थीं। मुगलों ने अपने शासन काल में स्थानीय प्रशासनिक व्यवस्था से छेड़छाड़ नहीं की। उनका ऐसा कोई उद्देश्य भी नहीं था कि वह महिलाओं की भागीदारी सुनिश्चित करे। मुग़ल काल में भी महिलाएं पिछड़ी हुई थीं। उनकी भूमिका इस काल में और अधिक सिकुड़ गयी। सामाजिक, राजनीतिक व आर्थिक गतिविधियों में भाग लेने की अपेक्षा उन्हें घूंघट में बंद कर घर की चारदीवारी तक सीमित कर दिया गया। ब्रिटिश काल के दौरान पंचायतों के विकास की दिशा में अनेक कदम उठाए गए, जैसे- 14 दिसम्बर, 1870 को सत्ता के विकेन्द्रीकरण और स्वायत्त शासन के गठन का प्रस्ताव, 18 मई, 1882 को लार्ड रिपन का स्वायत्त शासन की इकाई का प्रस्ताव, 1907 में चार्ल्स हॉब हाऊस की अध्यक्षता में शाही विकेन्द्रीकरण आयोग का गठन तथा ऐसे ही अनेक कदम। लेकिन इन प्रयासों में महिलाओं की भागीदारी सुनिश्चित करने की दिशा में कोई कार्यवाही नहीं की गयी।[4]

स्वतंत्र भारत में पंचायतराज व्यवस्था एवं महिलाओं की भागीदारी-

हमारे देश की कुल जनसंख्या का आधा हिस्सा महिलाएं हैं। अतः देश का समग्र विकास महिलाओं की भागीदारी के अभाव में नहीं हो सकता। भारत में आदि काल से जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में महिलाओं ने पुरुषों के साथ मिलकर कार्य किया है। भारतीय महिलाएं घर गृहस्थी एवं कृषि व मजदूरी से लेकर विज्ञान, प्रौद्योगिकी, चिकित्सा, अर्थव्यवस्था, राजनीतिक, सामाजिक, तकनीकी, प्रशासनिक आदि राष्ट्रीय जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में अपना योगदान देती आई हैं।

अर्थव्यवस्था में महिलाओं का योगदान उल्लेखनीय है। देश के कतिपय भागों में महिलाएँ ही खेती का सम्पूर्ण कार्य भार उठाती हैं और शेष भागों में वे यह कार्य पुरुषों के साथ मिल कर करती हैं। डेयरी, हथकरघा तथा अनेक कुटीर उद्योगों के कार्यों में महिलाएँ अपना योगदान देती हैं। गांवों की कुछ समस्याओं जैसे पर्यावरण, रक्षा, सफाई, पाठशालाओं की स्थापना, साक्षरता, पेयजल, स्वास्थ्य केन्द्र, गांवों की सड़कों आदि के बारे में महिलाएं पुरुषों की अपेक्षा अधिक उपयोगी एवं लाभप्रद परामर्श दे सकती हैं।

ग्रामीण महिलाओं में दैनिक मज़दूरी पर कार्यरत महिलाओं को कम वेतन दिया जाता है ऐसी स्थिति होते हुए भी कार्य करना उनकी मजबूरी है, क्योंकि वे गरीब हैं, उनके पति

रोजगार की तलाश में शहर चले जाते हैं, खेतों में उनसे अमानवीय तरीके से काम लिया जाता है। भारत की लगभग 40 करोड़ महिलाएँ गावों में बसती हैं। विकास के लाभों से ग्रामीण महिलाओं का एक बड़ा वर्ग वंचित है। उनके पास न तो जीवनयापन के पर्याप्त साधन हैं और न ही सामाजिक प्रतिष्ठा। विकास प्रक्रिया में ग्रामीण महिलाओं की समान भागीदारी को अभी क्रियान्वित किया जाना है। ग्रामीण महिलाएँ दिनभर 17-18 घन्टे काम करती हैं, यह समय वे घर के कार्य, खेतों तथा घरेलू उत्पादन के काम में लगाती हैं। भारत में कार्यरत महिलाओं की जनसंख्या का मात्र छः प्रतिशत भाग नियमित रोजगार में लगा हुआ है तथा 94 प्रतिशत भाग स्वरोजगार में लगा है, ये महिलाएँ अधिकांशतः अशिक्षित वर्ग की ही होती हैं।

महिलाओं की वैधानिक स्थिति-

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् भारतीय संविधान निर्माताओं नें अत्यन्त सावधानीपूर्वक सदियों से चले आ रहे स्त्री और पुरुष के अधिकारों के भेदभाव को सुनिश्चित तौर पर मौलिक अधिकारों एवं नीति निर्देशक तत्वों में विशेष प्रावधान जोड़कर समाप्त किया। मौलिक अधिकारों में स्वतन्त्रता एवं समानता के अधिकारों का जो प्रावधान किया गया है उसमें स्पष्ट रूप से स्त्री और पुरुष को समान स्तर व अधिकार प्रदान किये गए हैं। लिंग के आधार पर किये जाने वाले भेदभाव को समाप्त किया गया है। नीति निर्देशक तत्वों के माध्यम से समाज के पीड़ित, पिछड़ा वर्ग, महिलाओं, बालकों के लिए विशेष अधिकार सरकार को दिये गए हैं। ग्रामीण महिलाओं की दयनीय स्थिति से मुक्ति दिलाने हेतु ग्रामीण अर्थव्यवस्था में उसकी महत्ता को स्वीकारते हुए भारत सरकार ने पंचायत राज में उसकी सहभागिता को आवश्यक माना है इसलिए पंचायत राज में महिलाओं के प्रतिनिधित्व को 33 प्रतिशत आरक्षित कर दिया है। राजस्थान राज्य में तो महिलाओं के प्रतिनिधित्व को 50 प्रतिशत करने का निश्चय कर लिया था किन्तु माननीय उच्च न्यायालय में यह मामला लम्बित है।

15 अगस्त, 1947 को स्वतंत्रता प्राप्त होने तथा 26 जनवरी, 1950 को नया संविधान लागू होने के पश्चात् भी पंचायतों के विकास व उनमें महिलाओं की भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए कोई विशेष प्रयास नहीं किए गये। पंचायत गठित करने के स्थान पर केन्द्र सरकार ने सामुदायिक योजना कार्यक्रम व राष्ट्रीय विस्तार कार्यक्रम संचालित किये। स्थानीय प्रयासों को राष्ट्रीय विकास में सहभागी बनाने के लिए तदर्थ समितियां, जिनमें अधिकांश मनोनीत सदस्य ही अधिकारी थे, अवश्य गठित की गयीं, किन्तु इनमें भी नौकरशाही का ही प्रभुत्व था।

इसी आयाम को ध्यान में रखते हुए केन्द्र सरकार ने सामुदायिक परियोजना के लिए बलवन्त राय मेहता की अध्यक्षता में एक अध्ययन समिति गठित की। इस समिति ने 24 नवम्बर, 1957 को अपना प्रतिवेदन सरकार को सौंप दिया। बलवन्त राय मेहता समिति ने महिलाओं की भागीदारी सुनिश्चित करने के उद्देश्य से पंचायतों के तीनों स्तर पर दो महिला सदस्यों को मनोनीत करने का सुझाव दिया। समिति ने यह सुझाव भी दिया कि इन दो महिलाओं का चयन करते समय यह देखना अनिवार्य है कि इनकी महिला एवं बाल कल्याण में रुचि हो। महिलाओं की पंचायतों में भागीदारी सुनिश्चित करने का वह पहला प्रयास था किन्तु आश्चर्य कि बात यह है कि इन महिलाओं को निर्वाचित सदस्यों के रूप

में नहीं लिया जाना था।[5]

पंचायतों में महिलाओं की भागीदारी हेतु अन्य प्रयास–

1971 में भारत में महिलाओं की स्थिति पर भारत सरकार ने एक समिति गठित की। इसने 'समानता की ओर' शीर्षक से अपना प्रतिवेदन दिसम्बर 1974 में प्रस्तुत किया। इस समिति ने महिलाओं की राजनीतिक स्थिति का उल्लेख करते हुए कहा था कि वैसे तो महिलाओं की राजनीतिक भागीदारी में वृद्धि हुई है, किन्तु उनके राजनीतिक रूप से अपेक्षानुसार आत्मनिर्भर न होने तथा राजनीतिक दलों व महिला संगठनों की उदासीनता के कारण दैनिक समस्याओं के संदर्भ में उनकी राजनीतिक उन्नति में अवरोध उत्पन्न हुआ है अतः उपर्युक्त राजनीतिक प्रक्रिया में भागीदार बनाने तथा अपेक्षित राजनीतिक विकास के लिए यह आवश्यक है कि उनकी सामाजिक बाधाओं पर दृष्टिपात किया जाए। समिति ने यह भी कहा है कि महिलाओं को स्थानीय संस्थाओं में विशेष अवसर प्रदान करके और उनका प्रतिनिधित्व बढ़ाकर इन बाधाओं को दूर किया जा सकता है। समिति के अनुसार दो महिलाओं को मनोनीत करने का प्रावधान मात्र तुष्टीकरण था। इसलिए यदि पृथक् से कोई महिला पंचायत होगी तो इन बाधाओं को दूर कर महिलाएं अपनी भागीदारी सुनिश्चित कर सकती हैं।

इसलिए कानूनी स्तर पर ग्राम-स्तर पर महिला पंचायतों की स्थापना की अनुशंसा की जाती हैं जिससे राजनीतिक प्रक्रिया में महिलाओं की अधिक से अधिक भागीदारी सुनिश्चित हो सके। ये संस्थाएं ग्राम पंचायतों की समानांतर संस्थाएं नहीं होंगी। इन्हें पंचायती राज संरचना का एक अभिन्न अंग होना होगा जिसकी अपनी स्वायत्तता होगी और जिसके संसाधन भी अपने होंगे जिससे महिलाओं और बच्चों के लिए संचालित महिला एवं बाल विकास व कल्याण कार्यक्रमों के प्रबंधन और प्रशासन का काम भी स्वयं महिलाएं ही करें। प्रस्तुत शोध में इसकी अनुशंसा इसलिए की जा रही है जिससे ग्रामीण समाज में जो परम्परागत व्यवहार चला आ रहा है, उसे तोड़ने की दिशा में यह एक संक्रमणकालीन उपाय की भूमिका निभा सके। अभी तक यह परंपरा रही है कि स्थानीय निकायों में अधिकांश महिलाएं न तो अपनी समस्याओं पर बातचीत कर पाती हैं और न इनमें सक्रिय रूप से भाग ले पाती हैं, यदि केवल महिलाओं का ही कोई संगठन होगा तो वह इन कठिनाइयों को दूर कर देगा। साथ ही अधिक से अधिक महिलाओं को अपने कामकाज के संचालन का अनुभव प्राप्त करने और अपने काम में आत्मविश्वास उत्पन्न करने का अवसर प्रदान करेगा। इस वैधानिक स्थिति का ग्रामीण समाज में महिलाओं की सामान्य स्थिति पर सीधा प्रभाव पड़ेगा और उन्हें जो अनुभव प्राप्त होंगे तथा उनके अंदर उत्तरदायित्व की जो भावना उत्पन्न होगी, उससे आशा है कि राजनीतिक प्रक्रिया में अधिक से अधिक भाग लेने के संदर्भ में महिलाओं की इच्छा और क्षमता में भी वृद्धि होगी। इस तरह के वैधानिक निकायों के अस्तित्व को विभिन्न सरकारी सेवाओं और कार्यक्रमों के कार्यान्वयन के स्तर पर सहायता मिलेगी और बेहतर समन्वय स्थापित होगा।[6]

समिति ने यह सुझाव दिया था कि पंचायतों में महिलाएं प्रत्यक्ष रूप से निःसंकोच आएंगी तथा ग्राम पंचायत स्तर पर चुनी गई महिलाएं ही अपने में से पंचायत समिति व जिला परिषद् स्तर पर अपना प्रतिनिधि नियुक्त करेंगी। समिति के इन परामर्शों को ध्यान में रखकर महाराष्ट्र व आंध्रप्रदेश ने कतिपय स्थानों पर महिला पंचायतों का गठन किया।

अन्य राज्यों में इन अनुशंसाओं को लागू करने के स्थान पर राज्य स्तर के राजनेताओं ने इनके विरुद्ध वातावरण तैयार किया तथा तर्क दिया कि- यदि ये अनुशंसाएं लागू होंगी तो महिलाओं को इनसे कोई लाभ नहीं होगा, क्योंकि ऐसा करने से वे मुख्यधारा से अलग हो जाएंगी, जबकि वास्तव में ऐसा नहीं है। बाद में विभिन्न राज्यों में महिला-पंचायतों का गठन हुआ और इसके उपरान्त भी वे न केवल मुख्यधारा में बनी रहीं अपितु उन्होंने तो वह कार्य कर दिखाया जो पुरुषों से संभव नहीं हुआ। किन्तु यह सब पुरुष मानसिकता का ही परिणाम है क्योंकि वे नहीं चाहते थे कि महिलाएं भी उनके साथ कदम से कदम मिलाकर चलें। वस्तुतः महिलाओं की भागीदारी में कोई विशेष वृद्धि नहीं हुई।[7]

1959 में बलवंत राय मेहता समिति की अनुशंसाओं को ध्यान में रखकर आंध्रप्रदेश में पंचायत समितियों और जिला परिषद कानून तथा आंध्रप्रदेश ग्राम पंचायत कानून के द्वारा नई पंचायती राज प्रणाली की नींव रखी गई, इसमें पंचायतों के तीनों स्तरों पर दो-दो महिलाओं को सदस्य बनाए जाने का प्रावधान था। शिक्षा और समाज कल्याण से संबंधित कार्यों की स्थायी समितियों में अनुसूचित जाति से कम से कम एक महिला प्रतिनिधि को चुने जाने का भी प्रावधान था। इस व्यवस्था से महिलाओं को कोई वास्तविक राजनीतिक आधार प्राप्त नहीं हुआ क्योंकि न तो महिलाएं ही पंचायतों में भाग लेने में रुचि रखती थीं और न पुरुष ही चाहते थे कि उनकी भागीदारी बढ़े।[8]

1986 में पंचायतीराज अधिनियम में संशोधन किया गया जो 15 जनवरी, 1987 को लागू हुआ। इस अधिनियम में महिलाओं के लिए यह प्रावधान था-जिले में अध्यक्ष पद के लिए कुछ प्रतिशत जिला कलेक्टर एक क्रम से घूर्णन प्रणाली से (बारी-बारी) निर्धारित नियमों के अनुसार महिलाओं के लिए स्थान आरक्षित रखेगा, जहां मंडल की कुल जनसंख्या की तुलना में महिलाओं का अनुपात सबसे अधिक होगा, अध्यक्ष पद महिलाओं के लिए ही आरक्षित रखा जाएगा। ग्राम पंचायतों में महिलाओं की भागीदारी 2 से 4 तक थी जो कुल स्थानों का लगभग 22 से 25 प्रतिशत था। मंडल प्रजापरिषदों और जिला प्रजापरिषदों के सदस्यों के लिए महिलाओं की भागीदारी 9 प्रतिशत थी तब जिला परिषदों के अध्यक्षों के लिए भी 9 प्रतिशत आरक्षण का प्रावधान था।

इस प्रकार नया अधिनियम लागू होने के पश्चात् 1987 के चुनावों में महिला ग्राम पंचायत सदस्यों की संख्या 44,127 थीं जो कुल सदस्यों की संख्या का 27 प्रतिशत थी।[9] 1995 से पूर्व में भारत के प्रमुख राज्यों में पंचायत स्तर पर महिला प्रतिनिधित्व निम्नानुसार रहा[10] –

विभिन्न राज्यों में पंचायतों में निर्वाचित महिला सदस्यों की संख्या तथा कुल सदस्यों में प्रतिशत

राज्य/ केन्द्र शासित प्रदेश	ग्राम पंचायत		ब्लॉक स्तरीय पंचायत		जिला स्तरीय पंचायत	
	महिला सदस्य	महिला सदस्यों का कुल प्रतिशत	कुल महिला सदस्य	महिलाओं का कुल सदस्यों में प्रतिशत	कुल महिला सदस्य	महिलाओं का कुल सदस्यों में प्रतिशत
आन्ध्र प्रदेश	78000	33.84	5420	37.01	363	33.21
असम	7458	30.0	745	29.07	-	-
गोवा	468	36.53	-	-	-	-
गुजरात	41180	33.35	1274	33.40	254	33.38
हरियाणा	17928	33.10	807	33.37	101	33.33

हिमाचल प्रदेश	6013	32.93	558	33.59	84	33.33
कर्नाटक	35305	43.79	1343	40.21	335	36.45
केरल	3883	37.81	563	36.39	104	34.67
मध्यप्रदेश	156181	32.93	3169	34.84	319	33.72
महाराष्ट्र	100182	33.00	1174	33.31	587	33.31
मणिपुर	576	37.00	-	-	22	36.07
उड़ीसा	28595	35.27	1870	35.35	294	34.43
पंजाब	23892	30.25	326	13.36	89	32.48
राजस्थान	98791	32.48	1740	33.10	331	32.20
सिक्किम	27	1.48	-	-	1	0.69
तमिलनाडु	31548	33.45	2295	35.31	225	34.72
त्रिपुरा	1809	33.33	67	34.18	24	34.39
उत्तरप्रदेश	174410	35.55	14002	34.07	648	35.40
पश्चिम बंगाल	22014	35.41	3202	33.65	227	34.19
अंडमान निकोबार	229	34.33	-	-	10	33.33
चंडीगढ़	22	20.18	25	33.33	3	30.00
दादर नागर हवेली	46	34.07	-	-	4	25.00
दमन व दीव	25	39.68	-	-	5	33.33

73वें संविधान संशोधन की धारा 243-घ के अनुसार प्रत्येक पंचायत में प्रत्यक्ष निर्वाचन द्वारा भरे जाने वाले स्थानों की कुल संख्या के एक-तिहाई अन्य पद महिलाओं के लिए हैं। ऐसे स्थान किसी पंचायत में भिन्न-भिन्न निर्वाचन क्षेत्रों को चक्रानुक्रम से आवंटित किए जाएंगे। अनुसूचित जाति व जनजाति के लिए उनकी जनसंख्या के अनुपात में कुल आरक्षित पदों में से एक-तिहाई से अधिक पद इन जातियों की महिलाओं के लिए आरक्षित होंगे। पिछड़ी जाति की महिलाओं के लिए भी आरक्षण का प्रावधान अधिनियम में है किन्तु वह अनिवार्य नहीं है। यदि राज्य विधानमंडल चाहे तो इस वर्ग की महिलाओं के लिए भी पद आरक्षित कर सकता है। इसके अतिरिक्त धारा 243-घ की उपधारा 4 के अनुसार, पंचायतों के तीनों स्तरों अर्थात् ग्राम पंचायत, पंचायत समिति एवं जिला पंचायत के स्तर पर कुल अध्यक्षों में से एक-तिहाई पद महिलाओं के लिए आरक्षित है। सदस्यों की भांति अध्यक्ष पद के लिए भी महिलाओं के लिए आरक्षित कुल पदों में से एक-तिहाई सीटें अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति की महिलाओं के लिए आरक्षित हैं।

73वें संविधान संशोधन ने पंचायतों को स्वायत्त संस्थाओं का स्तर दिया। आर्थिक विकास व सामाजिक न्याय की योजनाएं बनाने का दायित्व, जिसमें संविधान की 11 वीं अनुसूची में सूचीबद्ध 29 विषय भी सम्मिलित हैं, पंचायतों को सौंपा गया है। इस प्रकार महिलाएं अपने क्षेत्रों के आर्थिक विकास व सामाजिक न्याय की योजनाएं बना सकेंगी। यहां यह उल्लेख करना उचित है कि वैसे तो महिलाएं संपूर्ण ग्राम पंचायत व जिला पंचायत स्तर की योजनाएं बनाएंगी किन्तु अनुसूची-2 में जो 29 विषय हैं, उनमें स्त्री एवं बाल-कल्याण, स्वास्थ्य व स्वच्छता-अस्पताल, प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र तथा औषधालय-परिवार कल्याण, समाज कल्याण, शिक्षा आदि ऐसे विषय हैं जो प्रत्यक्ष रुप से महिलाओं से संबंधित हैं।

73वें संविधान संशोधन के बाद महिलाओं की सहभागिता–

73वां संविधान संशोधन विधेयक 24 अप्रैल, 1993 को लागू हुआ। इसमें यह प्रावधान था कि राज्य केन्द्रीय अधिनियम को ध्यान में रखकर अपने पंचायती राज

अधिनियम को एक वर्ष के दौरान या तो संशोधित कर लेंगे या नया अधिनियम बना लेंगे। चूंकि यह अनिवार्य प्रावधान था इसलिए सभी राज्यों ने समय सीमा की अवधि में अपने अधिनियमों में तो संशोधन कर लिए, किन्तु पंचायतों के चुनाव कराने में सभी ने रुचि प्रकट नहीं की। अधिकांश राज्यों में पंचायतों के चुनाव 1995 व 1996 में ही संपन्न हो गए। केन्द्र सरकार की चेतावनी के पश्चात् ही ये चुनाव संभव हो सके। केन्द्र ने चेतावनी दी थी कि यदि शीघ्र चुनाव न कराए गए तो केन्द्रीय सहायता बंद करके धारा-356 लागू कर दी जाएगी क्योंकि निर्धारित समय में चुनाव न कराना संविधान की अवहेलना होगी। अतः अब हम देखते हैं कि चुनावों के पश्चात् महिलाओं की कितनी संख्या विभिन्न राज्यों में चुने गए प्रतिनिधियों के रूप में आई है।[11]

पंचायती राज में महिलाओं की भागीदारी : एक सर्वेक्षण-

महिला ग्रामीण विकास के लिए यह आवश्यक है कि निर्णय लेने की प्रक्रिया में उनकी पंचायतों में सक्रिय भागीदारी हो। राज्यों ने अपने पंचायती राज अधिनियमों में महिलाओं के लिए पंचायतों के सभी स्तरों पर सदस्य व अध्यक्ष के एक-तिहाई पद आरक्षित किए हैं। चुनाव के पश्चात् जो स्थिति स्पष्ट हुई है, वह इस प्रकार है, आंध्रप्रदेश में महिला सदस्यों का प्रतिनिधित्व ग्राम पंचायत स्तर पर 33.84 प्रतिशत, पंचायत समिति स्तर पर 37.01 प्रतिशत व जिला स्तर पर 33.21 प्रतिशत है। असम में ग्राम पंचायत व पंचायत समिति स्तर पर यह प्रतिनिधत्व क्रमशः 30 व 29, 27 प्रतिशत है। गोवा में ग्राम पंचायत स्तर पर 36.53 प्रतिशत प्रतिनिधित्व है।

गुजरात में महिला सदस्यों का प्रतिशत ग्राम पंचायत स्तर पर 33.35 पंचायत समिति स्तर पर 33.40 तथा जिला परिषद स्तर पर 33.38 प्रतिशत है। हरियाणा में लगभग यही स्थिति है क्योंकि यहां पर भी पंचायतों के तीनों स्तरों पर महिला सदस्यों का न्यूनतम प्रतिशत 33 प्रतिशत ही है। हिमाचल प्रदेश में ग्राम पंचायत स्तर पर प्रतिनिधित्व 32.93 प्रतिशत है। पंचायत समिति स्तर पर 33.59 प्रतिशत व जिला पंचायत स्तर पर 33.33 प्रतिशत है। कर्नाटक में महिलाओं की स्थिति मजबूत है क्योंकि यहां पर ग्राम स्तर पर महिलाओं की भागीदारी 43.79 प्रतिशत, तालुका स्तर पर 40.21 प्रतिशत तथा जिला स्तर पर 36.65 प्रतिशत है। यहां पर भागीदारी का अनुपात जिला स्तर से नीचे बढ़ता गया है। कर्नाटक में महिलाओं की भागीदारी की स्थिति सुदृढ़ होने का महत्वपूर्ण कारण यह है कि वहां पर 1987 से पंचायतों में महिला आरक्षण रहा है। केरल में महिलाओं की भागीदारी ग्राम स्तर पर 37.21 प्रतिशत, ब्लॉक पंचायत स्तर पर 36.39 प्रतिशत व जिला स्तर पर 34.67 प्रतिशत है। यहां पर भी कर्नाटक की तरह महिलाओं की भागीदारी जिला स्तर से नीचे बढ़ती गई है।

मध्यप्रदेश में महिलाओं की ग्राम स्तर पर भागीदारी 32.93 प्रतिशत, जनपद पंचायत में 34.84 प्रतिशत व जिला स्तर पर 33.31 प्रतिशत है। महाराष्ट्र में महिलाओं की भागीदारी ग्राम पंचायत, पंचायत समिति व जिला स्तर पर क्रमशः 33 प्रतिशत, 33.31 प्रतिशत है। मणिपुर में स्थिति मजबूत है क्योंकि यहां पर ग्राम स्तर पर 37.02 प्रतिशत व जिला स्तर पर 36.07 प्रतिशत महिलाओं की भागीदारी है। उड़ीसा में तीनों स्तरों पर भागीदारी न्यूनतम स्तर से अधिक है। पंजाब में महिलाओं का प्रतिनिधित्व कम है क्योंकि यहां पर चुनाव 73वें संविधान संशोधन से पहले संपन्न हुए थे। राजस्थान में ग्राम पंचायत

स्तर पर महिलाओं की भागीदारी 32.48 प्रतिशत पंचायत समिति स्तर पर 33.10 प्रतिशत व जिला परिषद स्तर पर 33.20 प्रतिशत है।

सिक्किम में चूंकि पंचायतों के चुनाव 73वें संविधन संशोधन के लागू होने से पहले हुए थे इसलिए यहां पर भागीदारी बहुत कम है। तमिलनाडु में भागीदारी तीनों स्तरों पर न्यूनतम से अधिक है किन्तु अधिक भागीदारी मध्य स्तर पर है।

त्रिपुरा में ग्राम स्तर पर 33.3 प्रतिशत, पंचायत समिति स्तर पर 34.18 प्रतिशत व जिला स्तर पर 34.39 प्रतिशत महिलाओं की भागीदारी उत्तर प्रदेश में ग्राम स्तर पर है 35. 55 प्रतिशत क्षेत्र पंचायत समिति स्तर पर 34.07 प्रतिशत एवं जिला पंचायत स्तर पर 25. 40 प्रतिशत महिला नेतृत्व है। पश्चिम बंगाल में ग्राम पंचायत स्तर पर महिलाओं की भागीदारी 35.4 प्रतिशत, पंचायत समिति स्तर पर 33.65 प्रतिशत व जिला पंचायत स्तर पर 34.19 प्रतिशत है। पश्चिम बंगाल के बारे में यह स्पष्ट करना आवश्यक है कि यहां पर चुनाव 73वें संविधान संशोधन अधिनियम के लागू होने से पहले ही हो गए थे। अधिनियम में प्रावधान था कि जिन राज्यों में अभी हाल ही में चुनाव हुए हैं, वहां पर पंचायतें अपना कार्यकाल पूरा कर सकती हैं। इसी का लाभ पश्चिम बंगाल ने लिया है। किन्तु यहां पर महिलाओं के 33 प्रतिशत के स्थान पर 30 प्रतिशत स्थान आरक्षित किए गए हैं। फिर भी यहां पर महिलाओं की भागीदारी न्यूनतम से लगभग 5 प्रतिशत अधिक है। उपर्युक्त अध्ययन से स्पष्ट है कि कर्नाटक में महिलाओं की भागीदारी सबसे अधिक रही है। इसका कारण यह है कि यहां पर 1983-92 के समय महिलाओं का 25 प्रतिशत आरक्षण था। उसी का ही परिणाम है कि जब यहां 1993 व 1995 में पंचायतों के चुनाव हुए तो महिलाएं न्यूनतम से अधिक चुन कर आईं।

केरल में महिलाओं की भागीदारी न्यूनतम से अधिक होने का कारण है साक्षरता व विभिन्न स्वयंसेवी संस्थाओं द्वारा महिलाओं में जागृति लाने के प्रयास। पश्चिम बंगाल में चूंकि लगातार 1977 के बाद पंचायतों के चुनाव होते आ रहे हैं, इसलिए यहां पर महिलाओं में जागरूकता है।

पंचायती राज व्यवस्था में अध्यक्ष स्तर पर महिलाओं की भागीदारी-

पंचायतों के तीनों स्तरों पर महिलाओं के लिए अध्यक्ष पद एक-तिहाई आरक्षित है। हरियाणा में जिला स्तर पर महिलाओं की भागीदारी न्यूनतम सीमा से कम है जो संविधान के प्रावधान के अनुरूप नहीं है। कर्नाटक में भागीदारी का स्तर निम्न स्तरों पर न्यूनतम से थोड़ा अधिक है। केरल के बारे में स्पष्ट में विवरण नहीं है किन्तु यहां पर भी कर्नाटक की तरह महिलाओं की भागीदारी न्यूनतम स्तर से अधिक है मध्यप्रदेश में भागीदारी ग्राम स्तर व जिला स्तर पर न्यूनतम से अधिक है। किन्तु मध्य स्तर में न्यूनतम स्तर पर है। मणिपुर में ग्राम स्तर पर तो न्यूनतम के बराबर है किन्तु जिला स्तर पर 50 प्रतिशत है जो सराहनीय है। पंजाब में भागीदारी ग्राम पंचायत स्तर पर मात्र 1.36 प्रतिशत, पंचायत समिति स्तर पर 34.6 प्रतिशत एवं जिला परिषद स्तर पर 35.70 प्रतिशत है। यहां पर ग्राम पंचायत में महिलाओं की भागीदारी कम होने का कारण है ग्राम पंचायतों के चुनावों का 73वें संविधान संशोधन के प्रावधान के अनुसार न होकर राज्य में प्रचलित पंचायती राज अधिनियम के अनुसार संपन्न होना, जिसमें महिलाओं के आरक्षण का प्रावधान नहीं था। पश्चिम बंगाल में महिलाओं की भागीदारी ग्राम स्तर पर 4.62 प्रतिशत, पंचायत स्तर पर

3 प्रतिशत एवं जिला स्तर पर शून्य थी। इसका कारण यह है कि यहां पर पंचायतों के चुनाव 73वें संविधान संशोधन से पूर्व प्रावधानों के अनुसार सम्पन्न हुए थे। दूसरे राज्यों में पंचायतों में सदस्यों के लिए 30 प्रतिशत आरक्षण किया था किन्तु अध्यक्ष स्तर पर कोई आरक्षण नहीं था। यहां पर निम्न स्तर पर व मध्य स्तर पर जो महिलाएं अध्यक्ष के रूप में चुनकर आईं, वे अपने स्वयं के प्रयासों से आई हैं। राज्य में आने वाले चुनाव में महिलाओं की एक-तिहाई भागीदारी सुनिश्चित होगी। केन्द्र शासित प्रदेश दादर व नगर हवेली में ग्राम स्तर पर भागीदारी 36.36 प्रतिशत है तथा जिला स्तर पर 100 प्रतिशत। इसी प्रकार दमन व दीव में ग्राम स्तर पर भागीदारी 60 प्रतिशत है जो कि सराहनीय है।

यह बहुत प्रसन्नता की स्थिति है कि त्रिपुरा में एक, पश्चिम बंगाल में एक, मध्यप्रदेश में 7 एवं महाराष्ट्र में 13 पंचायतें ऐसी हैं जहां सदस्य व अध्यक्ष सभी महिलाएं हैं। यह किसी अधिनियम या सरकारी प्रयास के द्वारा न होकर स्वयं महिलाओं के प्रयास व पहल से सम्भव हुआ है। चूंकि अब राज्य सरकारें पंचायतों के चुनाव अपनी मनमानी से नहीं कर सकतीं क्योंकि अब संविधान के अनुसार हर पांच वर्ष के बाद चुनाव अवश्य होंगे, आशा की जाती है कि आने वाले समय में वर्तमान से कहीं अधिक महिला पंचायतें अस्तित्व में आएंगी।

भारत के विभिन्न राज्यों एवं केन्द्रशासित प्रदेशों में 73वें संविधान संशोधन के पश्चात् हुए पंचायत संस्थाओं के चुनावों में चुने गये अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति एवं महिला सदस्यों की संख्या[17]

क्रं सं.	राज्य/ केन्द्रशासित प्रदेश	चुने गए ग्राम पंचायत सदस्य			कुल	चुने हुए पंचायत समिति सदस्य			कुल	चुने हुए जिला परिषद् सदस्य			कुल
		S.C.	S.T.	महिला		S.C.	S.T.	महिला		S.C	S.T.	महिला	
1.	आन्ध्रप्रदेश	38674	15304	78000	230529	789	803	5420	14644	128	66	363	1093
2.	अरुणाचल प्रदेश	–	5733	86	5733	–	1205	39	1205	–	77	–	77
3.	असम	–	–	5469	30360	–	–	669	2564	–	–	–	845
4.	बिहार	–	–	–	165452	–	–	–	15344	–	–	–	1585
5.	गोवा	–	–	468	1281	–	–	–	–	–	–	–	35
6.	गुजरात	4639	9550	21351	123470	279	561	1275	3814	57	114	254	761
7.	हरियाणा	1191	–	17928	60117	–	–	807	2528	–	–	101	319
8.	हिमाचल प्रदेश	3824	672	1877	18625	280	74	180	1661	46	14	27	252
9.	जम्मू कश्मीर	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–
10.	कर्नाटक	10318	1585	35305	80627	601	169	1343	3340	165	47	33	919
11.	केरल	–	–	–	10270	–	–	–	1547	–	–	–	300
12.	मध्यप्रदेश	64997	132638	156181	474351	1345	2780	3169	9097	143	267	31	1036
13.	महाराष्ट्र	–	–	–	276190	478	396	1435	3524	193	160	579	17662
14.	मणिपुर	–	–	–	3714	–	–	–	–	–	–	–	57
15.	मेघालय	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–
16.	मिजोरम	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–'
17.	नागालैण्ड	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–
18.	उड़ीसा	7394	11823	27036	81077	478	809	1754	5260	85	131	284	854
19.	पंजाब	20727	–	23990	78983	338	–	326	2441	84	–	89	274
20.	राजस्थान	17902	15616	33566	112897	943	804	1740	5494	177	154	33	1028
21.	सिक्किम	11	277	27	1827	–	–	–	–	–	57	1	145
22.	तमिलनाडु	18886	686	31548	125852	1358	41	2295	6499	137	3	22	648
23.	त्रिपुरा	718	415	1805	6477	48	26	67	228	5	7	24	76
24.	उत्तरप्रदेश	101939	867	120591	7997810	9126	135	13865	5991	389	7	634	2687

25.	पश्चिम बंगाल	16966	4114	21742	62139	2734	676	3202	9516	184	47	22	664
26.	अण्डमान निकोबार	–	–	229	667	–	–	25	–	–	–	10	30
27.	चंडीगढ़	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–
28.	दादर व नागर हवेली	3	103	46	135	–	–	–	–	–	11	4	16
29.	दमण–दीव	1	18	25	63	–	–	–	–	1	3	5	15
30.	दिल्ली	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–
31.	लक्षद्वीप	–	–	–	129	–	–	–	–	–	–	–	15
32.	पॉण्डिचेरी	–	–	–	120	–	–	–	–	–	–	–	16
	कुल	**308290**	**199401**	**2750865**	**2750865**	**18797**	**8479**	**37611**	**148697**	**1794**	**1165**	**2516**	**15509**

भारत में सर्वाधिक ग्राम पंचायतें उत्तरप्रदेश में हैं जिनकी संख्या 174410 है। दूसरे स्थान पर मध्यप्रदेश है जहां पर 156181 ग्राम पंचायतें है। तीसरे स्थान पर महाराष्ट्र है वहां पर कुल ग्राम पंचायतें 100182 हैं। राजस्थान में 98791 ग्राम पंचायतें हैं इसके पश्चात् 78000 ग्राम पंचायतें आंध्रप्रदेश में हैं। सबसे कम ग्राम पंचायत चंडीगढ़ में है जिनकी संख्या केवल 22 है।

ब्लॉक स्तर पर महिला प्रतिनिधियों की संख्या सर्वाधिक उत्तरप्रदेश में कुल 14002 है। इसके पश्चात् आन्ध्रप्रदेश में 5420 महिलाएं ब्लॉक स्तर पर चुनी गई हैं। मध्यप्रदेश में 3169 महिलाएं मध्य स्तर पर निर्वाचित हुई हैं। पश्चिम बंगाल में 3202 महिलाएं ब्लॉक स्तर पर प्रतिनिधित्व कर रही हैं। राजस्थान में 1740 महिलाओं को प्रतिनिधित्व का अवसर मिला है। सबसे कम महिलाएं ब्लॉक स्तर पर चंडीगढ़ केन्द्रशासित प्रदेश में है। जिला स्तर पर महिलाओं की सर्वाधिक प्रतिनिधित्व की संख्या 648 उत्तरप्रदेश में है। इसके पश्चात् 587 महिलाएं महाराष्ट्र जिला स्तर पर चुनी गई है। आन्ध्रप्रदेश में 363 महिलाओं को यह अवसर मिला है। मध्यप्रदेश में 319 महिलाएं प्रतिनिधित्व कर रही हैं। राजस्थान में 331 महिलाओं को जिला स्तर पर कार्य करने का जनता द्वारा अवसर प्रदान किया गया है। सबसे कम एक महिला सिक्किम में जिला स्तर पर निर्वाचित हुई है।

राजस्थान में पंचायतराज में महिला प्रतिनिधित्व–

राजस्थान में पंचायतीराज आम चुनाव 1960 में पहली बार सम्पन्न कराए गये क्योंकि सन् 1959 में राज्य सरकार ने पंचायत समिति एवं जिला परिषद अधिनियम बनाया था। उसकी पालना में सरकार ने पंचायत चुनाव करवाने का निश्चय किया था। अभी तक राजस्थान में पंचायती राज चुनाव सम्पन्न हुए हैं, उनका विवरण निम्न तालिका से दर्शाया जा रहा है–

क्र.स.	**वर्ष**	**पंचायत आम चुनाव**
1	1960	पहला
2	1965	दूसरा
3	1978	तीसरा
4	1981	चौथा
5	1988	पांचवां
6	1995	छठा
7	2000	सातवां
8	2005	आठवां
9	2010	नवां

राजस्थान में स्वतंत्रता के पश्चात् पंचायती राज में महिलाओं की सहभागिता राजस्थान पंचायती राज अधिनियम, 1953 एवं राजस्थान पंचायत समिति एवं जिला परिषद अधिनियम, 1959 के अनुसार नगण्य रही है। कहने का तात्पर्य है कि उक्त दोनों अधिनियमों में ग्राम पंचायत, पंचायत समिति एवं जिला परिषद स्तर पर महिलाओं को सहवरण/मनोनीत करने की व्यवस्था थी। कुल मिलाकर तीनों स्तरों पर एक अथवा दो महिलाओं को मनोनीत का प्रावधान था जो यह सिद्ध करता है कि राजस्थान में 73वें संविधान संशोधन से पूर्व पंचायत राज में महिलाओं का प्रतिनिधित्व नाममात्र का था। इस आधार पर सहज ही यह अनुमान लगाया जा सकता है कि राजस्थान में इस अवधि में महिला प्रतिनिधित्व कम होने के कारण पंचायत राज में महिलाओं का विकास संभव नहीं हो पा रहा था। अतः 73वें संविधान संशोधन के अनुसार राजस्थान में भी 1995 पंचायत राज के चुनाव सम्पन्न कराए गए जो तब से लेकर वर्तमान तक निरन्तर निश्चित समयावधि में सम्पन्न कराए जा रहे हैं। राजस्थान में भी पंचायत राज में महिलाओं को 33 प्रतिशत आरक्षण का प्रावधान किया गया है। अब तक 1995 से लेकर 2010 तक चार पंचायत आम चुनाव सम्पन्न कराए जा चुके हैं, इनके अनुसार महिलाओं के प्रतिनिधित्व को निम्न तालिका में स्पष्ट किया जा रहा है-

राजस्थान में जनवरी 1995 में सम्पन्न हुए पंचायत चुनाव में जन प्रतिनिधित्व का विवरण[18]

क्र. सं.	नाम पद	कुल पद	अनुसूचित जाति	अनुसूचित जनजाति	पिछड़ा वर्ग	महिला
1.	जिला प्रमुख	31	6	5	5	10
2.	जिला परिषद् सदस्य	997	177	154	119	331
3.	प्रधान पंचायत समिति	237	41	36	35	80
4.	पंचायत समिति सदस्य	5257	943	804	625	1740
5.	सरपंच	9185	1643	1477	1060	3064
6.	वार्ड पंच	103712	17902	15616	13137	33566
7.	**कुल योग**	**119419**	**20712**	**18092**	**14185**	**38791**

सन् 1995 में सम्पन्न पंचायत चुनावों में कुल 119419 पदों में से महिलाओं को 38791 पदों पर प्रतिनिधित्व का अवसर मिला जो कि 32.48 प्रतिशत रहा। यह प्रतिनिधित्व निर्धारित 33 प्रतिशत से भी कम रहा है। राज्य में कुल 31 जिला प्रमुख के पदों में से दस पदों पर महिला जिला प्रमुख निर्वाचित हुई। जिला परिषद के कुल 997 पदों में से 331 पदों पर महिलाओं ने कब्जा किया। पंचायत समिति के 237 प्रधान के पदों में से 80 पदों पर महिलाओं ने बाजी मारी। पंचायत समिति के 5257 पदों में से 1740 महिला सदस्य चुनी गई। राज्य में कुल 9185 सरपंच के पदों में से 3064 महिला सरपंच निर्वाचित हुई। राज्य में कुल 103712 वार्ड पंचों में से महिलाओं ने 33566 वार्डों में अपने प्रतिनिधित्व का झंडा फहराया। कुल मिलाकर 119419 पंचायत राज के पदों में से महिलाओं ने 38791 स्थानों को प्राप्त किया जिससे महिला वर्ग को पहली बार ग्रामीण राजनीति में

प्रतिनिधित्व का अवसर प्राप्त हुआ है। राज्य में प्रथम बार विशाल संख्या में महिलाओं ने प्रतिनिधित्व का अवसर प्राप्त किया। यह महिला राजनीतिक भागीदारी के क्रम में बहुत ही बड़ी उपलब्धि कही जा सकती है।

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि पंचायती राज योजना से संबंधित मेहता समिति ने अपना प्रतिवेदन नवम्बर 1957 में प्रस्तुत किया। इस समिति ने महिलाओं व बच्चों से संबंधित कार्यक्रमों के क्रियान्वयन के लिए जिला परिषद में दो महिलाओं के समावेश की अनुशंसा की थी। ''भारत में महिलाओं की स्थिति'' विषय पर अध्ययन करने के लिए गठित समिति ने 1974 में अनुशंसा की थी कि ऐसी पंचायतें बनाई जाएं, जिसमें केवल महिलाएं ही हो। 1978 में अशोक मेहता की अध्यक्षता में गठित समिति द्वारा अनुशंसा की गई कि जिन दो महिलाओं को सर्वाधिक मत प्राप्त हो, उन्हें जिला परिषद का सदस्य बनाया जाए। कर्नाटक पंचायत अधिनियम में महिलाओं के लिए 25 प्रतिशत आरक्षण का प्रावधान किया गया था। वैसी ही हिमाचल प्रदेश के पंचायत अधिनियम में व्यवस्था थी। ''नेशनल पर्सपेक्टिव प्लान फॉर द विमेन 1988'' ने ग्राम पंचायत से लेकर जिला परिषद तक 30 प्रतिशत सीटों के आरक्षण की अनुशंसा की। मध्यप्रदेश में 1990 पंचायत अधिनियम में ग्राम पंचायत में महिलाओं के लिए 20 प्रतिशत जनपद व जिला पंचायत में 10 प्रतिशत का प्रावधान था। महाराष्ट्र पंचायत अधिनियम में 30 प्रतिशत एवं उड़ीसा पंचायत अधिनियम में 1/3 आरक्षण का प्रावधान 73वें संविधान संशोधन से पूर्व ही था। पंचायती राज संस्थाओं को सकारात्मक संवैधानिक स्तर प्रदान करने के उद्देश्य से 1989 में 64वां संविधान संशोधन विधेयक संसद के सम्मुख प्रस्तुत किया गया, किन्तु राजनीतिक कारणों से यह संशोधन विधेयक पारित ही नहीं हो सका। लगभग चार दशक पूर्व स्थापित पंचायती राज व्यवस्था डगमगाने लगी तो इसी संशोधन ने उसे पुनः संबल प्रदान किया। पी. वी. नरसिम्हा राव सरकार ने राजीव गांधी सरकार द्वारा तैयार पंचायती राज संस्थाओं से संबधित विधेयक को संशोधित कर दिसंबर 1992 में 73वां संविधान संशोधन विधेयक संसद से पारित करवाया। यह 73वां संविधान संशोधन 24 अप्रैल, 1993 से लागू किया गया था। इस संशोधन के द्वारा संविधान में एक नया भाग अध्याय 9 जोड़ा गया है। अध्याय 9 द्वारा संविधान में 16 अनुच्छेद और एक ग्यारहवीं अनुसूची संलग्न की गयी है जिसका शीर्षक 'पंचायत' है। 73वें संविधान संशोधन अधिनियम 1992 ने पंचायती राज व्यवस्था को न केवल नई दिशा प्रदान की अपितु महिलाओं को पंचायतों में 33 प्रतिशत आरक्षण प्रदान कर उनकी सहभागिता बढ़ाने का सुअवसर प्रदान किया है। सर्वविदित है कि संसद ने पंचायती राज व्यवस्था में महिलाओं के लिए 50 प्रतिशत आरक्षण देने के लिए हरी झंडी दे दी है। इतना ही नहीं, कतिपय राज्यों जैसे मध्यप्रदेश, छत्तीसगढ़, बिहार आदि ने आगामी चुनाव में महिलाओं के लिए 50 प्रतिशत आरक्षण की व्यवस्था भी कर दी। इस व्यवस्था को सुनते ही पुरुषों के पांवतले की जमीन ही खिसक गई है कि अब महिलाओं की पंचायती राज में 50 से 70 प्रतिशत तक सहभागिता होने से उनकी सत्ता व अधिकार क्षेत्र में हस्तक्षेप व कब्जा होने की संभावनाएं भी हैं, क्योंकि महिलाएं पंचायत में चुनकर भी आई हैं और आएंगी भी। परंतु देखा जा रहा है कि उन्हें अविश्वास प्रस्ताव, भ्रष्टाचार आदि के आरोपों के माध्यम से पदों से बाहर किया जा रहा है तथा साथ ही साथ सरकार की जांच उपर्युक्त तालिकाओं के माध्यम से पंचायती राज संस्थाओं में महिलाओं की स्थिति

को देखा और आंका जा सकता है, जिसके कारण से महिलाओं में सामाजिक एवं आर्थिक एवं राजनैतिक विकास एवं परिवर्तन हुआ है।

विगत पंचायतीराज आम चुनाव 2000 एवं 2005 की तुलना में 2010 के चुनाव में महिलाओं के प्रतिनिधित्व में वृद्धि के स्थान पर गिरावट अनुभव की गई, यह अत्यंत विचारणीय बिन्दु है। जहां एक ओर सरकार महिलाओं के राजनीतिक सशक्तीकरण हेतु प्रयत्नशील है वहीं इस उद्देश्य के सार्थक परिणाम प्राप्त नहीं हो रहे हैं। राजस्थान में अभी तक चारों आम चुनावों में 184147 महिलाओं ने वार्ड से लेकर जिला प्रमुख तक अपने नेतृत्व की क्षमता प्राप्त की है जो एक क्रांतिकारी कदम कहा जा सकता है।

===============

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची-

1. शर्मा कविता : 'स्त्री सशक्तीकरण के आयाम', रजत प्रकाशन, नई दिल्ली, सं-2012, पृ.स. 121
2. सुराणा राजकुमारी : 'भारत में लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण और नव पंचायती राज', पब्लिशिंग हाउस, जयपुर-2000, पृ.स. 127
3. शर्मा कविता : पूर्वोक्त, पृ.स. 122
4. उपर्युक्त, पृ.स. 123
5. सिसोदिया यतिन्द्र सिंह : 'पंचायत राज एवं अनुसूचित जाति महिला नेतृत्व', रावत पब्लिकेशन, जयपुर-2000, पृ.स. 54
6. उपर्युक्त, पृ.स. 126
7. उपर्युक्त, पृ.स. 127
8. कलेर नलिनी : 'सामाजिक विकास और प्रगतिशील महिलाएं', श्रुति पब्लिकेशन, जयपुर-2012, पृ.स. 44
9. उपर्युक्त, पृ.सं. 45
10. पडलिया मुन्नी (संपा) : 'भारत में पंचायती राज व्यवस्था', अनामिका पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स प्रा.लि. दरियागंज, नई दिल्ली-2009, पृ.सं. 161
11. कलेर नलिनी : पूर्वोक्त, पृ.सं. 46

Research Journal of Arts, Management and Social Sciences,
Vol. XVIII, Hindi.-I, Year IX, March, 2018
UGC Sl. No. 2138, Journal No.48774, Impact Factor 2.996

भारत में केन्द्र राज्य सम्बन्ध

* सन्ध्या शुक्ला

==

सारांश- *भारत में केन्द्र-राज्य सम्बन्ध संघवाद की ओर उन्मुख है और संघवाद की इस प्रणाली को कनाडा के संविधान से लिया गया है। संघवाद एक अति आधुनिक प्रणाली है। आधुनिक राज्य में इसके सिद्धान्त एवं व्यवहार का प्रचलन अमेरिका के संयुक्त राज्य की स्थापना से आरम्भ हुआ है। हरमन फाइनर के अनुसार संघवाद वह है जिसमें राज्य की शक्ति और अधिकार तो प्रादेशिक क्षेत्रों की सरकारों के पास रहते हैं और अन्य शक्तियाँ एवं अधिकार एक केन्द्रीय संस्था एवं सरकार के पास ही रहते हैं। राज्यों को पूर्ववत स्वाधीन होना चाहिए और उन्हें संघ का निर्माण स्वेच्छा से ही करना चाहिए।*

==

मुख्य शब्द– केन्द्र, राज्य, संघवाद, स्वेच्छा, प्रभुता।

इस प्रकार जब दो या दो से अधिक स्वधीन राज्य सम्मिलित होकर एक ऐसी नई राज्य व्यवस्था स्थापित करते हैं जिसमें कुछ सार्वजनिक हितों की रक्षा के लिए स्पष्टत: उल्लिखित शक्तियाँ एक नवीन केन्द्रीय सरकार को सौंपकर शेष शक्तियाँ वे अपने पास सुरक्षित रखते हैं तब वे एक संघीय शासन की स्थापना करते हैं। संघवाद के सिद्धान्तों के अनुसार संघ और राज्य दो संस्थाएँ बन जाती हैं। संघ में सम्मिलित होने वाली इकाईयों की स्वभावत: कम हो जाती है क्योंकि वे स्वेच्छा से अपनी कुछ महत्वपूर्ण शक्तियाँ केन्द्र को सौंप देती है। अत: वे पूर्ण सम्प्रभु न होकर गौण सम्प्रभु हो जाती है।

भारत के संविधान निर्माता बहुत बुद्धिमान थे। वे जानते थे कि भारत जैसे विशाल क्षेत्र वाले देश के लिए संघात्मक शासन प्रणाली द्वारा ही शासन हो सकता है, वे यह भी जानते थे कि यदि भारत में केन्द्रीय सरकार को बहुत अधिक शक्तिशाली नहीं बनाया गया तो भारत की एकता और अखण्डता को खतरा उत्पन्न हो जायेगा अत: उन्होंने केन्द्र को बहुत अधिक शक्तिशाली बनाया और संघात्मक शासन की व्यवस्था भी की।

संघीय संविधान राष्ट्रीय प्रभुता तथा राज्य प्रभुता के दावों के बीच जो कि अपनी दृष्टि से विरोधी जान पड़ती है, सामजस्य पैदा करने का प्रयत्न करता है। केन्द्र एवं राज्यों की सरकारों के बीच सामजस्यपूर्ण सम्बन्धों की स्थापना करने वाली संघ प्रणाली को 'सहयोगी संघवाद' की संज्ञा की जाती है। इस व्यवस्था में संघीय सरकार शक्तिशाली तो होती है किन्तु राज्य सरकारें भी अपने क्षेत्रों में कमजोर नहीं होती साथ ही दोनों सरकारों की एक-दूसरे पर निर्भरता इस व्यवस्था का मुख्य लक्षण होता है। संघवाद का बुनियादी तत्व है शक्तियों का विभाजन। सहयोगी संघवाद में शक्तियों के विभाजन के उपरांत ही

=========================

* प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष, राजनीति शास्त्र विभाग, शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा (म. प्र.)

केन्द्र एवं राज्यों के बीच अन्तःक्षेत्रीय सहयोग पर बल दिया जाता है। यह सहयोगी केन्द्रीय एवं प्रादेशिक सरकारों एवं असंख्य राजनीतिक संरचनाओं के मध्य भी दिखलाई देता है।

वस्तुतः कोई भी संघीय शासन प्रणाली वाला देश आज यह दावा नहीं कर सकता कि वह केन्द्र राज्य मतभेदों की समस्या से पूर्णतया उन्मुक्त है। यथार्त से संघ व्यवस्था जिसका आधार परस्पर सांमजस्यपूर्ण हिस्सेदारी की भावना है को तनावों का संस्थाकरण करने वाली व्यवस्था भी कहा जा सकता है।

भारत के संविधान में केन्द्र तथा राज्यों के बीच शक्तियों के वितरण की एक अधिक निश्चित सुस्पष्ट योजना अपनाई है। संविधान के आधार पर संघ तथा राज्यों के बीच सम्बन्धों को तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है।

1. केन्द्र तथा राज्यों के विधायी सम्बन्ध
2. केन्द्र तथा राज्यों के प्रशासकीय सम्बन्ध
3. केन्द्र तथा राज्यों के वित्तीय सम्बन्ध

भारतीय संविधान में केन्द्र तथा राज्यों के मध्य विधायी, प्रशासनिक तथा वित्तीय शक्तियों का विभाजन किया गया है लेकिन न्याय पालिका को विभाजन की परिधि से बाहर रखा गया है।

प्रस्तावित शोध कार्य की प्रकृति सैद्धान्तिक है जिसमें शोध के द्वितीयक स्रोतों के प्रयोग की अधिक सम्भावना है। शोध कार्य की वर्णनात्मक, विश्लेषणात्मक और विवेचनात्मक प्रकृति को देखते हुए शोधार्थी द्वारा वर्णनात्मक, विश्लेषणात्मक, तुलनात्मक और ऐतिहासिक शोध प्रविधि का प्रयोग किया गया है, इन शोध प्रविधियों के माध्यम से चयनित शोध समस्या के अनुरूप साहित्य संकलन पर विषय को विस्तृत करने का प्रयास किया गया है। शोधार्थी द्वारा शोध समस्या के अनुरूप सन्दर्भ ग्रन्थों, पत्र-पत्रिकाओं तथा राष्ट्रीय स्तर के शोध पत्रों से साहित्य संकलन का प्रयास किया गया है।

भारत के संविधान प्रशासन तथा राजनीति जीवन में केन्द्र-राज्य सम्बन्धों की आवश्यकता तथा महत्व है। संविधान निर्माताओं ने आरम्भ से ही संघीय व्यवस्था में केन्द्र-राज्यों के मधुर सम्बन्धों को अधिकतम अंशों में स्वीकार किया था और इसलिए संघीय व्यवस्था में केन्द्र राज्यों को अपने-अपने क्षेत्रों में व्यापक अधिकार तथा शक्तियाँ सौंपा। केन्द्र पूरा राष्ट्र का संचालन होता है जिसका नेता प्रधानमंत्री होता है। वह कार्यपालिका व्यवस्थापिका संवैधानिक आदि विभिन्न क्षेत्रों में महत्वपूर्ण शक्तियाँ रखता है।

यद्यपि केन्द्र और राज्यों को अपने क्षेत्र में शक्तियाँ प्राप्त हैं। राज्य को राज्य सूची के अन्तर्गत शक्तियाँ प्राप्त हैं तो केन्द्र को संघ सूची के अन्तर्गत तथा समवर्ती सूची में केन्द्र को ही शक्तिशाली बनाया गया है। केन्द्रीय शक्ति ही देश की वास्तविक शक्ति होती है। केन्द्रीय शासन की शक्तिशाली होने की आवश्यकता राष्ट्रीय एवं अन्तराष्ट्रीय दृष्टि से आवश्यक प्रतीत होती है। भारतीय प्रधानमंत्री केन्द्र का निर्वाचित नेता होता है। केन्द्रीय मंत्रिमण्डल का निर्माण व संचालन, राज्यपाल व मुख्यमंत्रियों की नियुक्ति या पदच्युति सीधे केन्द्र द्वारा होती है। कैबिनेट प्रणाली की सरकार केन्द्रीय सर्वोच्चता के सिद्धान्त पर आधारित है। अतः स्वाभाविक रूप से केन्द्रीय शक्ति की आवश्यकता राज्यों के सहयोगी के रूप में सम्पूर्ण राज्यों तथा देशों का प्रतिनिधित्व करता है। अन्तराष्ट्रीय क्षेत्र में केन्द्र का स्थान अत्यधिक महत्वपूर्ण है। केन्द्रीय शासन विदेश नीति का निर्धारण, नवीन राज्यों

तथा सरकारों को मान्यता प्रदान करना दूसरे देशों के साथ संधि करते समय युद्ध और शक्ति की चर्चा व वैदेशिक संबंधों का संचालन करता है।

प्रधान व्यवस्था के रूप में केन्द्र राज्य सम्बन्धों की आवश्यकता एवं उपयोगिता है। शक्ति पृथककरण के सिद्धान्त एवं संविधान द्वारा निर्धारित शक्तियों के आधार पर दोनों ही कानून बना सकते हैं। केन्द्र को कुछ विशेष और महत्वपूर्ण विधायी सम्बन्ध प्राप्त है जो राज्य को प्राप्त नहीं है। शक्तिशाली केन्द्र राष्ट्रीय एकता की दृष्टि से आवश्यक एवं महत्वपूर्ण प्रतीत होता है। वह राष्ट्रीय हितों की पूर्ति के साथ राज्यों तथा दलीय हितों की पूर्ति का भी प्रयास करता है।

प्रशासनिक सम्बन्धों की दृष्टि से भी केन्द्र-राज्यों में मधुर सम्बन्धों की आवश्यकता है। केन्द्र राज्यों के ऊपर नियंत्रण रखता है तथा वाद-विवाद की स्थिति में संतुलन का भी प्रयास करता है।

वित्रीय मामलों में राज्यों को केन्द्र के ऊपर अधिक से अधिक निर्भरता रहती है। राज्यों को अपने हितों तथा विकास के लिए केन्द्र से ऋण लेना पड़ता है। केन्द्र अधिक से अधिक यही प्रयास करता है कि राज्यों का कल्याण तथा विकास हो। वित्तीय सम्बन्धों में तनाव का अधिक से अधिक डर रहता है अतः आवश्यक है कि केन्द्र-राज्य में परस्पर सम्बन्ध सहयोगपूर्ण हो।

केन्द्र-राज्य सम्बन्ध का अध्ययन करने पर देखा गया है कि संविधान निर्माताओं ने केन्द्रीय सरकार को अत्यंत शक्तिशाली बनाया है। वह किसी भी सूची के विषयों पर कानून बना सकती है। वह अवशिष्ट शक्तियों का उपभोग कर सकती है और राज्यपालों द्वारा राज्यों पर पूर्ण नियंत्रण रखती है। उसकी आय के साधन अधिक हैं और वह राज्यों को ऋण भी दे सकती है।

संघ एवं राज्यों के बीच शक्तियों का वितरण इस प्रकार किया गया है कि राज्यों की स्थिति नगरपालिकाओं के समतुल्य हो गई है। जिस प्रकार नगरपालिकाएँ राज्य सरकारों पर पूर्णतः निर्भर है, उसी प्रकार राज्य सरकारें भी सभी क्षेत्रों में संघ सरकार पर निर्भर हैं।

राष्ट्रपति द्वारा आपातकाल की उद्घोषणा किए जाने पर राज्यों की स्वयत्तता को स्थगित किया जा सकता है और इस दशा में राष्ट्रपति राज्य का सारा कामकाज अपने प्रतिनिधि राज्यपाल के माध्यम से चला सकता है। केन्द्र की शक्तियाँ आपातकाल में ही नहीं अपितु सामान्यकाल में भी बढ़ाई जा सकती हैं, अतः भारतीय संघ की आत्मा एकात्मक कही जा सकती है।

प्रायः यह देखा गया है कि जिस दल की सरकार केन्द्र में थी उसी दल की सरकार जब राज्यों में थी तब कोई संघर्ष नहीं हुआ किन्तु जब राज्यों में अन्य दलों की सरकारें हुई तब संघ और राज्य के बीच संघर्ष उत्पन्न हुआ। भारत के पूर्व प्रधानमंत्री पण्डित जवाहर लाल नेहरू का प्रभाव सम्पूर्ण भारत पर छा गया था किन्तु उनकी मृत्यु के पश्चात् केन्द्र-राज्य सम्बन्धों में परिवर्तन आना शुरू हुआ और केन्द्र और राज्यों के मध्य संघर्षों की स्थिति बढ़ने लगी। केन्द्र-राज्य सम्बन्ध आज भी उतने ही खराब हैं जितने श्रीमती इन्दिरा गाँधी के शासन काल में थे। श्रीमती इन्दिरा गाँधी के कार्यकाल 1984 में ये सम्बन्ध बहुत बिगड़ गए थे जब सिक्किम, जम्मू कश्मीर व आन्ध्रप्रदेश की गैर कांग्रेस (ई) सरकार को

अपदस्थ किया गया था। जनता, माकपा, तेलगू देशम के सदस्यों ने राज्य सभा में उनके राज्यों के प्रति केन्द्र की उपेक्षा के प्रति नाराजगी प्रकट की। कर्नाटक, पश्चिमी बंगाल व आन्ध्र प्रदेश में कई विकास योजनाएँ इस वजह से रूकी हुई थी कि केन्द्र ने स्वीकृत नहीं भेजी। राज्य विधानसभा में स्वीकृत विधेयकों पर राष्ट्रपति के अनुमोदन के सम्बन्ध में भी ऐसे ही हाल हैं। इन विधेयकों को गृह मंत्रालय में अटका दिया जाता है। कुछ मामलों में तो राज्यपाल ही विधेयकों को दबाकर बैठ जाते हैं। आन्ध्रप्रदेश की राज्यपाल कुमुदबेन जोशी के बारे में ऐसी ही शिकायत की गई। भाजपा शासित राज्यों-राजस्थान, हिमाचल प्रदेश और मध्यप्रदेश की सरकारों को बर्खास्त करके नरसिंम्हाराव सरकार ने केन्द्र राज्य टकराव को और अधिक प्रखर कर दिया।

भारत के संविधान का संघीय स्वरूप वास्तविक अर्थों में उभरने लगा है। केन्द्र के निरकुंशता और एकात्मक प्रवृतियों पर तेजी से रोक लग रही है। केन्द्र और राज्यों के बीच बढ़ते हुए अविश्वास की पृष्ठभूमि में तमिलनाडु सरकार ने संघ और राज्यों के बीच सम्बन्ध ाों के प्रसंगों की जाँच करने के लिए पी.वी. राजमन्नार के नेतृत्व में समिति नियुक्ति की और उससे कहा गया कि भारतीय लोकतंत्र को शक्तिशाली बनाने के लिए इस प्रश्न पर अपनी सिफारिशें बताये। इस समिति का प्रतिवेदन 1971 में प्रकाशित हुआ।

यह सच है कि केन्द्रीय सरकार की अपेक्षाकृत शक्तिशाली स्थिति ने राज्य सरकारों की स्थिति को प्रभावित किया है, किन्तु फिर भी राज्य केन्द्रीय सरकार की प्रशासकीय इकाईयाँ मात्र नहीं हैं। ग्रेनविल ऑस्टिन लिखते हैं ''भारत नई दिल्ली नहीं है बल्कि राज्यों की राजधानियाँ भी है। राज्य केन्द्रीय सहायता के आकांक्षी हैं, किन्तु राज्यों के सहयोग के बिना संघ बहुत दिनों तक कायम नहीं रह सकता। राज्य सरकारें केन्द्रीय सरकार की नीतियों का माध्यम हो सकती हैं किन्तु उनकी सहायता के बिना केन्द्रीय सरकार अपनी योजनाओं को क्रियान्वित नहीं कर सकती। वस्तुतः दोनों ही एक-दूसरे पर निर्भर हैं।''

निष्कर्षतः स्पष्ट होता है कि सुदृढ़ केन्द्र के बावजूद झुकाव केन्द्र और राज्यों के बीच सहयोगी साझेदारी के सम्बन्ध की ओर है।

===============

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची-

1 डॉ पुखराज जैन, भारतीय शासन एवं राजनीति, साहित्य भवन पब्लिकेशन 1997
2 प्रभुदत्त शर्मा, केन्द्र राज्य सम्बन्ध, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ एकादमी, जयपुर, 1976
3 डॉ. सुभाष कश्यप, दल-बदल और राज्यों की राजनीति, मीनाथी प्रकाशन, मेरठ, 1970
4 बाबूलाल कड़िया, भारतीय सरकार और राजनीति, सरस्वती सदन प्रकाशन दिल्ली, 1977
5 सी.पी. शर्मा, राष्ट्रीय आन्दोलन, यूनीवर्सल बुक डिपो ग्वालियर, 1976
6 पी. शरण, भारतीय शासन और राजनीति, रस्तोगी पब्लिकेशन, मेरठ, 1968
7 डॉ. के.एन. वर्मा, राजनीतिक निबन्ध, रस्तोगी एण्ड कम्पनी, मेरठ, 1968
8 बी.वी. पाण्डे, भारत का शासन एवं राजनीति, सरस्वती सदन दिल्ली, 1972
9 डॉ. दिनेश चन्द्र, भारत शासन और राजनीति, मीनाक्षी प्रकाशन, दिल्ली, 1971
10 डॉ. सुभाष कश्यप, भारतीय सरकार एवं, राजनीतिरिसर्च दिल्ली
11 एम. लक्ष्मीकांत, भारत में केन्द्रीय सरकार और प्रशासन, टाटा मैग्राहील पब्लिशिंग कम्पनी न्यू देलही
12 इकबाल नारायण, राजनीति विज्ञान, शिवलाल अग्रवाल एण्ड कम्पनी, इन्दौर
13 पी.के. दवे, केन्द्र राज्य स्तरों पर नीति निर्माण के कतिपय पक्षआई.जे.पी. नं.3, 1970
14 जी. रामचन्द्रन, वित्त, व्यवस्था और आयोजन में केन्द्र-राज्य सम्बन्ध, आई.जे.पी., जून, 1966
15 श्रीराम माहेश्वरी, केन्द्र-राज्य सम्बन्धों के लिए परामर्शी, संगठनआई.जे.पी.ए. जुलाई, 1973

Research Journal of Arts, Management and Social Sciences,
Vol. XVIII, Hindi.-I, Year IX, March, 2018
UGC Sl. No. 2138, Journal No.48774, Impact Factor 2.996

स्थानीय संस्कृति तथा दबाव समूह

* मनोज कुमार सिन्हा

सारांश- *कोई भी संस्कृति जड़वत या अलग-थलग नहीं रही है। पुराने जमाने में भी लड़ाई, व्यापार और आवास-प्रवास उसे प्रभावित करते रही है अभी द्रुतगामी परिवहन के साधन, प्रभावकारी संचार माध्यम और व्यापार ने सांस्कृतिक क्षेत्र में परिवर्तनों को बहुत तेज कर दिया है। सुदूर गांवों में अब तक अछूती रही लोक संस्कृति का स्वरूप भी बदलने लगा है। अब कुछ भी पवित्र, स्थायी और पहुँच से बाहर नहीं रह गया है। लोक संगीत में विदेशी धुनों और वाद्यों का धड़ल्ले से प्रवेश होता जा रहा है। वैश्वीकरण के दौर में मानव संस्कृति को खरीद-बिक्री की चीज बनाया जा रहा है। बहुराष्ट्रीय मीडिया कंपनियाँ जिनके संचार नेटवर्क सारी दुनिया में फैले हैं विश्व के हर भाग से स्थानीय सांस्कृतिक संसाधनों को जुटाकर सांस्कृतिक मालों तथा मनोरंजन के साधनों के रूप में सजा-सँवारकर बाजार में बिक्री के लिए रख रही है। विश्व की जनसंख्या का ऊपरी 20 प्रतिशत सांस्कृतिक मालों पर उतना ही खर्च कर रहा है जितना विनिर्मित वस्तुओं और बुनियादी सेवाओं पर। इस प्रकार सांस्कृतिक मालों का बाजार बड़ा ही नहीं बल्कि निरन्तर विस्तारशील और मुनाफा दायक है। इस नये विकास ने लोगों को चिन्तित कर दिया है। समाज का प्रबुद्ध तबका समृद्ध सांस्कृतिक विविधता से संबंध टूटने का खतरा महसूस करने लगा है।*

यदि किसी व्यक्ति या समूह की राजनीतिक संस्कृति के संबंध में ज्ञान प्राप्त करना है तो हमें यह देखना होगा कि राजनीतिक तंत्र तथा उसके विभिन्न घटकों के प्रति उसका ज्ञानात्मक, अनुरागात्मक तथा मूल्यांकनात्मक अभिमुखीकरण क्या है? अर्थात् उस व्यक्ति को अपने राष्ट्र, उसकी राजनीतिक व्यवस्था, इतिहास, राजनीतिक संरचना, सांविधानिक विशेषताओं, पद धारकों, विशेष नीतियों के कार्यान्वयन, राजनीतिक तंत्र में स्वयं के कार्यभाग, अपने अधिकारों और कर्तव्यों का ज्ञान आदि के संबंध में कितनी जानकारी है तथा उनके संबंध में उसकी क्या भावना तथा निर्णय या मत है ? इसीलिए वर्बा ने लिखा हैं कि 'राजनीतिक तंत्र के प्रति सामान्य रूप से,तथा इसकी अदा और प्रदा प्रक्रिया के पक्षों और एक राजनीतिक कर्ता के रूप में स्वयं के संबंध में विभिन्न प्रकार के ज्ञानात्मक, अनुरागात्मक तथा मूल्यांकनात्मक अभिमुखीकरणों की आवृत्ति से राजनीतिक संस्कृति की रचना होती है।[1]

वर्बा ने राजनीतिक संस्कृतियों के तीन प्रकार बताएं हैं-

1. **संकुचित राजनीतिक संस्कृति-** संकीर्ण राजनीतिक संस्कृति से उस राजनीतिक संस्कृति का बोध होता है जिसमें कोई व्यक्ति अथवा समूह राजनीतिक तंत्र के विभिन्न

* प्रवक्ता, राजनीति विज्ञान, उ.मा. (+2) विद्यालय, शाहपुर सिधवलिया (गोपालगंज) बिहार।

घटकों तथा उसके कार्य संचालन आदि के संबंध में बिल्कुल जानकारी न रखता हो अथवा उसकी जानकारी बहुत ही साधारण हों। ऐसी राजनीतिक संस्कृति में व्यक्ति केन्द्रीय सरकार की संस्थाओं से अपरिचित तथा अप्रभावित होता है और वह अपने स्थानीय समूहों की संरचना और कार्य-विधियों के संबंध में ही जानकारी रखता है। चूंकि वह सम्पूर्ण राजनीतिक तंत्र के संबंध में जानकारी ही नहीं रखता, अतः उसके संबंध में उसकी कोई भावना तथा मत होने का प्रश्न नहीं उठता। इस प्रकार की संस्कृति केवल साधारण परंपरावादी समाजों में पाई जाती है जिनमें नाममात्र की विशेषीकरण होता है और जहां एक ही व्यक्ति राजनीतिक , आर्थिक और धार्मिक कार्यो को एक साथ संपादित करता है।

2. **प्रजा-भावी राजनीतिक संस्कृति**- इस प्रकार की राजनीतिक संस्कृति में व्यक्ति राजनीतिक व्यवस्था के संबंध में पूर्ण जानकारी रखता है अर्थात् कार्यकारिणी, नौकरशाही तथा न्यायपालिका आदि का उसे पूर्ण ज्ञान होता है। वह सरकार के प्रजा पक्ष का ज्ञान और उसके माध्यम से मिलने वाले लाभों को प्राप्त करता है तथा वह राजनीतिक तंत्र के औचित्य का और उसके विभिन्न घटकों की अच्छाई- बुराई का मूल्यांकन करता है। लेकिन वह सरकार के अदा पक्ष तथा राजनीतिक तंत्र में स्वयं के कार्यभाग के संबंध में अनभिज्ञ होता है। इस राजनीतिक संस्कृति में व्यक्ति निष्क्रिय होता है और राजनीतिक तंत्र को प्रभावित करने की संभावना उसे प्रतीत नहीं होती। अतः वह विभिन्न पद धारकों के निर्णयों को गैर चुनौती योग्य समझते हुए उन्हें मूल रूप से स्वीकार करता है।

3. **सहभागी राजनीतिक संस्कृति**- इस प्रकार की राजनीतिक संस्कृति में व्यक्ति राज्य का एक सक्रिय सदस्य होता है। उसे राजनीतिक तंत्र और सभी राजनीतिक विषयों का अभिमुखीकरण होता है और उसके अदा,प्रदा पक्षों तथा उस तंत्र के अन्तर्गत स्वयं अपने कार्यभाग के संबंध में पूर्ण जानकारी होती है। वह अदा प्रक्रिया में भाग लेता है। सहभागी राजनीतिक संस्कृति में सभी व्यक्तियों को राजनीतिक गतिविधियों के मूल्यांकन और आलोचना का पूर्ण अधिकार होता है और यह सामान्य रूप से स्वीकार किया जाता है कि राजनीतिक क्रियाएं जनसाधारण के निरीक्षण योग्य है। यहां यह स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि कोई भी राजनीतिक संस्कृति पूर्णतया समरूप अथवा शुद्ध नहीं होती। क्योंकि किसी भी समाज में प्रत्येक व्यक्ति की राजनीतिक अभिवृति और राजनीतिक तंत्र के प्रति उसका झुकाव एक समान नहीं होता, उसमें विभिन्नताओं का पाया जाना स्वाभाविक है। एक सहभागी संस्कृति में भी ऐसे लोग हो सकते हैं जो केन्द्र सरकार की सत्ता और संस्थाओं से अपरिचित हों। इसका अर्थ यह है कि किसी देश की राजनीतिक संस्कृति का निर्धारण उपरोंक्त तत्वों में से प्रधान तत्वों के अनुसार होता है।

राजनीतिक संस्कृति सामान्य संस्कृति का अटूट अंग होती है। जिस प्रकार किसी देश की सामान्य संस्कृति परिवर्तित होती रहती है उसी प्रकार राजनीतिक संस्कृति में भी परिवर्तन होता रहता है। इसीलिए प्रत्येक देश की राजनीतिक संस्कृति प्रत्येक काल में भिन्न-भिन्न होती है और स्वयं एक ही देश में अनेक उप-राजनीतिक संस्कृतियां पाई जाती हैं। किसी भी देश की राजनीतिक संस्कृति स्थिर नहीं रहती वह परिवर्तित होती रहती है, भले ही परिवर्तन की गति में अंतर हो। इस बात पर सभी विचारक एकमत हैं कि सभी देशों की राजनीतिक संस्कृति में शासक और शासित की राजनीतिक संस्कृति में अंतर पाया जाता है। कुछ देशों में इन दो मुख्य संस्कृतियों के बीच ज्यादा खाई दिखाई देती है,जबकि कुछ देशों

में इनके बीच का अंतर बहुत ज्यादा नहीं होता।

भारत की राजनीतिक संस्कृति के संबंध में कुछ पश्चिमी लेखकों ने अपने विचार व्यक्त किए हैं जिन पर काफी वाद-विवाद रहा है। ऐसे विचारकों में माइरन वीनर और मारिस जोंस के नाम उल्लेखनीय हैं जिन्होंने भारत की राजनीतिक संस्कृति के विषय में एक नए दृष्टिकोण का प्रतिपादन किया है। अतः यहां उनके विचार पर संक्षेप में चर्चा करना आवश्यक प्रतीत होता है। माइरन वीनर का कहना है कि भारत में दो राजनीतिक संस्कृतियां पाई जाती है,[2] एक विशिष्टवर्गीय राजनीतिक संस्कृति और दूसरी जन-राजनीतिक संस्कृति। विशिष्टवर्गीय राजनीतिक संस्कृति उन व्यक्तियों की राजनीतिक संस्कृति है जो राष्ट्रीय राजनीति में क्रियाशील हैं। यह राजनीतिक संस्कृति मुख्य रूप से दिल्ली में पाई जाती है। वीनर का कहना है कि भारत की राष्ट्रीय राजनीति पर एक विशिष्ट वर्ग का आधिपत्य दिखाई देता है। इस विशिष्ट वर्ग में संसद के सदस्य, नियोजन आयोग के सदस्य राष्ट्रीय स्तर के नेता और वरिष्ठ प्रशासकीय पदाधिकारी आदि सम्मिलित हैं। इस विशिष्ट वर्ग से विकसित होने वाली राजनीतिक संस्कृति को वीनर ने विशिष्टवर्गीय राजनीतिक संस्कृति की संज्ञा दी है। उसके अनुसार इस विशिष्ट वर्ग में ऐसे लोग सम्मिलित हैं जो अधिक पश्चिमाभिमुख हैं और धर्मनिरपेक्षता के आदर्शों के पोषक हैं। संक्षेप में ये लोग आधुनिकीकृत हैं। इन्हीं विशेषताओं के कारण इस विशिष्ट वर्ग का राजनीतिक ज्ञान, उसके राजनीतिक विश्वास, उसकी राजनीतिक अभिवृत्तियां, उसकी राजनीतिक धारणाएं, शासन के प्रति उसका दृष्टिकोण तथा संक्षेप में उसकी राजनीतिक संस्कृति जन-राजनीतिक संस्कृति से भिन्न है। इसे वीनर ने विशिष्ट अथवा अभिजनात्मक राजनीतिक संस्कृति का नाम दिया है। भारत की स्वतंत्रता में इसी विशिष्ट वर्ग का सक्रिय कार्यभाग रहा है।

1947 के बाद भारत में एक और राजनीतिक संस्कृति का उदय हुआ। यह संस्कृति स्थानीय स्तर से विकसित होकर जिला स्तर की राजनीति और जिले से राज्य स्तर की राजनीति में प्रवेश कर रही है। ग्रामीण क्षेत्रों से उभरने वाली इस संस्कृति को वीनर जन-राजनीतिक संस्कृति की संज्ञा देता है। उसके अनुसार स्वतंत्रता के पश्चात् जन-साधारण को सक्रिय राजनीति में भाग लेने का समान अवसर प्राप्त हुआ और वयस्क मताधिकार दिए जाने के परिणामस्वरूप सर्वसाधारण विभिन्न राजनीतिक संस्थाओं में दाखिल होने लगे। इन व्यक्तियों के राजनीतिक विश्वास, उनकी राजनीतिक धारणाएं,उनका राजनीतिक ज्ञान, राज्य तथा सरकार के प्रति उनका दृष्टिकोण, उन लोगों से भिन्न है जो राष्ट्रीय स्तर की राजनीति में हैं। इस दूसरे प्रकार की राजनीतिक संस्कृति के उदय के तीन कारण वीनर ने बताए है :

1. सरकार के कार्यो में अत्यधिक विस्तार
2. सत्ता का विकेन्द्रीकरण
3. सत्ता का जनतंत्रीकरण

वीनर के अनुसार स्वतंत्रता के पश्चात् भारत में राज्य का कार्यक्षेत्र अत्यधिक विस्तृत हुआ। आंतरिक शांति की स्थापना और वाह्य आक्रमण से रक्षा के कार्यो से लेकर छोटी से छोटी सेवाओं के संपादन का उत्तरदायित्व राज्य पर डाला गया। राज्य के कार्यो में वृद्धि होने के फलस्वरूप राज्य का नियंत्रण सर्वसाधारण पर बढ़ता गया क्योंकि हर नई सेवा और हर नई सुविधा देने के लिए कुछ नए कानूनों का निर्माण हुआ। इन कानूनों ने

स्वाभाविक रूप से व्यक्ति के आचरण पर कुछ प्रतिबंध लगााए। इस प्रकार व्यक्ति राज्य के करीब आता गया और उसे राज्य तथा सरकार को समझने का समुचित अवसर प्राप्त हुआ।[3]

राजनीति में जनसाधारण द्वारा सक्रिय भाग लिए जाने का दूसरा कारण सत्ता का विकेन्द्रीकरण है। भारतीय संविधान के एक संघात्मक शासन प्रणाली की स्थापना की जिसके अनुसार केन्द्र तथा राज्यों के बीच शक्तियो का स्पष्ट रूप से विभाजन संविधान द्वारा किया गया। राज्य सरकारों के अतिरिक्त सत्ता का विकेन्द्रीकरण ग्रामीण स्तर तक हुआ और ग्राम पंचायत , क्षेत्र समिति, जिला परिषद, नगरपालिका आदि प्रशासकीय संस्थाओं की स्थापना की गई। प्रत्येक प्रशासकीय इकाई को कुछ अधिकार प्रदान किए गए। सत्ता के वितरण और नई प्रशासकीय इकाइयों के निर्माण के परिणामस्वरूप राजनीति के विभिन्न स्तरों का निर्माण हुआ, क्योंकि सत्ता और राजनीति का चोली-दामन का साथ होता हैं। इन नई प्रशासकीय संस्थाओं और निकायों की स्थापना ने जनसाधारण को अपनी ओर आकर्षित किया और जनसाधारण को सत्ता की राजनीति में प्रवेश करने के लिए आमंत्रित किया। जनसाधारण को राजनीति में भाग लेने का अधिक अवसर न मिलता यदि सत्ता का जनतंत्रीकरण न किया गया होता। संविधान लागू होने के बाद सत्ता का जो विकेन्द्रीकरण किया गया और फलस्वरूप जिन नई राजनीतिक संस्थाओं का उदय हुआ, उनके संगठन का आधार जनतंत्रात्मक था। प्रशासन की निम्न इकाई ग्राम पंचायत है। पंचायतों से लेकर क्षेत्र समितियों, जिला परिषदों, नगर पालिकाओं आदि स्थानीय निकायों का निर्वाचन जनता द्वारा किया जाता है। संविधान ने राजनीतिक समानता के सिद्धांत को मानते हुए वयस्क मताधिकार के सिद्धांत को मान्यता प्रदान की है जिसके परिणामस्वरूप प्रत्येक नागरिक को उसकी जाति, धर्म, शिक्षा, योग्यता तथा आर्थिक स्थिति आदि के आधार पर कोई भेदभाव किए बिना विभिन्न प्रशासकीय तथा राजनीतिक संस्थाओं की सदस्यता के लिए खड़े होने तथा मतदान करने का अधिकार प्रदान किया गया। इसका परिणाम यह है कि आज ग्राम पंचायतों से लेकर राज्य विधान सभाओं तक नए नए लोग राजनीति में प्रवेश कर रहे है। इन नए लोगों के राजनीति में प्रवेश करने से एक नई राजनीतिक संस्कृति का उदय हुआ जिसे वीनर ने जन-राजनीतिक संस्कृति का नाम दिया है। राजनीति में प्रवेश करने वाले ये नए व्यक्ति जो ग्रामीण क्षेत्रों से राजनीति में प्रवेश करके ऊपर की ओर बढ़ते हुए राज्य विधानसभाओं में पहुंच रहे हैं, कम शिक्षित हैं और उन पर परंपरावादी मान्यताओं की छाप अधिक है तथा वे राष्ट्रीय समस्याओं से पूर्ण रूप से परिचित नहीं है, इसलिए वे राष्ट्रीय हितों का बलिदान करके स्थानीय हितों को अधिक बढ़ावा देने में भी संकोच नहीं करते। उन पर धर्म और जातिवाद का प्रभाव अभी तक बहुत ज्यादा है। सर्वसाधारण की यह राजनीतिक संस्कृति निरंतर फैलने वाली संस्कृति है, अर्थात् यह राजनीतिक संस्कृति स्थानीय राजनीति से लेकर जिलों की राजनीतिक संस्थाओं से होती हुई प्रदेश के विधानमंडलों तक पहुंच रही हैं जबकि विशिष्ट वर्ग की राजनीति दिल्ली तक ही सीमित है।[4]

सर्वसाधारण की राजनीतिक संस्कृति की दूसरी विशेषता उसमें पाई जाने वाली (साम्प्रदायिकता) जातिवाद तथा प्रांतीयता की भावना है। वीनर का कहना है कि स्थानीय स्तर से लेकर विधानसभाओं तक जो लोग सक्रिय राजनीति में प्रवेश कर रहे हें उनमें

जातिवाद और धर्म के आधार पर भेदभाव तथा प्रांतीय और क्षेत्रीय हितों को प्राथमिकता देने की भावना तीव्र रूप से पाई जाती है। स्वतंत्रता के पश्चात् भाषा के आधार पर राज्यों के पुनर्गठन की मांग की गई। परिणामस्वरूप 1956 में भारत के राजनीतिक मानचित्र को राज्यों का पुनर्गठन करके बदल दिया गया। राज्यों के पुनर्गठन के बाद भी नए राज्यों के निर्माण की मांग उठती रही और कुछ नए राज्यों का निर्माण किया गया। परिवहन और संचार के साधनों के विकसित होने के कारण देश के विभिन्न भागों में रहने वाली जातियां एक दूसरे के सम्पर्क में आई और वे एकता में बंध गई। इससे जातीय भेदभाव बढ़ा और नृजातीय- निष्ठा (एथनिक लायल्टी) को प्रोत्साहन मिला। राजनीतिक दलों ने भी इस स्थिति का पूरा लाभ उठाया और विभिन्न निर्वाचनों में दल के उम्मीदवारों के चयन से लेकर मतदाताओं के समर्थन को प्राप्त करने तक के लिए धर्म तथा जाति को एक साधन के रूप में प्रयोग किया। स्थानीय तथा प्रदेशीय राजनीति में सक्रिय रूप से कार्य करने वाले अधिकांश व्यक्तियों के सामने सम्पूर्ण देश के हितों की अपेक्षा अपने प्रदेश, जिले तथा ग्राम आदि के हित अधिक महत्व रखते हैं। अतः सर्वसाधारण की संस्कृति में संकीर्णता और स्थानीयता की प्रधानता है।

वीनर के अनुसार जनसाधारण की संस्कृति में परंपरावाद की छाप पूर्ण रूप से दिखाई देती है। प्राचीन समाज में विभिन्न वर्गो अथवा दो व्यक्तियों के बीच होने वाले झगड़ों का निपटारा पारस्परिक समझौते के द्वारा किया जाता था। विवादों के निपटाने का यह परंपरावादी तरीका आज भी जनसाधारण की राजनीतिक संस्कृति की एक प्रमुख विषेशता है। सरकार और उसके कर्मचारियों के बीच, श्रमिकों और पूंजीपतियों के बीच, दल के विभिन्न गुटों के बीच, उठने वाले झगड़ों का निपटारा आज भी मध्यस्थता के द्वारा किया जाता है।

ब्रिटिशकाल में सरकारी कर्मचारियों और जनसाधारण के बीच कोई प्रत्यक्ष संपर्क न था और उनके संबंध शासक शासितों के समान थे। लोक पदाधिकारी अपने को जनसाधारण का शासक मानते थे और जन-साधारण उन्हें अपने मालिक के रूप में समझते थे। इन लोक पदाधिकारियों का जनता के प्रति कोई उत्तरदायित्व न था। स्वतंत्रता के पश्चात् सैद्धांतिक रूप से यह संबंध नागरिक और जनसेवक के संबंधों में परिवर्तित हो गए, जिसके अनुसार लोक पदाधिकारियों को अपने को जनता का सेवक समझना चाहिए, लेकिन वे आज भी ब्रिटिशकालीन परंपरा के अनुसार अपने को जनता का शासक समझते हैं और उनमें जनता के प्रति उत्तरदायित्व की भावना का अभाव है। स्थानीय शासन में पदाधिकारी अपने उच्च अधिकारियों की सेवा करने पर ज्यादा बल देते हैं और जनता की सेवा पर कोई ध्यान नहीं देते। प्रशासन में रिश्वतखोरी और भ्रष्टाचार को अत्यधिक प्रोत्साहन मिलता है।

सारांश यह है कि वीनर के अनुसार सरकार के कार्य क्षेत्र के विस्तार तथा राजनीतिक सत्ता के विकेन्द्रीकरण एवं जनतंत्रीकरण ने राज्य तथा राष्ट्रीय स्तर की राजनीति में सर्वसाधारण को भाग लेने का पूर्ण अवसर प्रदान किया और जो लोग इससे पहले राजनीति से बिलकुल अलग थे, वे धीरे-धीरे राजनीति के विभिन्न स्तरों में प्रवेश पा रहे हैं जिससे एक नई राजनीतिक संस्कृति विकसित हो रही हैं। वीनर के अनुसार सर्वसाधारण की यह राजनीतिक संस्कृति विकसित हो रही हैं। वीनर के अनुसार सर्वसाधारण

की यह राजनीतिक संस्कृति न तो पूर्णतया परंपरावादी है और न ही पूर्णतया आधुनिक, बल्कि यह परंपरावाद तथा आधुनिकता का सम्मिश्रण है।[5]

वीनर का यह मत है कि जन राजनीतिक संस्कृति विशिष्ट वर्ग की राजनीतिक संस्कृति से मूलतः भिन्न है और विशिष्ट वर्ग इस उभरती हुई राजनीतिक संस्कृति के विरूद्ध है, क्योंकि उसके अनुसार जनतंत्र की सफलता और राष्ट्रीय एकता के लिए जाति और धर्म के प्रति निष्ठा होने के बजाय राष्ट्र के प्रति निष्ठा होना आवश्यक है। देश के विभिन्न भागों में स्थानीय हितों को लेकर उठने वाली समस्याओं, राज्य के पुनर्गठन की मांग और भाषा तथा धर्म को लेकर होने वाले झगड़ों के पीछे जातीय निष्ठा का हाथ रहा है, यह स्थिति देश की सुदृढ़ता तथा समृद्धि के लिए हानिकारक है। जन-साधारण में पाई जाने वाली जातिवाद की भावना का राजनीतिक दलों ने अपने राजनीतिक हितों को बढ़ावा देने के लिए दुरूपयोग किया है और अपने राजनीतिक स्वार्थो के लिए स्वयं राजनीजिक दलों ने जातिवाद, प्रदेशवाद और साम्प्रदायिकता को प्रोत्साहन दिया है। विशिष्ट वर्ग राजनीति में ऐसे तत्वों के प्रवेश को चिंता की दृष्टि से देखता है।[6] विशिष्ट वर्ग का यह भी विचार है कि राजनीतिक जीवन से बलिदान की भावना का धीरे-धीरे ह्रास होता जा रहा है और समाज के हर वर्ग में सत्ता और पद प्राप्त करने का संघर्ष चल रहा है। उसका कहना है कि एक आदर्श समाज की स्थापना उस समय तक नहीं हो सकती जब तक जन साधारण में बलिदान की भावना को विकसित न किया जाए। सर्वसाधारण की राजनीतिक संस्कृति में व्यक्तिगत स्वार्थो ने बलिदान का स्थान ले लिया है, जिसे विशिष्ट वर्ग अच्छी दृष्टि से नहीं देखता।

राज्य स्तर तक की राजनीति में भाग लेने वालों की राजनीतिक संस्कृति, विशिष्टवर्गीय राजनीतिक संस्कृति से भिन्न होने के कारण इन दोनों के बीच टकराव उत्पन्न हो रहा है और इन राजनीतिक संस्कृतियों के बीच इस विभिन्नता के कारण नीतियों के निर्माण और उनके कार्यान्वयन में बड़ी कठिनाइयां पैदा हो रही हैं। नियोजन आयोग की स्थापना के पश्चात् सम्पूर्ण देश के लिए आर्थिक योजनाओं के बनाने का कार्य इस केन्द्रीय संगठन के द्वारा किया जा रहा है जो क्षेत्रीय तथा स्थानीय समस्याओं पर अधिक बल न देकर राष्ट्रीय हितों को अधिक महत्व देता है। परिणाम यह है कि योजनाओं के बनने के पश्चात् समस्या उनके समुचित ढंग से कार्यान्वयन की होती है। सामान्यतया राज्य सरकारें इनमें बहुत सी योजनाओं को पंसद नहीं करतीं। इसलिए वे केन्द्र द्वारा बनाई गई योजनाओं को कार्यान्वित करने के मामले में कुछ उदासीन रहती है। इस उदासीनता का स्वाभाविक परिणाम योजनाओं की असफलता तथा उनमें कुशलता का अभाव है। वीनर का मत है कि यदि राज्य स्तर तक की राजनीति में भाग लेने वाले व्यक्तियों की राजनीतिक संस्कृति और विशिष्ट वर्ग की राजनीतिक संस्कृति में कोई मतभेद न होता तो केन्द्र तथा राज्यों के बीच इस प्रकार के टकराव की संभावना न होती।

वीनर का विचार है कि विशिष्ट वर्ग की राजनीतिक संस्कृति तथा सर्वसाधारण की राजनीतिक संस्कृति के बीच जो टकराव है; वह आधुनिकता और परंपरावाद के बीच का टकराव नहीं है, क्योंकि परंपरावाद के तत्व विशिष्ट राजनीतिक संस्कृति में बीच पाई जाने वाली विभिन्नताओं का टकराव है। यह टकराव शिक्षित और अशिक्षित व्यक्तियों, अधिक परंपरावादी और संकीर्ण विचारों और विस्तीर्ण विचारों के बीच का विरोध है। इसीलिए

वीनर की यह कल्पना है कि जनसाधारण की राजनीतिक संस्कृति और विशिष्ट वर्ग की राजनीतिक संस्कृति के बीच का टकराव यदि समाप्त नहीं होता तो इससे देश की जनतंत्रीय व्यवस्था को खतरा है। उनका मत है कि विशिष्ट वर्ग सर्वसाधारण की राजनीतिक संस्कृति के स्वभाव को समझने में असमर्थ है, अतः वह जिन नीतियों का निर्माण करता है वह सर्वसाधारण की मांगों से मेल नहीं खातीं। इन दो राजनीतिक संस्कृतियों के बीच बढ़ती हुई खाई को भरना आवश्यक है, क्योंकि यदि अंतर बढ़ता गया तो एक ऐसी अवस्था आ सकती है जब राष्ट्रीय विशिष्ट वर्ग एक सर्वाधिकार पूर्ण शासन अथवा सैन्यशासन की स्थापना का समर्थन कर सकता है। वीनर का विचार है कि संस्कृतियों के इस भेद को रचनात्मक नेतृत्व के द्वारा समाप्त किया जा सकता हैं।[7] ऊपर वर्णन किया गया वीनर का द्विराजनीतिक संस्कृति का सिद्धांत कई कारणों से संतोषजनक नहीं दिखाई देता। पहली बात तो यह है कि वीनर ने जिन दो संस्कृतियों का उल्लेख किया है और उनके जो लक्षण बताए हैं, इनका कोई वस्तुनिष्ठ आधार नहीं मालूम होता। ऐसा लगता हैं कि वीनर ने ये निष्कर्ष केवल कल्पना के आधार पर निकाले है, वास्तविकताओं के आधार पर नहीं। इसमें संदेह नहीं कि स्वतंत्रता के बाद से राज्य स्तर तक की राजनीति में जो लोग प्रवेश कर रहे हैं उनके राजनीतिक विचार, राजनीतिक ज्ञान, राजनीतिक विश्वास, राजनीतिक आचरण और व्यवहार उन लोगों से अवश्य भिन्न है जो राष्ट्रीय स्तर की राजनीति में अर्थात् संसद,नियोजन आयोग तथा उच्च प्रशासकीय पदों पर आसीन हैं। लेकिन वीनर का यह दावा है कि विधान सभाओं तक जो लोग हैं वे संकीर्ण भावना और स्थानीय हितों को महत्व देने वाले तथा जातिवाद और साम्प्रदायिकता के पोषक हैं, पूरी तरह सत्य नहीं है। यदि ऐसा होता तो देश का संघीय स्वरूप अब तक छिन्न-भिन्न हो चुका होता। वीनर स्वयं यह स्वीकार करता है कि सर्वसाधारण की राजनीतिक संस्कृति एक मिश्रित संस्कृति है जिसमें आधुनिकता ओर परंपरावाद का सम्मिश्रण पाया जाता हैं। इसी प्रकार विशिष्ट वर्ग की राजनीतिक संस्कृति और सर्वसाधारण की राजनीतिक संस्कृति दोनों ही में परंपरावाद के तत्व मौजूद हैं, अंतर केवल मात्रा का है। इसलिए संसद के सदस्यों में, नियोजन आयोग में, सेना में, उच्च पदाधिकारियों में ऐसे लोग अवश्य मिल जाएंगे जिनका दृष्टिकोण संकुचित हैं; जिनमें जातिवाद तथा साम्प्रदायिकता किसी न किसी रूप में मौजूद है और जो अपने प्रदेश अथवा क्षेत्र के हितों को अधिक महत्व देते हैं, अर्थात् वे विशिष्ट वर्ग के सदस्य होते हुए भी वीनर की शब्दावली में सर्वसाधारण की संस्कृति के गुणों से मुक्त नहीं हैं। इसी प्रकार राज्य विधानसभाओं और जिला स्तर की राजनीतिक संस्थाओं में भी ऐसे लोग मिल जाएंगे जो उच्च शिक्षा और योग्यता रखते हैं, जो राष्ट्रीय हितों को प्राथमिकता देते है, और जो धर्म तथा जाति के भेदभाव से ऊपर हैं। इसलिए वीनर द्वारा भारत की राजनीतिक संस्कृति को दो कठोर श्रेणियों में विभक्त कर देना कुछ उचित नहीं दिखाई देता। वीनर ने जो अंतर विशिष्ट वर्ग की राजनीतिक संस्कृति और सर्वसाधारण की राजनीतिक संस्कृति के बीच बताया है यह अंतर यहीं पर समाप्त नहीं हो जाता, बल्कि राज्य विधानसभाओं से नीचे की ओर हम जितना बढ़ते जाएंगे हर राजनीतिक स्तर पर कार्य करने वाले लोगों की राजनीतिक संस्कृति में कुछ न कुछ भिन्नता अवश्य दिखाई देगी। उदाहरण के लिए जो लोग ग्राम पंचायत के सदस्य हैं उनके राजनीतिक ज्ञान, देश की राजनीतिक व्यवस्था के प्रति उनका दृष्टिकोण, उनके राजनीतिक विश्वास और उनकी राजनीतिक

धारणाएं उन लोगों से भिन्न हैं जो जिला परिषद् के सदस्य हैं या जिला स्तर पर राजनीतिक दलों या अन्य संगठनों में कार्य कर रहे हैं। इसी प्रकार जो लोग जिला परिषद में हैं, उनकी राजनीतिक संस्कृति और राज्य विधानसभाओं के सदस्यों की राजनीतिक संस्कृति में निस्संदेह अंतर मिलेगा। एक ग्राम पंचायत के सदस्य साधारणतया कम शिथिल होंगे और उनका दृष्टिकोण कुछ संकुचित होगा। उसमें राष्ट्रीय हितों और अंतराष्ट्रीय समस्याओं को समझने की क्षमता कम होगी लेकिन जितना हम ऊपर की ओर बढ़ते जाएंगे इन तत्वों का प्रभाव कम होता दिखाई देगा। इसलिए वीनर का यह दावा कि जन-राजनीतिक संस्कृति पंचायतों से लेकर राज्य विधानसभाओं तक फैली हुई है पूर्णतया सत्य नहीं है, क्योंकि राजनीति के विभिन्न स्तरों की राजनीतिक संस्कृति एक दूसरे से बड़ी सीमा तक भिन्न दिखाई देती हैं, उसमें पूर्ण रूप से समरूपता नहीं हैं। ल्यूसियन पाई का कहना है कि सभी राजनीतिक समाजों में शासकों अथवा सत्ताधारियों की संस्कृति अथवा जनसाधारण की संस्कृति में रात-दिन का अंतर होता है।' इसका अर्थ है कि किसी राजनीतिक व्यवस्था में सत्ता के जितने स्तर होंगे संस्कृति का यह अंतर हर स्तर पर विद्यमान होगा। कहने का तात्पर्य यह है कि 'एलीट' एक सापेक्षित शब्द है। एक राजनीतिक स्तर पर जो लोग विशिष्ट कहलाते हैं वे उससे उच्च राजनीतिक स्तर के संदर्भ में जनसाधारण में गिने जाते हैं। इस प्रकार सत्ता और निर्णय लेने के जितने स्तर होंगे उतनी राजनीतिक संस्कृतियां भी हो सकती हैं। इस दृष्टि से भी वीनर का द्विराजनीतिक संस्कृति का सिद्धांत पूर्णतया ठीक मालूम नहीं होता।[8]

वीनर का यह दावा कि विशिष्ट राजनीतिक संस्कृति और जनसाधारण की राजनीतिक संस्कृति के बीच जो खाई है यदि वह न भरी गई तो एक ऐसी अवस्था भी आ सकती है जब राष्ट्रीय वर्ग सैन्य-शासन स्थापित कर देगा, गलत मालूम होता है। इसका कारण स्वयं वीनर के उपरोक्त सिद्धांत में ही मौजूद है। वह स्वयं यह स्वीकार करता है कि सर्वसाधारण की राजनीतिक संस्कृति एक विस्तृत होने वाली संस्कृति है अर्थात् वह राजनीति के निम्नतम स्तर से उभर कर ऊपर के स्तरों से गुजरती हुई राज्य विधान सभाओं में पहुंच रही है और वहां से निकलकर संसद और अन्य केन्द्रीय संगठनों में दाखिल हो रही है, जबकि विशिष्ट राजनीतिक संस्कृति केवल दिल्ली तक सीमित है,उसके बीच के स्तरों तक उसके आने की कोई संभावना नहीं है। इसका अर्थ यह हुआ कि सर्वसाधारण की राजनीतिक संस्कृति धीरे-धीरे दिल्ली तक पहुंच जाएगी और वर्तमान विशिष्ट वर्ग की राजनीतिक संस्कृति का धीरे-धीरे अंत जो जाएगा। इस प्रकार वीनर का यह दावा कि विशिष्ट वर्गीय राजनीतिक संस्कृति भारत में सैनिक शासन स्थापित कर देगी काल्पनिक है। यहां यह बात स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि राजनीति के विभिन्न स्तरों में भाग लेने वाले व्यक्तियों की राजनीतिक संस्कृति कभी भी पूरी तरह एक समान नहीं हो सकती और राजनीति के विभिन्न स्तरों पर इस प्रकार की कठोर समानता शायद ही संसार के किसी देश में संभव हो। इसीलिए वीनर का द्विराजनीतिक संस्कृति का सिद्धांत काल्पनिक तथा अव्यावहारिक है और वीनर की यह भविष्यवाणी कि विशिष्ट वर्ग की राजनीतिक संस्कृति और सर्वसाधारण की राजनीतिक संस्कृति के टकराव के फलस्वरूप भारत में सैनिक शासन स्थापित हो सकता है, एक हास्यास्पद धारणा लगती है। ल्यूसियन पाई का विचार है कि ''भारत के संदर्भ में तो ऐसा लगता है कि जन संस्कृति के अपने घेरे में एक ऐसी

राजनीतिक प्रक्रिया चल रही है जो जन संस्कृति में स्वयं अपना एक आधुनिक तत्व उत्पन्न कर रही है। कालांतर मे जन संस्कृति का यही आधुनिक तत्व आज की विशिष्ट वर्गीय संस्कृति के आधुनिक तत्व का स्थान ले सकता है और यदि ऐसा हुआ तो यह भावी भारत की 'एलीट कल्चर' बन सकेगी। मिश्रण की यह प्रक्रिया परंपरावादी और आधुनिक तथा ' एलीट और मास संस्कृतियों' के बीच खाइयों को पाटती रहती है।''[9] ऐसा कहा जाता है कि ' अभी तक राजनीति पर एक भी सत्यतापूर्ण पुस्तक नहीं लिखी गई है। ' मोरिस जोंस का कहना है कि इस कथन का अर्थ यह नहीं है कि भारतीय राजनीति पर पुस्तकें लिखने वालों ने झूठ से काम लिया है बल्कि इसका कारण यह है कि भारत की राजनीति के यथार्थ रूप तक पहुंचना कठिन है। प्रत्येक राज्य के राजनीतिक जीवन का एक अंतर्निहित स्वरूप होता है और उससे संबंधित पुस्तक में उस वास्तविक स्थिति का उल्लेख किया जाना चाहिए। लेकिन भारतीय राजनीति के संबंध में कठिनाई यह है कि यहां की राजनीति का सैद्धांतिक और व्यावहारिक स्वरूप इतना भिन्न है कि उसे समझने में बड़ी कठिनाई का सामना करना पड़ता हैं। मोरिस जोंस का कहना है कि भारत के राजनीतिक जीवन का गूढ़ अध्ययन करने से यह स्पष्ट हो जाता है कि यहां कोई भी चीज जिस रूप में दिखाई देती है वास्तव में वह वैसी ही नहीं है। इसका अर्थ यह है कि भारत के राजनीतिक जीवन के दिखावे और उसकी वास्तविकता में मौलिक अन्तर है। इसलिए राजनीति के केवल वाह्य स्वरूप को देखकर जिन निष्कर्षो अथवा सिद्धांतो का प्रतिपादन किया जाता है वे राजनीति की वास्तविकताओं को प्रस्तुत नहीं करते। मोरिस जोंस का यह दावा है कि भारत की विभिन्न राजनीतिक संस्थाएं जिन आदर्शो को प्रस्तुत करती हैं और यहां के राजनीतिक नेता जिन सिद्धांतों का उपदेश देते हैं, व्यवहार में स्वयं ही उन्हें तिरस्कृत करते हैं। उनका यह भी कहना है कि भारतीय राजनीति का स्वरूप इतना उलझा हुआ है कि उसे उसके वाह्य स्वरूप के आधार पर नहीं समझा जा सकता।

भारत के राजनीतिक जीवन में संलग्न व्यक्तियों की राजनीति अवधारणा, विभिन्न समस्याओं के प्रति उनका दृष्टिकोण, उनके द्वारा अपनाए जाने वाले मूल्य और उनका राजनीतिक आचरण एक समान नहीं दिखाई देता। उनमें इतनी मौलिक विभिन्नताएं दिखाई देती हैं कि उन्हें श्रेणीबद्ध किया जा सकता है। इन विभिन्नताओं को दृष्टि में रखते हुए मोरिस जोंस ने भारत के राजनीतिक जीवन को तीन श्रेणियों में विभाजित किया है, जिनको उन्होंने भारतीय राजनीति के तीन मुहावरे' कहा है। साधारण शब्दों में हम इसे राजनीति के विभिन्न स्वरूप कह सकते हैं। उसका कहना है कि भारतीय राजनीति की प्रकृति अथवा वास्तविक स्वभाव को इन विभिन्न मुहावरों के माध्यम से ही समझा जा सकता है। उनके अनुसार वे तीन भाषाएं जिनके अनुसार भारतीय राजनीतिक जीवन का संचालन होता हैं उन्हें आधुनिक, परंपरावादी और संतवादी भाषा का नाम दिया जाता है। ऐसा लगता है कि मोरिस जोंस ने राजनीति के इन विभिन्न रूपों के लिए 'इंडियन' शब्द का प्रयोग यह स्पष्ट करने के लिए किया है कि जिस प्रकार प्रत्येक भाषा में अलग-अलग मुहावरे होते हैं जिनका अर्थ साधारण वाक्यों की तरह स्पष्ट नहीं होता बल्कि वास्तविक अर्थ उनमें छिपा हुआ होता है जिन्हें गूढ़ विचार के बाद ही समझा जा सकता है, उसी प्रकार भारतीय राजनीति के ये विभिन्न रूप आसानी से नहीं समझे जा सकते क्योंकि इनका अंतर्निहित स्वरूप इनके वाह्य स्वरूप से भिन्न है।

मोरिस जोंस के द्वारा प्रतिपादित भारतीय राजनीति के इन तीन मुहावरों का साधारण अर्थ यह है कि भारत के राजनीतिक जीवन में तीन प्रकार के विचार वाले लोग पाए जाते हैं। कुछ वे लोग हैं जिनका दृष्टिकोण विस्तृत है और जो राष्ट्रीय हितों को महत्व देते है। इन्हें आधुनिक वर्ग में सम्मिलित किया जाता है। दूसरी श्रेणी में वे लोग हैं जो परंपरावादी विचारधाराओं के पोषक हैं; जातीय भेदभाव पर विश्वास करते है; स्थानीय हितों को महत्व देते हैं और राष्ट्रीय समस्याओं तथा हितों को गौण स्थान देते हैं, इन्हें परंपरावादी श्रेणी में रखा जा सकता है। इन दोनों दृष्टिकोणों के बीच राजनीति का तीसरा वर्ग उनलोगों से निर्मित होता है जो मोरिस जोंस ने संतवादी राजनीति की संज्ञा दी है। राजनीति की इन विभिन्न श्रेणियों में पाए जाने वाले व्यक्तियों का दृष्टिकोण और उनकी विचारधाराएं एक दूसरे से भिन्न हैं। इनके अपने कुछ लक्षण और विशेषताएं हैं और उनके भी सिद्धांत और व्यवहार में अंतर पाया जाता है।[10]

संविधान के 72 वें-73 वें संशोधन ने जिस पंचायती राज व्यवस्था को जन्म दिया है- उस व्यवस्था के अनुसार पंचायती चुनाव के बाद से बिहार के गाँवों में नई राजनीतिक शक्तियों का उभार हुआ है। नई प्रकार की राजनीतिक सक्रियता देखी जा रही है। गांवों की परम्परागत सत्ता का पराभव हुआ है। हाशिये पर रहनेवाली शक्तियाँ केन्द्र में आ रही हैं और केन्द्र में रहनेवाली शक्तियाँ हाशिए पर। परिधि और केन्द्र में रहनेवाली परम्परागत शक्तियों के अदला-बदली ने इनके बीच के टकराव को तेज कर दिया है। परिणामतः हिंसा बढ़ रही है। बिहार की राजनीति में पनप रहे राजनीतिक अपराधीकरण का प्रभाव गाँव की राजनीति पर भी पड़ा है। जैसे केन्द्र और राज्य के विधानमंडलों में बाहुबलियों का प्रवेश हुआ है-उसी प्रकार पंचायती राज के विभिन्न प्रशासकीय इकाइयों में भी आजीवन सजायाता अपराधियों ने प्रवेश पा लिया है।[11] गाँवों की एक महत्वपूर्ण परिघटना है कि गरीब जातियों के बीच के भेद तेजी से मिट रहे हैं। इस घटते अन्तर को सभी प्रकार की गरीब जातियों में देखा जा सकता है; इनके पोशाक में, स्कूलों में,इनकी दोस्ती में, खेलों के मैदान में, खान-पान में। खेतों में काम करनेवाले मजदूरों की पोशाक भी बदली है। युवा मजदूर पैंट-शर्ट और गमछा लिए नंगे पैर लाठी लिए खेत के डंडार पर नजर आता है। इसी पोशाक में रेडियो लिए भैंस की पीठ पर चरवाहा भी दिखाई देता है। इन गरीब सवर्ण-अवर्ण जातियों पर सरकार के परिवार नियोजन का कोई प्रभाव नहीं है। जिससे पूछिए पाँच-छः बच्चे बस कहता है। कोई-कोई तो नौ-दस तक की गिनती गिनाता है। इनको इस बात की कोई समझ नहीं है कि इनकी दरिद्रता का एक बड़ा कारण इनके द्वारा पैदा किये गये ये बच्चे भी हैं। ये इसे भगवान की देन मानते हैं। मवेशियों खासकर देहातों से बिहारी नस्ल की गायें गायब हो रही हैं। विदेशी नस्ल की गायों या दोगली गायों से देहात पट गया है। कभी गाँवों में दूध-दही की नदियाँ बहती थीं। अब गाँव का दूध शहर जा रहा है और दूघ के बूथ से गाँव में दूध आ रहा है। गरीब के बच्चों को अब मट्ठा और छाछ भी मुहाल नहीं है। यही हाल सब्जियों का है। गाँव की उपजाई सब्जियाँ शहर जा रही हैं और गाँव का आदमी अपनी ही सब्जियों को शहर से खरीद कर खा रहा है। पैसे वाले गाँव से निकलकर समीप के बस पड़ाव पर, रेलवे स्टेशन के समीप अथवा ब्लॉक आफिस अथवा किसी बड़े बाजार के आस-पास घर बना रहे है। ज्यादा पैसे वाले अनुमंडल या जिला मुख्याल के इर्द-गिर्द बस रहे हैं और गाँवों को अपना उपनिवेश बना रहे हैं। गंगा के

किनारे-किनारे रहने वाले लोगों की जिंदगी का मांस, मछली, मदिरा, ताड़ी कभी अंग नहीं था। आज सवर्ण-अवर्ण सभी जातियों की शान में इनका इस्तेमाल आम हो रहा है। ये ताड़ी शराब पीकर उन्मत्त होकर किसी गरीब, किसी दलित के घर में घुसकर उनकी बहु-बेटियों की इज्जत लूटते हैं, बलात्कार करते हैं। यह एक नया विकास है। पहले के सामंत रखैल रखते थे। आज का लंठ-लम्पट किसी औरत की अस्मत लूटता है।[12] पहले शादी-विवाह संबंधियों और गोतियों के सहयोग से होता था। ये लोग ही साग-सब्जी, चावल-दाल,गेहूं-आटा और दूध-दही का प्रबंध करते थे। अब यह सहयोग समाप्त हो गया है। अब समान की जगह पैसे ने ले लिया है। शादीयों से नाच गायब हो गया है। पहले शादियों में लोगों के मनोरंजन के लिए तरह-तरह की नाच मंडलियों की व्यवस्था की जाती थी जिससे लोगों का भरपूर मनोरंजन होता था। अब लोक भाषाओं में रचित कामुक, नग्न और विमान्य गीतों के कैसेट बजाना उनका विकल्प बना है। शहनाइंया कम बज रही हैं। शादीयों का जश्न अब कुछ घंटों का हो गया है। रात होती है। युवा पीढ़ी बिजली की रोशनी में बारात लगाने के समय बैंड बाजे के गीत के धुन पर नाचने लगती है। जयमाला होता है। खाना होता है। बारातियों के लिए शादी की रस्म यहीं खत्म हो जाती है। तिलक का रोग सभी जातियों में फैल गया है। नौकरी करने वाले दुल्हे की कीमत ऊंची है। यहां तक कि चपरासी और सिपाहीगिरी की नौकरी करनेवाले की कीमत बेकार 30-40 बीघे जमीन जोतने वाले ग्रेजुएट लड़के की तुलना में ज्यादा है। पहले दहेज का मतलब होता था। अंगूठी, कलम,साइकिल और घड़ी। आज दहेज का मतलब है मोटर साइकिल, टी.वी. फ्रीज, वाशिंग मशीन और चार चक्केवाली गाड़ियाँ। भले ही टी.वी. फ्रीज को चालू करने के लिए बिजली रहे या न रहे, चाहे गाड़ी में तेल भराने की क्षमता हो या न हो। गाँवों में ईर्ष्या, द्वेष, कलह और मुकदमेबाजी ने प्रेम, भाईचारा सहयोग और सौहार्द की संस्कृति को खत्म कर दिया है। किसी से किसी का कोई लगाव नहीं रह गया है। फल है कि पहले लोग चेता, फाग, कीर्त्तन, भजन गाकर मनोरंजन करते थे। आपसी प्रेम प्रदर्शित करते थे- वैसा माहौल अब नहीं रहा। मनोरंजन की सामूहिकता के अभाव ने भी गाँवों को कलह में डुबो दिया है।[13] गाँवों में सड़कों का निर्माण, स्कूल-कॉलेजों की स्थापना, गाँवों तक बैंको की पहुंच की परिणति है कि गाँवों में पूँजीवाद का प्रवेश हुआ है। सामंती अर्थ व्यवस्था टूट रही है। सामाजिक संबंध बदल रहा है। बाबूजी, माई, भाई, चाचा-चाची अब पापाजी, मम्मी, आंटी के नाम से पुकारे जा रहे हैं। हलवाहा, चरवाहा जो अमूमन दलित होता था- काका, चाचा, भैया कहलाता था। अब ट्रैक्टर चलानेवाला ड्राइवर साहब कहलाता है। वह ईट ढोकर, खेत जोत कर, गांव के समीप के सड़क पर लाईन होटन में तंदूरी रोटी और चिकेन खाता है जबकि ट्रैक्टर का मालिक किसान मकई की रोटी खाता है। जजमानी प्रणाली की जातियाँ जो कृषक जीवन से जुड़े लोगों की जरूरतें पूरी करती थीं- उसने अपने परम्परागत रोजगार को नया रूप दे दिया है। नाइयों ने सैलून खोल लिये है। लोहारों ने लेथ मशीन बैठा ली है या सड़क पर साइकिल मरम्मत करने की दुकान खड़ी कर ली है। चमार जूते-चप्पल अब अपने केवल जजमानों के लिए ही नहीं बनाता है। बाजार में कोई भी उसके जूते-चप्पल का खरीदार है। पूँजीवाद ने जातिगत पेशे की अवधारणा को समाप्त कर दिया है। राजपूत भी चमड़े के सामान बेचने में कोई संकोच नहीं कर रहा है, जबकि ब्राह्मण को जूता चप्पल की दुकान में नौकरी करने से कोई परहेज नहीं है।सवर्ण

जिन कामों को हिकारत की नजर से देखते थे- बेरोजगारी ने उनके परम्परागत दृष्टिकोण को बदल दिया है।

गाँव बदल रहा और बड़ी तेजी से बदला भी है। सामंती अवशेष एक-एक कर झड़ रहा है। भूमंडलीय संस्कृति का दिखावा गाँवों तक पहुँच रहा है। भोड़ी नकल एवं जीवन मूल्यों की हत्या जारी है। बिहार के किसी पिछड़े गाँव में खड़ा हो जाइए-आपको लोग मिलेंगे जो विश्वविद्यालयों में छात्रों के गिरते चिन्तन स्तर और घटते सामाजिक सरोकार से परेशान हैं। क्रिकेट, आई. टी. एवं नकलची अमरीकी उन्माद में उनके सारे दर्शन को सिमटते देख रहे है। गांव में गुली डंडा, दोल्हापाती, कबड्डी-चिक्का, जाबर, लटू-गोली और गेंद के खेल का नाम तक नहीं लेनेवाला मिलता है। लालूजी के चरवाहा और पहलवान विद्यालय के लाख प्रावधान के बावजूद गाँवों में अखाड़े कहीं नजर नहीं आते हैं। चोरी, डकैती, राहजनी, पशुचोरी-जो पनहा (फिरौती की रकम) लेकर वापस की जाती थी- उसकी जगह अपहरण ने ले ली है। बिहार के गाँवों का एक अच्छा-खासा हिस्सा जो पहले बंगाल, असम, दक्षिण बिहार के जमशेदपुर, धनबाद, कुल्टी, झरिया जाता था- अब दिल्ली, हरियाणा, पंजाब, राजस्थान, कर्नाटक और आन्ध्र प्रदेश जा रहा है। कम पढ़े-लिखे या अनपढ़-गंवार भी अपनी मेहनत मशक्कत से रोजी-रोटी कमा रहा है और बिहार के गाँवों को खुशहाल बना रहा है। ऐसे लोग वहाँ के शब्द, भाषा, बोलचाल-रहन-सहन को बिहार के ग्रामीण जीवन में प्रवेश करा रहे हैं। परिवहन तथा संचार के नये साधनों तथा कारखाने की प्रौद्योगिकी व्यवस्था ने जीवन का स्वरूप ही बदल दिया है। शहरीकरण ने समाचार पत्रों, दूरदर्शन और सिनेमाघरों के जरिए गांवों में युगों से चली आ रही और धीरे-धीरे परिवर्तित हो रही लोक संस्कृति पर जबर्दस्त प्रभाव डाला है। शहर से गाँव जानेवाला मजदूर, दतरों में काम करनेवाला बाबू और विद्यार्थी अपने साथ कई चीजें तो ले जाता रहा है जिससे गाँव की संस्कृति गंभीर रूप से प्रभावित होती रही है। उसका पुराना अलिखित स्वरूप भी बदलता रहा है। नई प्रौद्योगिकी जैसे साइकिल ने बैलगाड़ी और घोड़ा सवार की संस्कृति से भिन्न संस्कृति को जन्म दिया है। बैलगाड़ी में एक से अधिक लोग चलते थे जबकि घोड़े में एक आदमी। साइकिल पर एक या दो आदमी ही चढ़ता है जबकि उसकी रफ्तार बैलगाड़ी और घोड़े की रफ्तार से अधिक है। ऐसे देखने पर तो ऐसा ही लगता है कि ये सब सवारियाँ हैं जिस पर चढ़कर आदमी एक जगह से दूसरी जगह जाता है लेकिन ध्यान से देखने पर इन तीनों प्रकार के वाहनों पर सवारी करनेवालों के दृष्टिकोण में अन्तर मालूम पड़ता है। उनकी जीनव शैली, मूल्य और सोच में भी फर्क दिखाई पड़ता है। यात्रा के दौरान उनके द्वारा गाये जानेवाले गीत में भी फर्क है। हम सभी जानते हैं कि अपने ही देश में पूँजीवाद के आगमन के बाद कानून, प्रशासन और व्यवस्था कैसे बदली है और गाँव के आदमी को चाहे या अनचाहे शहर का चक्कर लगाने के लिए मजबूर होना पड़ा है। नई-नई बीमारियों का इलाज गाँव के वैद्यजी के पास नहीं रहा तथा गांव की पाठशालाओं की शिक्षा जीवन में तरक्की के रास्ते खोलने में असमर्थ हो गई है। शहर के इस बढ़ते महत्व ने गंवई संस्कृति को गहरे रूप से प्रभावित किया है और उसमें परिवर्तन हुए हैं। कोई भी संस्कृति जड़वत या अलग-थलग नहीं रही है। पुराने जमाने में भी लड़ाई, व्यापार और आवास-प्रवास उसे प्रभावित करते रही है अभी द्रुतगामी परिवहन के साधन, प्रभावकारी संचार माध्यम और व्यापार ने सांस्कृतिक क्षेत्र में परिवर्तनों को बहुत तेज कर

दिया है। सुदूर गांवों में अब तक अछूती रही लोक संस्कृति का स्वरूप भी बदलने लगा है। अब कुछ भी पवित्र, स्थायी और पहुँच से बाहर नहीं रह गया है। लोक संगीत में विदेशी धुनों और वाद्यों का धड़ल्ले से प्रवेश होता जा रहा है। वैश्वीकरण के दौर में मानव संस्कृति को खरीद-बिक्री की चीज बनाया जा रहा है। बहुराष्ट्रीय मीडिया कंपनियाँ जिनके संचार नेटवर्क सारी दुनिया में फैले हैं विश्व के हर भाग से स्थानीय सांस्कृतिक संसाधनों को जुटाकर सांस्कृतिक मालों तथा मनोरंजन के साधनों के रूप में सजा-सँवारकर बाजार में बिक्री के लिए रख रही है। विश्व की जनसंख्या का ऊपरी 20 प्रतिशत सांस्कृतिक मालों पर उतना ही खर्च कर रहा है जितना विनिर्मित वस्तुओं और बुनियादी सेवाओं पर। इस प्रकार सांस्कृतिक मालों का बाजार बडा़ ही नहीं बल्कि निरन्तर विस्तारशील और मुनाफा दायक है। इस नये विकास ने लोगों को चिन्तित कर दिया है। समाज का प्रबुद्ध तबका समृद्ध सांस्कृतिक विविधता से संबंध टूटने का खतरा महसूस करने लगा है।

==============

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची-

1. भारतीय राजनीतिक प्रणाली, ले. एस.एम. सईद, पृ. 382
2. माइनर वीनर के एक लेख इंडिया-टू पोलिटिकल कल्चर, (पोलिटिकल कल्चर ऐंड पोलिटिकल डेवलमेंट' यूनीवर्सिटी प्रेस, 19) से लिया गया।
3. वही, पृ. 387
4. सोशल चेंज इन माडर्न इंडिया, ले एम. एन. श्रीनिवास, पृ. 50-56
5. पोलिटिक्स इन इंडिया, रजनी कोठारी, पृ. 92
6. इंडिया टू पोलिटिकल कल्चर, माइनर वीनर, पृ. 19
7. वही, पृ. 20
8. वही, पृ. 25
9. दि इंडियन पोलिटिकल सिस्टम, ले. नार्मन डी. पामर, पृ. 1
10. दि गवर्नमेंट ऐण्ड पॉलिटिक्स आफ इंडिया, ले. मोरिस जोन्स, पृ. 64
11. समय संवाद, ले. व्रजकुमार पांडेय, पृ. 222
12. वही, पृ. 223
13. वही, पृ. 224

Research Journal of Arts, Management and Social Sciences,
Vol. XVIII, Hindi.-I, Year IX, March, 2018
UGC Sl. No. 2138, Journal No.48774, Impact Factor 2.996

विश्व में भारतीय अर्थव्यवस्था तरक्की के पथ पर अग्रसर

* कुमुद श्रीवास्तव

सारांश– *विश्व आर्थिक मंच (डब्लूईएफ) का 48 वां वार्षिक सम्मेलन दावोस (स्विट्जरलैंड) में हो चुका है। यह सम्मेलन 23 जनवरी से शुरू हुआ और 26 जनवरी तक चला वैश्वीकरण के इस युग में दुनिया के विभिन्न देशों के बीच प्रतिस्पर्धा बढ़ी है और कुछ देश तो ऐसे हैं जो दुनिया का सरताज बनने के भी इच्छुक हैं। इसी महत्वाकांक्षा बीच विभिन्न देश समान हितों वाले समूहों में बंट गए हैं। ऐसे माहौल मे स्वहित वादी विचारधारा का व्यापक असर देशों के परस्पर सहयोग पर पड़ा है और इसीलिए एकीकृत साझा हितों जैसे अंतरराष्ट्रीय सहभागिता, पर्यावरण, संतुलन, शांति, सीमा सुरक्षा तथा अर्थव्यवस्था की आवश्यकता महसूस की गई शायद इसीलिए डब्लूईएफ का मुख्य एजेंडा राष्ट्रों के बीच परस्पर सहयोगात्मक व एकीकृत विदेश नीतियों पर केन्द्रित है। सम्मेलन के उद्घाटन सत्र को भारत के प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने संबोधित किया है। प्रधानमंत्री ने अपने उद्बोधन में दरारों और दूरियों को बढ़ावा देने वाली विश्व व्यवस्था पर चिंता जताई। आतकंवाद, जलवायु परिवर्तन और ग्लोबलाइजेशन की फीकी होती चमक के खतरे भी गिनाए।*

वर्ष 1997 के बाद पहली बार भारतीय प्रधानमंत्री ने डब्लूईएफ में भाग लिया है 1997 में तत्कालीन प्रधानमंत्री एच.डी.देवेगौडा ने डब्लूईएफ में शिरकत की थी। भारत विश्व मंच पर बड़ी भूमिका निभाने के लिए तैयार है। भारतीय अर्थव्यवस्था विश्व की सबसे तेज गति से बढ़ते हुए तरक्की के पथ पर अग्रसर है और माना जा रहा है कि 2022 तक भारत जर्मनी से आगे निकल चुकेगा जो आर्थिक शक्ति के मामले में दुनिया में चौथे स्थान पर है। भारत का ऑटो बाजार दुनिया में पांचवें स्थान पर है और यह विश्व की दूसरी सर्वाधिक आबादी वाला देश है जिनमें 65 प्रतिशत युवा है जिनकी आयु 35 वर्ष से कम है। कृषि के जरिये विश्व जीडीपी में योगदान के लिहाज से भारत दूसरे स्थान पर है और भौगोलिक क्षेत्र के लिहाज से यह दुनिया में सातवें नंबर पर है इसके अलावा हाल ही 35000 का स्तर पार कर लेने लेने के बाद भारतीय स्टॉक मार्केट भी विश्व में तीसरे पायदान पर खड़ा है। हांगकांग और अमरीका का नंबर पहले आता है। जहां तक व्यापार वरीयता का सवाल है, तीस पायदान चढकर भारत उन पांच शीर्ष देशों में शुमार हो गया है जो निरंतर बेहतरी की ओर अग्रसर हैं। ऐसी स्थिति में अंतरराष्ट्रीय संस्थान, राजनेता और बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के सीईओ दुनिया को एक समग्र राष्ट्र बनाने के लिये भारत के सुझाव और एजेंडा की ओर उत्सुकता से देख रहें है। 2018-20 में विश्व की समग्र अर्थव्यवस्था में विकास की दर जहां 2.9 से 3.1 फीसदी है, अमरीका अर्थव्यवस्था की दर

* प्राध्यापक, अर्थशास्त्र विभाग, शासकीय तिलक स्नातकोत्तर कॉलेज, कटनी (म.प्र.)

2.0से 2.5 फीसदी, यूरो देशों की 1.5 से 2.1 फीसदी तथा चीन की 6.2 से 6.4 फीसदी है। वहीं भारत की आर्थिक विकास दर सबसे तेजी से बढते हुए 7.3 से 8.1 फीसदी तक रहने का अनुमान है। इसलिए दुनिया भर के पूंजीवादी भारत को विश्व व्यापार केंद्र के तौर पर देख रहे है।

भारत में पिछले वर्षो में ऐसे कौन से प्रयास किये गये जिनके आधार पर भारत का विश्व अर्थव्यवस्था में प्रमुख स्थान बन गया है। इसे भारत द्वारा किये जा रहे प्रयासों को इन बिन्दुओ द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है।

* प्रत्यक्ष विदेशी निवेश
* मेक इन इंडिया
* स्टार्ट अप इंडिया एण्ड स्टैंड अप इंडिया

विदेशी विनियोग का प्रात्सोहित किया गया विदेशी विनियोग तीन से किया जा रहा है-

1. विदेशी प्रत्यक्ष विनियोग
2. पोर्टफोलियो विनियोग
3. विदेशी सहयोग

प्रत्यक्ष विदेशी विनियोग में कोई विदेशी नागरिक अथवा संगठन दूसरे देश में अपनी पूँजी द्वारा उत्पादन इकाई की स्थापना करता हैं। ऐसे विनियोजन पर विनियोजक का स्वामित्व प्रबन्ध में नियंत्रण रहता हैं।

भारत में यह विनियोग भारतीय रिजर्व बैंक, औद्योगिक सहायता सचिवालय एवं विदेशी विनियोग प्रोत्साहन बोर्ड के माध्यम से होता रहा हैं। इसके अन्य दो रास्ते भी हैं। -अनिवासी भारतीय तथा अनिवासियों द्वारा भारतीय कम्पनियों के शेयरों की खरीद। पोर्टफोलियों विनियोग के अन्तर्गत विदेशी कम्पनियाँ भारतीय कम्पनियों के ऋण-पत्र (बॉण्ड) या अंश (शेयर) खरीदकर विनियोग करती हैं। इस प्रकार के विनियोग में विदेशी कम्पनियों का स्वामित्व, प्रबन्ध व निवेश न होकर लाभांश व ब्याज प्राप्त करने तक सीमित होता हैं। यह सब स्वदेशी होता हैं।

भारत के सन्दर्भ में पोर्टफोलियो निवेश का आशय विदेशियों या विदेशी संस्थागत विनियोग या भूमण्डलीय न्यासी रसीद या अमरीकी न्यासी रसीद या अपटीय फण्ड एवं अन्य द्वारा घरेलू पूँजी बाजार में प्रतिभूतियों में विनियोग से हैं।

इस प्रकार प्रत्यक्ष विनियोग अपनी कम्पनी के प्रबन्ध व उन्नति में प्रत्यक्ष रूप से कार्य करते हैं। परन्तु (पोर्टफोलियों) विनियोग में कम्पनी के विकास व प्रबन्ध में कोई प्रत्यक्ष योगदान नहीं होता।

विदेशी प्रत्यक्ष विनियोग आसानी से तरलता में परिवर्तित नहीं किये जा सकते। इालिए इनमें विनियोग करने से पहले कई तथ्यों,जैसे- राजनीतिक स्थिरता, सरकार की नीतियॉ, आर्थिक व औद्योगिक विकास के अवसर आदि पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए। दूसरी ओर, पोर्टफोलियो विनियोग को आसानी से तरलता में परिवर्तित किया जा सकता हैं।

विदेशी सहयोग- इधर के वर्षो में स्वदेशी पूंजी तथा विदेशी तकनीक की संयुक्त भागीदारी को सरकार द्वारा प्रोत्साहित किया जा रहा है।

विदेशी सहयोग के तीन प्रकार से किया जा रहा है-

* निजी निवेशकों के मध्य संयुक्त भागीदारी
* विदेशी फर्मो एवं भारत के मध्य सहयोग
* विदेशी सरकारों एवं भारत सरकार के बीच सहयोग

विदेशी सहयोग के निम्नलिखित दो स्वरूप हो सकते हैं-

1. **तकनीकी सहयोग**- इस सहयोग में टेकनोलाजी, फ्रेंचाइजी, पेटेण्ट आदि विदेशी सहयोग द्वारा उपलब्ध कराए जाते हैं जिसके लिए भारतीय उद्यमी विदेशी साझेदारी को रॉयल्टी दी जाती हैं। यह रॉयल्टी एक निश्चित समय के लिये निश्चित दर से हो सके अथवा एक मुक्त लम्पसम्प दी जा सकती है। इस प्रकार तकनीकी सहयोग में इसी प्रकार की विभिन्न विनियोग की आवश्यकता नहीं पड़ती है।

2. **वित्तीय सहयोग**- इस प्रकार के सहयोग में विदेशी उद्यमी निवेश करते हैं। जो कि प्रत्यक्ष विदेशी विनियोग (फॉरेन डाइरेक्ट इनवेस्टमेनट) के रूप में हो सकते है अथवा पोर्टफोलियो के रूप में हो सकते हैं। प्रायः सहयोग शब्द का प्रयोग विदेशी विनियोग के लिये किया जाता हैं। कारण यह है कि विदेशी प्रत्यक्ष विनियोग को दीर्घकालीन उत्पादक सम्पत्ति लगाया जाता है; जैसे- भारत में नई औद्योगिक इकाइयों की स्थापना करना।

विदेशी सहयोग, विदेशी प्रत्यक्ष निवेश एवं पोर्टफोलि निवेश के माध्यम से विदेशी पूँजी को आकर्षित किया जा सकता है। भारत जैसे विकासशील देश में पूँजी एवं आधुनिक तकनीकी का अभाव है, विकास की दृष्टि से विदेशी पूँजी का विशिष्ट महत्व है।

एफडीआई नीति-

प्रत्यक्ष विदेशी निवेशी एफडीआई आर्थिक विकास एक महत्वपूर्ण वाहक है जो कि उच्च विकास दर को बनाए रखने और उत्पादन बढ़ाने में मदद करता है। वह गैर -ऋण वित्तीय संसाधनों का एक प्रमुख स्त्रोत है और साथ में रोजगार सृजन में भी मदद करता है। अनुकूल नीति-मंत्र व अच्छा कारोबारी माहौल एफडीआई प्रवाह बढाते हैं।

सरकार ने एफडीआई नीति सरल और उदार बनाने के लिए कई सारे सुधार किए है, ताकि देश में कारोबार करने में आसानी हो। इससे भी ज्यादा एफडीआई प्रवाह होगी। कई सारे क्षेत्रों में उदारीकरण लाया गया, जिनमें रक्षा, निर्माण, प्रसारण, नागरिक उडडयन, खेती, कारोबार, प्राइवेट सेक्टर बैंकिग,उपग्रह स्थापना व संचालन तथा क्रेडिट इन्फॉरमेशन कंपनियां शामिल है। आर्थिक सर्वेक्षण 2015-16 व आम बजट 2016.17 के अनुसार, भारत सरकार ने अर्थव्यवस्था में एफडीआई को बढावा देने के लिए नीति अपनाई जिसके अंतर्गत-

* बीमा और पेंशन निधि (26 प्रतिशत स्वचालित मार्ग के तहत) तथा रक्षा क्षेत्र में 49 प्रतिशत तक की एफडीआई की अनुमति।
* चिकित्सकीय उपकरणों के निर्माण , व्हाइट लेबल एटीएम और रेलवे आधारभूत ढांचे में 100 प्रतिशत तक एफडीआई की अनुमति।
* भारत में निर्मित व उत्पादित खाद्य उत्पादों के विपणन में 100 प्रतिशत तक एफडीआई की अनुमति।
* बैंकिंग क्षेत्र में महत्वपूर्ण सुधार और सामान्य बीमा कंपनियों की सार्वजनिक लिस्टिंग के लिए एफडीआई नीतियों में महत्वपूर्ण बदलाव।
* बीमा एवं पेशन , परिसंपत्ति पुननिर्माण कंपनियां , स्टॉक एक्सचेंज के क्षेत्र के लिए

एफडीआई नीति में सुधार लाए गए।

* पीएसयू कंपनियों के प्रबंधन के लिए एक नई नीति लाई गई जिसमें रणनीतिक विनिवेश शामिल है। इसे एफडीआई के लिए उदार प्रावधान माना गया।

अर्थव्यवस्था में दिसंबर 2015 तक एफडीआई व एफडीआई इक्विटी प्रवाह में क्रमश: 26 प्रतिशत और 31प्रतिशत तक सुधार आया। पिछले 15 वर्षो के एफडीआई आंकड़े एफडीआई को आकर्षित करने में उद्योग क्षेत्र के शेयर (कुल एफडीआई का) उजागर करते है:

* सेवा क्षेष-17.6 प्रतिशत
* निर्माण क्षेष - 8.8 प्रतिशत
* कम्प्यूटर हार्डवेयर और सॉटवेयर - 7.2 प्रतिशत
* टेलि कम्युनिकेशन- 6.6 प्रतिशत
* ऑटोमोबाइल सेक्टर -5.2 प्रतिशत

कल एफडीआई अतंर्वाह पिछले वर्षो में 55.56 विलियन अमरीकी डालर की तुलना में 8% बढकर 2016-17 में 60.08 विलियन अमरीकी डॉलर हो गया है। किसी भी वित वर्ष के लिये अबतक का सर्वाधिक स्तर है2017-18 में सितम्बर तक कुल एफडीआई अतर्वाह 33.75 विलियन अमरीकी डॉलर था।

* संशोधनों का मकसद एफडीआई नीति को और ज्यादा उदार और सरल बनाना है, जिससे देश में कारोबार करने में और आसानी हो। कैबिनेट के इस फैसले से विदेशी निवेश का प्रवाह बढ़ेगा जो निवेश, आय और रोजगार में उल्लेखनीय योगदान करेगा।
* इस समय रिटेल कारोबार का 9 फीसदी संगठित है और बाकी असंगठित। देश में सिंगल ब्रांड रिटेल में कम ही पैसे लगाते हैं। आइडिया, एचएंडएम, नाइकी, एप्पल जैसे बड़े विदेशी सिंगल ब्रांड के रिटेल स्टोर इस वक्त मौजूद हैं। सिंगल ब्रांड रिटेल में एफडीआई से ज्यादा फायदा कारोबार जगत को नहीं मिलेगा।
* दो-तीन साल में हाउसिंग सेक्टर में वृद्धि नजर नहीं आ रही। निवेश को मंजूरी से कर्मिशयल स्पेस का निर्माण बढ़ेगा जिससे रोजगार की संभावना बढ़ सकती है।
* इससे पहले कई सेक्टर्स में 100 फीसदी एफडीआई है। कोयला खनन, कृषि, रक्षा उपकरण, बागवानी शामिल हैं। अगर मल्टी ब्रांड रिटेल में एफडीआई की योजना बनी तो उसका असर होगा।
* पावर एक्सचेंज से संबंधित क्षेत्र में सरकार ने विदेशी संस्थागत निवेशकों और पोर्टफोलियो निवेशकों द्वारा प्राथमिक बाजारों के माध्यम से निवेश पर लगे प्रतिबंध को हटा दिया है। बिजली क्षेत्र में बड़ी कंपनियों के आने की है उम्मीद।
* कैबिनेट ने एफडीआई नीति में मेडिकल डिवाइसों की परिभाषा में संशोधन करने का निर्णय लिया। एफडीआई नीति में चिकित्सा उपकरणों की जो परिभाषा दी गई है वह दवा एवं कॉस्मेटिक्स अधिनियम में किए जाने वाले संशोधन के अनुरूप होगी। इसलिए दवा एवं कॉस्मेटिक्स अधिनियम का संदर्भ समाप्त करने का निर्णय लिया गया है।
* अब संयुक्त ऑडिट वर्तमान एफडीआई नीति में उन ऑडिटरों के विनिर्देश के संबंध में कोई भी प्रावधान नहीं है। अब एफडीआई नीति में इस बात का उल्लेख करने का निर्णय लिया गया है कि कंपनियां विशेष परिस्थितियों में विदेश ऑडिट का विकल्प रख सकती

हैं लेकिन ये संयुक्त ऑडिट होगा।

हम इन देशों से भारत में एफडीआई प्रवाह में काफी विविधता पाते हैं।

* सिंगापुर, मॉरिशस, नीदरलैंड् और अमेरिका से बड़ा हिस्सा आता है।

* एफडीआई इक्विटी प्रवाह में से 60 प्रतिशत से अधिक दो भौगोलिक रूप से छोटे देशों सिंगापुर और मॉरिशस से आता हैं। शायद इन प्रवाहों को अधिक गहनता से जांचने की जरूरत हैं, ताकि अस नतीजे पर पहुंचा जा सके कि क्या वे वास्तविक निवेश हैं या दूसरे स्रोतों से यहां भेजनें का रास्ता हैं, जिससे कि दोहरा कर-वंचन संधि का लाभ उठाया जा सके। भारत के साथ इन देशों की यह संधि हैं।

मेकइन इन इंडिया पहल सफल बने, इसके लिए राज्यों को विभिन्न क्षेत्रों में एफ डी आई बढाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभानी होगी। अभी एफडीआई प्रवाह साफ तौर पर क्षेत्रीय विषमता दर्शाता हैं।

* दिल्ली, हरियाणा, महाराष्ट्र,कर्नाटक,तमिलनाडु, गुजरात और आंध्र प्रदेश ने मिलकर पिछले 15 वर्षों में 70 प्रतिशत से अधिक एफडीआई प्रवाह को आकर्षित किया।

* बहुल प्राकृतिक संसाधन वाले राज्य, जैसे-झारखंड, बिहार, मघ्य प्रदेश,छत्तीसगढ और ओडीशा निवेश के लिए सीधे विदेशी पूंजी को आकर्षित नहीं कर पाए हैं।

सकारात्मक प्रभावः देश में कारोबारी माहौल को बढावा देने के लिए भारत सरकार ने कई नीतिगत कदम उठाए है। मकसद है कि घरेलू व विदेशी निवेश को बढावा दिया जाए। इसके लिए नियम सरल बनाना,एक सक्षम व प्रभावी शासन के लिए उसमें सूचना-प्रौद्योगिकी लाना, निवेश मैषीपूर्ण माहौल बनाना,वगैरह हैं। इन कदमों का सकारात्मक प्रभाव भी पड़ा हैं।

1. मेक इन इंडिया (सितंबर 2014)के आरंभ के बाद दिसंबर 2015 तक एफडीआई प्रवाह में करीब 40 प्रतिशत बढोतरी हुई। कई देशों (जैसे जापान,चीन,फ्रांस और दक्षिण कोरिया) ने भारत में कई औद्यौगिक और आधारभूत परियोजनाओं में भारी निवेश करने के इरादे की घोषणा की।

2. देश में कारोबार को आसान बनाने के लिए भारत सरकार ने कई सारे कदम उठाए हैं। मौजूदा नियम को सरल बनाया गया और सूचना प्रौद्योगिकी का इस्तेमाल किया गया ताकि शासन सक्षम और प्रभावी बने। वर्ल्ड इकोनॉमिक फोरम और वर्ल्ड बैंक की रैंकिग में हुए बड़े सुधार इस मामले में आई तब्दीलियों को बताते हैं। स्टार्टिंग, बिजनेस, डीलिंग विद कर्स्ट्रक्शन परमिट और गेटिंग इलेक्ट्रिसिटी सूचकांकों पर भारत की रैंकिंग सुधरी है (डुइंग बिजनेस रिपोर्ट 2016 में 142 से 130 वां स्थान)।

3. वर्ल्ड इकोनॉमिक फोरम के ग्लोबल कंपीटिटिवनेशन इंडेक्स के अनुसार, भारत की प्रतिस्पर्धता को लेकर वैश्विक धारणा तेजी से सुधरी के प्रति सरकार की प्रतिबद्धता दर्शाती है। 2015-16 में 16 स्थान का सुधार भारत में आया है (55वां स्थान)। बड़ी अर्थव्यवस्थाओं के बीच यह सबसे बड़ी वृद्धि है।

व्यापार करने में आसानी-

विश्व बैंक की डुइंग बिजनेस रिपोर्ट 2016 में भारत की रैकिंग सुधरकर 130वें स्थान (2015 के 142वें स्थान से) पर आ गई। 2016 के शुरुआत तक सरकार ने कारोबारी सुविधा के लिए जो महत्वपूर्ण कदम उठाए हैं, वे निम्नांकित हैं:

* इंडस्ट्रियल लाइसेंस और इंडस्ट्रियल एन्टरप्रन्योर मेमोरेंडम (आईईएम) के लिए आवेदन की प्रक्रिया को ई-बिज वेबसाइट पर ऑनलाइन किया गया।
* ई-बिज पोर्टल पर सरकार और एजेंसियों से मंजूरी के लिए सिंगल विंडो सिस्टम (एकल खिड़की तंत्र) अपनाई गई।
* निर्यात व आयात के लिए आवश्यक दस्तावेजों की संख्या कम करके केवल तीन की गई।
* कंपनी के निगमीकरण के लिए एक समेकित प्रक्रिया। निदेशक पहचान संख्या (डीआईएम) और कंपनी के नाम की उपलब्धता के लिए एक साथ आवेदन।
* न्यूनतम चुकता पूंजी की जरूरत खत्म की गई।
* औद्यौगिक लाइसेंसिंग के दायरे से काफी सारे भाग/घटक , ढली हुई वस्तुओं ६ भठियों वगैरह (रक्षा उत्पादों के रूप में वर्गीकृत) को बाहर रखा गया।
* दोहरी इस्तेमाल की चीजों (जिनका सैन्य और नागरिक उपयोग दोनों हो), जब तक कि उनको रक्षात्मक सामान के तौर पर वर्गीकृत न किया गया हो, के लिए अब रक्षात्मक दृष्टिकोण से आईएल लेने की जरूरत नहीं है।
* गृह मंत्रालय से 12 हफ्तों के अंदर आईएल पर सुरक्षा मंजूरी।
* इन्वेस्ट इंडिया के अंतर्गत एक निवेशक प्रोत्साहन सेल का निर्माण किया गया, ताकि वह संपूर्ण कारोबारी-चक्र के दौरान निवेशकों को सहायता और मार्गदर्शन प्रदान करे।
* ईपीएफओ (कर्मचारी भविष्य निधि संगठन) और ईएसआईसी (कर्मचारी राज्य बीमा निगम) के साथ पंजीकरण स्वचालित कर दिया गया है और उसी समय पर ईएसआईसी पंजीकरण संख्या उपलब्ध करा दी है।
* श्रमिक पहचान संख्या (एलआईएन) के लिए इकाइयों के पंजीकरण, निरीक्षण रिर्पोर्टिंग,रिर्टन सौंपने और शिकायत निवारण के वास्ते एकीकृत पोर्टल का आरंभ।
* कारोबार सुविधा के लिए राज्य व केन्द्रशासित प्रदेशों की भी रैंकिंग की जारही हैं। देश में शासन सुधारने और कारोबार को आसान बनाने के लिए आम बजट 2016-17 में पहलों की घोषणा की गई।
* कई मंत्रालयों में मानव संसाधन की तर्कसंगत व्याख्या के लिए टास्क फोर्स का गठन।
* स्वायत्त निकायों की तर्कसंगत व्याख्या और व्यापक समीक्षा।
* आधार के उपयोग द्वारा टारनेटेड डिलीवरी ऑफ फाइनेंशियल एण्ड अदर सब्सिडीज, बेनिफिट्स एण्ड सर्विसेस बिल लाना।
* खाद के लिए प्रायोगिक आधार पर प्रत्यक्ष लाभ हस्तांतरण (डीबीटी) को लाना।
* मार्च 2017 तक तीन लाख उचित मूल्यों की दुकानें (यानी टीपीडीएस) उपलब्ध कराई जाएंगी।
* स्टार्ट अप के लिए माहौल विकसित करने हेतु कंपनी अधिनियम में संसोधन।
* दाल की कीमतों को स्थिर करने के लिए 900 करोड़ रूपये की पूंजी के साथ मूल्य स्थिरीकरण कोष बनाना।
* एक सालाना कार्यक्रम के तहत राज्यों व जिलों को जोडने के लिये एक भारत श्रेष्ठ

भारत कार्यक्रम का आरंभ किया जाएगा, जो भाषा, व्यापार, संस्कृति, यात्रा व पर्यटन के क्षेत्र में लोगों को एक - दुसरे से जोडने का काम करेगा।

आर्थिक सर्वेक्षण 2015-16 के अनुसार, कारोबार करने को आसान बनाने के संबंध में जो सुधार हुए हैं , वे मुख्यतः खनन , उर्जा क्षेत्र और श्रम बाजार में हुए हैं और ये सुधार उच्च, तीव्र समावेशी एवं संवहनीय विकास के लिए बेहद महत्वपूर्ण हैं।

मेक इन इंडिया-

बहुराष्ट्रीय व घरेलू कंपनियों को भारत में ही अपने उत्पाद बनाने को प्रोत्सारित करने के लिए भारत सरकार ने सितंबर 2014 में मेक इन इंडिया का शुभारंभ किया। यह पहल न सिर्फ विनिर्माण,बल्कि प्रासंगिक आधारभूत संरचना और सेवा क्षेत्रों में भी उद्यमशीलता को बढ़ावा देने के लिए की गई। इस पहल का दृष्टिकोण है कि भारत में पूंजीगत व प्रौद्योगिकी निवेश, दोनों को आकर्षित करना , ताकि देश चीन और अमेरिका से भी आगे निकलकर दुनिया की सबसे अधिक एफडीआई वाला देश बन जाए। जिसका उद्धेश्यः अर्थव्यवस्था के 25 क्षेत्रों में रोजगार सृजन और कौशल विकास पर जोर दिया हैं। इसमें ऑटोमोबाइल, उड्डयन, जैव-प्रौद्योगिकी, रक्षा विनिर्माण, विद्युत मशीनरी, खाद्य प्रसंस्करण, तेल व गैस, दवाई, वगैरह शामिल हैं। इसकी प्रेरणा अशोक चक्र से ली गई। इसका लोगे लंबे डग भरता हुआ एक शेर है, जो दांतेदार पहियों से बना हुआ है। यह विनिर्माण, शक्ति और राष्ट्रीय गौरव का संकेत है।

इस पहल का एक और लक्ष्य है- उच्च गुणवत्ता वाले मानकों और स्थिरता के आयामों को लागू करना। इसमें अपनाई गई नीतियां है- कारोबार को आसान बनाना, पुराने पड़ चुके कानूनों से इनको दूर रखना, 100 स्मार्ट सिटी बनाना, पीएसयू कंपनियों का विनिवेश करना, युवाओं के लिए कौशल और रोजगार की व्यवस्था करना वगैरह। इन पहलों के सामने बड़ी चुनौतियां हैं- एक स्वस्थ कारोबारी माहौल को बनाना, गैर-अनुकूल कारकों को दूर करना, भारतीय एमएसएमई कंपनियों पर अधिक ध्यान देना, विश्व स्तरीय शोध व विकास की कमी को दूर करना और चीन के मेड इन चाइना अभियान से इनकी तुलना करना।

कुछ विशेषज्ञों ने मेक इन इंडिया अभियान से संबंधित कुछ चिंताएं उजागर की हैं। इन चिंताओं पर ध्यान देने की सलाह दी जाती है।

* बेईमानी से पूंजी लगाने के आरोप
* ऊंची कीमत
* भारत में संयंत्र लगाने में बहुराष्ट्रीय कंपनियों को अधिक फायदा होना
* जमीन कब्जा करना
* काले धन को फिर से प्रवेश मिलना।

यह पहल चार स्तंभों पर आधारित है- नई प्रक्रियाएं, नए बुनियादी ढांचे , नए क्षेत्र और नई सोच। इस संदर्भ में भारत सरकार ने कुछ महत्वपूर्ण कदम उठाए हैं-

* सूचना के प्रसार के लिए और निवेशकों से वार्तालाप के लिए एक संवादमूलक पोर्टल का बनाया जाना , जिसका उद्धेश्य देश में निवेश अवसरों और परिदृश्य के बारे में जागरूक करना है , ताकि विदेशी बाजार में भारत को पसंदीदा निवेश गंतव्य के रूप में बढावा दिया जा सके और वैश्विक एफडीआई में भारत की हिस्सेदारी बढ़ सके।

* राष्ट्रीय निवेश को प्रोत्साहित और सरलीकृत करने की एजेंसी के रूप में इन्वेस्ट इंडिया की स्थापना।
* देश में निवेश को बढ़ावा देने के उद्धेश्य के साथ मेक इन इंडिया पहल के तहत एक पूर्णकालिक इन्वेस्टमेंट फसिलिटैशन सेल (निवेश प्रोत्साहन केंद्र) की स्थापना की गई , जिसका मुख्य काम है , सभी निवेश प्रश्नों को जानने - समझने में मदद करना , साथ ही संभावित निवेशकों की तरफ से विभिन्न एजेंसियों से संपर्क करना।
* राष्ट्रीय विनिर्माण नीति 2011 में जैसा परिकल्पित है, उसके हिसाब से मेक इन इंडिया सकल घरेलू उत्पाद को 25 प्रतिशत का योगदान और 2022 तक 10 करोड़ नौकरियां दे सकता हैं।
* भारत में कामगारों/ वेरोजगारो के हुनर को बढ़ावा देने के लिए कई सारे कदम उठाये गए है, ताकि वे उचित रोजगाार पा सकें।
* रचनात्मक संभावना के दोहन और उद्यमशीलता को बढावा देने के कम में स्टार्ट -अप इंडिया और स्टैंड इंडिया अभियान की घोषणा की गई।
* भारत में नवाचार प्रोत्साहन मंच शुरू किया गया, जिसका नाम एआइएस (अटल इनोवेशन मिशन) है, इसके, अलावा, एक तकनीकी - वितीय, ऊष्मायन एवं सुगमता कार्यकम लागू किया गया है , जिसका नाम एसईटीयू (सेल्फ उम्प्लॉयड ऐंड टैलेंट यूटिलाइजेशन) है।
* लघु व मध्यम उ़द्यम क्षेत्रों की वितीय जरूरतों को पूरा करने और स्टार्ट अप्स एवं उद्यमशीलता को बढावा देने के लिए मेक इन इंडिया के जरिये कई कदम उठाए गए हैं:
* एमएसएमई क्षेत्र के उद्यम को वित्त पोषण के लिए सिडबी के तहत इंडिया एस्पाइरेशन फंड की भी स्थापना की गई है।
* उदार शर्तों पर भारतीय एसएमई कंपनियों को शर्त आधारित अल्पावधि ऋण व आभाषी इक्विटी देने के लिए सिडबी (एसआईडीबीआई) मेक इन इंडिया लोन फॉर स्मॉल इन्टाप्राइजेज (स्माइल) का शुभारंभ किया गया।
* सूक्ष्म इकाइयों को ऋण देने के लिए वाणिज्यिक बैंक निजी एफ सी कॉपरेखिए के विकास व पुनर्वित्तीयन के लिए माइक्रो यूनिट्स डेवलपमेंट रीफाइनेंस एजेंसी (मुद्रा) बैंक की स्थापना की गई। मुद्रा कई अन्य सेवाएं उपलब्ध कराती है, जैसे वित्तीय साक्षरता और सूचना और कुशलता की खाई को भरने का काम। यह उसका 'क्रेडिट प्लस दृष्टिकोण ' है।

मौजूदा समय में भारत के विनिर्माण क्षेत्र के पास बाकी दुनिया की तुलना में ये लाभ हैं-

* अभी कमजोर वैश्विक मांग है। अनिश्चित निवेश माहौल के साथ कमोडिटी कीमतों में कमी है। 2015 से वैश्विक विनिर्माण उत्पाद में गिरावट आई है (करीब दो प्रतिशत विकास दर के साथ) फिर भी 2015 के अंत तक अमेरिका और यूरोप में वसूली के लक्षण दिखे।
* 2015 में विकासशील व उभरती हुई औद्योगिक अर्थव्यवस्थाओं ने विनिर्माण क्षेत्र में पांच प्रतिशत की विकास-दर दर्ज कराई। हालांकि, 2015 के अंत तक चीन

विनिर्माण क्षेत्र में सात प्रतिशत की विकास दर पर था , पर उसकी अर्थव्यवस्था मंदी की ओर बढ़ रही है।

* भारत ने विनिर्माण क्षेत्र में 12 प्रतिशत तक विकास किया है (दिसंबर 2015 तक)।

स्टार्ट–अप इंडिया–

जनवरी 2016 में स्टार्ट अप इंडिया एण्ड स्टैंड- अप इंडिया के नारे के साथ भारत सरकार ने स्टार्ट - अप इंडिया योजना की शुरूआत की। इसका मकसद है - नवाचार को बढ़ावा देने के लिए एक मजबूत पारिस्थितिकी विकसित करना, संवहनीय आर्थिक विकास करना और बड़े पैमाने पर रोजगार के अवसर सृजित करना। तकनीकी क्षेत्र के अलावा स्टार्ट- अप अभियान ने दूसरे क्षेत्रों में भी धावा बोला है, जिनमें कृषि, विनिर्माण, स्वास्थ्य सेवा और शिक्षा शामिल हैं। इसके अलावा, इसने अपनी धमक स्तर-1 से स्तर-2 और 3 के शहरों तक पहुंचाई, जिनमें अर्द्ध- शहरी और ग्रामीण क्षेत्र में भी शामिल है। कंपनियों के लिए प्रस्तावित कार्य- नीति हैं :

* नियामक बोझ घटाने और अनुपालन लागत कम रखने के लिए स्व - प्रमाणन पर आधारित एक अनुपालन तंत्र बनाना।
* पूरे स्टार्ट -अप पारिस्थितिकी के लिए एक संपर्क - सूत्र बने, ज्ञान का आदान-प्रदान हो और पूँजी की प्राप्ति हो ,इसके लिए।स्टार्ट -अप इंडिया हब की स्थापना करना।
* मोबाइल एप और पोर्टल के लगातार इस्तेमाल होना,ताकि शेयरधारकों और नियामक संस्थानों व सरकार से बातचीत के लिए स्टार्ट -अप को एक मंच मिले।
* सार्वजनिक खरीद के सरल कायदे -कानून।
* कम लागत पर पैटेंट परीक्षा की तेजी से निगहबानी और कानूनी सहायता प्रदान करना, ताकि आईपीआर (बौद्धिक संपदा अधिकार) के प्रति जागरूकता फैले।
* निकासी के तेज और आसान नियम
* 10,000 करोड़ रूपये की पूँजी के साथ फंड ऑफ फंडस के जरिये वित्तीय सहायता प्रदान करना।
* उद्यमशीलता को प्रेरित करने के लिए क्रेडिट गारंटी फंड।
* पूँजीगत लाभ पर कर छूट
* तीन वर्षो के लिए आयकर छूट
* एसईटीयू (सेल्फ-एम्प्लॉयमेंट ऐंड टैलेंट यूटिलाइजेशन) के साथ एआईएम (अटल इनोवेशन मिशन) कार्यक्रम का आरंभ, ताकि विश्व स्तरीय इनोवेशन हब, स्टार्ट-अप कारोबारों और दूसरे स्व -रोजगार गतिविधियों को बढ़ावा देने के लिए एक मंच मिले, खास तौर पर तकनीक संचालित क्षेत्रों में।
* शोध व विकास प्रयासों व उनके पोषण को बढावा देने के जरिये सफल इनोवेशन की प्राप्ति हो, इसके लिए राष्ट्रीय संस्थानों में इनोवेशन सेंटर बनाना।
* 7 नए शोध पार्को (आई आईटी मद्रास के शोध पार्क की तर्ज पर) स्थापना करना।
* जैव-प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में स्टार्ट - अप को बढ़ावा देना।
* विद्यार्थियों के लिए इनोवेशन केंद्रित कार्यक्रमों को शुरू करना, ताकि विज्ञान व प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में नवाचार की संस्कृति को बढ़ावा मिले।

स्टार्ट– अप इंडिया भारतीय नौजवानों को नौकरी तलाश करने वाले से नौकरी देने वाले

में बदल देगा। यह भारत में उद्यमशीलता, नवाचार और क्रांतिकारी नए उत्पादों के निर्माण का बढ़ावा देगा, जिसका इस्तेमाल दुनिया भर के लोग करेंगें। यह पहल भारत को आसमान में उड़ने के लिए पंख देती हैं।

प्रत्यक्ष विदेशी निवेश में वृद्धि मेक इन इंडिया, स्टार्ट अप इंडिया एवं सटैण्ड अप इंडिया के अंतर्गत किये जा रहे प्रयासो को गति प्रदान करते समय यदि कार्य किया जाये तो भारत अपने लक्ष्य प्राप्त करने में निश्चित रूप से सफल होगा।

* प्राथमिक द्वितीय, तृतीयक सभी क्षेत्रों में रोजगार उपलब्ध कराया जाये।
* रोजगार के साथ ऐसा वातावरण बनाया जाये जिसमें स्वतंत्रता, समानता व सुरक्षा एवं मानवीय सम्मान हो
* सामाजिक उत्तर दायित्व की भावना का विकास किया जाये।
* ऐसे कार्य किये जाये कि नवाचार के साथ-साथ भारत में व्याप्त असमानताओ को दूर किया जा सके।

===============

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची-

1. आर्थिक समीक्षा, भारत सरकार 2015-16, 2016-17, 2017-18
2. रूद्रदत्त सुन्दरम, के.पी.एम. भरतीय अर्थव्यवस्था, एस.चंद एण्ड कम्पनी लिमिटेड, रामनगर नई दिल्ली 2010
3. झिगंन एम.एल. विकास का अर्थशास्त्र एवं आयोजन, वृन्दा पब्लिकेशन प्राइवेट लिमिटेड 2014
4. सिन्हा व्ही.सी., आर्थिक विकास एवं नियोजन, मयूर पेपर बैक्स नोएडा 2014
5. प्रतियोगिता दर्पण, भारतीय अर्थव्यवस्था, 2/11 स्वदेशी बीमा नगर, आगरा।

Research Journal of Arts, Management and Social Sciences,
Vol. XVIII, Hindi.-I, Year IX, March, 2018
UGC Sl. No. 2138, Journal No.48774, Impact Factor 2.996

जनजातियों में राज्य विकास योजनाओं का प्रभाव

* अनुराधा तिर्की
** राधा पाण्डेय

सारांश– *जनजाति और राज्य विकास योजना अंग्रेजों द्वारा प्राकृतिक संसाधनो के दोहन के फलस्वरूप जनजाति कर्मचारियों, ठेकेदारों, मिशनरियों एवं व्यापारियों के सम्पर्क में आयी तथा बाह्य सम्पर्क बढ़ता गया जिससे जनजातियों का शोषण हुआ व अनेक समस्याओं का जन्म हुआ। देश की आजादी के पश्चात् जनजातियों के विकास हेतु विभिन्न प्रयास किये गए। संविधान के चौथे भाग के अनुच्छेद 46 में राज्य को निर्देशित किया गया है कि राज्य कमजोर तबकों के लागो को विशेषकर अनुसूचित जनजातियों के शैक्षिणक व आर्थिक हितो को खास तौर से बढ़ावा देगा व हर प्रकार के सामाजिक अन्याय एवं शोषण के विरूद्ध इन्हें संरक्षण प्रदान करेगा। भारत के संविधान के अनुच्छेद 342 में इन्हे अनुसूचित जनजाति का दर्जा देकर विकास किया गया। जनजातियों के विकास हेतु विभिन्न शासकीय, अशासकीय, राजनीतिक, मानवशास्त्रीय उपागम बनायें गए। अतः जनजातियों के विकास के लिए उनमें चेतना व जागरूकता का होना अति आवश्यक है उनको यहां विश्वास होना अति आवश्यकता है कि कोई कार्यक्रम या कल्याणकारी योजना उनके हित या उनकी भलाई के लिए बनाई गई है, साथ ही क्योंकि किसी भी पेड़ में केवल पत्तो को सींचने भर से पेड़ हरा-भरा नही रहता इसके लिए तो उनकी जड़ों में पानी देने की आवश्यकता होता है।*

मुख्य शब्द– जनजाति,विकास, योजना,राज्य सरकार

प्रस्तावना– जनजाति से तात्पर्य देश के मूल एवं प्राचीनतम निवासियों से है। ये प्रारम्भ से ही दूरस्थ एवं निर्जन स्थानो पर निवास करते हैं इसी का परिणाम है कि आधुनिक विकास के साधनो और शहरी सभ्यता का बहुत कम प्रभाव जनजातियों पर पड़ा है। जनजातियों की अपनी विशिष्ट पहचान का कारण भी यही है। जनजातीय संस्कृति एक विशिष्ट संस्कृति है। आज के आधुनिक समाज को इनसे सीखने के लिये बहुत कुछ है जैसे- सद्भावना व मानववादी समाज, जाति प्रथा, दहेज, छुआछुत जैसी बुराईयों का निषेध, महिलाओं का ऊँचा सामाजिक स्तर, श्रम का सम्मान जीवन का आनंद उठाने की स्वतः स्फूर्त प्रवृत्ति आदि ।

भारत के जिन क्षेत्रों में पहाड़ और जंगल है वहां निवास करने वालों को आदिवासी कहा जाता है। प्रारम्भ में इनके पास काफी भूमि थी लेकिन अन्य जातियों ने इनको पीछे ढकेल दिया जिसके कारण जनजातियों को पहाड़ों का आश्रय लेना पड़ा। ये लोग अत्यन्त

* सहायक प्राध्यापक, अर्थशास्त्र, शासकीय महाविद्यालय भैसमा, जिला-कोरबा (छ.ग.)
** प्राचार्य, शासकीय संस्कृत महाविद्यालय, रायपुर, छत्तीसगढ़

पिछड़े हैं यह भी धारणा है कि आदिवासी लोगों में संस्कार नहीं है लेकिन वास्तव में भारतीयता के मूल संस्कार को इन्होनें आत्मसात किया है।

अध्ययन का उद्देश्य–

1.

अध्ययन के निष्कर्षो के आधार पर उपयुक्त सुझाव प्रस्तुत करना।

शोध–प्ररचना– अध्ययन के लिए जशपुर जिले के दो विकास खण्ड का चयन किया गया है: कुनकुरी और बगीचा। उन विकास खण्डों में दो–दो ग्राम का चयन किया गया है।

अध्ययन क्षेत्र– छत्तीसगढ़ राज्य भारत के हृदय प्रदेश मध्यप्रदेश के दक्षिण पूर्व में 17. 46 उत्तरी अक्षांश से 24.8 अक्षांश तथा 80.15 पूर्वी देशांतर से 84.24 पूर्वी देशांतर के

अक्षांश एवं 83.26 से 84.25 पूर्वी देशांतर के मध्य स्थित है। जशपुर जिले का क्षेत्रफल

व दक्षिण में रायगढ़ जिला स्थित है।

जिले का सम्पूर्ण भाग वनों और पहाड़ों से आच्छादित है किन्तु अधिकांश पहाड़ी

दक्षिण की ओर है जिससे नदियां भी इसी क्रम में प्रवाहित होती है। जिले की प्रमुख नदी

आदिवासी बहुल क्षेत्र है।

सरकार द्वारा संचालित विकास योजनाऐं–

छत्तीसगढ़ राज्य सरकार द्वारा अनुसूचित जनजाति के लिए चलाई जा रही योजनाओं का अध्ययन किया गया। इसके अन्तर्गत राज्य योजनाएं केन्द्र अनुदान योजनाएँ एवं केन्द्र प्रवर्तित योजनाएँ जो की शिक्षा, प्रशिक्षण, आर्थिक विकास पर आधारित है का अध्ययन किया गया है जैसे- राज्य छात्रवृत्ति योजना, छात्रावास योजना, निःशुल्क सायकल प्रदाय, कन्या साक्षरता प्रोत्साहन योजना, स्वस्थ्य तन स्वस्थ मन, ज्योति योजना, वाहन चालक

किसी भी व्यक्ति विशेष के बारे में विस्तृत जानकारी प्राप्त करने के लिए उसके

स्थितियों के बारे में जानकारी प्राप्त करना अत्यंत आवश्यक है, इसके अभाव में कार्य

कारकों का प्रभाव व्यक्ति के व्यक्तिगत कारकों जैसे -आयु, शिक्षा जाति, मातृभाषा, धर्म वैवाहिक स्थिति, व्यवसाय, आय, मूलनिवास आदि के बारे में व्यापक सूचनाओं का संकलन अपने शोध में किया गया है किन्तु शोध पत्र में चयनित परिवारों की आर्थिक स्थिति एवं राज्य योजनाओं का उन पर प्रभाव का अध्ययन किया गया है जो निम्नवत है-

1. **ऋणग्रस्तता**– जनजातीय परिवार के पास स्वयं की घर, पशुधन, साइकिल, कृषि भूमि मौजूद है जो इनकी आय है। जो परिवार के भरण-पोषण के लिए प्रर्याप्त नहीं है। इसका मुख्य कारण अस्थायी रोजगार है। अतः ऋण की आवश्यकता होती है। दैनिक आवश्यकताओं की वस्तुओं के लिए दुकानों जो समान उधार लेते हैं। शिक्षा, चिकित्सा, विवाह जैसे बड़े खर्च के लिए ऋण की आवश्यकता पड़ती है। तालिका में चयनित ग्राम के ऋणग्रस्तता की स्थिति को दर्शाया गया है।

तालिका क्र. 1

चयनित ग्राम में ऋणग्रस्तता की स्थिति

चयनित ग्राम	ऋणग्रस्तता की स्थिति				परिवार की संख्या
	साहूकारों से	रिस्तेदारों से	बैंक से	अन्य	
चिटकावाईन	12 (19.35)	30 (48.39)	4 (6.45)	16 (26.00)	62 (100)
सेन्द्रीमुण्डा	8 (14.54)	33 (60)	2 (3.64)	12 (21.82)	55 (100)
बेतरा	3 (3.80)	50 (63.29)	7 (8.86)	19 (24.05)	79 (100)
रेगलें	7 (12.96)	46 (46.30)	3 (5.55)	19 (35.18)	54 (100)
योग	30 (12)	159 (63.6)	16 (6.4)	46 (18.4)	250 (100)

स्त्रोत - व्यक्तिगत सर्वेक्षण

(कोष्टक में प्रतिशत दर्शाया गया है)

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कुल चयनित परिवारों में 12 प्रतिशत चयतिन परिवार साहूकारों से ऋण लेते है, 63.6 प्रतिशत चयनित परिवार रिस्तेदारों से ऋण लेते है, जो सर्वाधिक है, 6.4 प्रतिशत परिवार ही बैंक से ऋण लेना बताया जबकि 18.4 प्रतिशत व्यक्ति ऐसे है जिन्हे ऋण या तो नहीं लेना पड़ता है या कोई उत्तर नहीं दिया है।

2. **परिवारिक बजट**– स्त्री व पुरूष दोनों की आय को जोड़कर आय का आंकलन किया जााता है परन्तु फिर भी आय परिवार के भरण-पोषण के लिए पर्याप्त नहीं हो पाती है लोगों का व्यय आय से अधिक होता है। तथा जनजातीय परिवार बचत कर पाने में सक्षम नहीं हो पाते हैं। यहां तक लोगों को दैनिक आवश्यकता की वस्तुओं के लिए ऋण लेना पड़ता है। अतः कहा जा सकता है कि इन लोगों का पारिवारिक बजट असंतुलित होता है।

तालिका क्र. 2

चयनित ग्राम में पारिवारिक बजट संतुलित

चयनित ग्राम	हाँ	प्रतिशत	नहीं	प्रतिशत	परिवार की संख्या
चिटकवाईन	13	20.97	49	79.03	62 (100)
सेन्द्रीमुण्डा	9	16.36	46	83.64	55 (100)
बेतरा	17	21.52	62	78.48	79 (100)
रेगलें	5	9.26	49	90.74	54 (100)
योग	44	17.6	206	82.4	250 (100)

(कोष्टक में प्रतिशत दर्शाया गया है)

तालिका से विवरण से स्पष्ट है कि चयनित ग्रामों में अधिकांश परिवार का बजट असंतुलित है। कुल चयनित परिवारों में 82.4 प्रतिशत परिवार जिनका परिवारिक बजट

असंतुलित है जबकि 17.6 प्रतिशत परिवारिक बजट संतुलित जो बहुत कम है।

3. **रोजगार की प्राप्ति**– भारत में बेरोजगारी का प्रतिशत दिन प्रतिदिन वृद्धि होती जा रही है जिससे देश में सामने एक बड़ी समस्या होती जा रही है। जिसके फलस्वरूप केन्द्र एवं राज्य सरकार द्वारा बेरोजगारी को दूर करने के लिए कई कार्यक्रम का निर्माण किया गया। इसके बाद भी जनजातीय क्षेत्र में बेरोजगारी स्थित मौजूद है।

तालिका में चयनित ग्राम के रोजगारी की स्थिति को बताया गया है-

तालिका क्र. 3

चयनित ग्राम में रोजगारी की प्राप्ति

चयनित ग्राम	रोजगारी की प्राप्ति						परिवार की संख्या
	सरकारी योजनाओं	प्रतिशत	कृषि	प्रतिशत	दोनों	प्रतिशत	
चिटकवाईन	10	16.13	23	37.10	29	46.77	62 (100)
सेन्द्रीमुण्डा	7	12.73	15	27.27	33	60	55 (100)
बेतरा	16	20.25	21	26.58	42	53.16	79 (100)
रेगलें	10	18.52	18	33.31	26	48.45	54 (100)
योग	43	17.2	77	30.8	130	52	250 (100)

स्त्रोत – व्यक्तिगत सर्वेक्षण

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि चयनित ग्राम चिटकवाईन में 16.13 प्रतिशत परिवार को योजनाओं से रोजगार प्राप्त होता है, ग्राम सेन्द्रीमुण्डा में 12.73 प्रतिशत, ग्राम बेतरा में 20.25 प्रतिशत परिवार एवं ग्राम रेगलें में 18.52 प्रतिशत एवं कुल 17.2 प्रतिशत परिवार ऐसे है जिन्हें केवल योजनाओं से रोजगार प्राप्त होता है। कृषि से रोजगार प्राप्त करने वाले ग्राम चिटकवाईन में 37.10 प्रतिशत, ग्राम सेन्द्रीमुण्डा में 27.27 प्रतिशत, ग्राम बेतरा में 26.58 प्रतिशत एवं ग्राम रेगलें में 33.31 प्रतिशत परिवार हैं।

जबकि सरकारी एवं कृषि में रोजगार की प्राप्ति सरकारी योजनाओं से 17.2 प्रतिशत परिवारों को होता है, 30.8 प्रतिशत परिवारों को योजनाओं से एवं कृषि दोनों से ही रोजगार की प्राप्ति होता है जो कि सर्वाधिक है।

रेखचित्र क्र. 3, चयनित ग्राम में रोजगारी की प्राप्ति

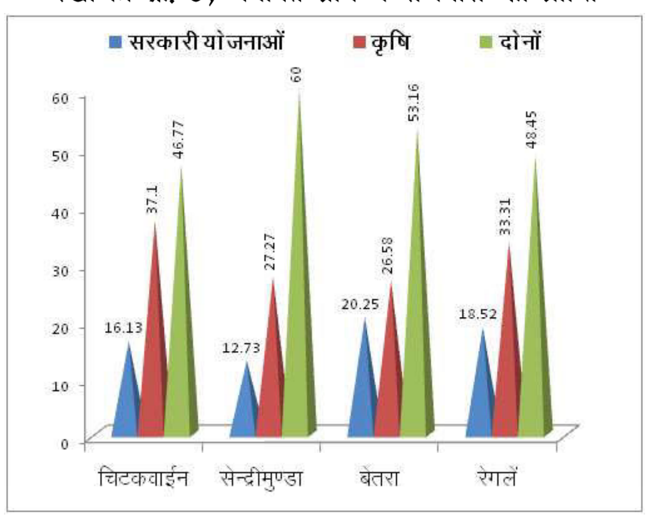

4. **योजना आपके विकास के लिए आवश्यक**- तालिका में चयनित परिवारों में विकास के लिए योजना आवश्यक है अथवा नहीं का अध्ययन किया गया है-

तालिका क्रमांक-4

चयनित ग्राम में योजना आपके विकास के लिए आवश्यक

चयनित ग्राम	हॉ	प्रतिशत	नही	प्रतिशत	परिवार की संख्या
चिटकवाईन	40	64.52	22	35.48	62 (100)
सेन्द्रीमुण्डा	38	69.09	17	30.91	55 (100)
बेतरा	56	70.89	23	29.11	79 (100)
रेगलें	36	66.67	18	33.33	54 (100)
योग	170	68	80	32	250 (100)

स्रोत : व्यक्तिगत सर्वेक्षण

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि योजना का चयनित परिवार के विकास के लिए आवश्यक है या नही इसका अध्ययन किया गया। जिसे चयनित ग्राम चिटकवाईन में 64. 52 प्रतिशत, ग्राम सेन्द्रीकुण्डा में 69.09 प्रतिशत, ग्राम बेतरा में 70.89 प्रतिशत व ग्राम रेगले में 66.67 प्रतिशत जनजातीय परिवार में योजना, को अपने विकास के लिए आवश्यक बताया है ।

ग्राम चिटकवाईन में 35.48 प्रतिशत, ग्राम सेन्द्रीमुण्डा में 30.91 प्रतिशत, ग्राम बेतरा में 29.11 प्रतिशत एवं ग्राम रेगलें में 33.33 प्रतिशत जनजातीय परिवार ने योजनाओं को अपने विकास के लिए पर्याप्त नही बताया है।

5. **योजनाओं का लाभ**– तालिका में जनजातीय परिवार में योजनाओं के लाभ के संदर्भ में -

तालिका क्रमांक-5

चयनित ग्राम में योजनाओं से लाभ

चयनित ग्राम	हॉ	प्रतिशत	नही	प्रतिशत	परिवार की संख्या
चिटकवाईन	44	70.97	18	29.03	62 (100)
सेन्द्रीमुण्डा	36	65.45	19	34.55	55 (100)
बेतरा	59	74.68	20	25.32	79 (100)
रेगलें	37	68.52	17	31.48	54 (100)
योग	176	70.4	74	29.6	250 (100)

स्रोत : व्यक्तिगत सर्वेक्षण

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि राज्य सरकार की जनजातीय योजना से चयनित परिवारों को लाभ मिलता है या नही इसके जवाब में ग्राम चिटकवाईन में 70.97 प्रतिशत, ग्राम सेन्द्रीमुण्डा में 65.45 प्रतिशत ग्राम बेतरा में 74.68 प्रतिशत परिवार एवं ग्राम रेगलें में 68.52 प्रतिशत को इस योजनाओं से लाभ प्राप्त होता है, जबकि ग्राम चिटकवाईन में 29.03 प्रतिशत, ग्राम सेन्द्रीमुण्डा में 34.55 प्रतिशत, ग्राम बेतरा में 25.32 प्रतिशत एवं ग्राम रेगलें में 31.48 प्रतिशत जनजातीय परिवार को सरकारी योजनों से प्रयाप्त लाभ नही मिलता है।

समस्याएँ–

1. दूरस्थ क्षेत्रों में जनजातीय समुदाय आज भी पिछड़ा हुआ है। आदिवासी समुदाय आज भी अपनी पुरानी ढांचागत व्यवस्था एवं साधनों पर निर्भर हैं। जनजातीय क्षेत्रों में महाविद्यालय हैं तो वहां शिक्षक नही, सड़क हैं तो मरम्मत नहीं, अस्पताल हैं तो दवा व डॉक्टर नहीं आदि जिससे जनजातीय समुदाय में विकास का रथ अवरूद्ध हैं।

2. जनजातियों के लिए चलाए जा रहे सरकारी कल्याण कार्यक्रम दिशाविहीन हैं। ये जिस उद्देश्य के लिए चलाए गए है, उन्हें हासिल करने में अब तक असफल साबित हुए है। कार्यक्रम कियान्वयन का तरीका लचार अव्यवस्थित है।

3. निश्चित रूप से दूरस्थ क्षेत्रों में रहने वाले जनजातियों तक मीडिया नहीं पहुंच पाया है। लोकतंत्र का आधार स्तम्भ माने जाने वाली मीडिया इनकी समस्याओं को सामने लाकर समाधान में रचनात्मक योगदान दे सकता है।

4. जनजातीय क्षेत्रों में गरीबी को दूर करने के लिए रूपांकित एवं शुरू किए गए अनेक कार्यक्रमों के बावजूद, शहरी-ग्रामीण खाई बनी हुई है और जनजातियों हेतु प्रत्यक्ष आय प्राप्त को ऐसी योजनाओं की कमी है जैसे कृषि के लिए योजनाएँ, रोजागार एवं आय प्राप्त हो ऐसी राज्य सरकार की योजनाओं का अभाव है।

सुझाव–

1. जनजातीय क्षेत्रों में शहरी सुविधाएँ उपलब्ध करवाना सरकार की योजना में शामिल होनी चाहिए एवं उनके लिए ऐसी योजना बनाना होगा जिसमें लघु उद्योग, कुटीर उद्योग विकसित हो और ग्रामीण जनजातीय समूह आत्म निर्भर बन सकें।

2. अध्ययन क्षेत्र हाथी प्रभावित क्षेत्र के अन्तर्गत है यहाँ निवासरत जनजातीय परिवार हमेंशा इसके भय में रहते हैं सरकार का कर्तव्य होना चाहिए कि यहां निवास करने वाले जनजातीय समूह अपने क्षेत्र में भय मुक्त होकर अपना जीवन यापन कर सके, वहां, जन-धन का नुकसान न हो। इसके लिए उचित व्यवस्था होनी चाहिए।

3. दूरस्थ अंचलों में शिक्षा को सुगमता के लिए बड़े आवासीय आदिवासी विद्यालय खोला जाता चाहिए एवं बेहतर शैक्षणिक परिणामों के लिए शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार किये जाने की आवश्यकता।

4. स्वास्थ्य सेवाओं का इस क्षेत्र में विस्तार किया जाना चाहिए यहां यदि स्वास्थ्य सुविधा है तो वहां डॉक्टर की कमी है। इस तरह सरकार को इन क्षेत्रों के लिए विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है।

5. राज्य सरकार को शिक्षा के साथ-साथ स्वास्थ्य बेहतर करने के लिए कार्यक्रम चलाई जाने चाहिए।

6. अनुसूचित जनजातीय योजना का प्रचार प्रसार होना चाहिए।

7. समय-समय पर अधिकारियों द्वारा योजनओं का समीक्षा किया जाने की आवश्यकता है।

===============

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची–

1. साहू, किरण-बस्तर जिले में सामाजिक-आर्थिक परिवर्तन का स्थानिक प्रतिरूप ''अप्रकाशित शोध प्रबंध पं. रवि. वि. वि. रायपुर, 1987

2. ठाकुर, रामेश्वर, गरीबी उन्मूलन की सशक्त योजना, कुरूक्षेत्र, सितम्बर 1994, पेज क्र. 3
3. जैन, प्रकाशचन्द, ''आदिवासी विकास योजनाएं- दशा एवं दिशा'', उदयपुर, शिव पब्लिशर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स, 1996
4. उपाध्याय, विजय शंकर एवं गया पाण्डेय -जनजातीय विकास, भोपाल, म.प्र. हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, 2001
5. श्रीवास्तव, ए. आर. एन., जनजातीय संस्कृति, 2002.
6. उपाध्याय, विजय षंकर एवं गया पाण्डेय, ''जनजातीय विकास'', 2002
7. श्रीवास्तव, ए. आर.एन., जनजातीय संस्कृति, 2004.
8. श्रीवास्तव, जनजातीय विकास की चुनौतियां, कुरूक्षेत्र नवम्बर 2010 पेज क्र. 4-7
9. कमलेश, सन्तराम, छत्तीसगढ़ एक दृष्टि में, आर्थिक सर्वेक्षण, रायपुर, आर्थिक एवं सांख्यिकी संचालनालय, छ.ग.

Research Journal of Arts, Management and Social Sciences,
Vol. XVIII, Hindi.-I, Year IX, March, 2018
UGC Sl. No. 2138, Journal No.48774, Impact Factor 2.996

छत्तीसगढ़ के बालोद विकासखंड में सार्वजनिक वितरण प्रणाली : एक अध्ययन

* ईश्वर लाल
** के. पद्मावती

सारांश– *प्रस्तुत शोध पत्र छत्तीसगढ़ के बालोद जिले के ग्रामीण क्षेत्रो में सार्वजनिक वितरण प्रणाली को केन्द्र में रखकर लिखा गया हैं। सार्वजनिक वितरण प्रणाली का क्रियान्वयन उचित मूल्यों के दुकानों द्वारा किया जाता है, जिसके द्वारा उपभोक्ताओं को प्रतिमाह नियमित रूप खाद्यान्न जैसे शक्कर, गेंहूँ, नमक एवं केरोसीन आदि उचित मात्रा में उचित मूल्य की दुकान के माध्यम वितरित किया जाता है तथा उचित मूल्य की दुकानों का संचालन एवं क्रियान्वयन सभी राशन कार्ड धारियोके हितो को ध्यान में रखते हुए ग्राम पंचायत, महिला समूह मंडली ,उचित एंजेसी के माध्यम से किया जा रहा है। साथ ही साथ शासन द्वारा समय-समय पर उचित योजनाओ का निर्माण किया जाता है। इन योजनाओं को सभी वर्गो को ध्यान में रखकर निष्पक्ष रूप चलाया जा रहा है, जिससे समाज के गरीब एवं कमजोर वर्ग को इसका भरपूर लाभ प्राप्त हो।*

मुख्य शब्द– सार्वजनिक वितरण प्रणाली, उपभोक्ता, मूल्य

प्रस्तावना– सार्वजनिक वितरण प्रणाली भारत सरकार के उपभोक्ता मामले, खाद्य एवं सार्वजनिक वितरण मंत्रालय के द्वारा भारतीय खाद्य सुरक्षा अधिनियम के अंतर्गत चलायी जाने वाली एक महत्वपूर्ण योजना है। सार्वजनिक वितरण प्रणाली आदेश 2001 में लागू किया गया। जब छत्तीसगढ़ राज्य का गठन हुआ तब सार्वजनिक वितरण प्रणाली का उतना विकास नहीं हुआ था। जैसे-जैसे सार्वजनिक वितरण प्रणाली विकास हुआ इस पर सरकार ने ज्यादा ध्यान दिया। छत्तीसगढ़ सार्वजनिक वितरण प्रणाली नियत्रंण आदेश सन् 2004 में भारत सरकार द्वारा लाया गया। जब छत्तीसगढ़ मे 2004 में नई सरकार बनी तो उसने गरीबी रेखा से नीचे रहने वाले श्रमिक, गरीब, मजदूर सभी के हित को देखते हुए इस योजना को अधिक जोर देते हुए छत्तीसगढ़ शासन द्वारा प्रत्येक गरीब को 3 रूपये किलो चावल प्रदान किया गया। साथ ही इसे संपूर्ण भारत में एक।मॉडल के रूप में देखा गया यह वास्तव में सभी के हित से संबधित योजना थी इस योजना को छत्तीसगढ़ के बाहर के राज्यों ने भी देखा एवं सराहा है। साथ ही विदेशों में भी इस योजना की काफी तारीफ की गई जो संपूर्ण भारत में राज्य शासन एवं केन्द्र शासन के सहयोग से चलायी जा रही है। इस प्रणाली के अंतर्गत सार्वजनिक वितरण प्रणाली की दुकानों, जिसे राशन दुकान कहते

* शोधार्थी (पी-एच.डी.) अर्थशास्त्र शासकीय वि.या.ता.स्व.स्नातकोत्तर महाविद्यालय दुर्ग (छ.ग.)
** सहायक प्राध्यापक अर्थशास्त्र शासकीय वि.या.ता.स्व.स्नातकोत्तर महाविद्यालय दुर्ग (छ.ग.)

है, के माध्यम से गरीब एवं कमजोर वर्ग के लोगो को गेहू, शक्कर,केरासीन, नमक, इत्यादि आवश्यकता की वस्तुएं कम कीमत पर उपलब्ध करवायी जाती है। छत्तीसगढ़ राज्य प्रारम्भ से ही सार्वजनिक वितरण प्रणाली की कई समस्याओं से जूझ रहा था जैसे मासिक आंवटन में देरी, परिवहन की समस्या, बड़ी संख्या में फर्जी राशन कार्ड बनाना एवं पारदर्शिता की कमी होनें के कारण खाद्यन्न हितग्राहियों तक नहीं पहुंच पाता था।

सार्वजनिक वितरण प्रणाली के अंतर्गत उचित मूल्य दुकानो के आंवटन, राशन सामग्री का समय पर उठाव, उचित मूल्य की उपलब्धता बनाएं रखने के साथ संपूर्ण वितरण व्यवस्था पर निगरानी रखने के लिए निरीक्षक टीम द्वारा समय समय पर उचित कार्यवाही एवं सुरक्षा प्रदान करना आदि कार्य किए जा रहे है। राज्य शासन द्वारा सबसे महत्वपूर्ण कार्य 23 दिसम्बर 2004 को पूरे प्रदेश में छत्तीसगढ़ सार्वजनिक वितरण प्रणाली नियंत्रण आदेश 2004 लागू किया गया जिसके माध्यम से आज छत्तीसगढ़ में सार्वजनिक वितरण प्रणाली अपने आप में एक मिसाल कायम की है।

छत्तीसगढ़ राज्य में वर्तमान सार्वजनिक वितरण प्रणाली मे लगभग 90 प्रतिशत जनसंख्या ग्राम पंचायत, ग्राम सभा, राशन दुकानों के माध्यम से खाद्यान्न प्राप्त कर रहे है। छत्तीसगढ़ खाद्य सुरक्षा अधिनियम 2012 (क्रमांक 5 सन् 2013) दिनांक 18 जनवरी 2013 से प्रभावशील है।

बालोद जिले में सार्वजनिक वितरण प्रणाली का क्रियान्वयन एक नजर में– सार्वजनिक वितरण प्रणाली के अंतर्गत बालोद जिले में योजनाओ का क्रियान्वयन ग्रामीण क्षेत्रो में उचित मूल्यों के दुकानो की सहायता से किया जा रहा है। साथ ही शासन द्वारा उचित रूप से अन्य माध्यमो से, जैसे दो या तीन गांव मिलकर एक ही वितरण केन्द्र खाद्यान्न उपलब्ध कराते है। साथ ही हितग्राहियो के राशन कार्ड का बीच-बीच में निरीक्षण किया जाता है और शासन स्तर पर खाद्य निरीक्षक एवं सहायक निरीक्षक अधिकारी नियुक्ति किए जाते है। जनता की समस्या को ध्यान में रखते हुए गांव में वितरण केन्द्र खोल दिया गया है और इस वितरण प्रणाली को अन्य समूहो द्वारा संयुक्त रूप से नया आयाम दिया जा रहा है।

दिनांक 1 नवम्बर 2012 को दुर्ग जिले में कोर पीडीएस स्कीम का प्रारंभ किया गया है। वर्तमान में दुर्ग जिले से बालोद नया जिले के रूप में स्थापित हुआ है। बालोद विकासखंड में 57 ग्राम पंचायत है। इस वितरण प्रणाली के अधिक व्यवस्थित एवं सूचारू रूप से क्रियान्वयन के लिए पीडीएस को ऑनलाइन कर दिया गया है। अब ऑनलाइन के माध्यम से टेबलेट द्वारा कार्डधारी के परिवार के एक सदस्य की फोटो ली जाती है, जिसके माध्यम से परिवार के सदस्य को खाद्यान्न दिया जाता है। छत्तीसगढ़ शासन द्वारा पीडीएस को 2007 से कम्प्यूटरीकृत कर दिया गया है। साथ ही सार्वजनिक वितरण प्रणाली के कम्प्यूटरीकरण के पश्चात् सभी वितरण केन्द्र एवं सभी खाद्य कार्यालय को इंटरनेट के माध्यम से जोड़ दिया गया हैं। इससे किसी भी प्रकार के भ्रष्टाचार की संभावना खत्म हो गई है।

सार्वजनिक वितरण प्रणाली का आर्थिक महत्व– छत्तीसगढ़ राज्य अविभाजित मध्यप्रदेश का हिस्सा है। जब छत्तीसगढ़ बना उस समय वह खाद्यान्न के क्षेत्र में बहुत पीछे था। छत्तीसगढ़ राज्य के अलग होने के बाद विकास को नया आयाम मिला है। सन् 2001

में भारत सरकार द्वारा सार्वजनिक वितरण प्रणाली (नियंत्रण) आदेश 2004 में लागू हुआ। छत्तीसगढ़ में राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा अधिनियम जनवरी 2014 से लागू है, के तहत राज्य में 2.01 करोड़ लाभार्थियो को 3 रूपये प्रति किलो की दर से चावल प्राप्त करने का कानूनी अधिकार है साथ ही शासन द्वारा इस प्रणाली को सुदृढ़ बनाये रखने एवं भ्रष्टाचार को रोकने के लिए आवश्यक कदम उठाए गए है। वर्तमान में इस वितरण प्रणाली का शासन द्वारा क्रियान्वयन नहीं किया जा रहा है।उचित मूल्यो के दुकानों के बजाए स्थानीय समुदाय के माध्यम से इसका क्रियान्वयन किया जा रहा है जैसे वन सेवा समिति, सेवा सहकारी समिति, आदिम जाति सहकारी समिति एवं विपणन सहकारी समिति इत्यादि। इसका लाभ यह हुआ कि इसमें स्थानीय लोगो की भागीदारी बढ़ेगी और दुकान का अपने हिसाब से संचालन हो पाएगा साथ ही प्रतिदिन ज्यादा समय तक खुली रहेगी। सभी का सहयोग एवं भागीदारी रहेगी। यह कहा जा सकता है कि इस योजना में गरीब एवं मजदूर वर्ग के आर्थिक विकास को केन्द्र बिन्दु में रखा गया है।

अध्ययन का उद्देश्य–

1. सार्वजनिक वितरण प्रणाली की सहायता से लोगो के जीवन स्तर में पड़ने वाले आर्थिक प्रभावो का अध्ययन करना।
2. ग्रामीण विकास हेतु सार्वजनिक वितरण प्रणाली एवं खाद्य सुरक्षा की भूमिका का अध्ययन करना।
3. सार्वजनिक वितरण प्रणाली द्वारा आम जनता को मिलने वाले लाभ का अध्ययन करना।

परिकल्पना–

1. सार्वजनिक वितरण प्रणाली से खाद्य सुरक्षा में वृध्दि में हुई एवं लोगो के जीवन स्तर में सुधार हो रहा है।
2. सार्वजनिक वितरण प्रणाली ग्रामीण विकास में सहायक है और खाद्य सुरक्षा अधिनियम आ जाने से इसका समाज या गरीब वर्ग के कल्याण में सकारात्मक प्रभाव पड़ रहा है।
3. इस प्रणाली के सफल क्रियान्वयन से जनता को प्रत्यक्ष लाभ मिल रहा है।

अध्ययन पद्धति–

प्रस्तुत अध्ययन बालोद विकासखंड के सार्वजनिक वितरण प्रणाली के वर्तमान स्थिति का एक अध्ययन है। इस शोध पत्र को तैयार करने में प्राथमिक एवं द्वितीयक स्त्रोत का प्रयोग किया गया। बालोद विकासखंड के चयनित 20 ग्राम पंचायतों के अंतर्गत 336 अलग-अलग ग्राम पंचायत के अंतर्गत 336 परिवार के उत्तरदाताओं का चयन उद्देश्यपूर्ण निदर्शन के द्वारा किया गया है। साथ इस संबंध में अभिमत प्राप्त किया गया है। और इसका विश्लेषण किया गया है इस प्रकार उत्तरदाताओं से साक्षात्कार व प्रश्नावली भरवाकर इसकी राय जानकर सार्वजनिक वितरण प्रणाली से सबंधी अनेक प्रश्न पूछे गए और इस प्रणाली के पक्ष में विश्वास व्यक्त करते हुए यहा माना गया है कि यह योजना बालोद विकासखंडमें रहने वाले गरीब वर्ग के लिए जीवन रेखा है।

तथ्यों का संकलन–

प्रस्तुत अध्ययन हेतु बालोद विकासखंड के ग्राम पंचायत के अंतर्गत उत्तरदाताओं की

प्रकृति को ध्यान में रखकर किया गया है। तथ्यों के संकलन हेतु साक्षात्कार एवं अनुसूची का प्रयोग किया गया। साथ ही हमनें समूह वार्ता के साथ-साथ अवलोकन विधि का उपयोग किया है। इस अध्ययन पद्धति में अपने पूर्व में किए गयें शोध अध्ययन, पत्र पत्रिकाओं, समाचार पत्र, इकोनामिक विकली, कुरूक्षेत्र,शासकीय अधिसूचना व इंटरनेट को उपयोग में लाया गया है।

तथ्यों का विश्लेषण-

प्रस्तुत शोध पत्र में अपने मौलिक शोध को विश्लेषण पर आधारित किया हैं। साथ विभिन्न विधियों के माध्यम से अपने शोध को आगे बढ़ाया है, जिसमें प्रमुख रूप से काई वर्ग परीक्षण, प्रतिशत एवं माध्य विधि का उपयोग किया गया है। इसमें तथ्यों का विश्लेषण की आवश्कता के अनुरूप प्रयोग हुआ है।

निष्कर्ष-

अध्ययन में हमने पाया है कि बालोद विकासखंड के अंतर्गत ग्रामीण क्षेत्रो में रहने वाले गरीब एवं मजदूरों वर्ग को ध्यान में रखतें हुए उचित मूल्य की दुकाने की सहायता से इसका क्रियान्वयन किया जा रहा है, जिसके माध्यम से आम हितग्राहियो को उचित मात्रा में गेहू, चावल, केरोसीन, व शक्कर नियमित रूप से प्रतिमाह उपलब्ध हो जाती हैं। छत्तीसगढ़ शासन द्वारा समय-समय पर वितरण व्यवस्था के सुचारू क्रियान्वयन हेतु नवीन टेक्नालॉजी का प्रयोग कर रही है। सार्वजनिक वितरण प्रणाली में लगातार बढ़ रही पारदर्शिता एवं सक्षम कानूनी प्रतिबंधो को देखकर यह आशा की जा सकती है कि छत्तीसगढ़ राज्य की सार्वजनिक वितरण प्रणाली हितग्राहियों की आशा के अनुरूप कार्य करने में समर्थ होगी।

===============

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची-

1. Website of chhatishgarh governmet .
2. Indian economics.
3. Other relevant journals.books .magazinesAnd websites.
4. Economics servey chhatisgarh government 2014-15.
5. Ahluwaliya D. (1993) : Public Distribution of Food in India,Coverage TargetingAnd Leakages Food Po., P. 28.
6. Acharya K.C.S. (1983) : Food security System of India, Comcept Publishing Company, New Delhi P.37.
7. खाद्य, नागरिक आपूर्ति एवं उपभोक्ता संरक्षण विभाग छत्तीसगढ़ शासन, 2015-2016
8. छत्तीसगढ़ आर्थिक परिषद् का सातवाँ वार्षिक सम्मेलन, राजनांदगांव. 2 तथा 3 फरवरी. 2015.
9. आर्थिक सर्वेक्षण, .2014-15.
10. स्वामीनाथन, मधुरा. खाद्य सुरक्षा अधिनियम का क्रियान्वयन, दिस. 2013 योजना, पृष्ठ 19.
11. वर्मा, संतोष. भारत में खाद्य सुरक्षा : एक समग्र आर्थिक अवलोकन, योजना, दिसम्बर 2013 पृष्ठ 47.
12. डॉ. टेकाम, केशव एवं उदायत, तुलसीदास. अब नहीं रहेगा कोई भूखा, कुरूक्षेत्र, नवम्बर 2013 पृष्ठ 07.
13. चंद्र, विकास. खाद्य सुरक्षा और ग्रामीण उपभोक्ता, कुरूक्षेत्र, नवम्बर 2013 पृष्ठ 19.

Research Journal of Arts, Management and Social Sciences,
Vol. XVIII, Hindi.-I, Year IX, March, 2018
UGC Sl. No. 2138, Journal No.48774, Impact Factor 2.996

छत्तीसगढ़ राज्य में सेवा क्षेत्र का विकास

* रितु मारवाह
** तपेश चन्द्र गुप्ता

==

सारांश– *छत्तीसगढ़ राज्य देश के सर्वाधिक तीव्र गति से विकसित होने वाले राज्यो में से एक है यहॉ की कुल जनसंख्या 2,55,45,198 है, जिसका 76.76 प्रतिशत ग्रामीण क्षेत्र में तथा 44.21 प्रतिशत वनांचल हैं। छत्तीसगढ़ राज्य का मूल रोजगार कृषि एवं इस पर आधारित है, फिर भी यहॉ पर वनोपज, खनिज, एवं उद्योगो पर आधारित रोजगार की अपार संभावनाएँ है। नये राज्य बनने के बाद आधारभूत संरचनाओ के विकास एवं कार्यालयीन व्यवस्था को संचालित करने हेतु सेवा क्षेत्र में रोजगार के अवसर बढ़े हैं। राज्य में स्वायतता और सीमित परिक्षेत्र होने के कारण नियंत्रण एवं वित्तीय अनुशासन ने श्रेष्ठता को प्राप्त किया है। राज्य को कृषि उत्पादन (चावल) के लिए लगातार तीन वर्षो से कृषि कृमणता पुरस्कार तथा वित्तीय व्यवस्थाओ के श्रेष्ठ प्रदर्शन के लिए भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा विगत तीन वर्षो से उत्कर्षणता प्रदान की जा रही है। इसी प्रकार पंचायत, अद्योसंरचना विकास, कल्याणकारी योजनाओ के विस्तार के लिए भी राष्ट्रीय पुरस्कार प्राप्त हुआ है, ऐसे राज्य के सेवा विस्तार एवं रोजगार संभावनाओ का अध्ययन बहुत ही रोचक एवं प्रगतिशीलता का आदर्श स्वरूप हो सकता है ऐसी संभावनाओ को ध्यान में रखते हुए प्रस्तुत शोध पत्र तैयार किया गया है।*

==

परिचय– सेवा क्षेत्र आज अर्थव्यवस्था के महत्वपूर्ण एवं तीव्र गति से विकसित होने वाले क्षेत्र के रूप में उभरता हुआ दृष्टिगत है, सेवा क्षेत्र को अर्थव्यवस्था का तृतीयक क्षेत्र भी कहा जाता है सेवा क्षेत्र अर्थात् अर्थव्यवस्था का वह क्षेत्र जहॉं वस्तुओं का उत्पादन नहीं होता अपितु सेवायें प्रदान की जाती है। अर्थव्यवस्था को मुख्यतः 3 क्षेत्रों में विभजित किया जा सकता है। प्राथमिक, द्वितीयक एवं तृतीयक। प्राथमिक क्षेत्र में कृषि, खनन, पशुपालन एवं मत्स्य पालन, वन संबंधित उद्योगों को सम्मिलित किया जाता है। द्वितीयक क्षेत्र निर्माण एवं विनिर्माण, विद्युत उत्पादन, गैस, पानी उद्योग से संबंधित है। तृतीयक क्षेत्र जिसमें शिक्षा स्वास्थ्य, परिवहन, होटल व्यवसाय एवं लोक प्रशासन संबंधी उपक्षेत्र सम्मिलित है।

अर्थव्यवस्था की विकास की अवस्थाओं का अध्ययन अवलोकन करने के पश्चात् बहुत से विद्वानों के मत है कि विकास की प्रथम अवस्था में प्राथमिक क्षेत्र का योगदान सर्वाधिक होता है एवं जैसे-जैसे अर्थव्यवस्था विकसित होती जाती है प्राथमिक क्षेत्र का योगदान घटता है एवं द्वितीयक एंव तृतीयक क्षेत्र का योगदान तीव्र गति से विकसित होता है। संपूर्ण विश्व में सेवा क्षेत्र के योगदान में निरंतर वृद्धि दृष्टिगत है, सेवाक्षेत्र मुख्यतः

=========================

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय दू.ब. महिला महाविद्यालय, रायपुर छ.ग.
** प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय जे. योगान्दम छत्तीसगढ़ महाविद्यालय, रायपुर छ.ग.

निम्न उपक्षेत्रों से मिलकर निर्मित है:

1. परिवहन भंडारण एवं संचार: अ) रेल्वे, ब) परिवहन, स) भंडारण, द) संचार
2. व्यापार होटल
3. बैंकिंग, बीमा, स्थावर संपत्ति
4. लोक प्रशासन
5. अन्य सेवाएं (शिक्षा, स्वास्थ्य)

इस प्रकार इन सभी उपक्षेत्रों से मिलकर सेवा क्षेत्र निर्मित हैं

संपूर्ण भारत की तरह ही राज्य में भी सेवा क्षेत्र में विकास एवं विस्तार देखा जा सकता है। संपूर्ण राज्य में सड़क निर्माण शिक्षा एवं स्वास्थ्य सुविधाओं को बेहतर करने हेतु अनेक प्रयास किये जा रहे हैं। वर्ष 2016-17 में प्राथमिक शालाओ की संख्या 33406, माध्यमिक शालाओ की संख्या 16674, हाईस्कूल की संख्या 2643, हायर सेकेण्डरी की संख्या 3898 इस प्रकार कुल 56621 शासकीय संस्थान है, कुल 13 राजकीय एवं शासकीय विश्वविद्यालय संचालित है एवं अनेक निजी संस्थान भी कार्यरत है जो प्रदेश में शिक्षा के स्तर को बढाने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे है। राज्य की साक्षरता दर जो वर्ष 2001 की जनगणना 64.66 प्रतिशत में थी वर्ष 2011 में 70.28 प्रतिशत हो गयी है। इसी प्रकार स्वास्थ्य के क्षेत्र में बेहतर स्थिति है इसी प्रकार राज्य मे लोक सेवा के माध्यम से विभिन्न पदों में भर्ती की जा रही है बैंकिंग एवं बीमा क्षेत्र में भी अत्यंत प्रगति हुई है। परिवहन, संचार, व्यापार एवं होटल व्यवसाय को भी इन सभी उपक्षेत्रों की भांति विकास के सुवसर मिल रहे है। फलस्वरुप छत्तीसगढ़ राज्य में सेवा क्षेत्र में अत्यंत तीव्र एवं सतत वृद्धि हो रही है।

उद्देश्य-

1. छत्तीसगढ़ राज्य में सेवा क्षेत्र का अध्ययन।
2. छत्तीसगढ़ राज्य में सेवा क्षेत्र की वृद्धि का अध्ययन।
3. छत्तीसगढ़ राज्य में सेवा क्षेत्र के बढ़ते योगदान का अध्ययन।

शोध प्रविधि- प्रस्तुत शोध पत्र में द्वितीयक समंकों का प्रयोग किया गया है एवं वर्ष 2014-15 से वर्ष 2016-17 तक के आंकड़ों का विश्लेषण किया गया है। इस हेतु राज्य की आर्थिक एवं सांख्यिकी संचालनालय द्वारा प्रकाशित आर्थिक सर्वेक्षण 2016-17 एवं विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं का अध्ययन किया गया है।

राज्य में सेवा क्षेत्र की स्थिति-

छत्तीसगढ़ राज्य का निर्माण वर्ष 2000 में हुआ था, राज्य निर्माण के पश्चात् ही चौतरफा विकास हुआ। अधोसंरचना का निर्माण, नवीन जिलों का गठन, नवीन पाठशालाएं, महाविद्यालय एवं अस्पतालों आदि का निर्माण हुआ। फलस्वरुप राज्य के सकल घरेलू उत्पाद में वृद्धि स्वाभाविक थी। राज्य के सभी जिलों में जिला कार्यालयों, अस्पतालों, प्राथमिक शालाओं के निर्माण के फलस्वरुप नवीन पद सृजित हुए। राज्य की सरल एवं निवेश आकर्षित करने वाली औद्योगिक नीति, विद्युत आधिक्य एवं सस्ता श्रम उपलब्ध करवाने में सक्षम होने की स्थिति के फलस्वरुप निजी एवं बड़े औद्योगिक घरानों के उद्योगपति अपने उद्योग यहाँ लगाने हेतु उत्साहित हुए। नवीन उद्योगों की स्थापना के साथ ही साथ छोटी एजेंसियों, फर्मो की भी स्थापना हुई एवं सेवा क्षेत्र में निरंतर वृद्धि होती रही,

वर्ष 2014-15 के सकल घरेलू उत्पाद के अनुमानों का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि सेवा क्षेत्र 7588778 लाख रु था, जो कि 2015-16 में 9974317 लाख रु हो गया।

तलिका क्र. 1

छत्तीसगढ़ राज्य के सकल घरेलु उत्पाद प्रचलित मूल्य पर

वर्ष	सेवा क्षेत्र का सकल घरेलु उत्पाद	कुल सकल घरेलु उत्पाद
2014—15 (P)	7588778	22228481
2015—16 (Q)	8698541	24699264
2016—17 (A)	9974377	27565487

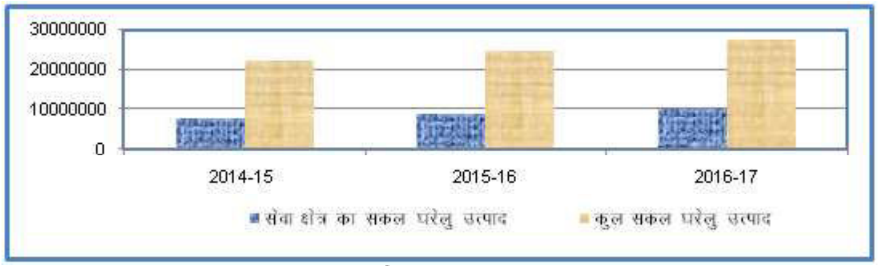

चित्र क्र. 1

तलिका क्र. 2

छत्तीसगढ़ राज्य सकल घरेलु उत्पाद स्थिर मूल्य (वर्ष 2011-12) पर

वर्ष	सेवा क्षेत्र का सकल घरेलु उत्पाद	कुल सकल घरेलु उत्पाद
2014—15 (P)	6300299	18508211
2015—16 (Q)	6902740	19683116
2016—17 (A)	7586174	21140283

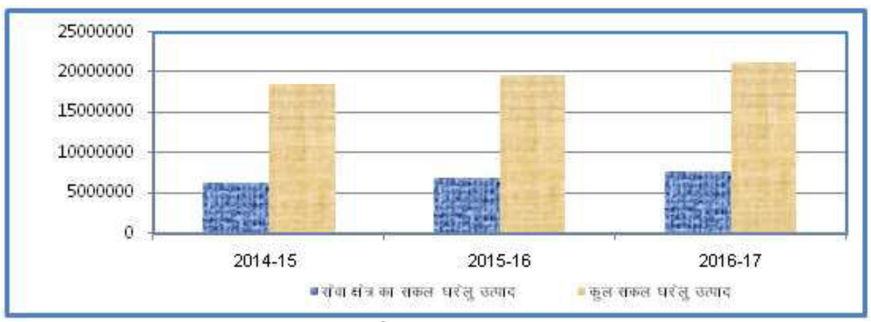

चित्र क्र. 2

राज्य में सेवा क्षेत्र में वृद्धि-

राज्य में विगत 3 वर्षो के अनुमानों के आधार पर सेवा क्षेत्र में हो रही निरंतर वृद्धि का आंकलन किया जा सकता है जो निम्नानुसार है :

तलिका क्र. 3

छत्तीसगढ़ राज्य सकल घरेलु उत्पाद में वृद्धि दर प्रचलित मूल्य पर

वर्ष	सेवा क्षेत्र की वृद्धि दर	कुल सकल घरेलु उत्पाद की वृद्धि दर
2014—15 (P)	13.74	13.83
2015—16 (Q)	14.62	11.12
2016—17 (A)	14.67	11.60

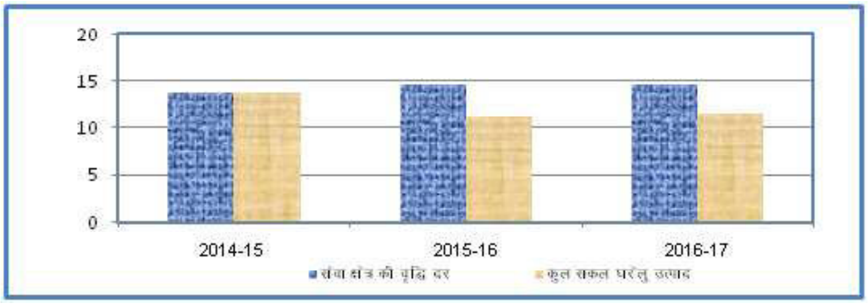

चित्र क. 3

तलिका क. 4

छत्तीसगढ़ राज्य सकल घरेलु उत्पाद में वृद्धि दर स्थिर मूल्य (वर्ष 2011-12) पर

वर्ष	सेवा क्षेत्र की वृद्धि दर	कुल सकल घरेलु उत्पाद की वृद्धि दर
2014–15 (P)	8.24	7.48
2015–16 (Q)	9.56	6.35
2016–17 (A)	9.90	7.40

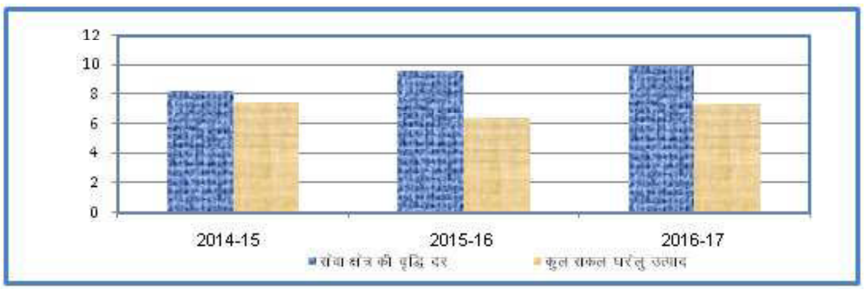

चित्र क. 4

वर्ष 2014-15 में प्रचलित मूल्यों पर वृद्धि दर का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि सेवा क्षेत्र में निरंतर एंव सतत् वृद्धि हो रही है प्रति वर्ष 13.74 प्रतिशत वृद्धि दृष्टिगत है जबकि 2016-17 में वृद्धि दर 14.67 हो गयी। स्थिर भावों में भी 2014-15 में वृद्धि दर 8.24 से वर्ष 2016-17 में 9.9 हो गयी।

राज्य में सेवा क्षेत्र का योगदान-

अर्थव्यवस्था में विकास के साथ-साथ सेवा क्षेत्र का योगदान बढ़ना सर्वविदित एवं सर्वमान्य है राज्य में भी सेवा क्षेत्र का योगदान निरंतर बढ़ रहा है।

तलिका क. 5

सकल घरेलु उत्पाद में सेवा क्षेत्र का योगदान प्रचलित मूल्य पर

वर्ष	सेवा क्षेत्र का योगदान
2014–15 (P)	34.14
2015–16 (Q)	35.22
2016–17 (A)	36.18

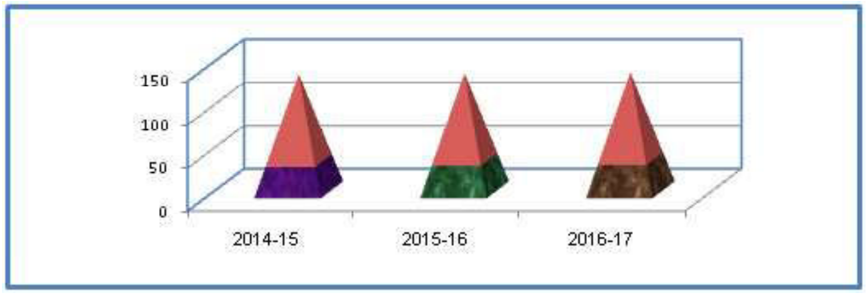

चित्र क्र. 5

तलिका क्र. 6

सकल घरेलु उत्पाद में सेवा क्षेत्र का योगदान स्थिर मूल्य (वर्ष 2011-12) पर

वर्ष	सेवा क्षेत्र का योगदान
2014–15 (P)	34.04
2015–16 (Q)	35.07
2016–17 (A)	35.88

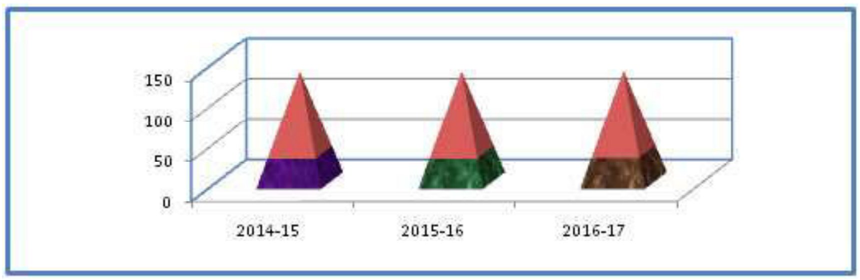

चित्र क्र. 6

वर्ष 2014-15 में प्रचलित मूल्यों में सेवा क्षेत्र का योगदान 34.14 था जो वर्ष 2015-16 में बढ़कर 36.18 हो गया। इसी प्रकार स्थिर भावों में वर्ष 2014-15 में सेवा क्षेत्र का योगदान 34.05, था जो वर्ष 2016-17 में 35.88 हो गया।

संपूर्ण अनुमानों एंव आंकड़ो के अध्ययन से स्पष्ट है कि राज्य के विकास में सेवा क्षेत्र का योगदान निरंतर बढ़ रहा है। नवीन जिलों के गठन एवं कौशल प्रशिक्षण के अनेक अवसर प्राप्त होने से युवा वर्ग सेवा क्षेत्र की ओर अग्रसर हो रहे है। यद्यपि राज्य में निजी एवं लोक सभी प्रकार की सेवाओं की गणना का प्रयत्न किया जा रहा, अपितु कुछ सेवाएं जैसे घर में ट्यूशन प्रदान करना, कृषि के साथ-साथ चाय-पानी के ठेले चलाना, साइकिल की दुकान आदि छोटी-छोटी सेवाओं की गणना, सेवा क्षेत्र की गणना में छूट जाती हैं परंतु फिर भी राज्य में सेवा क्षेत्र मे अभूतपूर्व वृद्धि हो रही है जो कि छत्तीसगढ़ जैसे नवीन गठित राज्य के लिए गर्व एंव विकास की नयी दिशा में प्रयास का मार्ग प्रशस्त करती है।

===============

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची-

1. अग्रवाल. जी. के. एवं पाण्डेय एस. एन. शोध सांख्यिकी: साहित्य भवन पब्लिकेशन, 2004

2. जैन बी. एम. शोध प्रविधि व क्षेत्रीय तकनीकः रिसर्च पब्लिकेशन जयपुर, 2001
3. दुबे, आर.एन. एवं सिन्हा, वी.सी. आर्थिक विकास एवं नियोजनः नेशनल पब्लिकेशन हाऊस नई दिल्ली, 2002
4. मुकर्जी, रवीन्द्र नाथ. सामाजिक शोध व सांख्यिकीः विवेक प्रकाशन दिल्ली, 2008
5. मिश्र, एस.के. एवं पुरी, व्ही.के. भारतीय अर्थशास्त्रः हिमालया पब्लिकेशन हाऊस, 2005
6. त्रिपाठी, बद्री विशाल. भारतीय अर्थव्यवस्थाः किताब महल इलाहाबाद, 2000
7. सिन्हा, वी.सी. व्यावहारिक अर्थशास्त्रः साहित्य भवन, 2006
8. आर्थिक सर्वेक्षण, आर्थिक एवं सांख्यिकी संचालनालय रायपुर 2016-17
9. राज्यीय आय के अनुमान,आर्थिक एवं सांख्यिकी संचालनालय रायपुर 2016-17

Research Journal of Arts, Management and Social Sciences,
Vol. XVIII, Hindi.-I, Year IX, March, 2018
UGC Sl. No. 2138, Journal No.48774, Impact Factor 2.996

सशक्त ग्रामीण महिलायें तथा समग्र विकास

* देवेन्द्र प्रसाद पाण्डेय
** शची गुप्ता

सारांश– *महिला सशक्तिकरण के अर्न्तगत महिलाओं से जुड़े सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, और कानूनी मुद्दों पर संवेदनशीलता और सरोकार व्यक्त किया जाता है परन्तु सशक्तिकरण की प्रक्रिया में समाज को पारंपरिक पितृसत्तात्मक दृष्टिकोण के प्रति जागरूक करना आवश्यक है जिन्होंने महिलाओं की स्थिति को सदैव कमतर माना है। वैश्विक स्तर पर नारीवाद आन्दोलनों और यू0 एन0 डी0 पी0 आदि अर्न्तराष्ट्रीय संस्थानों ने महिलाओं के सामाजिक समता, स्वतंत्रता और न्याय के राजनीतिक अधिकारों को प्राप्त करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी हैं।*

सशक्तिकरण– ''महिला सशक्तिकरण, भौतिक या आध्यत्मिक, शारीरिक या मानसिक, सभी स्तर पर महिलाओं में आत्मविश्वास पैदा कर उन्हें सशक्त बनाने की प्रकिया है।''

जब हम ग्रामीण महिलाओं की बात करते है तब हमें ध्यान रखना होगा कि उनके सशक्तिकरण की राह भी आगे पढ़ने, आगे बढने और राष्ट्रीय विकास में योगदान की दिशा में शहरी लड़कियों से भी ज्यादा मुश्किल है। उसके लिये घर से निकलना ही मुश्किल है, भले ही उसके घर वाले उसको पढाना चाहें। महिलाओं को लेकर उनकी बुनियादी अवधारणाओं में बदलाव लाए बगैर काम नही चलेंगा पर यह बदलाव सरकार के किये से नहीं आयेगा अलबत्ता सरकार की इसमें भूमिका अवश्य है। अब केवल महिलाओं के कल्याण की बात करने का वक्त नहीं बल्कि अब उनकी भागीदारी और उनके अधिकारों की बात होनी चाहिये।

भारत सरकार ने आदिवासी महिलाओं के समग्र विकास के लिये उनकी शिक्षा, रोजगार समस्याओं तथा खेती इत्यादि सभी पहलुओं पर विचार करते हुये योजनाओं का निर्माण किया है। सरकार ने न सिर्फ शहर बल्कि ग्रामीण और आदिवासी स्थानों की भी चिंता इन योजनाओं में की है।

शिक्षा– सरकार ने पढ़ने लिखने वाले युवाओं के लिये भी कई योजनाओं का सृजन किया है। गुणवत्ता परक उच्च्य शिक्षा हासिल करने के लिये गरीब तबके के लिये वित्तीय सहायता मुहैया कराने हेतु सरकार ने कई कदम उठाये हैं जिसमें एस0सी0, एस0टी0, और ओ0बी0सी0 श्रेणी के बाहर की गैर- अधिसूचित जातियों के लिये डॉ0 अम्बेडकर प्री-मैट्रिक, पोस्ट मैट्रिक छात्रवृत्ति और नाना जी देशमुख छात्रावास निर्माण योजना को

* एसोसिएट प्रोफेसर, प्रबन्ध संकाय, महात्मा गांधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय, सतना (म.प्र.)
** शोध अध्येता, प्रबन्ध संकाय, महात्मा गांधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय, सतना (म.प्र.)

शुरु किया गया, यही नही ग्रामीण गरीब तथा पिछड़े युवाओं के विदेश में अध्ययन की व्यवस्था भी सरकार ने की है जिसमें विदेशी विश्व विद्यालयों में उच्च शिक्षा को बढ़ावा देने के लिये ओ0 बी0 सी0 और ई0 वी0 सी0 छात्रों के विदेश अध्ययन के लिये डा0 अम्बेडकर स्कीम आफ इंट्रेस्ट सब्सिडी आँन एजुकेशनल लोन फार ओवरसीज स्टडीज को 2014-15 में शुरु किया गया। सरकार ने शहर और ग्रामीण इलाकों के साथ साथ देश के आदिवासी इलाकों के विषय को भी गंभीरता से लिया है तथा आदिवासी कल्याण मंत्रालय ने आदिवासियों को गुणवत्ता परक शिक्षा प्रणाली से जोड़ने का प्रयास किया है, वर्ष 2014-15 में मंत्रालय ने इनके बीच से गुणवत्तापरक विज्ञान के छात्रों को चिन्हित करने का फैसला किया है। इसमें खासकर लड़कियां होंगी जिन्हें एन0 एम0 के तौर पर प्रशिक्षण देने या फिर किसी दूसरे संस्थान में भेजने की व्यवस्था की जायेगी। शिक्षा में आने वाली भाषा संबंधी समस्याओं को दूर करने के कम में दो भाषाओं (क्षेत्रीय और आदिवासी) की किताबों पर काम चल रहा है जिसे उड़ीसा, झारखण्ड और महाराष्ट्र में शुरु कर दिया गया है। इस बीच जब से नई सरकार ने सत्ता संभाली है कौशल विकास मंत्रालय ने एक लाख आदिवासियों को प्रशिक्षित किया जिसके लिये 275 करोड़ रुपये आवंटित किये गये हैं। पैरा मेडिकल स्टाफ बनाने के लिये केन्द्रीकृत प्रशिक्षण, शिक्षक, कारीगर, टेक्नीशियन, तकरीबन, 3 हजार डेयरी को-आपरेटिव की स्थापना, बागवानी के जारियें आत्मनिर्भरता के लियें प्रशिक्षण, मुर्गीपालन आदि प्रयास आदिवासी आबादी के लिये किये गयें हैं।

रोजगार- स्वयं सहायता समूह, जल संरक्षण, और मृदा स्वास्थ्य जैसी योजनाऐं सरकार की दूरदर्शिता को दर्शाती है तथा इनमें पुरानी योजना राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन में समूह बनाने के कार्यो,मनरेगा में भी अब तालाब, बांध आदि बनाने के कार्यों को समाहित करके अपनी दूरदर्शिता का परिचय दिया है तथा इससे आदिवासी इलाकों में रोजगार मिलने की संभावनायें बढ़ गयी हैं। सरकार ने ग्रामीण महिलाओं के सशक्तिकरण हेतु एक निश्चित तौर पर बहुत ही सराहनीय योजनायें बनाई है। अब बस जरुरत है तो उन्हें सही तरह से कियान्वित करके धरातल पर उतारने की जिससे ग्रामीण महिलायें सशक्त होकर देश को सशक्त बनाने में अपना योगदान दें सकें। स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना जिसे 1 अप्रैल 1999 से शुरु किया गया, ग्रामीण रोजगार से जुड़ी योजना थी, नवीन राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन के तहत कुछ प्रमुख मिशन और लक्ष्य निर्धारण किये गये है। स्वयं सहायता समूह भी इसी योजना का एक भाग है जो समान रूप से जूझ रहे लोंगो का एक छोटा समूह है। समूह के सदस्य एक-दूसरे की समस्या के निदान के लिऐ सहयोग करते हैं इसका समन्वित प्रभाव ग्रामीण क्षेत्रों के लोंगो में रोजगार के प्रति एक आशा के रुप में दिखता है और वे अपने समाज के साथ जुड़े रहना ज्यादा पसंद करते है।

देश में बेरोजगारी घटाने हेतु एम एस एम ई मंत्रालय प्रधानमंत्री रोजगार सृजन कार्यक्रम (पी0 एम0 ई0 जी0 पी0) देश के शहरी और ग्रामीण इलाकों में रोजगार सृजन के लिए एक केडिट से जुडा सब्सिडी कार्यक्रम जैसी मुख्य योजनाओं को लागू कर रहा है।

महिलाओं के सशक्तिकरण के राष्ट्रीय मिशन- महिलाओं के सशक्तिकरण हेतु एक राष्ट्रीय संसाधन केन्द्र (NRCW) की स्थापना की गयी है, इस केन्द्र के 8 प्रकार

के कार्यक्षेत्र का विस्तारण किया गया है यथा गरीबी उपशमन, सामाजिक सशक्तिकरण, स्वास्थ्य एवं पोषण, जेंडर बजट, लैंगिक अधिकार, कमजोर एवं अधिकार हीन समूह, मीडिया और संचार एवं सूचना प्रौद्योगिकी इन कार्यक्रमों का लक्ष्य महिलाओं की स्थिति में आमूल परिवर्तन से है।

राजनीतिक सशक्तिकरण–

महिला सशक्तिकरण की दिशा में हालांकि दुनिया के कई देश कई महत्वपूर्ण उपाय काफी पहले कर चुके हैं आश्चर्य की बात तो यह है कि हमारे पड़ोसी देश पाकिस्तान में भी महिलाओं के लिये संसदीय सीटों के आरक्षण की व्यवस्था की जा चुकी है। लगता है हमारे भारतवर्ष में भी इस दिशा में कुछ रचनात्मक कदम उठाये जाने की तैयारी शुरु कर दी गई है। पुरुष प्रधान समाज में महिलाओं को आरक्षण दिया जाना और वह भी राजनीति जैसे उस क्षेत्र में जहां पर आमतौर पर पुरुषों का ही वर्चस्व देखा जाता है वास्तव में एक आश्चर्य की बात है परन्तु पूर्व प्रधान मंत्री स्वर्गीय राजीव गॉधी के इस सपने को साकार करने का जिस प्रकार कांग्रेस अध्यक्ष सोनिया गॉधी ने मन बनाया है तथा अपने कांग्रेस संसदों को महिला आरक्षण के पक्ष में मतदान करने की अनिवार्यता सुनिश्चित करने हेतु व्हिप जारी किया है उसे देखकर यह कहा जा सकता है कि कांग्रेस पार्टी के शीर्ष पुरुष नेता भले ही भीतर ही भीतर इस बिल के विरोधी क्यों न हो परन्तु सोनिया गॉधी की मंशा भांपने के बाद फिलहाल ऐसा नही लगता कि कांग्रेस का कोई भी नेता राज्यसभा में इस विधेयक के पारित हो जाने के बाद अब लोकसभा में इसके विरुद्ध अपनी जुबान खोल सकेगा।

समाज में महिलाओं की भूमिका–

सामाजिक जीवन में महिलाओं की भूमिका पुरुषों से ज्यादा बड़ी है। देश का राजनीनिक, सामाजिक, और आर्थिक विकास महिलाओं के विकास पर निर्भर करता है। जब एक महिला सामाजिक और आर्थिक रुप से सशक्त होती है तो न केवल उसका परिवार गांव बल्कि देश भी मजबूती पाता है। सन् 2011 की जनगणना के अनुसार भारत की 83.3 करोड़ अबादी गांवों में रहती है, इनमें तकरीबन 40.51 करोड़ महिलायें हैं इनमें एक तिहाई युवा महिलायें है। अवसरों की कमी, कौशल न होने और अक्सर पैसे की कमी से इनकी उत्पादन क्षमता का पूरा लाभ देश को नहीं मिल पाता है। महिलाओं के सशक्तिकरण के मोटे तौर पर संकेतक उनकी शिक्षा, स्वास्थ्य, सामाजिक, पारिवारिक स्थिति और रोजगार से जुड़े हैं। महिलाओं के सशक्तीकरण के लिहाज से युवा महिलायें ज्यादा महत्वपूर्ण है क्यों कि नये ज्ञान से लैस लड़कियां अपने परिवार के दृष्टिकोण बदलने में क्रांतिकारी भूमिका निभा सकती है इसलिये ग्रामीण महिलाओं का सशक्तिकरण एक प्रकार से सामाजिक बदलाव का सबसे प्रभावशाली औजार साबित हो सकता है पर लिंगानुपात बताता है कि हमारा समाज लड़कियों की उपयोगिता से बेखबर है।

भारतीय महिलाओं की स्थिति खासकर ग्रामीण क्षेत्रों में ऐतिहासिक घटनाओं से बहुत प्रभावित रही है, प्राचीन भारतीय समाज में महिलाओं की सुरक्षा के दृष्टिकोण से सुरक्षात्मक उपायों के रुप में बहुत सारी कुरीतियाँ उत्पन्न हो गयी थी, जिसका परिणाम यह हुआ कि कन्या भ्रूण हत्या, बाल विवाह, पर्दाप्रथा, सती प्रथा जैसी कुप्रथाओं ने महिलाओं की स्थिति को दयनीय बना दिया। महिलाओं की इस स्थिति के लिये हमारे समाज की सोच

और मानसिकता को प्रमुख कारण माना गया है। लौगिक अनुपात से समाज में स्त्रियों की दशा का पता लगता है, अनुपात बताता है कि समाज महिलाओं को किस रुप में देखता है भारत में 0-6 साल वर्ग में 1000 लड़कों के बीच लिंग अनुपात में लड़कियों की संख्या में गिरावट की प्रवृत्ति 1961 से लगातार देखी जा रही है, वर्ष 1991 में 945 संख्या के 2001 में 927 पहुंचने और 2011 में इस संख्या के 918 पहुंचने पर इसे खतरे की घंटी मानते हुए सरकार ने इसे सुधारने की कोशिशें शुरु की है। लिंग अनुपात में गिरावट सीधे तौर पर जन्म से पूर्व लिंग की पहचान करने वाली तकनीक के दुरुपयोग की ओर इशारा करती है। बहरहाल हाल में सरकार ने 'बेटी बचाओं बेटी पढ़ाओं' योजना की शुरुआत की और जिसे खराब लिंगानुपात वाले 100 जिलों में प्रारम्भ किया गया। सामान्यतः जिन सुचकांको पर ध्यान देना चाहिये उनमें से कुछ इस प्रकार है- विवाह के समय की औसत आयु, बच्चे को जन्म देते समय माताओं की मृत्यु, बच्चों के जन्म के बीच की अवधि, परिवार के सदस्यों की संख्या, महिलाओं के खिलाफ अपराध, साक्षरता दर, श्रमिकों में महिलाओं की संख्या और बाल लैंगिक अनुपात महिलाओं के स्वास्थ्य का जिक्र किये बगैर उनके सशक्तिकरण की बात करना उचित नहीं होगा।

''भारत में संविधान के मुल तत्वों में अनुच्छेद 51 (क) (ड़) के अर्न्तगत भी लोगों में समरसता और समान मातृत्व की भावना का निर्माण करें जो सभी प्रकार के भेदभाव से परे हो तथा ऐसी प्रथाओं का त्याग करें जो महिलाओं के विरुद्ध हो। इस परिप्रेक्ष में महिला उत्थान की भावना को संवैधानिक पोषण देने का प्रयास किया है यहीं नहीं अनुच्छेद 15 में यह निर्धारित किया गया है कि लिंग के आधार पर किसी भी प्रकार का भेदभाव निषेध होगा इस उद्देश्य की प्रतिपूर्ति हेतु भारत में महिलाओं के लिये समानता के अधिकार को सुंरक्षित रखने के कानून का निर्माण किया गया।

दृष्टिकोण-

निःसन्देह महिलाओं की गरिमा और उनके अस्तित्व को बनाए रखना आज सबसे बड़ी चुनौती है। सरकार द्वारा महिलाओं के संबंध में समय-समय पर कल्याणकारी योजनाओं बनाने और संविधान में उन्हें यथेष्ट संरक्षण प्रदान करने के बावजूद आज भी नारी यदि शोषित,पीड़ित, गरीब और लिंग आधारित विषमता का शिकार है तो उसका एक महत्वपूर्ण कारण पुरुष की मनोवृत्ति में अपेक्षित बदलाव न आना है। इसलिए हमारे नीति निर्माताओं को महिलाओं के प्रति संवेदनशील रवैया अख्तियार करते हुए उनके लिए और बेहतर कल्याणकारी योजनाओं के निर्माण के साथ उनकी इन योजनाओं के निर्माण के साथ उनकी इन योजनाओं के निर्माण में समुचित भागीदारी को भी सुनिश्चित करना होगा। हमें यह कहने में तनिक भी संकोच नहीं है कि देश में मौजूदा अन्य विकास कार्यक्रमों की तरह महिला विकास में जुड़े कार्यक्रमों से भी हमें अभी तक आशानुरुप परिणाम नहीं मिले। राज्य सरकारों द्वारा केन्द्र सरकार से यथोचित सहयोग न करना, कल्याण कार्यक्रमों के प्रति टालमटोल और ढिलाई बरतना तथा उनके कार्यान्वयन में संसाधनों / निधियों की कमी का बहाना बनाना आदि ये कुछ ऐसे महत्वपूर्ण कारण हैं जिनकी वजह से महिला विकास कार्यक्रमों से हमें अपेक्षित परिणाम नहीं मिलें।

इसलिए राज्यों का यह परम कर्त्तव्य है कि महिला विकास कार्यक्रमों में केन्द्र के साथ न केवल पूरा सहयोग करें बल्कि अपने स्तर पर भी महिला विकास कार्यक्रमों के

निर्माण में तेजी लाकर उनके लिए पर्याप्त बजटीय व्यवस्था करें। उनका यह भी दायित्व है कि वे सुदुर ग्रामीण इलाकों का सघन भ्रमण कार्यक्रम तैयार कर जमीनी वास्तविकताओं का पता लगाएं और उसके अनुरुप महिलाओं के कल्याण की दिशा में पहल करें। साथ ही इन कार्यक्रमों के कार्यान्वयन और मॉनीटरिंग के लिए समुदाय और पंचायत स्तर की भागीदारी और जवाबदेही भी सुनिश्चित करें और गैर-सरकारी संगठनों का भी सहयोग लें। अब हमें और समय गवाये बिना इस बात पर भी जोर देना होगा कि महिलाएं विकास कार्यक्रमों की लाभार्थी बनकर ही रहें बल्कि राष्ट्र की विकास प्रकिया में उनकी पूरी सहभागिता हों और प्रत्येक कल्याणकारी योजनाओं के निर्माण में उनका समुचित प्रतिनिधित्व हो ताकि इन योजनाओं के फलों का सबको समान रुप से स्वाद मिलें। इसमें दो राय नहीं कि यदि हम देश की महिलाओं की इस आधी आबादी के लिए उनके जीवन की सुरक्षा तथा गरिमा की रक्षा सुनिश्चित न कर सके तो देश की शानदार विकास के बावजूद भारत की प्रगति सदैव बाधित होती रहेगी और इस कारण देश की आधी जनसंख्या को पर्याप्त विश्वास में लिए बिना हम समावेशी विकास की अवधारणा को मुर्त रुप नहीं दे सकते।

शायद ही आज कोई क्षेत्र ऐसा हो जहां महिलायें अपनी उपस्थिति का अभास न करा रही हों सरकारी एवं गैर-सरकारी स्तर पर विगत छ : दशको के प्रयास पुरूषों के नजरिये में बदलाव लाने में सफल हुये हैं। फिर चाहे वह बदलाव बाध्यकारी नीतियों से या जागरूकता से ही क्यों न आ रहे हों। सामाजिक परिदृश्य में महिला मजबूर नहीं, मजबूत नजर आ रही हैं। अपने एवं परिवार से संबधित निर्णयों मे वह काफी हद तक केन्द्रीय भूमिकाओ का निर्वहन कर रही है। महिला अधिकारों ने ऐसी प्रक्रिया को जन्म दे दिया है, जिसमें वे संगठित होकर अपने सतत् विकास को प्राप्त कर रही हैं महिला अधिकार की कसौटी पर खरी उतरने वाली पंचायतों में 50 प्रतिशत आरक्षण के फैसले से अधिक महिलाओं को सर्वजनिक क्षेत्र में प्रवेश का अवसर प्राप्त होगा। तद्नुसार केन्द्रीय मंत्रीमंडल ने 27 अगस्त 2009 को संविधान की धारा 243 घ को संसोधित करने के लिये प्रस्ताव का अनुमोदन कर दिया ताकि पंचायत के तीनो स्तर की सीटों और अध्यक्ष के 50 प्रतिशत पद महिलाओं के लिये आरक्षित किये जा सकें। पंचायतीराज मंत्री ने 26 नवम्बर 2009 को लोक सभा में संविधान (110 वां संशोंधन विधेयक 2009) पेश किया । वर्तमान में लगभग 28.18 लाख निर्वाचित प्रतिनिधियों में 36.87 प्रतिशत महिलायें है। इस संशोधन विधेयक के बाद महिला प्रतिनिधियों की संख्या 14 लाख से भी अधिक हो जाने की आशा है।

ग्रामीण व शहरी निकायों में महिलाओं की सहभागिता को केवल उभारा ही नही है बरन उनके लिये नेतृत्व के नये अवसर भी प्राप्त हो रहे हैं। महिला अधिकारों नें सशक्तिकरण की दशा में जो बड़ा आधार तैयार किया है उसमें शिक्षा मील का पत्थर साबित हुयी है। शिक्षा का स्तर बढा है, तो कामकाजी महिलाओं की संख्या भी बढने लगी है। अपनी क्षमताओं से महिलाओं ने रोजगार के सभी क्षेत्रों में न केवल दस्तक दे दी है वरन् मजबूती के साथ अपने अस्तित्व का आभास भी कराया है। कामयाबी की नयी-नयी मिसालें बन रहीं महलायें सशक्तिकरण के उदाहरण हैं। प्रत्येक स्तर पर उनकी आवाज को पहचान मिल रही है। इन्ही अधिकारों की बदौलत सामाजिक बदलाव में महिलाओं के प्रति सवेंदनशीलता बढी है जिसको पुरूष स्वीकार भी कर रहे है।

आज भी महिलाओं से जुड़े कानूनो का निर्माण पुरूष बाहुल्य व्यस्थापिकाओं द्वारा किया जा रहा है। जिसमें महिलाओं की संख्या लगभग नगण्य है। अनेंक प्रयासों के बावजूद ब्यवस्थापिका में महिला आरक्षण विधेयक पास नहीं हो पाया, जिसका कारण पुरूषों में भ्रांति है, कि ऐसा कर देने पर उनका राजनीतिक वर्चस्व न केवल समाप्त हो जायेगा, बल्कि लोकसभा और विधानसभाओ में उनके प्रवेश की सम्भावनायें भी क्षीण हो जायेंगी। इसके साथ एक घबराहट यह भी है कि नीति निर्माण की प्रक्रिया में महिलाओं का अधिक से अधिक जुड़ना समाज को मातृसत्तात्मक न बना दें जिसके कारण पुरूष हाशिये पर न चला जाय।

बावजूद इसके महिला अधिकार और सशक्तिकरण भारतीय समाज की आवश्यकता है। किसी एक वर्ग को दबाकर विकास को प्राप्त नहीं किया जा सकता। महिलायें हमारे समाज का हिस्सा हैं, उनकी तरक्की को किसी भय या शंका के रूप में नहीं देखा जाना चाहिये । दोनो वर्गो का दायित्व एक-दूसरे के प्रति सम्मान और विश्वास को बढावा देना होना चाहिए । जहॉ पुरूष मानसिकता में बदलाव की आवश्यकता है, वहीं महिलाओं को भी बदलते परिवेश में उन दायित्वों का निर्वहन करना होगा जो अभी पुरुषों के लिये निर्धारित थे । महिलाओं के लिये यह राह मुश्किल अवश्य है किन्तु नामुमकिन नही है।

प्रगति–

आज के ग्रामीण सामाज में उत्सुकता एवं आगे बढने की तात्पर्यता जागृत हुई है। ग्रामीण समाज के परिवर्तन के दौर पर सर्वाधिक प्रभाव महिलाओं पर पड़ा। मोबाईल, यातायात अन्य संचार माध्यमों, वैश्वीकरण एवं आधुनिकीकरण में ग्रामीण महिलाओं को अनेक अवसर प्रदान किये। शिक्षा जागरूकता, आर्थिक गतिविधियों के प्रति चेतना एवं राजनीतिक भागीदारी में उन्हें स्वतंत्रता एवं ग्रामीण समाज के बाहय परिदृश्य में अपनी भूमिका सुनिश्चित करती है। ग्रामीण महिलायें अपने विचारों की स्वतंत्रता परिवारिक निर्णय में भागीदारी, शिक्षा, नौकरी एवं अन्य आर्थिक स्रोंतो के प्रति क्रियाशील जागरुक हो रही है।ग्रामीण स्तर में महिलाओं के परिदृश में उनके अन्दर आत्मविश्वास साहस एवं अपने जीवन एवं परिवार के सुखदायी एवं भौतिक निर्णयों की स्वतंत्रता उन्होने स्वयं प्राप्त कर ली है। यही कारण है कि ग्रामीण समाज की परम्पराओं रीति रिवाजों एवं अनावश्यक प्रथाओं में एक अद्‌भुत परिवर्तन दृष्टिगत हो रहा है। अतः कहा जा सकता है कि ग्रामीण महिला समाज अब बन्धनों एवं प्रतिबन्धों को लांधकर अपने ऊपर होने वाली हिंसा बेबसी एवं शोषण का खुलकर विरोध करने लगी है। सारांश रुप में ग्रामीण समाज त्रीव गति से परिवर्तन की ओर अग्रसर होकर महिला सशक्तिकरण की दिशा में निश्चित रुप से आगे बढ़ रहा है।

सुझाव–

देश की लगभग 12 करोड़ युवा महिलायें यदि सही समय पर उत्पादक कार्यो में लग सकें तो राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में भारी बदलाव लाया जा सकता है। अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस के मौके पर 7 मार्च 2016 को दिल्ली में आयोजित एक कार्यक्रम में हार्वर्ड विश्वविद्यालय से जुड़ी अर्थशास्त्री रोहिणी पाण्डे ने एक तथ्य की ओर ध्यान आकर्षित किया कि भारत में कामकाजी महिलाओं की संख्या में गिरावट आ रही है। इस प्रकार के अध्ययन सामने आये हैं कि महात्मा गांधी ग्रमीण रोजगार गाारंटी योजना में काम पाने के

बाद महिलाओं की स्थिति में सुधार हुआ है। हालांकि स्त्रियों के साथ आज भी कामकाज मे पूरी तरह समानता का व्यवहार नहीं हो पाता है, उन्हें पुरूषों से कम वेतन मिलता है और उनकी पारिवारिक भूमिका बड़ी होने के बावजूद कार्यस्थल पर विपरीत स्थितियो में काम करना पड़ता है। यदि उन्हें उपयुक्त रोजगार मिले तो वैश्विक अर्थव्यव्स्था में सुधार हो सकता है। महिलाओं का रोजगार में शामिल होना उनके सशक्तिकरण के लिये जरूरी है, साथ ही अर्थव्यवस्था के विकास में भी उसकी भूमिका है।

युवा ग्रामीण महिलाओं के सशक्तिकरण की बात तब तक अधूरी है जब तक महिलाओं को लेकर सामाजिक दृष्टिकोण की बात नहीं की जाए। केवल महिलाओं की भूमिका बदलने का सवाल नहीं है, बल्कि उनके प्रति सामाजिक नजरिया बदलना चाहिये। उनकी सुरक्षा इसी नजरिये से तय होगी। असुरक्षित और भयभीत महिला से हम बहुत ज्यादा की उम्मीद नहीं कर सकते। महिलाओं के काम की सराहना करना, उपेक्षा न करना व सुरक्षा का वातावरण बनाना हमारे पूरे समाज की जिम्मेदारी है। हम परम्परा से 'यत्र नार्यस्तु पूज्यते' जैसी बात कहते जरूर हैं पर व्यावहारिक रूप से इसे लागू नहीं कर पाते हैं। जो लिंगानुपात देश के कई इलाकों में है, वह इस सामाजिक दृष्टिकोण पर मोहर लगाता है कहना मुश्किल है कि 'बेटी बचाओ, बेटी पढाओ' का नारा हमारे दिलो दिमाग में बैठा है या नहीं पर हम व्यवहार रूप में इसे लागू कर सकें तो कहानी बदलते देर नहीं लगेगी।

===============

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची–

1. मोदी, अनीता, (अगस्त 2013) ग्रामीण महिला सशक्तीकरण, सरकारी प्रयास एवं चुनौतियॉं, कुरूक्षेत्र, पत्रिका पृष्ठ संख्या 28
2. श्रीवास्तव मनोज (सितम्बर,2014), पंचायतीराज के जरिये राजनीतिक रूप से सशक्त हुई महिलायें पृष्ठ संख्या 9
3. सविता, महिला सशक्तीकरण एवं ग्रामीण विकास पृष्ठ सं. 54
4. सिंह, संतोष कुमार (मार्च 2015) महिला सशक्तीकरण एवं सरकारी प्रयास, कुरूक्षेत्र पत्रिका पृष्ठ सं.30
5. जोशी प्रमोद (अगस्त 2016) सशक्त होती महिलायें, कुरूक्षेत्र पत्रिका पृष्ठ सं. 47
6. जागृति (मार्च 2009) योजनाओं द्वारा महिला सशक्तिकरण, कुरूक्षेत्र पत्रिका पृष्ठ सं. 11

Research Journal of Arts, Management and Social Sciences,
Vol. XVIII, Hindi.-I, Year IX, March, 2018
UGC Sl. No. 2138, Journal No.48774, Impact Factor 2.996

कृषि विकास में विपणन और भाण्डागार

* मंजरी अवस्थी

सारांश– *कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ है। पिछले दो दशकों से अधिक अवधि में औद्योगीकरण के संगठित प्रयास के बाबजूद कृषि का गौरवपूर्ण स्थान बना हुआ है। देश का सबसे बड़ा उद्योग होने के कारण, कृषि देश की 65 प्रतिशत जनता की जीविका का स्त्रोत है। इस जीविका के स्त्रोत को बनाए रखने के लिए यह आवश्यक है कि उचित और मजबूत कृषि विपणन तथा भाण्डागार की व्यवस्था की जाए, जिससे कि कृषि प्रधान देश होने की बात सही साबित हो सके।*

विपणन से आशय उस बाजार से है जहां पर वस्तुओं के उत्पादन से पूर्व से लेकर विक्रय तक की समस्त कार्यविधियों को सम्मिलित किया जाता है। विपणन वह व्यापक शब्द है जिसमें विक्रय और वितरण दोनों सम्मिलित होते हैं अतः कृषि विपणन वह बाजार है, जहां कृषि का आदान-प्रदान किया जाता है।

कृषि भाण्डागार- कृषि भाण्डागार वह स्थान है जहां पर कृषि उत्पाद को संपादित किया जाता है, जिसकी आवश्यकता हमारे देश में बहुत पहले से महसूस की जा रही है। भण्डारगृह जितने अच्छे और अधिक होंगे, उतनी ही अच्छी तरह से कृषि का विपणन किया जा सकेगा।

भारत में कृषि का महत्व-

* **राष्ट्रीय आय में कृषि का हिस्सा**- देश के घरेलू उत्पाद में खेती का योगदान बहुत महत्वपूर्ण है। आर्थिक विकास में तेजी आने के फलस्वरूप अन्य क्षेत्रों के अनुपात में अपेक्षाकृत अधिक वृद्धि होने से खेती का प्रतिशत योगदान पिछले वर्षों में घट गया है और विकास की गति में तेजी आने से इसका सापेक्ष प्रतिशत भाग और घटेगा। लेकिन मात्रात्मक दृष्टि से इसका योगदान अभी भी बहुत महत्वपूर्ण ठहरती है।
* **रोजगार व जीवन निर्वाह**- कृषि की इतनी अधिक प्रधानता है कि भारतीय कार्यकारी जनसंख्या का बहुत बड़ा भाग रोजगार के लिए इस पर आश्रित है। यही कारण है कि वह जीवन निर्वाह की दृष्टि से अधिक महत्वपूर्ण ठहरता है, क्योंकि अन्य बहुत से लोग कृषि पदार्थों के व्यापार, परिवहन आदि में लगकर अपना आजीविका कमाते है।

पूंजी - देश की अधिकांश पूंजी खेती में लगी हुई है। स्थाई पूंजी की दृष्टि से कृषि जोतों का स्थान संभवतः सबसे ऊंचा है। इसके अतिरिक्त देश की करोड़ों रुपये की पूंजी खेती के औजारों, सिंचाई के साधनों, आदि में लगी हुई है। इस प्रकार निवेशित पूंजी की दृष्टि से भी भारतीय कृषि का स्थान कम महत्वपूर्ण नहीं ठहरती हैं।

* सहायक प्राध्यापक, अर्थशास्त्र, शासकीय कन्या महाविद्यालय, इटारसी

* **औद्योगिक विकास के लिए कृषि का महत्व**– भारत में कृषि के महत्व का कारण यह है कि इससे हमारे प्रमुख उद्योगों को कच्चा माल मिलता है। सूती और पटसन, वस्त्र उद्योग, चीनी, वनस्पति तथा बागान उद्योग सब कृषि पर निर्भर हैं और भी ऐसे अनेक उद्योग हैं जो कृषि पर अप्रत्यक्ष रूप में निर्भर हैं।
* **अनाज व चाय**– देश की विशाल जनसंख्या के लिए अन्न जुटाने का काम भी यहां खेत के द्वारा सम्पन्न होता है। भारत में मवेशियों की संख्या भी बहुत अधिक है। इनके लिए चारा भी मुख्य रूप से देश की खेती है।
* **विदेशी व्यापार में कृषि का महत्व**– विदेशी व्यापार की दृष्टि से भी हमारी खेती का स्थान बहुत महत्वपूर्ण है। हमें खेती से निर्यात व्यापार की मुख्य-मुख्य वस्तुएं प्राप्त होती हैं जो विदेशी मुद्रा के अर्जन में विशेष हाथ बंटाती हैं। स्थूल रूप में कुल निर्यात में कृषि वस्तुओं को अनुपात लगभग 50 प्रतिशत है और कृषि से बनी वस्तुओं का अनुपात लगभग 20 प्रतिशत है। इस प्रकार भारत के निर्यात में कृषि और उससे संबंधित वस्तुओं का कुल भाग लगभग 70 प्रतिशत है।
* **आर्थिक नियोजन में कृषि क्षेत्र का कार्यभाग**– राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में कृषि के महत्व के और भी अनेक कारण हैं। कृषि भारत की परिवहन-व्यवस्था का मुख्य अवलंब है, क्योंकि रेलवे और सड़क मार्ग का अधिकांश व्यापार कृषि वस्तुओं को लाना-ले जाना है। सरकार के बजट अथवा सरकारी आय और व्यय पर भी कृषि का विशेष प्रभाव दिखाई पड़ता है।
* **भारत में कृषि विपणन एवं भाण्डागार**– भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि को महत्व स्पष्ट परिलक्षित होता है। भूमि सुधार की भांति बाजार और बिक्री की सुविधाएं भी किसानों को कृषि विकास के लिए अभिप्रेरित करने की दृष्टि से विशेष महत्व रखती है। यदि बाजार में माल की बिक्री से प्राप्त होने वाली रकम के संबंध में किसान निश्चित नहीं हैं तो खेती में अतिरिक्त निवेश के लिए किसानों में तत्परता कम होगी, फसल की बिक्री से किसानों को कितनी प्राप्ति हो सकेगी, यह बहुत कुछ बाजार और विपणन की सुविधाओं पर निर्भर करता है। भारत जैसे देश में कृषि विपणन और भाण्डागार के लिए सरकार द्वारा अनेक कदम उठाए गए हैं, फिर भी कृषि उपज की बिक्री-व्यवस्था में आज भी अनेक गंभीर दोष दिखाई देते हैं।

कृषि विपणन एवं भाण्डागार के दोष–

* **वित–सुविधाओं का अभाव**– बुआई से लेकर बिक्री तक की किसानों की विभिन्न आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए पर्याप्त मात्रा में वित्त की सुविधाएं देश में उपलब्ध नहीं हैं। इस कारण फसल काटने के तुरंत बाद ही वे कृषि उत्पाद बेचने के लिए बाध्य हो जाते हैं, जिससे उनको उचित कीमत नहीं मिल पाती।
* **दोषपूर्ण संग्रहण व्यवस्था**– देश में फसल को संग्रह करने की सुविधाएं बहुत थोड़ी हैं ओर जो हैं भी वे बहुत अवैज्ञानिक ओर दूषित है। गांवों में कृषि उपज खतियों, मिट्टी के बर्तनों तथा कच्चे कोठों में जमा की जाती हैं, जहां उसकी सुरक्षा का कोई प्रबंध नहीं होता। फलस्वरूप उपज का काफी बड़ा भाग सीलन, चूहे, दीमक व अन्य कीड़े-मकोड़े आदि के कारण नष्ट हो जाता है।
* **श्रेणी विभाजन के अभाव एवं दड़ा प्रणाली**– भारत में कृषि उपज की

श्रेणी अनेक कारणों से नीची रही है। इसके अतिरिक्त किसान अज्ञानता ओर उपज थोड़ी होने के कारण श्रेणी विभाजन की ओर ध्यान नहीं देते। अक्सर समस्त उपज एक ही ढेरो के रूप में, जिसे दड़ा प्रणाली कहते हैं, बेच दी जाती थी। इस प्रकार किसान की उतम श्रेणी की उपज के लिए भी कम मूल्य मिलता था।

* **अल्प विकसित परिवहन व्यवस्था**– देश में परिवहन संबंधी स्थिति भी बहुत असंतोषजनक है। देश के कई भागों में न तो रेल जाती है और न वहां पक्की सड़कें हैं। कुछ स्थानों पर तो कच्ची सड़कें भी नहीं हैं। इस कारण खेत से घर तक और गांव से मंडियों तक उपज को ले जाने में बड़ी कठिनाई जाती है।

* **मध्यस्थों की बड़ी संख्या**– भारत में कृषि उपज की विपणन व्यवस्था में मध्यस्थों की संख्या इतनी अधिक रही है कि कई बार किसान को उपभोक्ताओं द्वारा दिए जाने वाले मूल्य का लगभग 50 प्रतिशत भाग ही मिल पाता था।

* **दोषयुक्त तौल बांट**– सरकारी कानून के बावजूद जिनके अंतर्गत एक जैसे मानक तौल व वाटो का प्रयोग अनिवार्य बना दिया गया है, देश के विभिन्न भागों में तोल व वाटों में बहुत अंतर पाया जाता है। कुछ छोटी-छोटी मंडियों में पत्थर के वाटों पाए जाते हैं, जिनकी तौल प्रायः कम होती है। कहीं-कहीं तो दो प्रकार के बार प्रयोग में लाए जाते हैं- एक माल खरीदने के लिए जो वजन में भारी होते हैं और दूसरे माल बेचने के लिए जो वजन में हल्के होते है।

* **अनियमित मंडियों में कपटपूर्ण रीतियां**– देश में अब भी अनियंत्रित मंडियों की संख्या बहुत अधिक है। इन मंडियों में आढ़तिए और दलाल किसान की अज्ञानता का लाभ उठाकर उसके साथ विविध प्रकार से कपट करते हैं। तराजू और वाटों की गड़बड़ी, उपज का एक अंश नमूने के रूप में लेकर वापस न करना, कपड़े के नीचे हाथ के इशारों से मूल्य निर्धारित करना, रामलीला, पाठशाला, गौशाला, प्याऊ, तुलाई, आढ़त, बोराबंदी, आदि के लिए अनुचित कटौती करना, मंडियों की कुल प्रचलित कपटपूर्ण रीतियां हैं।

* **मूल्य संबंधी सूचना का अभाव**– स्वतंत्रता के बाद भी कई वर्षो तक बहुत से किसानों को विभिन्न मंडियों में प्रचलित कीमतों की सही सूचना नहीं मिल पाती थी। कृषि विपणन में सुधार के लिए उठाए गए कदम निम्नवत हैं।

* **सहकारी बिक्री**– भारत जैसे देश में, जहां अधिकांश किसान बहुत गरीब हैं और खेती बहुत छोटे पैमाने पर करते हैं, कृषि उपज की बिक्री का सहकारी समितियों द्वारा प्रबंध विपणन-क्षेत्र में सुधार लाने का सर्वोत्तम उपाय है।

* **विनियमित बाजार**– दूसरी बड़ी आवश्यकता सरकारी कानूनों के अंतर्गत देश में नियंत्रित अथवा विनियमित मंडियों की स्थापना की है। ऐसी मंडी का प्रबंध बाजार समिति के हाथ में होता हैं, जिसे एक विशेष समय के लिए सरकार द्वारा नियुक्त किया जाता है। इसमें राज्य सरकार, स्थानीय संस्थाओं, व्यापारियों, दलालों या कमीशन एजेंटों और किसानों आदि के प्रतिनिधि होते हैं। ये समितियां विपणन व्यवस्था सुधारने की दृष्टि से श्रेणी विभाजन को प्रोत्साहन देती हैं, खुली नीलामी पद्धति को लागू करती हैं, कपड़े के नीचे गुप्त भाव निर्धारण पर रोक लगाती हैं, प्रामाणिक बाटों के प्रयोग को अनिवार्य करती हैं। किसानों और व्यापारियों के बीच मतभेदों को दूर करने के लिए मध्यस्थता

करती हैं।

* **गोदाम निर्धारण व उपज-संग्रह की व्यवस्था**- कृषि पदार्थों को गांवों से बाहर ले जाने एवं मंडियों में बिक्री से पूर्व उनके लिए पर्याप्त मात्रा में संग्रह सुविधाओं व गोदामों की व्यवस्था बहुत आवश्यक है। उतम बिक्री के लिए ठीक ढंग के गोदामों की समुचित व्यवस्था की उपादेयता निर्विवाद है। गोदामों में रखे माल के आधार पर किसान सहकारी ऋण समितियां या बैंकों से आसानी से उधार ले सकते हैं। गोदामों में ठीक से संग्रह किए गए पदार्थ काफी समय तक सुरक्षित रखे जा सकते हैं।
* **श्रेणी विभाजन एवं मानवीकरण**- कृषि विपणन व्यवस्था में सुधार की दृष्टि से श्रेणी विभाजन तथा मानवीकरण का विशेष महत्व है। श्रेणी विभाजन के महत्व को स्वीकार करते हुए सरकार ने 1937 में कृषि उत्पादन (श्रेणी विभाजन एवं अंकन) कानून पास किया, जिसके द्वारा विपणन तथा निरीक्षण निदेशालय को अधिकार दिया गया कि वह स्वीकृत मानकों के अनुसार श्रेणी विभाजन तथा अंकन करने की अनुमति किसी भी संस्था को दे सकता है।
* **मानक वाट और नाप तौल की अनिवार्यता**- केन्द्रीय सरकार ने 1939 में मानक वाट अधिनियम पास किया, जिसके अंतर्गत राज्य सरकारों ने मानक वाटों को बढ़ावा देने के लिए कोशिश की, लेकिन स्थिति में कोई सुधार नहीं आया। आगे चलकर देशभर में नाप-तौल में एकरूपता लाने के उद्देश्य से 1956 में मानक माप-तौल अधिनियम पास किया गया और एक निश्चित कार्यक्रम के अनुसार मीट्रिक माप-तौल तथा दशमलव प्रणाली को विभिन्न उद्योगों तथा प्रदेशों में लागू करना निश्चित किया गया। वर्ष 1962 से सारे देश में मीट्रिक वाटों का प्रयोग अनिवार्य कर दिया गया।
* **बाजार संबंधी सूचनाओं की समुचित व्यवस्था**- किसान तथा मंडी में काम करने वाले आदि सभी को बाजार संबंधी परिस्थितियों, कीमतों, देश-विदेश की मांग, आदि के विषय में ठीक और नवीनतम सूचनाओं की शीघ्र एवं नियमित रूप से उपलब्ध कराने के लिए समुचित व्यवस्था का होना भी बहुत आवश्यक है। किसानों को ठीक कीमत दिलाने तथा मंडी में दोषयुक्त व्यवहारों व सौदों को खत्म करने के लिए यह बड़ा महत्वपूर्ण कदम है।
* **सरकारी खरीद तथा समर्थन कीमतों का निर्धारण**- वह सुनिश्चित करने के लिए कि किसानों को अपने उत्पाद की सही कीमत मिले, सरकार समय-समय पर विभिन्न कृषि वस्तुओं के लिए न्यूनतम समर्थन कीमतों और वसूली कीमतों की घोषणा करती रहती है। इन कीमतों का निर्धारण कृषि लागत और कीमत कमीशन की सिफारिशों के आधार पर किया जाता है।
* **फल और सब्जी विपणन**- भारत में कृषि विपणन सुधारों के अंतर्गत ज्यादातर खाद्यान्नों पर ध्यान दिया गया है तथा फलों एवं सब्जियों के विपणन की अनदेखी की गई है। इसके परिणामस्वरूप फलों एवं सब्जियों के बाजारों में बहुत से मध्यस्थ काम कर रहे हैं, जिसके कारण उपभोक्ता द्वारा दी गई कीमत और उत्पादक को मिलने वाली कीमत में भारी अंतर है। इससे स्पष्ट है कि कृषि विपणन में फल और सब्जी विपणन क्षेत्र एक ऐसा क्षेत्र है जिस पर सरकार को अधिक ध्यान देने की जरूरत है।

भारत में भाण्डागार की स्थिति-

भारत में भाण्डागार सुविधाओं को विकसित करने महत्व को बहुत समय पहले अनुभव कर लिया गया था। भाण्डागार सुविधाओं द्वारा एक ओर तो दोषपूर्ण संग्रहण से होने वाली हानि को कम किया जा सकता है ओर दूसरी ओर यह किसानों को उधार प्राप्त कराने के लिए एक सुविधाजनक उपकरण भी है। अखिल भारत ग्राम उद्धार सर्वेक्षण समिति की सिफारिशों को भारत सरकार ने स्वीकारते हुए 1956 में राष्ट्रीय सहकारी विकास एवं भाण्डागार बोर्ड और 1957 में केंद्रीय भाण्डागार निगम की स्थापना की। इसके पश्चात सभी राज्यों में राष्ट्रीय भाण्डागार निगम स्थापित किए गए।

वर्ष 1960-61 में भारत में केवल 40 सामान्य भाण्डागार थे, जिनकी क्षमता 1 लाख टन थी। वर्ष 1993-94 तक सार्वजनिक क्षेत्र की तीनों इकाइयों द्वारा 322 लाख टन की भाण्डागार क्षमता कायम की गई थी जो कि सन् 2000 के अंत तक 702 लाख टन हो गई। वर्ष 2003-04 तक ग्रामीण क्षेत्रों में बैंकों द्वारा 4, 850 भाण्डागार प्रोजेक्टों के लिए स्वीकृति दी गई, जिन पर 1300 करोड़ रूपये का निवेश होगा। योजना की अवधि बढ़ाकर दसवीं योजना के अंत तक अर्थात् वर्ष 2006-07 तक कर दी गई है। इस योजना से किसानों को यह लाभ हुआ है कि वे अपने खेत के पास ही वस्तुओं को स्टोर कर लें ओर इनके रेहन के विरूद्ध बैंकों से ऋण प्राप्त कर लें तो इस प्रकार मजबूरी में कटाई के फौरन बाद फसल नहीं बेचनी पड़ेगी।

भाण्डागारों के अतिरिक्त शीत गोदाम भी हैं, जिनके द्वारा नाशवान वस्तुओं, जैसे - प्याज, आलू, फल, सब्जियां, मछली, गोश्त, दुग्ध पदार्थ आदि का आपद विक्रय न करना पड़े। इस समय देश में कुल 2,970 शीत भाण्डागार हैं, जिनकी क्षमता लगभग 78 लाख टन हैं। इनमें से सहकारी शीत भाण्डागारों की संख्या 243 हैं और इनकी क्षमता 7 लाख टन हैं।

निष्कर्ष–

उपरोक्त समस्त विश्लेषण इस बात की ओर इशारा कर रहा है कि भारतीय कृषि-क्षेत्र की एक अन्य बड़ी समस्या कृषि-उपज के विपणन या बिक्री तथा उचित भाण्डागार की है। कृषि उत्पादन एवं किसानों की आय में वृद्धि लाने में इस प्रकार देश के आर्थिक विकास को बढ़ावा देने के लिए कृषि विपणन की समस्या का विश्लेषण और समाधान बहुत आवश्यक है। कृषि विपणन एवं भाण्डागार व्यवस्था में सुधार के लिए उठाए गए कदम कृषि विपणन के सुधार और विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं और यह कहा जा सकता है कि देश के अंदर इसके लिए प्रयास किए जा रहे हैं। आवश्यकता इस बात की है कि इस कार्य को संगठित करके और आगे बढ़ाया जाए, विशेष रूप से वर्तमान समय में जबकि विश्व अर्थव्यवस्था के साथ भारतीय अर्थव्यवस्था बढ़ गई है। विश्व बाजार से भरपूर लाभ उठाने के लिए विपणन के क्षेत्र में सुधार लाना और भी जरूरी बन गया है, क्योंकि भारत कृषि प्रधान देश है, जहां की जनसंख्या किसी न किसी प्रकार से कृषि से जुड़ी होने के कारण कृषि विपणन में सुधार से केवल किसानों को ही नहीं, बल्कि सारे समाज को लाभ प्राप्त होगा।

**

Research Journal of Arts, Management and Social Sciences,
Vol. XVIII, Hindi.-I, Year IX, March, 2018
UGC Sl. No. 2138, Journal No.48774, Impact Factor 2.996

ग्रामीण क्षेत्र में रोजगार की संभावना : परम्परागत उद्योगों के माध्यम से

* विभा निगम

===

सारांश– ***हम जब भी भारत की बात करते हैं तो यह स्पष्ट होता है कि यह देश दो भागों से मिलकर बना है, पहला शहरी क्षेत्र और दूसरा ग्रामीण क्षेत्र। इसकी पहचान ग्रामीण क्षेत्र से ही है। इसका मूल कारण 69 प्रतिशत लोगों का कृषि पर निर्भरता है। साथ ही विनिर्माणी उद्योगों के लिए कच्चे माल की उपलब्धता इन्हीं क्षेत्रों से होती है। जनसंख्या का एक बड़ा समूह यहीं निवास करता है। इन सबके बाद भी बेरोजगारी का स्तर भी लगातार बढ़ रहा है। इसके कारण का जब अध्ययन किया गया तो यह महसूस हुआ कि अदृश्य बेरोजगारी, मौसमी बेरोजगारी तो है बल्कि पैतृक उद्योगों का पतन या आकर्षण कम होना है। अतः पैतृक उद्योगों के प्रोत्साहन के लिए समाज एवं सरकार को कोशिश करना चाहिए, जिससे रोजगार तथा स्वरोजगार में वृद्धि हो सके।***

===

भारतीय अर्थव्यवस्था एक विकासशील देश है जिसका आशय है कि हमारा आर्थिक विकास, सकल उत्पादन एवं औद्योगिक उत्पादन अपने लक्ष्य की ओर है। अपने लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए भारत रोजगार के साथ ग्रामीण एवं शहरी अर्थव्यवस्था पर आश्रित है। भारत में 69 प्रतिशत लोग कृषि पर निर्भर करते हैं तथा 68.84 प्रतिशत लोग गांव में बसते हैं। गांव के विकास पर ही राष्ट्र का विकास निर्भर करता है। देश में बढ़ती हुई जनसंख्या के कारण जनसंख्या दबाव बढ़ रहा है जिसके कारण चलित मजदूरी की दर पर काम करने वालों की संख्या में वृद्धि हो रही है जिससे शिक्षित एवं अशिक्षित सभी बेरोजगारों को रोजगार व स्वरोजगार नहीं मिलता है। ग्रामीण क्षेत्र में रोजगार की संभावना वैसे भी कम है। ग्रामीण क्षेत्र में रोजगार एवं स्वरोजगार को बढ़ाने के लिए शासन द्वारा समय-समय पर निम्नलिखित योजनाएँ चलाई गई हैं- 1. मनरेगा, 2. ग्रामीण व्यापार केन्द्र, 3. राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन, 4. राष्ट्रीय ग्रामीण जीविकोपार्जन मिशन, 5. आधारभूत संरचना निर्माण में रोजगार, 6. ग्रामीण पर्यटन एवं सेवाओं में रोजगार, 7. स्वरोजगार, 8. कॉल सेंटर, 9. औद्योगिक प्रशिक्षण, 10. कृषि एवं सहायक उद्योग का विकास, 11. राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम, 12. ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारंटी कार्यक्रम, 13. जवाहर रोजगार योजना, 14. रोजगार आश्वासन योजना, 15. जवाहर ग्राम समृद्धि योजना, 16. सम्पूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना, 17. स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना, 18. महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना, 19. प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना, 20. पर्यटन में रोजगार, 21. खादी ग्रामोद्योग को प्रोत्साहन, 22. ग्रामीण ग्रामोद्योग की

========================

* शासकीय महाकोशल कला एवं वाणिज्य स्वशासी महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

परियोजनाएँ।

उपरोक्त योजनाएँ जिस उद्देश्य से चलायी गई वे उसमें कई स्तर पर सफल हो चुकी हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले सैकड़ों युवा जहाँ प्रत्यक्ष रूप से इन योजनाओं एवं सेवाओं से जुड़े वे सभी इन कारोबार, रोजगार एवं स्वरोजगार से जुड़कर जीविकोपार्जन कर रहे हैं। निश्चित रूप से इन योजनाओं एवं सेवाओं का जितना अधिक विस्तार होगा, ग्रामीण क्षेत्र में रोजगार की संभावनाएं उतनी अधिक बढ़ेंगी।

सरकार को चाहिए इन योजनाओं के साथ-साथ शहरी क्षेत्रों एवं ग्रामीण क्षेत्र में कम खर्च पर निःशुल्क प्रशिक्षण केन्द्र खोलकर शिक्षित एवं अशिक्षित युवकों को प्रशिक्षण दें, जिससे पैतृक रोजगार को सुचारू ढंग से चला सके। वैसे तो ऐसा माना जाता है कि ग्रामीण क्षेत्र का निवासी मुख्यतया कृषि पर निर्भर करता है लेकिन कृषि से लोगों का आकर्षण लगातार कम होने से कृषि भूमि या तो बेकार पड़ी रहती है या एक फसली कृषि तक की सीमित रह गई है। आज कृषि बड़े एवं छोटे किसान तक सीमित हो गई। यदि सरकार द्वारा कृषि से संबंधित कोई उपाय नहीं किये गये तो जैसे सिंचाई संबंधी, उन्नत बीज संबंधी, ऊर्वरक संबंधी आदि तो कृषि से पहचान बनाने वाले देश की कृषि की प्रधानता कम हो जाएगी। यदि सिंचाई के साधन उपलब्ध करा दिया जाये तो बहुफसलीय कृषि का विकास हो सकता है। साथ ही फूलों की खेती का चलन तीव्रता से बढ़ रहा है। इन सभी के विकास के बाद भी गांव में रहने वाले लोगों के पास रोजगार का अभाव रहता है जिससे लोगों का गांव से शहर की ओर पलायन हो रहा है जिससे शहरी क्षेत्रों में लगातार जनसंख्या दबाव बढ़ रहा है। जनसंख्या दबाव को कम करने के लिए परम्परागत उद्योग या व्यवसाय को प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए, जिससे लोग अपनी सुविधानुसार अपने पैतृक या परम्परागत उद्योग को स्थापित कर अपने स्वयं के रोजगार द्वारा आय का अर्जन कर सकें। भारत में निम्नानुसार पैतृक व परम्परागत उद्योग हैं -

अ) **पैतृक एवं परम्परागत उद्योग**- इसमें निम्न उद्योग शामिल किये जाते हैं -

1. खिलौना उद्योग
2. बांस का समान बनाने वाले
3. दोने एवं पत्तल बनाने वाले
4. मिट्टी के बर्तन व खिलौने बनाने वाले
5. दर्जी का कार्य
6. लोहे के समान बनाने वाले
7. मूर्तियाँ बनाना
8. लाण्ड्री कार्य

ब) **कुटीर उद्योग**- इसके अन्तर्गत निम्न उद्योग सम्मिलित किये जाते हैं -

1. चमड़े की वस्तुओं का निर्माण
2. साबुन बनाना
3. तेल उत्पादन
4. अचार, मुरब्बे, सॉस, जेली बनाना
5. पापड़ बनाना
6. पिसाई कार्य
7. गुड़ बनाना
8. कपड़ा बुनना

स) **बागवानी**- इसके अन्तर्गत निम्न कार्य किये जाते हैं -

1. फूलों का खेती
2. सब्जी उत्पादन
3. फलों की खेती
4. जड़ी, बूटी उत्पादन
5. कपास व रेशम उत्पादन

द) **पशुपालन एवं कीट पालन**- इसमें निम्न कार्य किये जाते हैं -

1. मधुमक्खी पालन
2. रेशम, कीट पालन

3. मत्स्य पालन
4. पशुपालन
5. कोसा कीट पालन

इ) **मरम्मत व्यवसाय**– इसके अन्तर्गत निम्न सुधार कार्य सम्मिलित किये जाते हैं -

1. टी.वी., डी.वी.डी., ट्राँजिस्टर सुधार
2. कम्प्यूटर सुधार
3. मोबाइल सुधार
4. फर्नीचर निर्माण एवं सुधार
5. बेल्डिंग कार्य

ड) **स्वरोजगार**– इसके अन्तर्गत व्यक्ति स्वयं के रोजगार स्थापित कर सकता है -

1. पी.सी.ओ में
2. मोबाइल क्रय विक्रय
3. साइबर कैफे
4. फोटो कॉपी
5. ब्यूटी पार्लर
6. फोटो कॉपी एवं वीडियो शूटिंग
7. स्क्रीन प्रिटिंग
8. बिजली फिटिंग
9. पालना घर
10. वायरिंग फिटिंग
11. गृह साजसज्जा की सामग्री निर्माण
12. टाईपिंग

ज) **कृषि एवं सहायक उद्योग**– कृषि एवं उससे संबंधित निम्न उद्योग से रोजगार प्राप्त किया जा सकता है -

1. गोबर गैस प्लांट
2. बायोगैस
3. चारागाह
4. मछली पालन/मुर्गी पालन

फ) **वनोपज आधारित**–

1. औषधि निर्माण
2. दोनों एवं पत्तल
3. बांस की वस्तु बनाना

उपरोक्त परम्परागत उद्योगों को स्थापित करने के लिए यदि समायानुरूप प्रशिक्षण दिया जाता है तो योग्य व प्रशिक्षित व्यक्ति अपनी पूर्ण कुशलता के साथ अपने द्वारा स्थापित उद्योग धंधों को पूर्णतया विकसित कर सकेंगे। इसकी आवश्यकता इसलिए है क्योंकि पैतृक उद्योग ग्रामीण अर्थव्यवस्था रूपी माला में गुथे हुए मणियों की भांति हैं। जिसका मुख्य सतम्भ खेती था। इस परम्परागत धंधों में बिखराव की वजह से यह माला छिन्न हो चुकी है। फलस्वरूप कृषि व्यवस्था के साथ-साथ समस्त ग्रामीण आर्थिक व्यवस्था प्रभावित हुई। जिससे ग्रामीण क्षेत्र में गरीबी और बेरोजगारी बढ़ रही है। पतन हो रहे परम्परागत उद्योग धंधे ग्रामीण क्षेत्र की एक चौथाई जनसंख्या का आधार थे।

इन परम्परागत उद्योगों में लोहारी, कताई, बुनाई, हेयर कटिंग, कुम्हारी रंगााई, रंगरेज, पुताई, छपाई, सिलाई, सुनारी, बागवानी, जूता निर्माण, मूर्तियाँ बनाना आदि हैं। पूर्व में पैतृक धंधे पीढ़ी दर पीढ़ी चलते थे, जिससे परिवार के युवाओं को रोजगार की तलाश में इधर-उधर भटकने की आवश्यकता नहीं थी, लेकिन आज युवा वर्ग इन धंधों को सीखने तथा आगे बढ़ाने में हीनता का अनुभव करते हैं। रोजगार की तलाश में आज का ग्रामीण युवक शहरों की ओर भाग रहा है, इससे न केवल बेरोजगारी फैल रही है बल्कि पैतृक एवं परम्परागत उद्योग धंधों का पतन हो रहा है। जिससे व्यक्ति अपनी पहचान एवं अपनी कला को भी खो रहा है, जबकि इन सबके बदले युवाओं को शहर में पैतृक धंधों के बदले हुए नाम में ही सेवा कार्य करना पड़ रहा है और शहर में आजीविका अर्जित करने के लिए विभिन्न प्रकार की समस्याओं का सामना करना पड़ता है।

सुझाव– वर्तमान औद्योगिक नीति के औद्योगिक सुधार के माध्यम से युवा शक्ति गांव में रहकर इन उद्योग धंधों की बदलती हुई परिस्थितियों तथा आवश्यतानुसार नई तकनीक अपनाकर इन्हें नया स्वरूप दें। इन कार्य में दक्ष होने के लिए प्रशिक्षण की व्यवस्था बहुत जरूरी है, साथ ही ग्रामीण क्षेत्रों के कारीगरों के सानिध्य में प्रशिक्षण लिया जा सकता है। इससे दो फायदे हो सकते हैं-

1. पैतृक उद्योग धंधों को पतन होने से रोका जा सकेगा।
2. कुछ सीमा तक बेरोजगारी की समस्या पर नियंत्रण किया जा सकेगा, जिससे ग्रामीण क्षेत्रों में गरीबी दूर करने व रोजगार बढ़ाने में सहायता मिलेगी।

इस शोध के द्वारा यह सिद्ध होता है कि ग्रामीण क्षेत्रों में आजीविका के काफी स्त्रोत हैं किन्तु प्रत्येक स्तर पर परिश्रम, बौद्धिक, शारीरिक कुशलता और जोखिम उठाने की आवश्यकता है। थोड़ा सा परिश्रम कुछ धैर्य और व्यावसायिक बुद्धि का प्रयोग आजीविका के नित नये आयाम प्रदान कर सकता है। मेहनत की रोटी खाने की भावना रखने वालों के लिए आजीविका के स्त्रोतों का कतई अभाव नहीं है।

===============

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची–

1. डॉ. रूद्रदत्त एवं सुंदरम्, "भारतीय अर्थव्यवस्था"।
2. डॉ. डी. सी. पंत, "भारत में ग्रामीण विकास"।
3. डॉ. एम. अखिलेश, "भारत में ग्रामीण विकास"।
4. "कुरूक्षेत्र", सितम्बर, अक्टूबर व नवम्बर 2017
5. "योजना", जुलाई, अगस्त, सितम्बर, अक्टूबर 2017

Research Journal of Arts, Management and Social Sciences,
Vol. XVIII, Hindi.-I, Year IX, March, 2018
UGC Sl. No. 2138, Journal No.48774, Impact Factor 2.996

जी.एस.टी. : आवश्यकता एवं प्रभाव

* अंजू आर्य

==

सारांश– *भारत में जी0एस0टी0 की वास्तविकता प्रदान करने की यात्रा काफी लंबी रही है और यह कई राजनीतिज्ञों, आर्थिक चिंतकों और केन्द्र एवं राज्य सरकारों के अधिकारियों के अथक प्रयासों का परिणाम है। 15 वर्षो के कई घेर घुमावदार राजनीतिक रास्तों से होकर जी0एस0टी0 को 1 जुलाई 2017 को 101 वें सवैधानिक संशोधन द्वारा लागू किया गया। अन्य देशों में जहाँ जी0एस0टी0 लागू है। वहाँ जी0एस0टी0 की प्रकृति एकात्मक है और इसे उस देश की केन्द्र सरकार या राज्य सरकारों द्वारा वसूल किया जाता है। भारत में इसे लागू करने के लिये संविधान में संशोधन की आवश्यकता थी क्योंकि संशोधन से पहले केन्द्र व राज्य सरकारों के बीच में राजकोषीय शक्तियाँ संघ सूची व राज्य सूची में विभाजित थी। जी0एस0टी0 को अदूरदर्शी दृष्टिकोण से देखने पर केवल अप्रत्यक्ष कर सुधार का पहलु ही दिखाई देगा किंतु यदि इस परिवर्तनकारी सुधार के प्रति हम व्यापक दृष्टिकोण अपनाएं तो इसे सामाजिक पुनरुद्धार, हमारी शिथिल आर्थिक वृद्धि में पुनः तेजी लाने वाली क्रांति, विश्व में होने वाले परिवर्तनों से होने वाले उतार-चढ़ाव से हमारी अर्थव्यवस्था की रक्षा करने के लिए प्रेरक दवा का काम करेगा।*

==

भूमिका– भारत राज्यों का संघ है और 1947 से राजनीतिक रूप से हम एक राष्ट्र है, किंतु क्या हम एक आर्थिक संघ है? क्या तमिलनाडु में बैठकर कोई व्यापारी प्रत्येक राज्य में करों की दर की चिंता किए बिना हिमाचल प्रदेश में वस्तु बेच सकता है? क्या जम्मू और कश्मीर का कोई ट्रक प्रत्येक राज्य की सीमा पर स्थित जांच चौंकियों पर बिना रोके कन्या कुमारी जा सकता है? जी.एस.टी. में इन सब बाधाओं को हटानें और पूरे देश को एक समान आर्थिक राज्यों अथवा एक साझा राष्ट्रीय बाजार बनाने की क्षमता है, जहाँ वास्तव में देश के किसी भी राज्य में डर और पक्षपात के बिना व्यापर किया जा सकता है।

जी.एस.टी. का अर्थ– जी.एस.टी. एक सरलीकृत कर संरचना हैं जो वस्तुओं और सेवाओं, दोनों पर लागू होता है। अब तक केन्द्र सरकार कई अलग-अलग वस्तुओं पर उत्पाद शुल्क, अतिरिक्त उत्पाद शुल्क, अतिरिक्त सीमा शुल्क, विशेष अतिरिक्त शुल्क वगैरह नाम से अलग-अलग कर लगाए जाते थे और सेवाओं के ऊपर सेवा कर लगाया जाता था। राज्य सरकार द्वारा वैट केंद्रीय बिक्री कर, खरीद कर, मनोरंजन कर, लाटरी कर, चुंगी कर, प्रवेश कर वगैरह नाम से अलग-अलग कर लगाए जाते रहे थे। इसके

=========================

* सहायक प्राध्यापक, राजनीति विज्ञान विभाग, श्री रामेश्वर दास अग्रवाल, कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, हाथरस (यू.पी.)

अलावा केन्द्र और राज्य द्वारा अलग-अलग प्रकार के उपकर भी लगाये जाते है। जी.एस. टी. में सब भिन्न-भिन्न कर निकल जाएंगें और सिर्फ एक ही जीएसटी लगेगा जो सभी वस्तुओं एवं सेवा के ऊपर लगेगा। एक वस्तु के ऊपर जो भी जीएसटी की दर होगी व पूरे देश में एक ही रहेगी।

जी.एस.टी. की आवश्यकता क्यों?

जीएसटी वस्तु के उत्पादन से लेकर अंतिम रूप से उपभोक्ता के पास पहुंचने के दौरन सभी चरणों पर लगाया जायेगा यह करों पर कर विसंगति को दूर करेगा। ऐसा माना जाता है कि नई कर व्यवस्था माल पर समग्र कर बोझ को उल्लेखनीय रूप से कम करेगी (जो वर्तमान में 25-30 प्रतिशत के बीच है।) नतीजन उपभोक्ताओं के लिए सामान सस्ता हो जाएगा।

विभिन्न स्तरों पर वस्तुओं और सेवाओं पर करों की वसूली के लिए कानून बनाने हेतु संविधान में केन्द्र और राज्यों को अलग-अलग अधिकार दिए गए हैं, जिससे भारत में करो की बहुलता है। उदाहरण के लिए केन्द्र सरकार को वस्तुओं के निर्माण (मानव उपभोग के लिये शराब, अफीम, नशीले पदार्थो आदि को छोड़कर) पर कानून बनाने के साथ ही नियम बनाने का अधिकार दिया गया है जबकि राज्यों को वस्तु के व्यापार पर कर लगाने का अधिकार दिया गया है। इस मामले में केन्द्र सरकार के पास दो विशिष्ट अधिकार हैं, पहला इसके पास अंतर-राज्जीय बिक्री (हालांकि यह कर राज्यों द्वारा एकत्र किये जाते हैं और उनके पास ही रखे जाते है) है और दूसरा केवल केन्द्र सरकार ही सेवाओं पर कर लगा सकती है जिसे सेवा कर कहते हैं।

इस प्रकार की व्यवस्था में पूरी अप्रत्यक्ष कर प्रणाली जटिल बन जाती है। यही नहीं इसके कई नुकसान भी है अब जीएसटी के रूप में केवल एक ही कर लगेगा जिससे कर अनुपालन आसान और सस्ता हो जाएगा।

जी.एस.टी. परिषद-

101 वें संविधान संशोधन के बाद, पहली बड़ी उपलब्धि जी.एस.टी. की स्थापना है। केन्द्र और राज्यों को मिलाकर बनी यह परिषद जीएसटी के लिये एक शीर्ष निकाय है। इसे न केवल जीएसटी से जुड़े पहलुओं को अंतिम रूप देने के लिये बल्कि विवादों के निपटारें के लिये अधिकृत किया गया है। केन्द्रीय वित्तमंत्री की अध्यक्षता वाली इस महत्वपूर्ण परिषद में केन्द्रीय वित्त मंत्रालय में वित्त एवं राजस्व मामलों के प्रभारी, वित्त राज्यमंत्री तथा राज्यों के कराधान एवं वित्त मामलों के प्रभारी मंत्री अथवा उनके द्वारा नामित कोई अन्य मंत्री सदस्य के रूप में शामिल होंगे प्रभावी रूप से परिषद में केन्द्र सरकार की ओर से अध्यक्ष सहित दो सदस्य, 29 राज्यों और 2 केन्द्र शासित प्रदेशों (विधायिका वाले) से एक सदस्य शामिल होगें। इस प्रकार सदस्यों की कुल संख्या 33 होगी। केन्द्रीय राजस्व सचिव जीएसटी परिषद के पदेन सचिव होंगे जबकि परिषद की समस्त कार्यवाही के लिये केन्द्रीय उत्पाद एवं सीमा शुल्क बोर्ड (सीबीईसी) के अध्यक्ष स्थायी आमंत्रित सदस्य (मताधिकार के बिना) होंगे।

जी.एस.टी. की मुख्य विशेषताएँ-

जी.एस.टी. को समझने के लिये भारत में जी.एस.टी. मॉडल की मुख्य विशेषताएँ को विस्तार से जानना बेहतर होगा जो निम्नलिखित है :-

* जी.एस.टी. का विस्तार जम्मू और कश्मीर राज्यों सहित पूरे देश में है।
* वस्तुओं के विनिर्माण अथवा वस्तुओं की बिक्री अथवा सेवाओं के प्रावधान पर कर की वर्तमान अवधारणा के विपरीत जीएसटी वस्तुओं अथवा सेवाओं की आपूर्त्ति पर लगता है।
* यह स्त्रोत आधारित कराधान के वर्तमान सिद्धान्त के विपरीत उद्देश्य आधारित उपभोग कराधान के सिद्धान्त पर है।
* वस्तुओं का आयात अंतराज्यीय आपूर्ति माना जाता है तथा यह लागू सीमा शुल्क के अलावा आईजीएसटी के अधीन होगा।

जीएसटी की दरें और आधार से अपवर्जन

आईजीएसटी (%)			वस्तुओं की श्रेणियों की सं0	जीएसटी से बाहर प्रमुख वस्तुयें
सीजीएसटी (%)	एसजीएसटी (%)	कुल (%)		
0	0	0	88	• अल्कोहल • पैट्रोलियम व उर्जा • बिजली • भूमि एवं भवन संपदा • शिक्षा • स्वास्थ्य देखभाल
1.5	1.5	3	सोना	
2.5	2.5	5	173	
6	6	12	200	
9	9	18	521	
14	14	28	229	
(आईजीएसटी, सीजीएसटी व एसजीएसटी का जोड़)				

नए शासन के तहत कर संरचना			
लेनदेन	व्याख्या	पुरानी प्रणाली	व्याख्या
राज्य के भीतर बिक्री	सीजीएसटी + एसजीएसटी (C.G.S.T. + S.G.S.T.)	वेट + केन्द्रीय उत्पाद शुल्क/सेवा कर	राजस्व अब केन्द्र और राज्य के बीच साझा किया जायेगा।
दूसरे राज्य को बिक्री	आईजीएसटी I.G.S.T.	केन्द्रीय बिक्री कर + उत्पाद शुल्क/सेवाकर	अंतराज्यीय बिक्री के मामले में अब केवल एक प्रकार का कर (केन्द्रीय) होगा।

* सेवाओं का आयात अंतराज्यीय आपूर्ति माना जाता है तथा यह उत्क्रम (रिवर्स) शुल्क आधार सम्बंधी आईजीएसटी के अधीन होगा।
* जीएसटी परिषद् (जीएसटीसी) के तहत केन्द्र और राज्यों द्वारा आपसी रूप से सहमत दरों पर सीजीएसटी, एसजीएसटी/यूटीजीएसटी और आईजीएसटी की वसूली की जाती है।
* सभी वस्तुओं अथवा सेवाओं के लिये करों के चार स्तर है : 5 , 12, 18 और 28 प्रतिशत (वर्तमान में दरें परिवर्तित हुई है) बहुमूल्य धातुएं 3 प्रतिशत की दर से कर के अधीन होगी। जबकि अपरिष्कृत बहुमूल्य रत्नों पर 0.25 प्रतिशत की दर से कर लगता है। कुछ विशिष्ट वस्तुओं अथवा सेवाओं की छूट दी गयी है।
* मानव उपभोग हेतु अल्कोहल, जो संवैधानिक रूप से जीएसटी से बाहर है, को छोड़कर जीएसटी में सभी प्रकार की वस्तुएं और सेवाएं शामिल है।
* एसईजेड को निर्यात और आपूर्ति शून्य दर पर है।

* विभिन्न वर्गो के व्यक्तियों को अलग-अलग कट ऑफ पर विवरणियाँ इलैक्ट्रानिक रूप से दायर करनी होगी।
* कर दाता अथवा कर का भार वहन करने वाले किसी अन्य व्यक्ति द्वारा संगत तिथि से दो वर्ष के भीतर कर की वापसी (रिफंड) मांगी जायेगी।
* पंजीकृत व्यक्ति द्वारा दिए गए करों के स्व-मूल्यांकन की प्रणाली की व्यवस्था की गयी है।
* अधिनियम के प्रावधानों के अनुपालन की पुष्टि करने के लिए पंजीकृत व्यक्तियों की लेखा परीक्षा की जायेगी।

जी.एस.टी. किस तरह नागरिकों को लाभ और शक्ति प्रदान करेगा?

* सकल कर बोझ में कमी आएगी।
* कोई छिपा हुआ कर नहीं।
* वस्तुओं और सेवाओं के लिए साम्यीकृत राष्ट्रीय बाजार का विकास।
* स्वास्थ्य, शिक्षा और अन्य आवश्यकताओं के लिए हाथ में ज्यादा नकद आय।
* उपभोक्ताओं के लिये व्यापक विकल्प।
* आर्थिक गतिविधियों में तेजी।
* अधिक रोजगार अवसर।

जी.एस.टी. का प्रभाव-

''मुझे यकीन है कि जीएसटी के लागू होने से, संघीय प्रारूप के तहत देश के आर्थिक प्रबंधन में उत्कृष्ट बदलाव आएगा। इससे राज्य सशक्त होगे। इसके माध्यम से राज्य सरकारों के राजस्व में वृद्धि होने के साथ ही केन्द्र सरकार के राजस्व में भी वृद्धि होगी। कर चोरी से लोग परहेज करेंगे और कर चोरी के प्रति हतोत्साहित होंगे, अतः कर चोरी का स्तर बहुत कम हो जाएगा। यह सुनिश्चित करेगा कि कर पर अन्य कोई कर नहीं है। अब माल पर लगने वाले करों की श्रृखंला नहीं होगी, जिससे कुछ उत्पादों की कीमत में भी कमी आएगी। इससे निश्चित रूप से अर्थव्यवस्था को मजबूती मिलेगी, जो इस महत्वपूर्ण चरण में अत्यावश्यक है।''

केन्द्रीय वित्त मंत्री श्री अरूण जेटली द्वारा राज्य सभा में 3 अगस्त 2016 को संविधान संशोधन विधेयक (वस्तु एवं सेवा कर से सम्बन्धित) पेश करते समय दिये गये भाषण के अंश।

कारोबार को सहज बनाने में जीएसटी के सकारात्मक प्रभाव पर कोई संशय नहीं है। व्यापार के प्रत्यक्ष लाभों में अनुपालन लागत को कम करना, कर बोझ का कम होना और राज्यों के बीच वस्तुओं की सहज आवाजाही इत्यादि शामिल हैं। ऐसे व्यापार सुधारों को लागू करने के बाद अब जीएसटी अगले चरण में ले जाने के प्रयास किए जाने चाहिए। जीएसटी के कार्यान्वयन के साथ भारत, जर्मनी, इटली, ब्रिटेन दक्षिण कोरिया, जापान, कनाडा आस्ट्रेलिया, रूस, चीन, सिंगापुर और मलेशिया सहित 160 से अधिक देशों के समूह में शामिल हो गया है जिन्होनें जीएसटी/वैट व्यवस्था को लागू किया है। 1954 में जीएसटी व्यवस्था को लागू करने वाला पहला देश फ्रांस था, जीएसटी वह पहला कदम है जिससे भारत में व्यापार करना आसान होने वाला है। ईज इन डूइंग बिजनेस की रैकिंग में अपनी स्थिति सुधारने की दिशा में यह बड़ा कदम है। वर्तमान में, भारत विश्व बैंक की

व्यवसाय रिपोर्ट 2017 में 190 देशों में 130 वें स्थान पर है।

व्यापार सुगमता पर जीएसटी का प्रभाव–

अप्रत्यक्ष कर के अनुपालन से सम्बन्धित समस्याओं, जो भारत में कारोबार करने को मुश्किल बनाते हैं, को उजागर करते हुए सी.आई.आई.-केपीएमजी (2014) के एक अध्ययन में पाया गया कि कंपनियों को कई तरह की चुनौतियों का सामना करना पड़ता है, जैसे वैट, उत्पाद, शुल्क और सेवाकर, वस्तुओं की आवाजाही से जुड़ी समस्याएँ, कर अधिकारियों से निपटना, समय पर कर रिफंड प्राप्त करना आदि।

जीएसटी के प्रभावी कार्यान्वयन के लिये कर अनुपालन को सरल बनाया गया है। साथ ही वस्तुओं की अंतराज्यीय आवाजाही की दिक्कतो को दूर किया गया है और कर के बोझ को कम किया गया है। जीएसटी कर अधिकारियों को करदाताओं का इंटरफेस और विवादों से निपटने के लिये एक मंच प्रदान करता है।

जीएसटी कारोबार करने को सुविधाजनक बनाने, उत्पादकों और उपभोक्ता पर कर के दबाव को कम करने और सरकार के कर संग्रह को बढ़ाने का वादा करता है। यह सुधार व्यापक रूप से अर्थव्यवस्था के तीन प्रमुख भागीदारों के जीवन को प्रभावित करता है। ये तीन भागीदार है-उपभोक्ता, उत्पादक और सरकार। इसमें सभी राज्य सरकारें और केन्द्र शासित प्रदेश सलंग्न है जो सहयोगपरकम संघवाद का आदर्श नमूना है।

आम नागरिकों पर जी.एस.टी. का प्रभाव–

जैसे ही जीएसटी अपने अंतिम चरणों में पहुंचता है, यह ऐतिहासिक कानून राष्ट्र के लिये कर प्रणाली को एक रूप बनाने तथा जीडीपी को 2 प्रतिशत तक बढ़ा देने का भरोसा दिलाता है। अतः जबकि सेवाएँ महँगी हो सकती है, उपभोक्ताओं, वस्तुओं के लिये यह एक मिला जुला सौदा है।

आज वस्तुओं पर आम तौर से 12.5 प्रतिशत (उत्पाद शुल्क) जमा 5.15 प्रतिशत की दर से कर योग्य है जो निरापवाद रूप से अंतिम उपभोक्ता को चुकाना होता है। यदि जीएसटी की मानक दर रूप से कम हो जाएंगे। ऐसा इसलिये क्योंकि खरीद लागत घटेगी और लाभ का कुछ हिस्सा इस श्रंखला के अंत तक भी पहुंचेगा। इसका स्वाभाविक परिणाम उपभोक्ता मूल्य सूचकांक है, जिससे 55 प्रतिशत वस्तुएं कर से मुक्त हैं, 32 प्रतिशत वस्तुएं काफी कम दर पर और केवल 12 प्रतिशत वस्तुएं मानक दर पर है।

जीएसटी व्यवस्था के अंतर्गत, एक एकल कर होगा। चूंकि सेवा करों की दरों का निर्धारण राज्यों से भी अपेक्षित हैं, फोन के बिल पर कर बढ़ सकते है। परिणामस्वरूप एक आम आदमी द्वारा इस्तेमाल की जाने वाली सेवाएं जैसे दूरसंचार, रेल, परिवहन, बैकिंग, हवाई, यात्रा आदि खर्चीली हो सकती है।

जी.एस.टी. की आलोचना– निश्चित तौर पर जीएसटी का लागू होना भारतीय अर्थव्यवस्था के लिये एक क्रांतिकारी कदम हैं परंतु इस व्यवस्था को लेकर कुछ आशंकाऐ हैं।

- राज्यों की वित्तीय स्थिति सम्बंधी आरबीआई की रिपोर्ट में चेतावनी दी गई है कि ''जीएसटी के कार्यान्वयन से राजस्व अर्जित करने के बारे में राज्यों के राजस्व प्राप्ति के प्रति दृष्टिकोण में अनिश्चिता आ सकती है।
- राज्य और केन्द्र के लिये समस्या यह है कि ऋण लाभ का खतरा तेजी से बढ़ रहा

है। भारत का सार्वजनिक ऋण, जो केन्द्र और राज्य ऋण का कुल योग है, जीडीपी के प्रतिशत के रूप में पहले से ही 67: हो चुका है।

* भारतीय रिजर्व बैंक ने यह सूचित किया है कि लगभग 17 भारतीय राज्यों के ऋण जीडीपी अनुपात में विगत वर्षो में बढ़ोत्तरी हुई है। आरबीआई की रिपोर्ट बताती है कि हाल के वर्षो में समेकित वित्त की स्थिति खराब हुई है।
* कतिपय संविधान विश्लेषकों ने स्वीकार किया है कि जीएसटी के लागू होने के साथ ही यह भेदभाव, केन्द्र के पक्ष में निर्णय करते हुए और अधिक जो जाएगा।
* यदि राज्य कुछ वस्तुओं के संबंध में ही सही, कर बढाने की अपनी स्वतंत्रता का त्याग करते हैं तो उनके सम्बन्धित समस्याओं का समाधान करने के लिये संसाधन जुटाने की उनकी क्षमता प्रभावित होगी।

निष्कर्ष–

जीएसटी की वास्तविक सफलता आम भारतीय उपभोक्ता पर पड़ने वाले प्रभाव पर निर्भर करती है। जीएसटी का सारांश यह है कि सभी वस्तुओं और सेवाओं पर परिष्कृत दर से कर लगेगा। एक राष्ट्र, एक कर सकारात्मक अर्थो में निर्णायक सिद्ध होगा और केवल आदमी के लिये ही नहीं बल्कि पूरे देश के लिए लाभदायक सिद्ध होगा।

जीएसटी को अदूरदर्शी दृष्टिकोण से देखने पर केवल अप्रत्यक्ष कर सुधार का पहलु ही दिखाई देगा। किन्तु यदि इस परिवर्तनकारी सुधार के प्रति हम व्यापक दृष्टिगोण अपनाएँ तो इसे व्यवसायिक परिवर्तन, सामाजिक पुनरूद्वार, हमारी शिथिल आर्थिक वृद्धि में पुनः तेजी लाने वाली क्रांति, विश्व में होने वाले परिवर्तनों से होने वाले उतार-चढ़ावों से हमारी अर्थव्यवस्था की रक्षा करने के लिये प्रेरक दवा का काम करेगा।

===============

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची–

1. क्रॉंनिकल, अक्टूबर 2017, अंक 27
2. योजना, नवम्बर 2016 (मासिक पत्रिका)
3. योजना, अगस्त 2017 (मासिक पत्रिका)
4. कुरूक्षेत्र, नवम्बर 2016 (मासिक पत्रिका)
5. अमर उजाला सम्पादकीय पृष्ठ
6. दैनिक जागरण सम्पादकीय पृष्ठ

Research Journal of Arts, Management and Social Sciences,
Vol. XVIII, Hindi.-I, Year IX, March, 2018
UGC Sl. No. 2138, Journal No.48774, Impact Factor 2.996

चम्बल सिंचित क्षेत्र में भूमिगत जल निकास पद्धति की व्यवस्था का किसानों के आय प्रतिरूप पर प्रभाव

* प्रमिला श्रीवास्तव

सारांश– *स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् जब राष्ट्र एक प्रकार के संक्रमण काल से गुजर रहा था, तब प्रथम पंचवर्षीय योजना में सिचाई संसाधनों के विस्तार का लक्ष्य रखा गया। इसी श्रृंखला में चम्बल सिंचाई परियोजना भी एक कड़ी है। चम्बल सिंचित क्षेत्र में नहरों से सिंचाई का क्रम वर्ष 1960 से जारी है। चम्बल सिंचित क्षेत्र की अधिकांश मिट्टी काली, चिकनी एवं भारी है जिसके नीचे लगभग 1–2 मीटर गहराई पर एक कठोर पर्त पाई जाती है जिसके कारण भूमि जो जल सोखती है, उसी पर्त के ऊपर एकत्रित रहता है। इसके अतिरिक्त अपूर्ण जल निकासी व्यवस्था, अवैज्ञानिक ढंग से जल प्रबंध तथा किसानों द्वारा सिंचाई के लिये अत्यधिक जल के उपयोग ने चम्बल सिंचित क्षेत्र में लवणीयता तथा जलप्लाविता की समस्याओं को उत्पन्न किया। इन समस्याओं के समाधान के लिये "राजाड़" द्वारा चम्बल सिंचित क्षेत्र में "क्षैतिजिय भूमिगत जल निकासी प्रणाली" प्रारम्भ की गई। इससे चम्बल सिंचित क्षेत्र में लवणीयता एवं जलप्लाविता की स्थिति में सुधार से खरीफ के मौसम में 'पड़त' की भूमि में कमी हुई और रबी के मौसम की फसल बुआई में सुधार हुआ। बोये गये क्षेत्र में वृद्धि व उच्च उपज का समन्वित प्रभाव कृषकों की उच्च आय के रूप में प्रदर्शित हुआ। प्रस्तुत शोध पत्र में चम्बल सिंचित क्षेत्र में भूमिगत जल निकास पद्धति की व्यवस्था के कारण अध्ययन क्षेत्र के किसानों की आय में हुये परिवर्तनों का विश्लेषण किया गया है।*

मुख्य शब्द– भूमिगत जल निकास पद्धति, लवणीयता, जलप्लाविता, पड़त, सिंचित क्षेत्र, लागतनिवेश, उत्पादन कीमत, सकल आय

प्रस्तावना– भारत एक कृषि प्रधान देश है। देश की लगभग 60 प्रतिशत जनसंख्या अपने रोजगार एवं आय के लिये कृषि पर निर्भर है। भारतीय कृषकों के आय के वैकल्पिक स्त्रोत नगण्य है। स्वतन्त्रता के पश्चात् भी भारतीय कृषि में आमूलचूल परिवर्तन नहीं हुआ। कृषि का स्तर बहुत निम्न था और खाद्यान्न उत्पादन की वृद्धि दर भी काफी कम थी। अत: भारत में कृषि उत्पादन को बढ़ाकर रोजगार एवं आय में वृद्धि करने के उद्देश्य से कई सिंचाई परियोजनाएँ प्रारम्भ की गई। सिंचाई क्षमता के उपयोग में सुधार और सिंचाई से कृषि उत्पादन व उत्पादकता में अधिकतम वृद्धि के उद्देश्य से वर्ष 1974–75 में "सिंचित क्षेत्र विकास कार्यक्रम" प्रारम्भ किये गये। इसी क्रम में चम्बल सिंचाई परियोजना बहुउद्देश्यी वृहद नदी घाटी परियोजना को प्रथम पंचवर्षीय योजना में प्रारम्भ किया गया।

चम्बल सिंचित क्षेत्र– चम्बल सिंचित क्षेत्र राजस्थान के दक्षिण-पूर्वी भाग में स्थित

* व्याख्याता, अर्थशास्त्र, राजकीय कला महाविद्यालय, कोटा (राजस्थान)

है। चम्बल सिंचित क्षेत्र का कृषिगत दृश्य विधान अधिकांशतः चम्बल नदी की देन है, (श्रृंगी (1995) और चम्बल परियोजना इस नदी पर बनी हुई है। चम्बल सिंचित क्षेत्र के कुल 3,85,000 हैक्टेयर क्षेत्र में से लगभग 2,29,000 हैक्टेयर क्षेत्र सिंचित है। राजाड़ (1995) कोटा जिले में स्थित कोटा बैराज की बायी मुख्य नहर (LMC) से बूंदी जिले (राज) में तथा दायीं मुख्य नहर (RMC) से मध्यप्रदेश में प्रवेश से पूर्व कोटा जिले (राज) में सिंचाई होती है। चम्बल सिंचित क्षेत्र में वर्ष 1960 में सिंचाई के सूत्रपात से उच्च उपज वाले संकर बीजों का प्रयोग किया जाने लगा। बेहतर सिंचाई सुविधा एवं रासायनिक खाद के उपयोग से कृषिगत उत्पादन में वृद्धि हुई। किन्तु भूमि की कम पारगम्यता, अपूर्ण जल निकासी व्यवस्था, अवैज्ञानिक ढंग से जल प्रबन्ध तथा किसानों द्वारा सिंचाई के लिये अत्यधिक जल के उपयोग ने चम्बल सिंचित क्षेत्र में लवणीयता एवं जलप्लाविता की समस्याओं को उत्पन्न किया। इन समस्याओं के समाधान के लिए राजस्थान कृषि जल निकास परियोजना (राजाड़) कनाडा अन्तर्राष्ट्रीय विकास अभिकरण (सीडा), भारत सरकार तथा राजस्थान सरकार के सहयोग द्वारा चम्बल सिंचित क्षेत्र में वर्ष 1992 में "क्षैतिजिय भूमिगत जल निकास प्रणाली" की व्यवस्था की गई। राजाड द्वारा वर्ष 1991 से वर्ष 1999 तक परियोजना के अन्तर्गत चयनित 25,000 हैक्टेयर भूमि में से कुल 14,925 हैक्टेयर भूमि में भूमिगत जल निकास पद्धति की व्यवस्था की गई। इस योजना के अन्तर्गत समस्याग्रस्त क्षेत्र में पी.वी.सी. का छिद्रयुक्त पाईप 1 से 1.5 मीटर की गहराई तक सामान्यतः 35-60 मीटर तक की दूरी पर सुनियोजित ढंग से बिछाया जाता है। इसके द्वारा एकत्रित पानी बड़ी नालियों से ड्रेन व नालों तक ले जाया जाता है। इससे भूमि में उपलब्ध हानिकारक लवण वर्षा एवं सिंचाई के पानी के साथ घुलकर मेन ड्रेन में चले जाते हैं।

वस्तुतः कृषि क्षेत्र से प्राप्त आय सिंचित क्षेत्र में वृद्धि एवं भूमि की उर्वराशक्ति पर निर्भर है और यह तभी सम्भव है, जब भूमि में लवणीयता एवं जलप्लाविता की समस्या न हो। फसल उपज स्तर व लवणीय भूमि में ऋणात्मक सम्बन्ध होता है। (घड़ोलिया (2000) इसलिये भूमिगत जल निकास पद्धति द्वारा लवणीयता के घटने से खेती योग्य क्षेत्र में वृद्धि होगी। जहाँ लवणीयता की समस्या के कारण क्षेत्र में चारा भी नहीं उग पा रहा था, वहाँ लवणीयता की कमी से क्षेत्र में अधिक कीमत प्रदान करने वाली फसलों का उत्पादन किया जा सकेगा। फसल प्रतिरूप परिवर्तन होगा, फसल गहनता बढ़ेगी तथा श्रमिकों के रोजगार में वृद्धि होगी, इससे सोयाबीन, सरसों, गेहूँ आदि फसलों को लिया जाना सम्भव होगा। चूँकि इन फसलों में परम्परागत फसलों की तुलना में अधिक मानव दिवस लगते हैं। फलतः उक्त फसलों की खेती करने से कृषकों को अधिक दिन रोजगार प्राप्त होगा। साथ ही खाद्य फसलों की अपेक्षा खाद्येतर फसलों की बाजार कीमत अधिक होने से कृषकों की आय में भी वृद्धि होगी क्योंकि खाद्येतर फसलें "नगदी फसलें" होती हैं। लवणीयता एवं जलप्लाविता की स्थिति में सुधार से खरीफ के मौसम में 'पड़त' की भूमि में कमी होगी और रबी के मौसम की फसल बुआई में सुधार होगा। बोये गये क्षेत्र में वृद्धि व उच्च उपज का समन्वित प्रभाव कृषकों की उच्च आय के रूप में प्रदर्शित होगा। प्रस्तुत शोध पत्र में चम्बल सिंचित क्षेत्र में भूमिगत जल निकास पद्धति की व्यवस्था के कारण अध्ययन क्षेत्र के किसानों की आय में हुये परिवर्तनों का विश्लेषण किया गया है।

अध्ययन क्षेत्र व सूचकों का चुनाव–

प्रस्तुत शोध पत्र का समग्र "राजाड" द्वारा भूमिगत जल निकास पद्धति स्थापित क्षेत्र है। राजाड द्वारा पहचाने गये गम्भीर लवणीयता तथा जलप्लाविता की समस्या से ग्रस्त ब्लाक्स से दो ब्लाक्स C o E, एक बाई मुख्य नहर (LMC) व एक दाई मुख्य नहर (RMC) का चयन कर प्रत्येक के तीन-तीन गाँव (अरनेठा, चरी-रडी, हरिपुरा व अमरपुरा, खेडली महादीत व पडासल्या) का चयन किया गया है। प्रत्येक गाँव से 30-30 किसानों का "दैव प्रतिचयन" के आधार पर चयन किया गया है। कुल मिलाकर 180 लाभान्वित किसानों से अनुसूची के माध्यम से सूचनाएँ एकत्रित की गई हैं। किसानों को लघु, मध्यम तथा बड़े उनकी कुल कार्यशील जोत के आधार पर वर्गीकृत किया गया है। दो हैक्टेयर से कम जोत वाले किसानों को लघु कृषक, दो हैक्टेयर से चार हैक्टेयर जोत वाले किसानों को मध्यम कृषक व चार हैक्टेयर से अधिक जोत वाले किसानों को बड़े कृषक के रूप में परिभाषित किया गया है। लघु, मध्यम व बड़े किसानों के वर्गीकरण के लिए एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम (आई.आर.डी.पी.) द्वारा प्रस्तुत आधार को अपनाया गया है। सर्वेक्षण में (आनुपातिक भार 50%, 33% व 17%) 90 लघु किसानों, 60 मध्यम किसानों व 30 बड़े किसानों से सूचनाएँ एकत्रित की गई हैं। अध्ययन मुख्य रूप से प्राथमिक संमकों पर आधारित है और यह आधारभूत संमक उत्तरदाताओं से साक्षात्कार अनुसूची भरकर एकत्रित किये गये हैं। इसके अतिरिक्त आवश्यक जानकारी सरकारी रिकार्ड-जमाबंदी, खसरा गिरधावरी, जिंसवार आदि सरकारी राजस्व रिकार्ड से प्राप्त की गई है।

विश्लेषणात्मक स्वरूप–

अध्ययन क्षेत्र में भूमिगत जल निकास पद्धति की स्थापना वर्ष 1996-1999 में हुई थी। अतः वर्ष 1995-96 को "परियोजना पूर्व" वर्ष तथा वर्ष 2011-12 को "परियोजना पश्चात्" वर्ष माना गया है। फसल प्रतिरूप में परिवर्तन की गणना हेतु चुने गये किसानों से परियोजना पूर्व वर्ष के फसलों के प्रतिरूप की जानकारी रेवेन्यू रिकार्ड खसरा गिरधावरी से प्राप्त की गई है तथा वर्तमान में उनके द्वारा बोई गई विभिन्न फसलों के बारे में सर्वेक्षण द्वारा अनुसूचियों के माध्यम से सूचनाएँ एकत्रित की गई हैं। इनकी सत्यता की जाँच खसरा गिरधावरी, जिन्सवार, जमाबन्दी (सरकारी रिकार्ड से) की गई है।

चयनित किसानों के भूमिगत जल निकास पद्धति की स्थापना से रोजगार अवसरों में परिवर्तनों की गणना करने के लिये परियोजना पूर्व वर्ष में किसानों द्वारा उनकी कुल खेतीबारी भूमि में बोयी गई विभिन्न फसलों के क्षेत्र को उस फसल विशेष को बोने में लगे मानव दिवसों से गुणा किया गया है। परियोजना पश्चात् वाले वर्ष में भी रोजगार की गणना उपर्युक्त विधि से की गई है। "परियोजना पूर्व वर्ष" तथा "परियोजना पश्चात् वर्ष" में विभिन्न फसलों में लगे प्रति हैक्टेयर मानव दिवसों की गणना अलग से नहीं करके पूर्व में प्रकाशित शोध (श्रृंगी : 1991) को आधार बनाया गया है। चुने हुये किसानों की आय की गणना करने के लिए उनके द्वारा बोयी गई विभिन्न जिन्सों के उत्पादन की गणना (बोयी गई जिन्स का क्षेत्र व प्रति हैक्टेयर उत्पादन को गुणा करके) की गई है। प्रत्येक जिन्स के उत्पादन को परियोजना पूर्व वर्ष की कृषि उपज मण्डियों में प्रचलित औसत कीमतों से गुणा करके आय की गणना की गई है। परियोजना पश्चात् वर्ष में आय की गणना करने के लिये परियोजना पूर्व वर्ष में विभिन्न जिन्सों की प्रचलित औसत कीमतों को ही आधार

बनाया गया है, ताकि कृषि जिन्सों की कीमतों में वृद्धि के प्रभाव को समाप्त किया जा सके अर्थात् स्थिर कीमतों पर आय में परिवर्तन की गणना की गई है। प्राप्त सूचनाओं व आंकड़ों का अध्ययन व विश्लेषण करने के लिये यथा स्थान आवश्यकतानुसार सांख्यिकीय विधियों का उपयोग किया गया है।

किसानों के आय प्रतिरूप पर प्रभाव–

विश्लेषण एवं निष्कर्ष– भूमिगत जल निकास पद्धति की व्यवस्था का आय पर वास्तविक प्रभाव के माप के लिए यह माना गया हैं, कि सभी लागत निवेश (Input Prices) कीमत और उत्पादन कीमत (Output Prices) पूर्व व पश्चात् वर्ष में स्थिर हैं, इसलिये आय में परिवर्तन केवल फसल प्रतिरूप और उपज स्तर में परिवर्तन को प्रदर्शित करते हैं। शुद्ध आय की नहीं वरन् सकल आय की गणना फसलोनुसार आय में परिवर्तन एवं जोतानुसार आय में परिवर्तन द्वारा की गई हैं। जिसका विवरण इस प्रकार हैं -

फसलोंनुसार सकल आय में परिवर्तन–

चम्बल सिंचित क्षेत्र में भूमिगत जल निकास पद्धति की व्यवस्था के पूर्व वर्ष में चूंकि परम्परागत खाद्य फसलों का क्षेत्र अधिक था, अतः आय प्रतिरूप परम्परागत फसलों जैसे-गेहूं, धान, जौ, चना व गन्ना आदि फसलों से प्राप्त आय पर आधारित था। तालिका-1 स्पष्ट करती हैं, कि 'पूर्व वर्ष' में चम्बल सिंचित क्षेत्र में कृषि जीवन यापन का तरीका थी। गेहूं की फसल से प्राप्त आय सर्वाधिक थी। गेहूं की फसल से किसानों कों 2430966.96 रूपये प्राप्त हुये। आय प्रतिरूप में दूसरा तीसरा व चौथा स्थान क्रमशः सोयाबीन, सरसों व गन्ने की फसल को प्राप्त था। उक्त फसलों से प्राप्त सकल आय का प्रतिशत कुल सकल आय में क्रमशः 23.27, 15.43 व 11.34 प्रतिशत था। रबी की फसलों में गेहूं की फसल से एवं खरीफ की फसलों में सोयाबीन की फसल से अधिक सकल आय प्राप्त हुई। खरीफ की फसलों की तुलना में रबी की फसलें अधिक सकल आय का स्त्रोत रही।

तालिका-1, चम्बल सिंचित क्षेत्र में फसलोनुसार सकल आय में परिवर्तन का विवरण

फसल	भूमिगत जल निकास पद्धति की व्यवस्था के पूर्व वर्ष में		भूमिगत जल निकास पद्धति की व्यवस्था के पश्चात वर्ष में	
	सकल प्राप्तियाँ (रूपये में)	प्रतिशत में	सकल प्राप्तियाँ (रूपये में)	प्रतिशत में
(अ) खरीफ				
मक्का	4319.40	0.05	14959.20	0.11
गन्ना	994183.30	11.34	–	–
सोयाबीन	2039949.08	23.27	7510080.39	55.03
धान	963629.34	10.99	140757.50	1.03
ज्वार	86460.00	0.99	6610.00	0.05
तिल	–	–	11368.00	0.08
अन्य	78998.60	0.90	11272.00	0.08
कुल खरीफ	4167539.72	47.54	7695047.09	56.38

(ब) रबी				
गेहूँ	2430966.96	27.73	4545648.30	33.30
चना	208470.00	2.38	18568.00	0.14
सरसों	1352423.45	15.43	1038485.12	7.61
जौ	101354.16	1.15	—	—
धनियाँ	353573.21	4.03	321954.08	2.36
अन्य	152500.01	1.74	28495.90	0.21
कुल रबी	4599287.79	52.46	5953151.40	43.62
कुल योग अ + ब	8766827.51	100	13648198.49	100

स्रोत : सर्वेक्षण वर्ष 2011—12 से संकलित

भूमिगत जल निकास पद्धति की व्यवस्था से भूमि में जलप्लाविता व लवणीयता की स्थिति में सुधार होने के कारण कुल बोये गये क्षेत्र में वृद्धि हुई। उक्त समस्याओं से ग्रस्त जिन भूमियों पर कृषि नहीं की जाती थी, उन कृषि योग्य भूमियों पर 'पश्चात् वर्ष' में दोहरी फसलें लिया जाना संभव हुआ। फलतः क्षेत्र का आय प्रतिरूप प्रभावित हुआ। खाद्य व खाद्येतर दोनो फसलों से प्राप्त सकल आय में वृद्धि हुई। कृषकों ने 'नगदी व्यापारिक फसलों' को विशेष महत्व दिया। परिणामस्वरूप आय प्रतिरूप में सोयाबीन फसल को विशेष महत्व मिला। "पूर्व वर्ष" में जहां गेहूं की फसल किसानों की आय का प्रमुख स्त्रोत थी। वहां "पश्चात् वर्ष" में सोयाबीन की फसल से किसानों को सर्वाधिक सकल आय की प्राप्ति हुई। "पश्चात् वर्ष" के आय प्रतिरूप में प्रथम व द्वितीय स्थान क्रमशः सोयाबीन व गेहूं की फसल का रहा। सोयाबीन की फसल से प्राप्त सकल आय में 5470131.31 रूपये की व प्रतिशत में 268.15 प्रतिशत की आशातीत वृद्धि अंकित की गई। इसी प्रकार गेहूं की फसल से 2114681.34 रूपये की सकल आय में वृद्धि व प्रतिशत में 86.99 की वृद्धि रिकार्ड की गई। "पश्चात् वर्ष" के आय प्रतिरूप में आधे से ज्यादा हिस्सा सोयाबीन फसल से प्राप्त प्राप्तियों का रहा। गन्ना, धान, जौ, चना, ज्वार, सरसों व धनियें की फसलों से प्राप्त सकल आय के अंश में कमी हुई। उक्त फसलों की सकल आय में हुई कमी को मुख्य रूप से सोयाबीन की फसल से प्राप्त सकल आय में वृद्धि द्वारा प्रतिस्थापित किया गया। चूंकि गन्ना व धान की रोपाई, बुआई, कटाई आदि में अधिक श्रम लगता हैं, यही नहीं धान की फसल के लिये अधिक जल की भी आवश्यकता होती है। जबकि सोयाबीन की फसल के लिये एक या दो बार आवश्यकतानुसार सिंचाई की जाती है। धान का बाजार मूल्य भी सोयाबीन से कम हैं अतः भूमिगत जल निकास पद्धति की व्यवस्था से भूस्तर में सुधार व उचित जलप्रबन्ध के कारण बढ़े हुये कुल बोये गये क्षेत्र का उपयोग किसानों ने धान व गन्ने की फसल के लिये न करके सोयाबीन की फसल के लिये किया, जिससे पश्चात वर्ष में उक्त फसल से प्राप्त सकल आय में वृद्धि हुई। रबी की फसलों की तुलना में खरीफ की फसलों से अधिक सकल आय प्राप्त हुई। रबी व खरीफ की फसलों का प्रतिशत कुल सकल आय में क्रमशः 43.62 व 56.38 प्रतिशत रहा। सकल आय में उक्त वृद्धि लवणीयता व जलप्लाविता की स्थिति में सुधार की क्रिया की प्रतिक्रिया रही।

जोत आकार के अनुसार सकल आय में परिवर्तन–

चम्बल सिंचित क्षेत्र में भूमिगत जल निकास पद्धति की व्यवस्था के पूर्व वर्ष में लघु जोत आकार के कृषकों को कृषि क्षेत्र से प्राप्त होने वाली सकल आय 2029521.38 रूपये थी तथा आय प्रतिरूप में लघु जोत आकार के कृषकों का अंश 23.15 प्रतिशत था। पूर्व वर्ष में लघु कृषकों की स्थिर कीमत (वर्ष 1995-96) पर प्रति हैक्टेयर आय 20460.95 रूपये अंकित की गई। तालिका -2 में चम्बल सिंचित क्षेत्र में जोत आकार के अनुसार सकल आय में परिवर्तन एवं स्थिर कीमत पर प्रति हैक्टेयर सकल आय (रूपये में) परिवर्तन को प्रदर्शित किया गया है।

तालिका -2 प्रदर्शित करती हैं, कि भूमिगत जल निकास पद्धति की व्यवस्था के पश्चात् वर्ष में लघु जोत आकार के कृषकों की सकल आय में 1098638.04 रूपये की वृद्धि हुई। पश्चात् वर्ष के आय प्रतिरूप में लघु जोत आकार के कृषकों का अंश 23.15 प्रतिशत से घटकर 22.92 प्रतिशत रह गया। स्थिर कीमत पर प्रति हैक्टेयर सकल आय में भी महत्वपूर्ण परिवर्तन दृष्टिगोचर हुआ। स्थिर कीमत पर प्रति हैक्टेयर सकल आय में 11076.09 रूपये की वृद्धि हुई। (तालिका -2) स्पष्ट हैं, कि कुल सकल आय में लघु कृषकों के हिस्से में यद्यपि वृद्धि नहीं हुयी, लेकिन लघु जोत आकार के कृषकों की प्रति हैक्टेयर सकल आय में पूर्व वर्ष की तुलना में 54.13 प्रतिशत की वृद्धि हुई।

तालिका-2

चम्बल सिंचित क्षेत्र में जोत आकार के अनुसार सकल आय में परिवर्तन का विवरण

जोत आकार	सकल आय (रूपये में)		प्रतिशत परिवर्तन	स्थिर कीमत पर प्रति हैक्टेयर सकल आय (रूपये में)	
	पूर्व वर्ष में	पश्चात वर्ष में		पूर्व वर्ष में	पश्चात वर्ष में
लघु कृषक	2029521.38 (23.15)	3128159.42 (22.92)	54.13	20460.95	31537.04
मध्यम कृषक	3412826.27 (38.93)	5389076.42 (39.49)	57.91	19998.98	31579.70
बड़े कृषक	3324479.86 (37.92)	5130962.65 (37.59)	54.34	20114.23	31044.06
कुल योग	8766827.51 (100)	13648198.49 100	55.68	20148.07	31366.52

विशेष- कोष्ठ की संख्याएं प्रतिशत को प्रदर्शित करती हैं।

स्रोत- सर्वेक्षण वर्ष 2011-12 से संकलित।

मध्यम जोत आकार के कृषकों की सकल आय पूर्व वर्ष में 3412826.27 रूपयें थी, जो पश्चात् वर्ष में बढ़कर 5389076.42 रूपये हो गई। मध्यम जोत आकार के कृषकों की सकल आय में 1976250.15 रूपये की वृद्धि हुई। यही नहीं मध्यम जोत आकार के कृषकों का कुल सकल आय में प्रतिशत भी 38.93 से बढ़कर 39.49 प्रतिशत हो गया। पश्चात् वर्ष में मध्यम जोत आकार के कृषकों के कुल सकल आय के हिस्से में 0.56 बिन्दुओं की वृद्धि हुई। सकल आय में 57.91 प्रतिशत का महत्वपूर्ण धनात्मक परिवर्तन हुआ। मध्यम जोत आकार के कृषकों की स्थिर कीमत पर प्रति हैक्टेयर सकल

आय में 11580.72 रूपये की वृद्धि अंकित की गई। तालिका -2 दर्शाती हैं, कि चम्बल सिंचित क्षेत्र में भूमिगत जल निकास पद्धति की व्यवस्था के पश्चात् वर्ष के आय प्रतिरूप में सर्वाधिक धनात्मक परिवर्तन मध्यम जोत आकार के कृषकों की प्राप्तियों में हुआ।

बड़े जोत आकार के कृषकों की सकल आय पूर्व वर्ष में 3324479.86 रूपये थी। जो पश्चात् वर्ष में बढ़ कर 5130962.65 रूपये हो गयी। सकल आय में 1806482.79 रूपये की वृद्धि रिकार्ड़ की गई। सकल आय में प्रतिशत परिवर्तन 54.34 प्रतिशत का रहा। बड़े जोत आकार के कृषकों की स्थिर कीमत पर प्रति हैक्टेयर सकल आय में 10929.83 रूपये की वृद्धि हुई। तालिका -2 प्रदर्शित करती हैं, कि बड़े जोत आकार के कृषकों की सकल आय में लघु जोत आकार के कृषकों की तुलना में आंशिक वृद्धि हुयी।

अध्ययन क्षेत्र चम्बल सिंचित क्षेत्र में भूमिगत जल निकास पद्धति की व्यवस्था के पूर्व वर्ष में किसानों की कृषि क्षेत्र से प्राप्त सकल आय 8766827.51 रूपये थी। जो पश्चात् वर्ष में बढ़कर 13648198.49 रूपये हो गई। सकल आय में 4881370.98 रूपयें की आशातीत वृद्धि हुई। सकल आय में प्रतिशत परिवर्तन 55.68 प्रतिशत का हुआ। स्थिर कीमत पर प्रति हैक्टेयर सकल आय 20148.07 से बढ़कर 31366.52 रूपये हो गई। प्रति हैक्टेयर सकल आय में 11218.45 रूपये की महत्वपूर्ण वृद्धि हुई।

चम्बल सिंचित क्षेत्र में भूमिगत जल निकास पद्धति की व्यवस्था के पश्चात् वर्ष में किसानों का रूझान व्यापारिक फसल सोयाबीन की ओर बढ़ा। किसानों द्वारा सोयाबीन फसल का क्षेत्र बढ़ाया गया। सोयाबीन फसल का क्षेत्र बढ़ने से सोयाबीन की उपज बढ़ी, चूंकि सोयाबीन एक नगद फसल है, इसलिये किसानों को अपेक्षाकृत अधिक सकल आय प्राप्त हुई। मृदा स्तर में सुधार व उचित जल प्रबन्ध के कारण सोयाबीन फसल का अधिक उत्पादन सकल आय में वृद्धि का कारण रहा। बढ़ता उच्च सकल आय स्तर भूमिगत जल निकास पद्धति की उपादेयता को स्वयं सिद्ध करता है।

==============

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची-

1. Barla, C.S. (1994) : Report on Economic Impact Analysis (RAJAD), Kota (Raj.)
2. Ghadoliya M.K. (2000) : Yield-salinity relationship, Agrotech publishing Academy, Udaipur.
3. Shringi K.C. (1995) : Labour use in different crops under different soil conditions - A short duration Research study - RAJAD, Kota.
4. Shringi K.C. (1991) : Economic Impact of Market Yards In Rajasthan, Konark Publishers Pvt. Ltd. , Delhi
5. Rajasthan Agriculture Drainage, Research Project Report (1995).
6. Hamalian R.P. et.al. (1993) : Social Baseline Report -RAJAD, Kota

Research Journal of Arts, Management and Social Sciences,
Vol. XVIII, Hindi.-I, Year IX, March, 2018
UGC Sl. No. 2138, Journal No.48774, Impact Factor 2.996

उद्योग जगत के सामाजिक उत्तरदायित्व : प्रावधान एवं योगदान

* आर. सी. सिंह
** पुरूषोत्तम सिंह

==

सारांश– ***एक जिम्मेदार कॉर्पोरेट नागरिक अपने क्षेत्र के समाज व आस-पास के लोगों की समृद्धि के लिए सकारात्मक सहयोग करता है, कंपनी की उन्नति और समृद्धि जनसाधारण की सामाजिक चेतना से जुडी है। जो समाज के सभी वर्गो के लोगो के आर्थिक एंव शैक्षणिक विकास पर निर्भर है। चाहे वह किसी भी धर्म या जाति का हो। सी. एस. आर. नीति का उद्धेश्य सामाजिक चेतना को बढावा देते हुए सामाजिक आर्थिक विकास में योगदान के लिए सकात्मक सहयोग देना है।***

==

मुख्य शब्द– भारत, कॉर्पोरेट सामाजिक उत्तरदायित्व, ग्रामीण विकास,हितधारक, सामाजिक जिम्मेदारी, परोपकार,

कॉर्पोरेट सामाजिक जिम्मेदारी कॉर्पोरेट आत्म नियमन एक व्यापार मॉडल में एकीकृत का एक रूप है। एक स्व नियामक तंत्र हैं जिसके तहत एक व्यापार पर नजर रखता है। और कानून नैतिक मानको और राष्ट्रीय मापदडों की भावना के साथ अपनी सक्रिय अनुपालन सुनिश्चित करता है। सीएसआर उद्देश्य सकारात्मक सार्वजनिक संबध और उच्च नैतिक मानको के माध्यम से लंबी अवधि के लाभ और शेयरधारक विश्वास बढाने के लिए कॉर्पोरेट कार्यो के लिए जिम्मेदारी लेने के द्वारा व्यापार और कानून जोखिम को कम करने के लिए है। सीएसआर रणनीतियों पर्यावरण और उपभोक्ताओं, कर्मचारियो निवेशको समुदायों और अन्य सहित हितधारको पर सकारात्मक प्रभाव बनाने के लिए कंपनी प्रोत्साहित करते है। सीएसआर एक संगठन के मिशन सहायता के रूप में अच्छी तरह से क्या कंपनी अपने उपभोक्ताओं के लिए प्रतिनिधित्व करने के लिए एक गाइड़ के रूप में सेवा करने के लिए शीर्षक है।

आर्थिक विकास शब्द ''निगमित सामाजिक उत्तरदायित्व'' 1960 के दशक में लोकप्रिय हो गया और कई संस्थायों द्वारा अंधाधुंध तरीके से इस्तेमाल किया गया, कानून ने अपनी जिम्मेदारी पर अधिक बल लगाया। व्यापार शब्दकोश के रूप में समुदाय और पर्यावरण में इसे संचालित दोनो पारिस्थितिकी और सामाजिक प्रति जिम्मेदारी की कम्पनी की भावना सीएसआर को परिभाषित करता है। कम्पनी शैक्षिक और सामाजिक योगदान करके उनकी बर्बादी और प्रदूषण में कमी प्रक्रियाओ के माध्यम से इस नागरिकता एक्सप्रेस कार्यरत संसाधनो पर पर्याप्त रिटर्न कमाई से 3 कार्यक्रमो और 1 अप्रैल 2014, के अनुसार हर कंपनी, प्राइवेट लिमिटिड या पब्लिक लिमिटिड जिन्होने 500 करोड़ रुपये का शुद्ध

========================

* प्रोफेसर, डीन, प्रबन्ध संकाय, महात्मा गॉधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय, चित्रकूट सतना (म.प्र.)
** शोध अध्येता, प्रबन्ध संकाय, महात्मा गॉधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय, चित्रकूट सतना (म.प्र.)

मूल्य या 1,000 करोड़ रूपये या 5 करोड़ रूपये का शुद्ध लाभ का कारोबार किया है। उन्हें तीन वित्तीय वर्षो के लिए, तुरंत अपने औसत शुद्ध लाभ का कम से कम 2 प्रतिशत कॉर्पोरेट सामाजिक गतिविधियों पर खर्च करना होगा। 2013 के अधिनियम की अनुसूचित में शामिल व्यापार के सामान्य कारोबार में सीएसआर गतिविधियों को शामिल नही करना चाहिए।

1. सीएसआर का उद्देश्य–

* एचपीसीएल अपने आसपास के स्थानीय समुदायों में अपनी सीएसआर गतिविधियों पर ध्यान देगा। रिफाइनरीज, टर्मिनल, डिपो, एलपीजी प्लांट्स पाइपलाइन्स, विमानन स्टेशनों, ल्युब ब्लैडिंग प्लांट और प्रोजेक्ट का स्थान और अन्य कार्यालय आदि। एचपीसीएल कम से कम इन स्थानीय समुदायों के लिए 60 प्रतिशत सीएसआर बजट आंवटित करने के लिए प्रतिबद्ध है।
* एचपीसीएल समाज के कम विशेषाधिकारी प्राप्त और कमजोर वर्गों के लिए सामाजिक पूजीं बनाने के लिए सीएसआर गतिविधियां लागू करेगा।
* पर्यावरण की समृद्धता हेतु विविधता को संरक्षित व संवर्धित करना।
* वृक्षारोपण करवाना, पुराने कुओं, जलाशयो का जीर्णोद्धार करना।
* सूखी हुई नदियों के जल क्षेत्र को विकसित कर,भूजल स्तर बढाना। ताकि नदियां पुनर्जीवित हो सकें।
* पर्यावरण विषयक जनजागरुकता के कार्यक्रम संचालित करना ताकि सतत् विकास को सफलता पूर्वक प्राप्त किया जा सके।

2. उद्‌भव एवं विकास–

ऐतिहासिक दृष्टि से सीएसआर विकसित देशो की घटना के रूप में देखा गया है। इस तरह के रूप में सीएसआर आचरण पर साहित्य का एक बड़ा शरीर विकसित देशो के संदर्भ में मर्ज किए गए है। हालांकि अल्प सिद्धांत पर साहित्य और विकासशील देशों में सीएसआर पर आचरण रहता है। शायद ही कुछ अध्ययन भारत में सीएसआर अभ्यास देखा है। समय और शास्त्रीय भारतीय साहित्य के विभिन्न बिंदुओ पर विभिन्न शोध भारत में कार्पोरेट संस्थाओं की सीएसआर के अभ्यास पर बल दिया है। व्यापारी जिम्मेदारयों स्थानीय समाज के लिए एक लम्बे समय वापस अपने 'Arthasastra' में कौटिल्य का उल्लेख है। प्राचीन भारत में ऐसी जिम्मेदारियां अनिवार्य नहीं बल्कि ओर स्वैच्छिक थी खान और एटकिंसन (1987) भारत और ब्रिटेन में सामाजिक जिम्मेदारी के लिए प्रबंधकीय दृष्टिकोण पर एक तुलनात्मक अध्ययन का आयोजन किया। अध्ययन से पता चलता है। कि भारतीय अधिकारियो के अधिकांश व्यापार के लिए प्रासंगिक रूप में सीएसआर पर सहमत हुए और महसूस किया है कि व्यावसायिक जिम्मेदारियो न केवल शेयरधारको और कर्मचारियों के लिए बल्कि ग्राहकों आपूर्तिकर्ताओ समाज और राज्य के लिए ओआरजी–मार्ग 2001 भारत में कई शहरो में एक सर्वेक्षण से पता चला है कि लोगो के 60 प्रतिशत से अधिक महसूस किया है कि कंपनियो के अमीर के बीच की खाई नीचे लाने के लिए जिम्मेदार ठहराया जाना चाहिए और गरीब मानवाधिकार हनन को कम करने सामाजिक समस्याओं को सुलझाने और आर्थिक में वृद्धि कुछ सर्वेक्षणो के भारत में सामाजिक विकास में कॉर्पोरेट की भागीदारी की तरह परिवर्तन में भागीदारी द्वारा छवि बदलः 2001

राज्य भारत पोल में कॉर्पोरेट जिम्मेदारी के टाटा ऊर्जा अनुसंधान संस्थान तेरी कॉर्पोरेट सामाजिक जिम्मेदारी धारणा के लिए सामाजिक बाजार (CSM) केंद्र से भारतीय व्यापार' और 'कार्पोरेट सामाजिक जिम्मेदरार सर्वेक्षण 2002 सयुक्त रूप से ब्रिटिश कांउसिल यूएनडीपी भारतीय उद्योग परिसंघ और मूल्य पानी द्वारा प्रस्तुत भारत हाउस कूपर्स उभरते भारतीय सीएसआर की प्रकिया में भी प्रकाश डाला हैं अब भारत में पता चलता है कि परोपकार सीएसआर निर्माण कर्मचारी मनोबल और नैतिकता कमशः छवि द्वारा बाद के सबसे बड़े चालक हैं। भारत में कंपनियो के इन सर्वेक्षण के निष्कर्षो पर बल दिया केंद्र सामाजिक बाजार 2003 के लिए एक अध्ययन में यह पाया गया है। कि सामाजिक जिम्मेदारी एक महत्वपूर्ण व्यापार मुद्दा नमूना कंपनियों, फर्म, आकार, आयु, क्षेत्र, स्थान प्राथमिक उद्देश या कानूनी स्थिति को आयोजित किया है। गोवा में लौह अयस्क खनन उद्योग पर एक अध्ययन से पता चलता है कि कई बड़ी खनन कंपनियो वार्ड पर्यावरण और सामाजिक विकास के लिए अपनी पहल हालांकि एक संरचित सीएसआर नीति ओर योजना छोटे और मध्यम उद्योग में खिलाडियों के बीच विशेष रूप से अनुपलब्ध है। भारत में समकालीन सीएसआर रूझान समापन है कि भारत में कॉर्पोरेट सेक्टर बेहद उदारीकरण और निजीकरण प्रोसेसर से लाभानिवत किया अरोडा और पुराणिक 2004 की समीक्षा की एस, सीएसआर के लिए परोपकारी मानसिकता से इसके संक्रमण के पीछे इसके प्रभावशाली वित्तीय विकास किया गया है। वर्मा और चौहान 2007 में पाया गया कि सड़को में प्रदूषण और बिजली कंपनियो की प्रमुख चिंता का विषय है।

सी0एस0आर0 अधिनियम 2013 का निगमन

कम्पनी अधिनियम 2013 के अनुसार कॉर्पोरेशन ने पिछले तीन वित्तीय वर्षो के दौरान किए गए कंपनी के शुद्ध मुनाफें में से औसत से कम से कम 2 प्रतिशत सीएसआर बजट का उद्देश्य रखा है। कॉर्पोरेट सामाजिक जिम्मेदारी कॉर्पोरेट आत्म नियमन एक व्यापार मॉडल में एकीकृत का एक रूप है। एक स्व नियामक तंत्र हैं जिसके तहत एक व्यापार पर नजर रखता है। सीएसआर का मुख्य ध्यान बाल विकास, शिक्षा कानून, राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति और राष्ट्रीय स्वास्थ्य मिशनों, स्वास्थ्य देखभाल, राष्ट्रीय कौशल विकास मिशन, और समुदायिक विकास पर कार्य करता है। प्रत्येक कम्पनी प्राइवेट लिमिटेड या पब्लिक लिमिटेड, हो उसे अपनी आय का 2% कॉर्पोरेट सामाजिक गतिविधिवों पर खर्च करना व व्यापार के सामान्य कारोबार में सीएसआर गतिविधियों को शामिल नहीं करना चाहिए।

सी0एस0आर0 की संगठनात्मक संरचना

क) **सीएसआर समिति**– कॉर्पोरेशन की बोर्ड स्तर पर उप-समिति होगी जिसे सीएसआर कमेटी का नाम दिया गया है। इसमें तीन या उससे अधिक निर्देशक होगें और इसमें से कम से कम एक स्वंतत्र निदेशक के रूप में कार्य करेंगें । सीएसआर समिति की भूमिका और जिम्मेदारी इस प्रकार है।

1. सामाजिक दायित्व नीति तैयार करना और बोर्ड को उसका सुझाव देना जिसमें कंपनी के अधिनियम 2013 की अनुसूची VII के अनुसार कार्य करने वाली गतिविधियों की सूचना देना ।
2. बजट व्यय की राशि को ऊपरी खंड (1) में निर्दिष्ट गतिविधियों पर खर्च करने का

सुझाव।

3. कंपनी के कार्पोरेट सामाजिक उत्तरदायित्व नीति की समय-समय पर निगरानी करना।
4. सीएसआर परियोजनाओं गतिविधियों को कार्यान्वित करने के लिए एक ,कार्यक्रमों, पारदर्शी निगरानी प्रक्रिया को लागू करना।
5. तिमाही आधार पर सीएसआर गतिविधियों कार्यान्वयन की निगरानी।
6. रूपये 70 लाख और उससे अधिक के मौद्रिक मूल्य के साथ हर एक कार्यक्रमों, परियोजनाओं, गतिविधियों को मंजूरी।
7. एचपीसीएल के क्षेत्र के बाहर के किसी भी प्रोजेक्ट्स, कार्यक्रम और गतिविधियों को स्वीकृति देना।

ख) सीएसआर काउंसिल–

सीएसआर कांउसिल के सदस्यः

अध्यक्ष, निदेशक मानव संसाधन,

सदस्य- कार्यकारी निदेशक-मानव संसाधन, कार्यकारी निदेशक-रिटेल कार्यकारी निदेशक-एलपीजी, कार्यकारी निदेशक-ओ.डी.,कार्यकारी निदेशक -पी.पी. कार्यकारी निदेशक-एचएसई, कार्यकारी निदेशक-एम आर और सीएसआर प्रमुख

सीएसआर काउंसिल की जिम्मेदारी और भूमिका में शामिल हैः

* कॉर्पोरेशन के विजन के साथ सी एस आर गतिविधियों की सीएसआर विभाग को जानकारी देना।
* हर तीन महिनों बाद सी एस आर गतिविधियों और बजट के खर्च की सीक्षा करना।

ग) सीएसआर प्रबंधन समिति–

सीएसआर प्रबंधन समिति के सदस्य

अध्यक्षः निर्देशक मानव संसाधन

सदस्य- कार्यकारी निर्देशक-मानव संसाधन विकास, कार्यात्मक, एसबीयू प्रमुख, कार्यकारी निर्देशक आरसिड़ी विपणन प्रमुख-सीएसआर, महाप्रबंधक-कॉर्पोरेट वित्त, मुख्य प्रबंधक-सीएसआर सचिव सीएसआर प्रबंधन समिति की जिम्मेदारी और भूमिकाओं में शामिल है।

* विभिन्न सस्थानो से प्राप्त सीएसआर परियोजना गतिविधियो के कार्यक्रम प्रस्तावों की समीक्षा ।
* 40 लाख रूपये और 70 लाख रूपये मूल्य के अनुमोदित आंवटित वजट के प्रस्तावो को मंजूरी ।

घ) सीएसआर कार्य समिति–

सीएसआर कार्य समिति के सदस्य

अध्यक्ष प्रमुख सीएसआर-

सदस्य प्रमुख- मानव संसाधन, विपणन, डीजीएम, मुख्य वरिष्ठ प्रबंधक वित्त, मुख्य प्रबंधक, सीएसआर सचिव

सीएसआर कार्य समिति की जिम्मेदारी और भूमिकाओं में शामिल है।

* विभिन्न स्थानो से प्राप्त सीएसआर परियोजना गतिविधियों के, कार्यक्रम, प्रस्तावों

की समीक्षा

* 40 लाख रूपये से कम मूल्य के अनुमोदित आवंटित बजट के प्रस्तावों को मंजूरी

परियोजना–

कॉर्पोरेशन सीएसआर का ध्यान जिन क्षेत्रो की तरफ है वह राष्ट्रीय विकास संबधी नीतियां, और बच्चो, महिलाओं और कमजोर वर्गो के विकास के लिए राष्ट्र की अंतराष्ट्रीय प्रतिबद्धताओं से प्रेरित है। एचपीसीएल के सीएसआर क्षेत्रों का मुख्य ध्यान बाल अधिकार, बाल विकास ओर शिक्षा कानून, राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति और राष्ट्रीय स्वास्थ्य मिशनो, स्वास्थ्य देखभाल भारत विजन 2020 राष्ट्रीय कौशल विकास मिशन, और सामुदायिक ग्रामीण विकास पर नीतियों से प्रेरित है।

सभी परियोजनाएं:गतिविधियां एवं कार्यक्रम–

* बच्चे की देखभाल
* शिक्षा
* स्वास्थ्य सेवा
* कौशल विकास
* खेल एवं शरीरिक विकास
* पर्यावरण एंव सामुदायिक विकास

अ) प्राधिकरण मैनुअल की सीमा के तहत स्वीकृत इनमें से प्रत्येक परियोजनाओ, कार्यक्रमों की गतिविधियों का विस्तृत विवरण।

ब) उपर दिये गए किसी भी क्षेत्रों के अलावा परियोजना कार्यक्रमों की, गतिविधियों के लिए सीएसआर कमिटी की मान्यता लेनी होगी।

स) सभी परियोजनाएं कार्यक्रम गतिविधियों का कार्य इन क्षेत्रों में शुरू किया जाएगा।

* एचपीसीएल आपरेशन क्षेत्रों स्थानो के निकट एचपीसीएल स्थानीय विकास योजना।
* बीआरजीएफ में जिलों की पहचान योजना आयोग पिछडे क्षेत्र के लिए अनुदान निधि द्वारा की जाती है।

3. जहां पर एचपीसीएल के महत्वपूर्ण स्थान–

बजट का कम से कम 60 प्रतिशत एचपीसीएल स्थानों के आसपास के समुदायों के लिए खर्च किया जाता है।

क. सीएसआर परियोजना विशिष्ट कार्यान्वयन/गतिविधियो का भागीदार/ कार्यक्रम/एजेंसियो के माध्यम से लागू किया जाएगा। इस प्रकार एक भागीदार को लागू करने की न्यूनतम पात्रता इस प्रकार है।

* यह पंजीकृत सोसाइटी ट्रस्ट कंपनी अथवा विशेष एजेंसी होनी चाहिए और पंजीकरण के बाद इस प्रकार की गतिविधियों को संभालने का कम से कम तीन साल का अनुभव होना चाहिए।
* किसी भी सरकारी या सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रम के साथ काम करने के अनुभव को प्राथमिकता दी जायेगी।

हांलाकि भागीदारों का चयन करते समय प्राधिकारी आवेदको से एक अनिवार्य पर किसी भी अन्य योग्यता के लिए अनुरोध कर सकते है।

वित्तीय संसाधन–

वार्षिक सीएसआर बजट– कंपनी अधिनियम 2013 के अनुसार कॉर्पोरेशन ने पिछले तीन वित्तीय वर्षो के दौरान किए गए कंपनी के शुद्ध मुनाफें में से औसत से कम से कम 2 प्रतिशत सीएसआर बजट का उद्देश्य रखा है। भारत में प्रत्येक रजिस्टर्ड कम्पनी को कम्पनी नियम में उल्लेखित नियमानुसार अपनें लाभ का 2% सामाजिक निगमित दायित्व में आवश्यक रूप से खर्च करना पड़ता है अतः प्रत्येक कम्पनी फर्म आदि को सीएसआर में आवश्यक अपनें लाभ का एक हिस्सा खर्च करना पड़ता है।

बजट का आवंटन–

बजट एक निश्चित वर्ष के लिए सरकार की अनुमति आय व्यय का विवरण है, बजट एक निश्चित वर्ष के लिए आवंटित करने की भी प्रक्रिया है, तथा पूर्व निर्धारित प्राथमिकताओ के आधार पर संगठन के विभिन्न गतिविधियों के लिए आवटित करने की प्रक्रिया भी है, यह सर्वजनिक जरूरतों तथा दुर्लभ संसाधनो को संतुलित करने का प्रयास भी है, परतु बजट केवल आर्थिक गतिविधियां नही है, यह धन से इतर है, बजट दर्शन, नीति तथा चयन का प्रतिनिधित्व करता है, यह संसाधनों के आवटन में प्रतिस्पर्धा की प्राथमिकताओं, निष्पक्षता तथा समाजिक न्याय के मुद्दों पर भी ध्यान केंद्रित करता है, यह उस दिशा का भी सकेंत कारता है तथा उस मार्ग को भी बताता है जिससे उद्वेश्यों की प्राप्ति की जाती है, अपनी वित्तीय भूमिकाओं को छोड़कर बजट द्वारा निम्नलिखित कार्य किये जाते हैं।

* बजट का कम से कम 60 प्रतिशत से एक परियोजना मोड में गतिविधियों के लिए आंवटित किया जायगा।

* बजट का 5 प्रतिशत से अधिक निर्माण क्षमता और संचार के लिए आंवटित किया नही जाएगा।

* दूसरे सामाजिक गतिविधियों के लिए सिर्फ एक बार संतुलित बजट दिया जाएगा। एक समय आधार पर बजट का कम से कम 25 प्रतिशत कमजोर वर्ग के अनुसूचित जाति अनुसूचित जनजाति के कल्याण योजना को देना चाहिए।

सीएसआर परियोजनाओं कार्यक्रमों गतिविधियों से प्राप्त कोई भी बचत कंपनी के कारोबार लाभ का हिस्सा नही होगा।

Gearing up for responsible growth: India's top companies for Sustainability and CSR 2016

Rank (2015)	Company	Rank (2014)	Company
1	Tata Steel Ltd.	1	Mahindra & Mahindra Ltd.
2	Tata Power Company Ltd.	2	Tata Power Company Ltd.
3	UltraTech Cement Ltd.	3	Tata Steel Ltd.
4	Mahindra & Mahindra Ltd.	4	Larsen & Toubro Ltd.
5	Tata Motors Ltd.	5	Tata Chemicals Ltd.
6	Tata Chemicals Ltd.	6	Tata Motors Ltd.
7	ITC Ltd.	7	GAIL (India) Ltd.
8	Shree Cements Ltd.	8	Bharat Petroleum Corporation Ltd.
9	Bharat Petroleum Corporation Ltd.	9	Infosys Ltd.
10	Larsen & Toubro Ltd.	10	Jubilant Life Sciences Ltd.

शोध प्रविधि–

अध्ययन मुख्य रूप से द्वितीयक डेटा और जानकारी का उपयोग किया गया है। द्वितीयक डेटा वार्षिक रिपोर्ट के मानव संसाधन विकास मंत्रालय के माध्यम से एकत्र किया गया है। शिक्षा मंत्रालय ,आर्थिक सर्वेक्षण लेख और प्रतिष्ठित लेखकों की समीक्षा राष्टीय पत्रिकाओं आदि में प्रकाशित ।

कारपोरेट जगत के विभिन्न योगदान का संक्षिप्त विश्लेषण–

1. आजीविका के क्षेत्र में–

डॉ रेड्डी फांउडेशन ग्रामीण-लैब्स कार्यक्रम में ग्रामीण विभाग के साथ साझेदारी में लागू कर रहा है। भारत सरकार यह 7 पिछडे राज्यों की भारत में 18-25 वर्ष की आयु में ग्रामीण लोगों के किए 35,000 आजीविका उपलब्ध कराने के उद्देश। भारत पेट्रोलियम द्वारा समर्थित आजीविका कार्यक्रम दिखाने कि एसएचजी समूह सदस्यों प्रति माह 2000 रूपये की एक स्थिर आय अर्जित कर रहे है। वर्ष 2013-14 के दौरान सीएसआर निधि के लिए अनुमोदित राष्ट्रीय सस्थान की परियोजनाएं-स्वामी विवेकानंदराष्ट्रीय पुनर्वासप्रशिक्षण और अनुसंधान संस्थान, कटक (एसवीएनआईआरटीएआर) नि:शक्त जन सशक्तीकरण विभाग के प्रशासनिक नियंत्रणाधीन देश के प्रमुख सस्थानों में से एक है (यह पोलियो,मानसिक पक्षाघात, जन्मजात अगं विरूपताओं के कारण होने वाली विकलांगताओं के लिए लोटोमोटर पुनर्वास सेवायें प्रदान करता है और कुष्ठ उपचारित मरीजों आदि को पुनर्रचना शल्य क्रियाये उपलब्ध करवाता है। यह मानव संसाधन विकास, अनुसंधान सहायक यत्रों एव उपकरणो का वितरण, ब्यवसायिक प्रशिक्षण आदि भी करता है यह संस्थान अंतराष्ट्रीय मानको के रूप उन्नयन कर लोकोमोटर पुनर्वास के क्षेत्र में एक उत्कृष्ट केन्द्र के रूप में स्थापित होना चाहता है विद्युत मत्रांलय के प्रसानिक नियंत्रणाधीन एक प्रमुख सार्वजनिक क्षेत्र उपक्रम, ग्रामीण विद्युतीकरण निगम लि. (आरईसीएल) अपनी सी एस आर नीति के अनुसार इस परियोजना को वित्तीय सहायता प्रदान करता है आरईसीएल मॉड्यूलर आपरेशन थियेटर और उन्नत चिकित्सा उपकाण स्थापित करने के लिए 296 करोण रूपये उपल्ब्ध करवाएगा।

2. स्वास्थ्य के क्षेत्र में–

अध्ययन भी पता चलता हैं कि कई कंपनियो का विशेष रूप से स्वास्थ्य के मुद्दे की तरह स्वास्थ्य के प्रति जागरूकता पैदा करने के लिए स्वास्थ्य शिवरो की सख्यां संचालन टीकाकरण, रक्तदान, जल शुद्धीकरण, गोलियॉ आदि काम करने के लिए 2008 पाल 267 स्वास्थ्य आयोजित किया गया है। शिविर जो ग्रामीण क्षेत्र में अधिक 4.5 लाख लोगों को लाभ हुआ हैं नि:शुल्क उपलब्ध कराने के द्वारा वेदांत एल्यूमीनियम लिमिटेड 32,000 ग्रामीणों के साथ 53 गावों को कवर किया दवाओं उपचार सेवाएं आदि इसके मोबाइल स्वास्थ्य में उडीसा के माध्यम से टाटा स्टील परिवार पर फाउंडेशन स्थापित जो उडीसा झारखंड ओर छत्तीसगढ जैसे पिछड़े राज्यों में 50,000 से अधिक रोगियों की मदद की है। आदित्य बिरला समूह 62,00026 औपचारिकता स्कूलो को चला कर पौधो को पास के क्षेत्रो में रहने वाले बच्चो को औपचारिक शिक्षा प्रदान की जाती है। पाल जैसे पीएसयू सहायता सेल के संयत्रो के परिधीय क्षेत्रो में लगभग 138 स्कूलो देश जहॉ से अधिक 80,000 औलाद शिक्षा कुमार 2008 में इकाइयों गैर सरकारी संगठन से

सामाजिक उत्थान हेतु बच्चो के लिए काम करता है इसी तरह विप्रो के अजीज प्रेमजी फाउंडेशन गरीब और जरूरतमंद बच्चों को शिक्षा प्रदान करने में भी शामिल एचसीएल की स्थापना की शिव नाडार फाउंडेशन एक शैक्षिक गरीब छात्र के लिए प्राइमरी के लिए खानपान माध्यमिक और उच्च शिक्षा ग्रामीण बच्चो औपचारिक स्कूली शिक्षा और उच्च शिक्षा के लिए तक पहुँचने में मदद मिली है।

3. पर्यावरण के क्षेत्र में–

सतत विकास पर्यावरण कार्यक्रम एक महत्व पूर्ण व आवश्यक पहल है प्राकृतिक संसाधनो के प्रबंधन के विवेकपूर्ण उपयोग पर बल दिया जाता है न कि उन्हे दोहन पर सतत् विकास में सघन वृक्षारोपण, प्राकृतिक संसाधनो का विवेकपूर्ण उपयोग, वर्षा जल संचयन, जैविक कृषि पशुधन उन्नयन गैर परम्परागत उर्जा उपयोग को बढावा देना इत्यादि प्रभावी कदम सिद्व होगे लिए कुश और प्रभावी कदम से प्राप्त करने की आवश्यकता कई भारतीय कॉर्पोरेट पौधारोपण कचरा प्रबंधन काम कर रहा है। वाटरशेड प्रबंधन पवन फर्म आदि उदाहरण के लिए पाल जैसे पीएसयू में और सेल संयत्रो के आसपास 13.5 लाख पेड लगाए है। अभी तक खान अबुंजा सीमेंट लिमिटेड के जलग्रहण क्षेत्र विकास कार्यक्रम 9,000 पिछले चार वर्षो में कवर किया है। कोकाकोला इंडिया इंक की शीर्ष प्राथमिकता स्थायी जल प्रबंध रहता है।

बुनियादी ढॉचा–

सर्वेक्षण में कंपनियों के बीच केवल कुछ कंपनियो के निर्माण या सड़को बिजली स्कूल के विकास जैसे ढांचागत सुविधाएं प्रदान कर रहे हैं पानी की सुविधा स्वच्छता समुदाय केन्द्र आदि वृक मानव कल्याण ओर अनुसंधान फाउंडेसन की योजना राजस्थान में 38,000 गांवो को कवर किया और लगभग सभी गावों स्कूलो इमारतों तालाबों लिंक सडको पेयजल कम्यूनिटी सेंटरों और बिजली और पक्की सडकों प्रति वर्ष 33 किमी की मरम्मत एवं निर्माण में शामिल किया गया है। जिससे दो लाख लोगों के पास आधुनिक बुनियादी सुविधाओं के लिए 435 गावों तक पहॅुच भर में हर साल उपलब्ध कराने ।

4. आधारभूत संसाधन के क्षेत्र में–

हालाकि कंपनियो ग्रामीण विकास के लिए गंभीर प्रयास कर रहे है। लेकिन कुछ आलोचको अभी भी सीएसआर ओर कंपनियों की पहल के पीछे मकसद की अवधारणा पर सवाल उठा रहें है कि सीएसआर कल्याण के बजाय लाभ बनाने जैसे कुछ गलत उद्देशो जबकि यह अन्यथा दूसरो पर विचार कर रहे है। वास्तविकता यह है कि सीएसआर ब्रांड के निर्माण के लिए एक रणनीति नही है हालाकिं यह सद्गभावना और अपने कर्मचारियो और ग्रामीण उपभेक्ता के बीच ब्रांड बनाता है। गतिविधियॉ यह है कि एक ही रास्ता केवल समाज की सहायता में लिप्त कंपनी को जोड़ता हैं कॉर्पोरेट सामाजिक जिम्मेदारी हर एक का दायित्व हैं यानी व्यापार निगमों सरकारों व्यक्तियों कारणो के कारण समाज से ही पैसा कमाया है। और इसलिए यह वापस दी जानी चाहिए इस प्रकार धन स्वंय और जनता द्वारा उपयोग के लिए होता है। मानव जाति की भूख मिटाने के लिए व्यापार के सभी तरह के मूल मकसद है। सभी व्यापार का उद्देश है और लोगो की मदद के लिए होना चाहिए जो विशेष रूप से ग्रामीण मे रह रहा है। सीएसआर बोझ के रूप में नही लेना चाहिए। हर व्यापार नैतिकता कि ओर होना चाहिए ओर इसके उपचार में कर्मचारी और

ग्राहको के रूप में इस प्रकार सीएसआर नल बाजार और व्यापार नैतिकता के रूप में सीएसआर के इलाज के रूप में ग्रामीण भारत के लिए एक तेजी से विकासशील क्षेत्र तेजी से बनता जा रहा है कॉर्पोरेट जिम्मेदारी का प्रर्दशन के लिए मामले बॉधने वाले जैसे हित धारको के बीच उम्मीदों के रूप में मौजूद हो रही है। ग्राहक और जनता बढ रही है। एक अच्छे निगमित नागरिक होने के नाते व्याावसायिक सफलता के लिए तेजी से महत्वपूर्ण है। और महत्वपूर्ण लोगों की उम्मीदें और प्रथमिकताओं से मेल खाते में निहित है।

शोध पत्र का निष्कर्ष–

उपरोक्त शोध पत्र से यह निष्कर्ष निकलता है कि यदि उद्योग जगत अधिनियम के निर्देशो का पालन करते हुए 2% योगदान सामाजिक उत्तरदायित्व के प्रावधान के तहत योगदान के रुप में ऐसे कार्यो के लिये प्रदान करें और उसकी सहभागी योजना तैयार करें और सहभागी क्रियान्वयन करें तो ग्रामीण भारत का चेहरा आकर्षक बनानें में अत्यंत अनुकूल परिस्थितियां पैदा होगीं और बिना चेहरा बदले भारत की तस्वीर बदलना सम्भव नहीं है, सीएसआर के अधिनियम के तहत वित्तीय योगदान ''खर्च'' के रुप में कर देने मात्र से कोई सार्थक परिणाम नही मिल सकता है।

===============

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची–

1. Carroll, A. B., A (1979) "Three-dimensional conceptual model of corporate performance", Academy of Management Review, Vol. 4 No. 4, pp. 497-505
2. "A renewed EU strategy 2011-14 for Corporate Social Responsibility, "European Commission press release, http://ec.europa. Eu/enterprise/ newsroom/ cf/ _get document.cfm?doc_id=7010, 25 October 2011.
3. http://www.cuts-international.org/pdf/Draft-CSR_ Rules_2013.pdf
4. Ideas & Insights by Eduvisors - CSR in Education and Impact of New Companies Bill, http://eduvisors.com/dwnld_assets/PDF/Ideas_Insights_by_Eduvisors_ CSR_in_Education_and_Im pact_of_New_Companies_Bill2.pdf, Accessed 1,May 2014
5. Arora, B. and Puranik. (2004), "A Review of Corporate Social Responsibility in India", Development, 47 (3), pp.93-100.
6. Belal,A.T. (2001), "A Study of Corporate Social Disclosures in Bangladesh", Management Auditing Journal, 16 (5), pp.274-288.
7. Conway, C.(2003), "Tracking Health and Well being in Goa's Mining Belt", Case Study 5, Ecosystem Approach to Human Health, International
8. Kotler, Philip and Lee, Nancy: Corporate Social Responsibility: Doing the most good for Your Company and your cause, John Wiley and Sons, 2005

Research Journal of Arts, Management and Social Sciences,
Vol. XVIII, Hindi.-I, Year IX, March, 2018
UGC Sl. No. 2138, Journal No.48774, Impact Factor 2.996

कुमाऊँ के गंगावली की नदियाँ : एक ऐतिहासिक एवं भौगोलिक अध्ययन

* नीरज रुवाली
** नरसिंह

सारांश– इस शोध पत्र का मुख्य उद्देश्य मध्य हिमालय क्षेत्र विशेषतः कुमाऊँ के विशिष्ट सांस्कृतिक और भौगोलिक क्षेत्र का ऐतिहासिक तथ्यों के आधार पर विवेचना करना है। कुमाऊँ का 'गंगावली' क्षेत्र भी एक विशिष्ट सांस्कृतिक और भौगोलिक क्षेत्र है। इस विशिष्ट भौगोलिक क्षेत्र को सरयू-पूर्वी रामगंगा का अंतस्थ क्षेत्र भी कह सकते हैं। वर्तमान में गंगावली का मध्य-पूर्व और दक्षिणी क्षेत्र पिथौरागढ़ तथा मध्य-पश्चिमी और उत्तरी क्षेत्र बागेश्वर जनपद में सम्मिलित है। गंगावली क्षेत्र पूर्व, पश्चिम और दक्षिण में दो नदियों सरयू और पूर्वी रामगंगा से घिरा है। उत्तर में हिमालय है, जहां इन दोनों नदियों का उद्गम स्थल सयूरगुल हिमनद है। इन दोनों नदियों के अंतस्थ क्षेत्र में भी नदियों की कतार है। इसलिए इस क्षेत्र को गंगावली कहा गया। गंगावली की इन दोनों सीमावर्ती नदियों का पौराणिक महत्व के साथ-साथ इस क्षेत्र की सांस्कृतिक और आर्थिक उन्नति में महत्वपूर्ण योगदान रहा है। गंगावली की नदी घाटियों में तटवर्ती मैदानों का विकास हुआ। कुमाउनी में नदी तटवर्ती मैदान बगड़ और सिंचित भूमि सेरा कहलाती है।

मुख्य शब्द– गंगावली, पुंगराऊँ, पूंगर, पूर्वी रामगंगा, बगड़, बागेश्वर, रामेश्वर, संगम, सेरा।

कुमाऊँ की दो प्रमुख नदियां सरयू और पूर्वी रामगंगा नदी चंद कालीन परगना गंगोली की सीमा निर्धारित करतीं थीं। सरयू और पूर्वी रामगंगा के उद्गम से संगम तक के अंतस्थ क्षेत्र को 'गंगावली' कहा जाता है। यह विशिष्ट क्षेत्र उत्तराखण्ड (मध्य हिमालय) के दो जनपदों पिथौरागढ़ तथा बागेश्वर के क्रमशः पश्चिम और पूर्व भाग में स्थित है। पिथौरागढ़ जनपद का गंगोलीहाट, गणाई, बेरीनाग और थल तहसील का रामगंगा से पश्चिम का भाग तथा बागेश्वर जनपद का काण्डा, दुग-नाकुरी और कपकोट तहसील का सरयू पूर्व क्षेत्र इस अंतस्थ क्षेत्र में सम्मिलित है। इस विशिष्ट भौगोलिक क्षेत्र के उत्तर में हिमालय, पूर्व में पिथौरागढ़, पश्चिम में बागेश्वर तथा दक्षिण में अल्मोड़ा और चम्पावत जनपद हैं।

* अस्सिटेंट प्रोफेसर, इतिहास विभाग, एम.बी.पी.जी.कॉलेज हल्द्वानी, नैनीताल।
** शोधार्थी, एम.बी.पी.जी.कॉलेज हल्द्वानी, नैनीताल।

इतिहासकार बद्रीदत्त पाण्डे के अनुसार- ''नदियां- सरयू, रामगंगा, नरगूल व पातालगंगा हैं। इसलिए इस परगने का नाम संस्कृत में गंगावली है अर्थात् गंगाओं की भूमि या दो गंगाओं के बीच की भूमि।''[1] सम्भवतः गंगावली से गंगोली शब्द की व्युत्पत्ति हुई। यथा- गंगावली- गंगाउली- गंगौली-गंगोली। इसी प्रकार कुमाउनी में रावत-राउत-रौत की व्युत्पत्ति हुई। गंगावली के सीमांकन में चार भौगोलिक बिंदु, विशिष्ट सांस्कृतिक-धार्मिक प्रतीक के रूप में स्थापित हो चुके हैं। ये चार भौगोलिक बिंदु -उत्तर में सयूरगुल हिमनद, पूर्व में बालीश्वर (थल), दक्षिण में रामेश्वर तथा पश्चिम में बागेश्वर। ये धार्मिक स्थल मध्य हिमालयी संस्कृति के ज्योति स्तम्भ हैं। सयूरगुल, बालीश्वर, रामेश्वर और बागेश्वर एक भौगोलिक चतुर्भुज निर्मित करते हैं, जिसका अंतस्थ भू-भाग 'गंगावली' है। इस भौगोलिक चतुर्भुज का सीमांकन इस प्रकार है-

सारणी-1

क.सं.	भौगोलिक चतुर्भुज के बिंदु	अशांक्ष रेखा	देशांतर रेखा	ऊँचाई (समुद्र सतह से)
1	रामेश्वर, गंगोलीहाट	29^{0} 31′ 28″	80^{0} 06′ 08″	497 मीटर
2	थल,	29^{0} 49′ 27″	80^{0} 08′ 24″	792 मीटर
3	''सयूरगुल हिमनद''[2]	30^{0} 01′ 30″	80^{0} 06′ 50″	–
4	बागेश्वर	29^{0} 50′ 12″	79^{0} 46′ 15″	876 मीटर

विश्लेषण–

1. थल से रामेश्वर की अक्षांशीय दूरी- 0^{0}17′ 59″ या 0.2996^{0} अशांक्ष है। अक्षांश रेखा के आधार पर रामेश्वर से थल की दूरी लगभग 33.25 किलोमीटर है। (''दो अक्षांशों के मध्य 111.3 किलोमीटर की दूरी होती है।''[3])

2. रामेश्वर से थल 0^{0} 02′ 16″ देशांतर पूर्व में स्थित है। अतः देशांतर रेखा के आधार पर थल रामेश्वर से 0.0377^{0} देशांतर या 3.62 किलोमीटर पूर्व में है। (''300 अक्षांश पर दो देशान्तरों के मध्य 96.4 किलोमीटर की दूरी होती है।''4)

3. थल से सयूरगुल हिमनद की अक्षांशीय दूरी- 0^{0} 12′ 03″ या 0.2008^{0} अक्षांश या 22.29 किलोमीटर है। सयूरगुल हिमनद से थल 0^{0} 01′ 34″ या 0.026^{0} देशान्तर या 2.49 किलोमीटर पूर्व में है।

4. सयूरगुल हिमनद से रामेश्वर की अक्षांशीय दूरी 0^0 30' 02' या .5005^0 अक्षांश या 55.56 किलोमीटर है। अतः पूर्वी रामगंगा की अक्षांशीय लम्बाई 55.54 (33.25+22.29) किलोमीटर है।

5. बागेश्वर से रामेश्वर की अक्षांशीय दूरी- 0^0 18' 44'' या .3122^0 अशांक्ष या 34.65 किलोमीटर है। रामेश्वर से बागेश्वर 00 19' 53'' देशांतर 0.3313^0 देशांतर या 31.80 किलोमीटर पश्चिम में है।

6. बागेश्वर से सयूरगुल हिमनद की अक्षांशीय दूरी- 0^0 11' 18'' या 0.1883^0 अक्षांश या 20.90 किलोमीटर है। सयूरगुल हिमनद से बागेश्वर 0^0 20' 35'' या 0.343^0 देशान्तर या 32.92 किलोमीटर पश्चिम में है। सरयू की रामेश्वर तक अक्षांशीय लम्बाई 55.67 किलोमीटर है। जबकि सरयू की सयूरगुल से रामेश्वर तक वास्तविक लम्बाई 115.4 किलोमीटर है।

7. सयूरगुल हिमनद से रामेश्वर की अक्षांशीय दूरी 0^0 30' 02' या 0.5005^0 अक्षांश या 55.56 किलोमीटर है। थल से बागेश्वर 0^0 22' 09'' या 0.3691^0 देशातंर या 35.43 किलोमीटर पश्चिम में है।

चतुर्भुज की माप (किलोमीटर में)-

पैमाना- 5 किलोमीटर = 1 सेंटीमीटर।
थल से रामेश्वर- 33.25 किमी = 6.65 या 6.7 सेमी।
थल से सयूरगूल- 22.29 किमी = 4.45 या 4.5 सेमी।
थल से बागेश्वर- 35.43 किमी = 7.08 या 7.1 सेमी।
रामेश्वर से बागेश्वर- 34.35 किमी = 6.87 या 6.9 सेमी।
बागेश्वर से सयूरगुल- 32.92 किमी = 6.58 या 6.6 सेमी।
सयूरगुल से रामेश्वर- 55.56 किमी = 11.11 या 11.1 सेमी।

ज्यामिति सीमांकन-

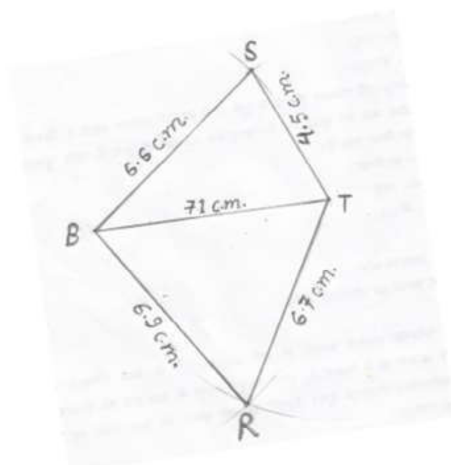

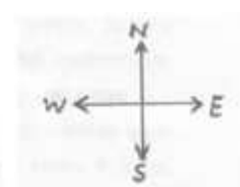

B = बागेश्वर। R = रामेश्वर।
T = थल। S = सयूरगुल हिमनद।

सरयू और पूर्वी रामगंगा : उद्गम और संगम–

सरयू नंदाकोट के दक्षिण तथा पूर्वी रामगंगा दक्षिण-पूर्व की धाराओं से एक नदी स्वरूप धारण करती हुई रामेश्वर में एक हो जाती हैं। ''नंदादेवी व उसके पड़ोसी नंदाकोट के शिखर और उसकी तलहटी से तीन नदियां निकलती हैं जो इस परगने के पूर्वी भाग को तीन अलग-अलग घाटियों में बांट देती हैं। इन नदियों के कारण इस परगने का मिजाज भी अलग तरह का है। ये तीन नदियां हैं- पिंडर, सरयू और पूर्वी रामगंगां।''[5] सरयू और पूर्वी रामगंगा का उद्गम क्षेत्र नंदाकोट की तलहटी पर स्थित सयूरगुल हिमनद है।

सयूरगुल हिमनद पहुँचने हेतु दो मार्ग हैं। एक मार्ग मुनस्यारी से दूसरा भराड़ी होकर जाता है। इस हिमनद की चौड़ाई लगभग 8-10 किलोमीटर हैं समुद्र सतह से इस हिमनद की ऊँचाई अनुमानित 18000 मीटर है। सयूरगुल हिमनद के पूर्वी भाग से रामगंगा नदी तथा पश्चिमी भाग से सरयू नदी निकलती है। सयूरगुल हिमनद को स्थानीय जन 'सहस्रधारा' भी कहते हैं। 'सहस्रधारा' संस्कृत का स्त्रीलिंग शब्द है, जिसका अर्थ- ''देवताओं को स्नान कराने का हजार छिद्रों का एक पात्र।''[6] सहस्रधारा से निकली हजारों लघु धाराओं से सरयू और पूर्वी रामगंगा उद्भव हुआ है। ''स्कन्द मानसखण्ड के अध्याय 74 में उल्लेख मिलता है- वशिष्ठ जी द्वारा भगवान विष्णु की स्तुति कर मानस क्षेत्र से लायी गयी पुण्य नदी सरयू को लोक हित की कामना से वशिष्ठ ऋषि ने प्रवाहित किया।''[7]

वसिष्ठोऽपि महाभागाः प्राप्य तां सरयूं शुभाम्
मानवानां हितार्थाय वाहयामास तां नदीम् । (74/94)

''जिला मुख्यालय से लगभग 55 कि.मी. की दूरी पर कपकोट तहसील का अंतिम गांव झूनी है। इस गांव के सामने की पहाड़ी से सरयू नदी उद्गमित है। सरयू के उद्गम स्थल तक पहुँचने के लिए 40 कि. मी. मुनारगांव तक सड़क मार्ग है। अप्रैल माह के बैशाख पूर्णिमा को सरयू मंदिर में भव्य मेला लगता है।''[8] सयूगुल हिमनद का पश्चिमी भाग सरयू तीर्थ के रूप में विकसित हो चुका है, जहां वैशाख पूर्णिमा के अवसर पर विशेष पूजा की जाती है। बालीश्वर तीर्थ में भी इस विशेष पर्व पर मेले का आयोजन होता है।

सरयू और पूर्वी रामगंगा का संगम रामेश्वर तीर्थ के रूप में प्रसिद्ध है। रामेश्वर तीर्थ स्थल, गंगोलीहाट तहसील के दक्षिण-पूर्व में है। इस स्थान पर उत्तर से बहती हुई वेगवती पूर्वी रामगंगा तथा पश्चिम से मंद गति से बहते हुई सरयू नदी एक दूसरे से न्यूनकोण की स्थिति में अभिन्न होतीं हैं। रामेश्वर की समुद्र तल से ऊँचाई 497 मीटर है और 290 31' 28'' उत्तरी अक्षांश रेखा तथा 800 06' 08'' पूवी देशांतर रेखा पर स्थित है। यह तीर्थ स्थल पिथौरागढ़ से 30 किलोमीटर और गंगोलीहाट बाजार से 25 किलोमीटर दूर है। इस पावन घाट के निकट दक्षिण में बौतड़ी गांव, चम्पावत (सरयू तट) और पूर्व में खूंट गांव, पिथौरागढ़ (रामगंगा तट) है।

नदियां–

सरयू और पूर्वी रामगंगा 'गंगावली' की सीमावर्ती नदियां हैं। इन दो नदियों के अतिरिक्त इस क्षेत्र की प्रमुख नदियां- पूंगर, मरगड़ी, बरड़ और कुलूर हैं। ''पूंगर नदी का उद्गम स्थल सनगाड़ गांव के डोर नामक स्थान पर है।''[9] यह नदी सेराओं का निर्माण करते हुए बालीघाट में सरयू से संगम करती है। मरगड़ी नदी का उद्गम शिखर-भनार पर्वत के पूर्वी ढाल है और पूर्वी रामगंगा से इस नदी का संगम नाचनी के पास चिल्का-भकन नामक

स्थान पर होता है। पुंगराऊँ घाटी में बगड़ नदी चौकोड़ी-कोटमन्या की पहाड़ियों से निकल कर थल में पूर्वी रामगंगा से संगम करती है, जहां पूर्वी रामगंगा के पूर्वी तट पर प्रसिद्ध तीर्थ बालीश्वर है। यह नदी पुंगराऊँ घाटी के बौगाड़ गांव की भूमि को उपजाऊ बनाती है और इसकी सहायक छोटी नदियां जिन्हें स्थानीय भाषा में गाड़ कहा जाता है, बड़ी संख्या में घराटों के लिए प्रसिद्ध हैं। कमस्यार घाटी में कुलूर नदी काण्डा की पहाड़ियों से निकलती है।

सरयू नदी का उद्गम सयूरगुल हिमनद है, जिसे सहस्त्र धारा भी कहा जाता है। एटकिंसन ने इस नदी का विवरण इस प्रकार दिया है-

''इसका स्रोत 80^0 06' 50'' अक्षांश और 30^0 1' 30'' देशांतर पूर्व में एक घाटी में है जिसमें झुंडी गांव बसा है। स्रोत से आठ मील दूर सुपी में इसकी चौड़ाई पंद्रह गज है तथा मई महीने में यहां केवल दो फीट पानी रहता है। सुपी से कुछ मील नीचे नदी का प्रवाह-विस्तार संकरा होकर बारह गज रह जाता है और गहराई चौबीस इंच है तथा कुछ और नीचे या स्रोत से पंद्रह मील दूर यह पैंतालीस गज चौड़ी और सत्ताइस इंच गहरी है। कई छोटी-मोटी सरिताओं को समेटते हुए 290 59' अक्षांश और 770 59' देशांतर पर तल्ला दानपुर पट्टी में प्रवेश करती है। यहां इसके दायें किनारे से कनलगाड़ मिलती है और कुछ दूर नीचे की ओर यानी स्रोत से इकत्तीस मील दूर पुंगरगाड़ इसमें समाहित होती है। करीब एक मील नीचे मल्ला कत्यूर पट्टी से आ रही लहोरगाड़ इसके दायें किनारे से मिलती है। यहां से दक्षिण-पूर्व को मुड़कर चार मील नीचे बागेश्वर पहुँचती है जहां समुद्र सतह से 3,143 फीट की ऊँचाई पर गुमती या गोमती नदी इसके दायें किनारे से मिलती है। सरयू के गोमती के संगम के पैंतीस मील नीचे यह दायें किनारे से पनार नदी को साथ लेती है तथा तीन मील और नीचे रामेश्वर में रामगंगा पूर्वी को अपने बायें किनारे से समेटती है। यह संगम 29^0 31' 25'' अक्षांश और 80^0 09' 40'' देशांतर पर समुद्र-सतह से 1,500 फीट की ऊँचाई पर है।''[10]

पूर्वी रामगंगा नदी सयूरगुल हिमनद के पूर्वी छोर से निकलती है। एटकिंसन ने इस नदी का विवरण इस प्रकार दिया है-

''रामगंगा पूर्वी, एक नदी जिसका स्रोत कुमाऊँ की बिचला दानपुर पट्टी में है। यह नदी घोड़े की नाल सदृश मार्ग से पहाड़ पर उतरती है। दक्षिण में रामगंगा बिचला दानपुर और तल्लादेश के बीच सीमा का काम करती है। आगे दक्षिण में यह गंगोली की पुंगरांव और बड़ाऊँ तथा सीरा की माली पट्टी के बीच सीमा तय करती है। और आगे जाकर यह बायें तट से बारबीसी, सेठी तल्ला, वाल्दिया-मल्ला और रावल तथा दायें तट पर गंगोली के बेल की सीमा निर्धारित करती है। रामगंगा नाम रामेश्वर में सरयू और रामगंगा के संगम के बाद संयुक्त नदी को दिया जाता है और यह नाम पंचेश्वर तक रहता है जहां यह नदी काली नदी से मिलती है।[11]

स्कंद पुराण के ''मानसखण्ड में इस नदी को हिमालय के एक प्रान्त में परशुराम द्वारा प्रवाहित और विशिष्ठ आश्रम के समीप सरयू में संगमित होने वाली नदी कहा गया है।''[12]

सरयू-पूर्वी रामगंगा अंतस्थ क्षेत्र में नदी घाटियों के तटवर्ती उपजाऊ ''जल-सिंचित जमीनों को सेरा कहते हैं।''[13] पर्वतीय क्षेत्रों में सिंचाई सुविधाओं का विकास नदी,

गाड़-गधेरो के जल से हो पाया है। अतः पर्वतीय क्षेत्रों में सिंचित कृषि भूमि का उत्तरोत्तर विकास नदी घाटियों में ही सम्भव हो पाया।

ऐतिहासिक उत्तर कत्यूरी और चंद ताम्रपत्रों में नदी तटवर्ती भूमि के लिए 'बगड़' शब्द प्रयुक्त किया गया है। मझेड़ा चण्डाक ताम्रपत्र शाके 1349 (सन् 1427 ई.) में ''गाड कि बगड़ि''[14] उत्कीर्ण है। 'बगडि' या बगड़ का अर्थ 'तटवर्ती मैदान'15 है। चंद शासक कल्याणचंददेव के ''गौंछ ताम्रपत्र शाके 1478''16 (सन् 1556 ई.) में भी 'बगड़' शब्द प्रयुक्त किया गया। सोर-बम, सीरा-मल्ल और अस्कोट-पाल, गंगोली-रजवार और चंद शासकों ने नदी तटवर्ती समतल भूमि हेतु ताम्रपत्रों में 'बगड़' शब्द प्रयुक्त किया। हिंदी शब्द कोश में नदी तटवर्ती भूति हेतु 'बगड.' के स्थान पर 'बांगर' शब्द का उल्लेख है। बगड़ या बांगर के स्थान पर 'सेरा' शब्द कब से प्रयोग में लाया गया? यह गहन शोध का विषय है।

सरयू नदी बागेश्वर और सेराघाट नामक स्थान पर कम्रशः मण्डलसेरा और 'सेरा' का निर्माण करती है। बागेश्वर और सेराघाट (जनपद पिथौरागढ़) में सरयू नदी, अंग्रेजी का एल आकृति बनाते हुए बायें मुड़ जाती है और नदी के बायें तट पर मण्डलसेरा और सेराघाट का निर्माण होता है। सरयू नदी रामेश्वर में जब पूर्वी रामगंगा से संगम करती है तो दायें मुड़ कर एल आकृति बनाती है। अतः यहां नदी के दायें तट पर उपजाऊ बौतड़ी गांव (जनपद चम्पावत) का निर्माण हुआ। तीनों ही स्थानों पर सरयू नदी उपजाऊ भूमि का निर्माण करती है, जिनमें से दो सेरा (मण्डल सेरा और सेराघाट) सरयू-पूर्वी रामगंगा अंतस्थ क्षेत्र में स्थित हैं।

सरयू के बहाव के विपरीत पूर्वी रामगंगा का बहाव तीव्र है। अतः इस नदी घाटी में विशाल सेराओं का निर्माण नहीं हो पाया। पूर्वी रामगंगा अपने तीव्र बहाव के कारण लघु-निक्षेपों का निर्माण करने में सफल रही है। उदाहरण के लिए पूर्वी रामगंगा के पूर्वी तट पर तेजम, गौचर, थल जैसे समानान्तर लघु समतल भूमि का निर्माण हो पाया।

सरयू और पूर्वी रामगंगा की सहायक नदियां भी सरयू-पूर्वी दोआब क्षेत्र में अनेक सेराओं का निर्माण करतीं हैं। सरयू की सहायक कुलूर नदी- धपोलासेरा, रावतसेरा, कपूरी, खातीगांव तथा बांसपटाण आदि स्थानों में प्रसिद्ध सेराओं का निर्माण करती हुई सेराघाट के निकट सरयू से संगम करती है। सरयू की की एक अन्य सहायक पूंगर नदी जलमाली, भूलीगांव, होराली, बनलेख आदि स्थानों में सेरा का निर्माण कर बालीघाट के पास सरयू में समाहित हो जाती है। पूर्वी रामगंगा की सहायक मरगड़ी नदी माजखेत और चेटाबगड़ में सेरा का निर्माण करती है। पूर्वी रामगंगा की एक अन्य सहायक बरड़ नदी बौंगाड़ में लघु सेरा का निर्माण करती है। सरयू-पूर्वी रामगंगा अंतस्थ क्षेत्र के प्रमुख नदियों और सेराओं का विवरण इस प्रकार है-

सारणी-3

क्र.सं.	नदी का नाम	सेरा का नाम	तहसील, जनपद
1	सरयू	मण्डल सेरा	बगेश्वर, बागेश्वर
2	सरयू	सेराघाट	गणाई, पिथौरागढ़
3	पूंगर	जलमाल,	काण्डा, बागेश्वर
4	पूंगर	भूलिगांव	काण्डा, बागेश्वर

5	पूंगर	बनलेख	दुग—नाकुरी, बागेश्वर
6	पूंगर	होराली	दुग—नाकुरी, बागेश्वर
7	मरगड़ी	माजखेत	कपकोट, बागेश्वर
8	मरगड़ी	चेटाबगड़	कपकोट, बागेश्वर
9	कुलूर	रावतसेरा	काण्डा, बागेश्वर
10	कुलूर	कपूरी	काण्डा, बागेश्वर
11	कुलूर	खाती गांव	काण्डा, बागेश्वर
12	कुलूर—गोदीगाड़	बांस पटान	गंगोलीहाट, पिथौरागढ़

===============

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची–

1. पाण्डे, बद्रीदत्त : कुमाऊँ का इतिहास : अल्मोड़ा बुक डिपो, अल्मोड़ा : 1997 : पृष्ठ-78
2. थपलियाल, प्रकाश : हिमालयन गजेटियर : हिमालय संचेतना संस्थान, आदिबदरी, चमोली : 1998 : पृष्ठ-665
3. कौशल, बीबा सिंह : राष्ट्रीय स्कूल एटलस : इण्डियन बुक डिपो, दिल्ली : पृष्ठ-165
4. वही।
5. थपलियाल, प्रकाश : पूर्वोक्त : पृष्ठ-168
6. अग्रवाल, डॉ. गिरिराजशरण एवं डॉ. बलजीतसिंह : डायमण्ड शब्दकोश : डायमण्ड पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली : 2001 : पृष्ठ-834
7. उनियाल, हेमा : मानसखण्ड : उत्तरा बुक्स, केशवपुरम दिल्ली : 2014 : पृष्ठ-343
8. वही।
9. वही, पृष्ठ-339
10. थपलियाल, प्रकाश : पूर्वोक्त : पृष्ठ-665-66
11. वही, पृष्ठ-651
12. त्रिपाठी, किरन : उत्तराखण्ड का ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक भूगोल : ज्ञानोदय प्रकाशन, नैनीताल : 2006 : पृष्ठ-18
13. पाण्डे, बद्रीदत्त : पूर्वोक्त : पृष्ठ-119
14. सिंह, डॉ.राम : सोर (मध्य हिमालय)का अतीत : मल्लिका बुक्स, बुराड़ी दिल्ली : 2007 : पृष्ठ-365।
15. वही, पृष्ठ-375
16. वही, पृष्ठ-377

Research Journal of Arts, Management and Social Sciences,
Vol. XVIII, Hindi.-I, Year IX, March, 2018
UGC Sl. No. 2138, Journal No.48774, Impact Factor 2.996

विन्ध्य क्षेत्र में सोन घाटी का भौगोलिक ऐतिहासिक स्वरूप का दृश्यावलोकन

* माया देवी

सारांश– *मनुष्य और प्रकृति का अटूट संबंध है। दोनों ने एक दूसरे को प्रभावित किया है। मनुष्य का प्रादुर्भाव धरा पर हुआ, वह उसी की गोद में पलता है। उसके अनुरूप ढलता है और परिस्थितियों के अनुरूप प्रकृति को अपने अनुरूप ढालने का प्रयास भी करता है। उस के जीवन का इतिहास बहुत कुछ प्राकृतिक परिस्थितियों पर निर्भर करता है। भू ऐतिहासिक दृष्टि से देखा जाय तो किसी भी क्षेत्र विशेष के मानवीय क्रिया कलापों की सर्जन में वहाँ की भौगोलिक संरचना ने महत्व पूर्ण भूमिका का निर्वाह किया है। इसमें तनिक भी सन्देह नहीं कि विन्ध्य क्षेत्र के भौगोलिक स्वरूप ने यहाँ के इतिहास, संस्कृति एवं सभ्यता को प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित किया है।*

प्रस्तावना– विन्ध्य क्षेत्र से तात्पर्य यहाँ मध्य-पूर्व विन्ध्य से है। प्राकृतिक दृष्टि से विन्ध्य पर्वत श्रृंखला पूर्व में विहार से पश्चिम में गुजरात तक फैली हुई है। यह पर्वत श्रृंखला उत्तर को दक्षिण से विभक्त करती है। हमारे देश के उत्तरी सीमान्त में हिमालय की पर्वत श्रृंखला पश्चिम से पूर्व तक फैली हुई है। हिमालय और विन्ध्य के मध्य भाग को आर्यावर्त नाम से जाना जाता है। मनु ने आर्यवर्त को मध्य देश कहा है।[1] प्रारंभिक ग्रन्थों में आर्यावर्त को मध्य देश के नाम से उल्लिखित किया गया है। इसकी सीमा उत्तर में हिमालय से लेकर दक्षिण में विन्ध्य पर्वत तक और पश्चिम में विन्ध्य से लेकर पूर्व में प्रयाग तक निर्धारित की गई है, जो ऋग्वैदिक आर्यो के भौगोलिक ज्ञान से सम्बन्धत है।

जात कट्ठ कथा में उल्लेख है कि मध्य देश की पूर्वी दिशा में कजंगल नामक कस्बा है, उसके बाद बड़े शाल वन है और फिर आगे सीमान्त प्रदेश। इसके दक्षिण पूर्व में सल्लवती नामक नदी है, उसके आगे सीमान्त देश दक्षिण दिशा में सेतकणिक नामक कस्बा है, उसके बाद सीमान्त देश। पश्चिम दिशा में थूड़ नामक ब्राह्मण ग्राम है, उसके बाद सीमान्त देश। उत्तर दिशा में उसीरध्वज नामक पर्वत है, उसके बाद सीमान्त देश है।[2]

उपर्युक्त सन्दर्भ से स्पष्ट होता है कि मध्य देश उत्तर में हिमालय से लेकर दक्षिण में विन्ध्यांचल तक फैला था। मध्य देश लम्बाई में तीन सौ योजन, चौड़ाई में ढाई सौ योजन और घेरे में नौ सौ योजन है।[3] इस प्रकार विन्ध्य मध्यदेश का दक्षिणी प्रभाव है।

विन्ध्य में मध्य पूर्व विन्ध्य की अपनी भौगोलिक स्थिति है। इस मध्य पूर्व विन्ध्य के दक्षिण में सोन कछार एवं बघेल खण्ड पठार ने अपना वितान तान रखा है। इस सोन

* चुरहट, जिला-सीधी (म.प्र.)

कछार की ऊबड़-खाबड़ सरंचना एवं उसके जल प्रवाहतंत्र ने शेष पर्वतीय श्रृंखला से उसे अलग कर रखा है। बघेल खण्ड पठार में उच्चावच अधिक है। मध्य पूर्व विन्ध्य को पश्चिम में केन नदी एवं इसकी सहायक पटनी नदी ने अपनी उत्तरी जल यात्रा से इसको अलग कर रखा है। केन नदी उत्तर में अन्ततः यमुना नदी में मिल जाती है इसका दक्षिणी-पश्चिमी भा सोन कछार के जल प्रवाह तंत्र से जुड़ा है। मध्य पूर्व विन्ध्य को कोइल नदी शेष दक्षिण पूर्वी विन्ध्य से अलगकर देती है। कोइल नदी दक्षिण पूर्वी भाग की सीमा ही नहीं बनाती अपितु सोन के पूर्वी कछारी जल को अपने में समेट कर अन्ततः उसे सोन में उडेल देती है। इस मध्य पूर्व विन्ध्य के उत्तर पूर्व में कैमूर श्रृंखला की पहाड़ियाँ फैली है, जो सोन को गंगा से मिलने नहीं देती है। मध्य पूर्व विन्ध्य की भौतिक संरचना ने उसे एस भौगोलिक इकाई के रूप में बांध दिया है। इसकी अपनी भाषायी एकता भी है। इसे वृहत्तार बघेल खण्ड भी कहा जा सकता है।[4]

मध्य पूर्व विन्ध्य के दक्षिण में उभार उमरिया शहडोल, सीधी व सरगुजा का उत्तरी भाग बन जाता है। पूर्व में उत्तर प्रदेश का सोनीाद्र जनपद तथा विहार का शाहाबाद पलामू का क्षेत्र भी लगा हुआ है। मध्य पूर्व विन्ध्य के मध्यवर्ती क्षेत्र में सतना, रीवा व सीधी जिले स्थिति है।[5]

मध्य पूर्व विन्ध्य का उत्तर और दक्षिण का विभाजन कैमोर पर्वत श्रृंखला से हुआ है। जो प्राकृतिक और इतिहास निर्माण में महत्व पूर्ण भूमिका का निर्वाह किया है। कैमोर की स्थिति एक ऊँट के पीठ के समान है जिसने विन्ध्य के इस भूभाग को दो प्रभागों में बॉट दिया है। कैमोर विन्ध्य पर्वत श्रृंखलाओं का पूर्वी भाग है जो कटनी से शुरू होकर पूर्वोत्तार में बिहार के शाहावाद के आगे तक लगभग 500 कि.मी. तक फैला हुआ है। कैमोर का पौराणिक सन्दर्भ जो मिलता है। उसमें झूकेही में कैमोर के इस धरातीय झुकाव के कारण उसे अगस्त्य ऋषि की पौराणिक कथा से जोड़ दिया जाता है। कैमोर के इस धरातीय झुकाव ने दक्षिण जाने का मार्ग प्रास्त कर दिया है। उत्तर पथ इसी मार्ग द्वारा दक्षिण पथ से जुडा था। यह मार्ग विन्ध्य के मालवा पठार से दक्षिण में प्रतिष्ठान को जाता है। यह न केवल उत्तर व दक्षिण का संधि पथ थी, अपितु इस विन्ध्य क्षेत्र का संस्कृति पथ भी था। मध्य पूर्व विन्ध्य के सांस्कृतिक सर्जन में इस महापथ ने महत्व पूर्ण भूमिका निभाई है।

कैमोर पर्वत के दक्षिण की ओर एक निचला प्राकृतिक बितान दूर अति दूर तक दिखाई पड़ता है। इसे डहार भी कहा जाता है। यह सोन बेसिन का कटा-फटा क्षेत्र है। कैमोर पर्वत का उत्तर भाग अपने रेवा व मिर्जापुर के पठारों द्वारा यमुना व गंगा को स्पर्श करता है। पश्चिम में मध्य पूर्व विन्ध्य का क्षेत्र विस्तान केन व उसकी सहायक नदी पटनी तक है और पूर्व में कोइल नदी तक है। जो कैमोर को स्पर्श करती है। कैमोर पर्वत का भौगोलिक विस्तार की विस्तृत है। मध्य पूर्व विन्ध्य का दक्षिणी भू भाग कैमोर के दक्षिण में स्थित है। इस भाग का भौतिक संरचना ने इतिहास को काफी कुछ प्रभावित किया है। दक्षिणी विन्ध्य की भौतिक संरचना ने इतिहास को अपने अनुरूप ढाला है। कैमोर की इसमें अहं भूमिका है। इसी में है बघेल खण्ड का पठार जो सोन और मेंकल की श्रेणियों तथा इसी छत्तीसगढ़ के बीच का कटा-फटा पहाड़ी प्रदेश है।

इसी क्रम में पूर्व की ओर छोटा नागपुर का पठार है जो अपनली भूआकृतिक

संरचना में बघेलखण्ड पठार से भिन्न नहीं है। छोआ नागपुर बघेलखण्ड पठार के समान ही सोन कछार का हिस्सा है। बघेलखण्ड पठार में पर्याप्त उच्चावच है जिसमें स्पष्टतः तीन सतहें हैं-

(1) सरगुजा कछार की सतह जो 550 मीटर है।

(2) सोन हाट पठार की सतह जो 753 मीटर है।

(3) देवगढ़ की पहाड़ियों की सतह जो 1033 मीटर है।

भूगार्भिक संरचना का दृष्टि से इस क्षेत्र में सामान्यतया गोंटवाना सेमरी और कैमोर समूहों के बलुआ पत्थर मिलते हैं, इनकी संरचनाएं भिन्न हैं। बघेलखण्ड पठार की सर्वाधिक ऊँची पहाड़ियॉ देवगढ़ की हैं जिनकी चोटियॉ 1029 से 1033 मीटर तक है। इसके उत्तर तथा दक्षिण से बहने वाली सोन व महानदी की सहायक नदियों ने अपने तीब्र कटाव से कन्दराओं व पहाड़ियों की संरचना कर दी है। क्योंकि इनका बलुआ पत्थर मुलायम है। जो जल अपरदन नहीं सह पाते । यही कारण है कि इस क्षेत्र में अच्छे बलुआ पत्थर न मिलने से कांग्लोमेराइट पत्थरों का इस्तेमाल किया गया है जिस पर शिल्पकारों की कला अच्छे ढंग से नहीं उतर सकी है।

देवगढ़ पहाड़ियों के दक्षिण में सोन हाट तथा कोदिया की पहाड़ियॉ लगती है जो कटाव के कारण एक दूसरे से अलग हो गई है। इन देवगढ़ पहाड़ियों के उत्तर में गोपद नदी व रिहन्द नदी के जल विभाजक पर देवसर का पहाड़ी प्रदेश फैला है। इन पहाड़ियों के दक्षिण तरफ पर्वती ढाल है तथा उत्तर तरफ हल्का ढाल है। यहॉ का सारा प्रदेश असाधारण रूप से कटा-फटा है। ढाल भी अधिक है। फलतः कृषि कार्य में और यहॉ के उच्चावच परिवहन में स्वाभाविक अवरोध उत्पन्न करते हैं। इस अंचल का सारा जल गोपद बनास रिहन्द व कन्हार आदि नदियॉ उत्तर की ओर प्रवाहहित कर सोन में जल डाल देती है। देवगढ़ और मेकल के मध्य सोहागपुर वेसिन है जो उत्तर पश्चिम में मुड़वारा बेसिन से दक्षिण में छत्तीसगढ़ को जोड़ता है। यह सोन की ऊपरी घाटी है जहां सोन छिछली बहती है। सोहागपुर बेसिन के बीच-बीच में छोटी-छोटी पहाड़ियॉ भी मिलती है।

सरगुजा वेसिन देवगढ़ तथा मैनापाट-छुरी पहाडियों से धिरा हुआ है। इसकी ऊँचाई 450 से 600 मी0 तक है। इस वेसिन का जल रिहन्द और उसकी सहायक नदियाँ ले जाती है। रिहन्द नदी दक्षिण स्थित छुरी की पहाड़ियों से निकलती है। इसके पश्चिम में हसदो के नीची धाटी है।

बधेल खण्ड पठार का अपवाह तंत्र पुर्वोत्तर मुखी है। सोन व उसकी सहायक नदियाँ बनास, गोपद, रिहन्द व कनहार उत्तर की ओर बहती है। इसके दक्षिण में हसदो नदी के अलावा महानदी की कोई दूसरी बडी़ सहायक नदी नहीं है। बघेल खण्ड पठार का दक्षिणी किनारा जल विभाजक है। इसकी ग्रेनाइट चट्टाने गोंडवाना वेसिन की उत्तरी व दक्षिणी सीमा बनाती है। ये ही चट्टानें जल विभाजक भी बनाती है।

गोंडवाना चट्टाने अपेक्षतया मुलायम हैद्व जो बराबर घुलती जा रही है। इस दक्षिणी विन्ध्य का विस्तार 23^{0} 40'-35' उत्तर तथा 80^{0} 5'- 82^{0} 35' पूर्व के मध्य है। इसके उत्तर में कैमोर का कगार दक्षिण में मितरीगढ तथा मैकल की पहाड़ियाँ इसके प्राकृतिक सीमा की संरचना करती है। इस भाग की संरचना प्राचीनतम चट्टानों से हुई है। दक्षिणी विन्ध्य क्षेत्र की सोन प्रमुख नदी है जिसकी उत्तरी सीमा पर कैमोर दीवार की तरह खडा़ है। कैमोर

की औसत ऊँचाई 610 मीटर है। सोन घाटी की सतही ऊँचाई सीधी नगर में लगभग 305 से चुरहट में 380 मी0 के मध्य मिलती है। दक्षिणी अल्पांश में भितरीगढ़ पहाड़ियाँ विन्ध्य एवं सतपुडा़ पर्वत श्रेणियों को जोड़ती है। इन श्रेणियों के उत्तर की ओर जोहिला नदी और दक्षिण की ओर नर्मदा नदी बहती है।

सोन घाटी के अन्तरवर्ती भागों में कुछ असमतल पठारी भाग एवं अन्त पठारीय वेसिन भी मिलते है। इस भाग में कम ऊँचाई वाले टीले, काठियाँ, जलोढ़ वेदिकाये भी मिलते है। इस खण्ड के भू आकृतिक स्वरूप की दो विशिष्टताएँ देखने को मिलती है। यदि हम उमरिया व बैढ़न को सीधी रेखा से मिला दें तों उत्तरी आधे भाग में पूर्व पश्चिम की ओर ऊँचाई अपेक्षाकृत कम एवं भूसतह अधिकतर समतल मिलती है। इसके दक्षिणी भाग में कटे फटे पठार पहाडियाँद्व काठियाँ कगार आदि प्रमुख है।

दक्षिणी विन्ध्यांचल सामान्यतया सोन नदी के प्रभाव क्षेत्र में आता है। सोन की सहायक नदियाँ महानदी जोहिला नदी गोपद नदी, बनास नदी, रिहन्द नदी तथा कनहर आदि नदियाँ इस अंचल की प्रमुख नदियाँ है। इस अंचल में सोन नदी की लम्बाई लगभग 470 कि0 मी0 है। कैमोर कगार के निकट आतें ही सोन की दिया एक दम पूर्व की ओर हो जाती है। इसका उत्तरीय तट सकरा है जो कैमोर कगार के समानान्तर चलता है। इसके उत्तर तट में मात्र कुछ नालों व छोंटी नदियों को छोड़कर कोई बडी़ सहायक नदी नहीं मिलती।

सोन गंगा की प्रमुख सहायक नदी है जो विन्ध्य के इस अंचल में कहीं तीव्रता से बहती है तो कहीं मंद हो चौडी़ व उथली घाटी बनाती है। प्रागैतिहासिक काल से ऐतिहासिक काल तक सोन ने अपनी गोद में विविध सभ्यताओं को पाला है। विन्ध्य का यह दक्षिणी क्षेत्र भारत के लगभग मध्यवर्ती भाग में स्थित है। कर्क रेखा इस क्षेत्र के लगभग बीचों बीच से गुजरती है। अतः इस क्षेत्र में गर्मी अधिक एवं शीत ऋतु सामान्य एवं शुष्क रहता है। यहाँ के बघेल खण्ड पठार में अनेक प्रकार की मिट्टियाँ मिलती है। जैसे काली मिट्टी, लाल एवं पीली मिट्टी एवं पथरीली मिट्टी आदि। इस अंचल का अधिकांश क्षेत्र वनों से आच्छादित है। सामन्त पसादिका में विन्ध्यारण्य का अगामक अरेंजय(अगम बन) कहा गया है।[6] विन्ध्य और सतपुडा़ को जोड़ने वाला मेकल पहाड़ चन्द्रांकार स्थिति में आज भी खडा़ है। (भरत सिंह उपाध्याय बु.का.भू.पृ. 163)

दक्षिणी बघेल खण्ड में मेकल श्रंखला की पहाड़ियाँ है जो तीन हजार फुट तक ऊँची है। यह पर्वत श्रंखला दक्षिण पूर्व से उत्तर पश्चिम में फैली हुई है और विन्ध्य तथा सतपुडा़ के पर्वतों को एक दूसरे से मिलाती है। इस मेकल श्रेणी के अन्तर्गत बसही, लाधुर, सोन, मूडा़, सरई, पनगढ़ करकेली ढेका तथा अमरकंटक प्रमुख पर्वत मालाएँ हैं। जो 3387 से 3493 फुट तक ऊँची है। बघेल खण्ड का यह पठार जटिल पहाड़ियो से आच्छादित है। इस कारण दक्षिणी बघेल खण्ड का क्षेत्र यातायात की दृष्टि से बडा़ दुर्गम है। यातायात की इस दुर्गमता के कारण यह क्षेत्र सदियों तक सांस्कृतिक प्रभाव से अछूता रहा इस क्षेत्र में मार्गो का अभाव था। इसलिये सांस्कृतिक फैलाव सिमट कर रह गया। अपनी भौगोलिक परिस्थितियों के कारण यह दक्षिणी जहाँ दक्षिणी पूर्व की सभ्यता से सदियों तक समागम न कर सका वहीं उत्तर में दीवार की भाँति खडे कैमोर के कारण उत्तर भारत की सभ्यता से सम्पर्क न कर सका।

कारण उत्तर भारत की सभ्यता से सम्पर्क न कर सका। इस विन्ध्य को उत्तर तथा दक्षिण में विभक्त करने वाले कैमोर पर्वत ने दक्षिणी विन्ध्य में अपनी पहाडियों का प्राकृतिक वितान काफी दूर तक तान रखा है। इनमें पहाड डहार की प्रचुरता है जो आवागमल में बाधा उत्पन्न करता है।

भौगोलिक दृष्टि से इसके ड्रो प्राकृतिक विभाग किये गये है-1 डहार क्षेत्र (केहजुँआ का पर्वतीय क्षेत्र) 2 पहार क्षेत्र (पाठ क्षेत्र या कैमोर पर्वत का दक्षिणी क्षेत्र)। इस डहार क्षेत्र में सीधी व सोनभद्र आ जाता है और डहार क्षेत्र में उमरिया और शहडोल। इसी कैमोर के पर्वतीय ढलाव के समानांतर इस अंचल का प्रमुख नदी सोन प्रवाह मान है जिसकी उत्तरी घाटी में प्रागैतिहासिक सभ्यता ने अपने बीज रोपे है।[7]

इस कैमोर व सोन के मध्य उर्वर भूमि की एक सकरी पट्टी है। यह उर्वर भूमि कहीं कहीं पर गहरी पतली घाटियों में कटी हुई है। जैसे गड्डी, छुहिया व मोहलिया आदि। इन घाटियों में प्रमुख बड़े गाँवों एवं कस्वों की वर्तमान वसाहट इस प्रकार है रामपुर नैकिन चुरहट और सिहावल इस सकरी पट्टी से निचली पहाड़ियों की एक श्रृंखला भी प्रसूत होती है जो रीवा सीधी मार्ग में सोन के उत्तर में साथ- साथ चलती है। इस रीवा सीधी मार्ग मे चुरहट कस्बे के आने तक पहाड़ियों की स्थिति लगभग समाप्त हो जाती है। यह उत्तर सोन घाटी प्राचीनतम सभ्यताओं की जननी है। इस घाटी में प्रागैतिहासिक एवं पूर्व प्रगैतिहासिक अवशेष दबे पड़े है जो अब धीरे-धीरे मिटते जा रहे हैं। इसी दक्षिणी विन्ध्य में पश्चिम की तरह पूर्व में सोन गंगा के मध्य क्षेत्र का अपना भौगोलिक महत्व है। सोन और गंगा के बीच में कैमोर पर्वत श्रृंखला फैली हुई है, जो इन दोनों नदियों को अलग अलग बहने के लिये विवश करती है। कैमोर श्रृंखला का अवरोध जब समाप्त हो जाता है तब सोन पटना के निकट गंगा के गले मिल जाती है।

सोन का नाम रामायण में शोणभद्र मिलता है।[8] शोणभद्र जनपद में विजयगढ़ के पास चोपन में सोन किंचित नीचे मुड़कर पूर्व की ओर तीव्रता से आगे बढ़ती है। तदन्तर कोइन नदी से मिलने के बाद सोन फैल जाती है और उसकी गति मंथर हो जाती है। यहाँ के सोन उत्तर-पूर्व की ओर मुड़ते हुये अपने गन्तव्य की ओर अग्रसर होती है। रामायण में उललेख है कि राम और लक्ष्मण ने पूर्व की ओर मिथिला जाते समय इसी सोन के तट पर रात्रि विश्राम किया था। कालिदास ने सोन की विशाल तरंगों का वर्णन किया है।[9]

कलचुरि कालीन शैवाचार्य प्रबोध शिव के गोरगी और चन्द्रह अभिलेखों में सोन को सोणनद कहा गया है। इसी प्रबोध शिव ने सोन और बनास के संगम पर स्थिति भँवरसेन के निकट शैवमठ एवं मंदिर का निर्माण कलचुरियों के प्रश्रय में कराया था। यह शैव संस्कृति सोन घाटी में पूर्व की ओर प्रशस्त हुई थी, जिसके अवशेष यत्र तत्र बिखरे हुये मिलते हैं। इसी सोन घाटी में सोन और गोपद के संगम पर स्थित वर्दी में चन्देलों ने अपना राज्य स्थापित किया था। जो बाद में रीवा के बघेलों के करद (आधीन) हो गये। तदुपरान्त सोन तीब्रता से पूर्वोत्तर की ओर बढ़ते हुये उत्तरप्रदेश के सोन भद्र जिले में प्रवेश करती है। यहाँ पर रिहन्द और कन्हार नदियों का सोन भद्र जिले में प्रवेश करती है। यहाँ पर रिहन्द और कन्हार नदियों का सोन से मिलन होता है। यहाँ इस सोन घाटी में कोटा, अँगोरी चोपन और विजयगढ़ व रामगढ़ जैसे स्थान है। इस अंचल में भर आदि क्षेत्रीय राज्यों का प्रादुर्भाव हुआ जिनके अवशेष इस घाटी में बिखरे हुये मिलते हैं। इस दक्षिण पूर्वी क्षेत्र में

स्थिति सिंगरौली बेसिन से प्रागैतिहासिक संस्कृति वहाँ के उत्खनन से प्रकाश में आती है।[10] यह प्रागैतिहासिक संस्कृति वेलन व अदवा घाटी में उत्तर दक्षिण की ओर प्रशस्त हुई है।

उल्लेखनीय है कि कैमोर के दक्षिण में स्थित सोन कछार क्षेत्र में अधिकांशतया गोंडवाना समूह के पत्थर मिलते हैं, जिनके रवे बड़े-बड़े होते हैं, उन में ठोसपन नहीं है। सामान्यतः ये सैंण्ड स्टोन घुलनशील है। माड़ा हरदी-हड़चोका, बान्धवगढ़ आदि की गोंडवाना शैला समूह में खोदी गई एकाश्म गुफाएँ में व मूर्तियां घुलनशील है, जो बराबर घुलती जा रही है। इन खुरदरे घुलनशील पत्थरों पर कला परक लालित्य नहीं उतर पाया है और कलाकार का श्रम कला को साकार करने में असमर्थ रहा है। वास्तव में गोंडवाना शैल समूह का पत्थर प्रकृति के थपेड़ों को नहीं सहायता। सोन में बालू की अधिकता का कारण भी गोडवाना शैल समूह है। जिन पर अच्छी कला साकार नहीं हो सकती है। गोंडवाना शैला समूहों की संरचनरा में कोयले की अधिकता है जो सिंगरौली व सोनभदं क्षेत्र में बहुलता से उपलब्ध है। पूर्व में कोइय नदी का नाम करण भी संभवतः कोयले के कारण पड़ा है जो इस अंचल में बहुतायत से मिलता है।

==============

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची-

1. मनुस्मृति
2. जाट कट्ठ कथा, खण्ड-1 (हिन्दी अनु.) पृ. 64
3. जात कट्ठ कथा नहीं पृ. 64
4. भगवती प्रसाद शुक्ल, बघेली भाषा एवं साहित्य
5. टोपो सीट, ज्योलाजिकल सर्वे आफ इण्डिया, 63/ळ्भ्क्स
6. सामन्त पासादिका जिल्द 3 पृ. 655
7. देवेन्द्र कुमार मिश्र सोन के पानी पृ. 124, 151,व आगे।
8. रामायण, 1.34 1-4
9. कालिदास, रघुवंश, 7.36 पृ. 39
10. एन्सेन्ट इण्डिया(बुलेटिन आक्रियालाजिकल सर्वे आफ इण्डिया) संख्या 7, जनवरी 1951,पृ.40

Research Journal of Arts, Management and Social Sciences,
Vol. XVIII, Hindi.-I, Year IX, March, 2018
UGC Sl. No. 2138, Journal No.48774, Impact Factor 2.996

महाविद्यालय में कार्यरत पुस्तकालयीन कर्मियों एवं अधिकारियों के आपसी संबंध का अध्ययन

* सूर्य प्रकाश शुक्ला
** सविता देवी क्षत्रिय

सारांश- ***मध्यप्रदेश के महाविद्यालयों के कला, वाणिज्य, विज्ञान, गृहविज्ञान आदि संकायों में शैक्षणिक व्यवस्था प्राध्यापकों, सहायक प्राध्यापकों, एम्बेसडर प्राध्यापको एवं अन्य शैक्षणिक सहयोगियों के माध्यम से समुन्नत हुई है। वर्चुअल कक्षा एवं आधुनिक तकनीक से शिक्षण व्यवस्था की अवधारणा भी इसी दिशा में किया गया अभिनव प्रयत्न है। विभागीय कार्यक्रमों, सूचनाओं और आदेशों का बेवसाइट पर नियमित प्रसारण न केवल विद्यार्थियों के लिये ही नही अपितु विभाग के अधिकारियों-कर्मचारियों, शोधार्थियों, मीडियाकर्मियों सहित देश-विदेश के लिये भी उपादेय सिद्ध हुआ है। आधुनिक तकनीकी प्रयोगों की सुविचारित योजनाओं के क्रियान्वयन ने विभागीय गतिविधियों को गतिशील करके सर्व-संबन्धितों को लाभान्वित किया है। शोध अध्येता द्वारा पुस्तकालयीन कर्मियों के आपसी सौहार्द्र एवं कार्यालयीन संबंधों को विभिन्न आयामों के माध्यम से अंकेक्षण कर प्रस्तुत किया गया है।***

समाज में पुस्तकालयकर्मी जहाँ ज्ञान के संरक्षण, संबर्धन और उसके प्रचार-प्रसार में संलिप्त रहते हैं, वहीं पर समाज के कुछ लोग मानव जीवन एवं अन्य जीवनों के संरक्षण, संवर्धन एवं सुरक्षा प्रदान करने आदि में लगे रहते हैं। इस प्रकार की अन्य संस्थाओं में लगे हुए व्यक्ति समाज में उच्च आदर्श तो प्रस्तुत नहीं कर पाते परन्तु सम्पन्नता के शिखर में अवश्य पहुँच जाते हैं। लेकिन पुस्तकालय में कार्य करने वाला पुस्तकालयकर्मी सम्पन्नता के शिखर पर तो नही पहॅुचता लेकिन उसे जो आत्मसंतुष्टि, शान्ति और यश प्राप्त होता है, वह उन सम्पन्न व्यक्तियों को नहीं मिलता।

पुस्तकालयीन सेवा से जुड़े हुए व्यक्ति के मस्तिष्क में कई तरह के विचार अपने कार्य, अपने सहयोगी, पुस्तकालय में आने वाले पाठकों, परिवार, समाज आदि के बारे में आते है। इन विचारों का अध्ययन करना अपने आप में महत्वपूर्ण है।

पुस्तकालय विज्ञान के जनक डॉ. एस.आर. रंगनाथन द्वारा प्रतिपादित पांच सूत्रों (1931) में से पांचवा सूत्र 'ग्रंथालय एक वर्धनशील संस्था है' जिसे महत्वपूर्ण सूत्र कहा जाता है। जिसका तात्पर्य है, आगे भविष्य में आने वाले परिवर्तनों को दृष्टि में रखते हुए स्वयं को उन परिवर्तनों हेतु तैयार रखना। इस ज्ञान जगत में जो नये विचार, नये परिवर्तन,

* वरिष्ठ प्रवक्ता, पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान, कला संकाय, म0गॉ0चि0ग्रा0वि0वि0, चित्रकूट, सतना, म0प्र0

** शोध छात्रा, पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान, म0गॉ0चि0ग्रा0वि0वि0, चित्रकूट

नये अन्वेषण एवं नयी तकनीकियाँ जन्म ले रही है, उन्हें प्रयोग में लाना वर्तमान समय की आवश्यकता है। एवं परिवर्तनों के अनुसार वर्तमान समय की आवश्यकता है एवं परिवर्तनों के अनुसार वर्तमान कार्यशैली या कार्य प्रणाली का विश्लेषण कर उसमें परिवर्तन करना, नयी तकनीकों का प्रयोग करना अवश्यम्भावी है, ताकि पाठकों की मांग व आवश्यकताओं को पूरा कर हम अपने लक्ष्य प्राप्ति की ओर अग्रसर हो सके।

इस प्रकार गवेषिका ने उक्त समस्या को ध्यान में रखते हुये मध्यप्रदेश के शासकीय महाविद्यालयों तथा उसके पुस्तकालयों के कर्मियों की स्थिति शैक्षिक योग्यता, कार्यानुभव, आपसी संबंध, सहयोग, कार्य करने की क्षमता के साथ बदलते हुये परिवेश पर पुस्तकालयकर्मियों का अनुभव एवं संतुष्टि तथा कर्मियों का सहयोगियों के मध्य सम्बन्ध एवं उनकी कार्यशैली आदि विश्लेषित करने हेतु अपने शोध अध्ययन का चयन किया है। मध्यप्रदेश के उच्च शिक्षा विभाग द्वारा संचालित महाविद्यालयों मे सामान्य रूप से पुस्तकालयाध्यक्ष, सहायक पुस्तकालयाध्यक्ष, बुक लिटर आदि के पद सृजित किये गये है। महाविद्यालय शासन द्वारा संचालित होने के कारण शासन द्वारा नियुक्त विभिन्न अधिकारियों मे से मात्र महाविद्यालय का प्राचार्य प्रमुख रूप से तात्कालिक वरिष्ठ अधिकारी होता है। अस्तु प्राचार्य के माध्यम से कई अधिकारी अपना प्रभाव बताते हैं।

शोध-छात्रा ने पुस्तकालय मे नियुक्त पुस्तकालयकर्मियों से उनके वरिष्ठ उच्च अधिकारी प्राचार्य के सम्बन्ध मे जो विचार व्यक्त किये हैं उसका विवरण इस शोध में प्रस्तुत है। वरिष्ठ अधिकारी द्वारा पुस्तकालयकर्मियों के आत्म सम्मान, कार्य मे हस्तक्षेप, सहयोग, विरोध आदि से सम्बन्धित प्रश्नो के द्वारा उनकी मनोदशा का अध्ययन कर इस शोध में प्रस्तुत किया गया है।

शोध प्रविधि-

शोध-छात्रा ने मध्यप्रदेश के उच्च शिक्षा विभाग द्वारा स्थापित शासकीय महाविद्यालयों के पुस्तकालयों मे कार्यरत कुल 150 पुस्तकालयकर्मियों को अध्ययन हेतु चुना है। अध्ययन के लिये मात्र उन पुस्तकालयकर्मियों को चुना है जो शासकीय सेवा में स्थाई रूप से कार्यरत है।

सर्वेक्षण विधि से जानकारी एकत्रित करने के लिये प्रश्नावली तकनीक का शोध-छात्रा द्वारा प्रयोग किया गया हैं। अध्ययन के लिए शोध-छात्रा द्वारा एक प्रश्नावली का निर्माण किया गया है। प्रश्नावली को शोध छात्रा स्वयं व्यक्तिगत, डाक द्वारा, या अन्य माध्यम से भेज कर जानकारी का एकत्रीकरण किया गया है। प्रश्नावली के आधार पर प्राप्त आंकड़ों का सारणीयन एवं विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है।

सारणीयन एवं विश्लेषण-

आत्मसम्मान संबंधी व्यवहार- प्रत्येक मनुष्य का अपना आत्मसम्मान होता है। जिसकी रक्षा करने के लिए वे सदैव सजग रहता है। वे यह भी प्रयास करते हैं कि उनके सम्मान को कोई दूसरा ठेस न पहुंचाये। इसी प्रकार पुस्तकालय कर्मी अपने आत्मसम्मान की रक्षा करते हुए पुस्तकालय में कार्य करते हैं। परन्तु कभी-कभी ऐसा होता है कि पुस्तकालय कर्मी और उसके वरिष्ठ अधिकारी भावावेश मे आकार एक दूसरे के सम्मान को ठेस पहुॅचा जाते हैं। इस सम्बन्ध में पुस्तकालयकर्मियों से जो जानकारी संग्रहित की गई वह निम्नतालिका में प्रस्तुत की गयी है।

तालिका क्रमांक 01, पुस्तकालय कर्मियों के आत्म सम्मान हेतु अधिकारियों द्वारा अपनाये जा रहे व्यवहार के अभिमत का वर्गीकरण

क्र.	विवरण	संख्या	प्रतिशत
1.	हॉ	93	62.0
2.	नहीं	43	28.6
3.	ज्ञात नहीं	14	09.4
4.	योग	150	100.0

तालिका क्रमांक 01 में पुस्तकालय में कार्यरत कर्मचारियों एवं अधिकारी में मध्य आपसी संबंधी एवं व्यवहार संबंधी अभिमत को दर्शाया गया है। अधिकांश 62.0 प्रतिशत पुस्तकालय कर्मियों ने अपना अभिमत स्पष्ट किया कि उसके उच्च अधिकारी उनके सम्मान का ध्यान रखते हैं। 28.6 प्रतिशत पुस्तकालयकर्मियों का यह मानना है कि उनके अधिकारी उसके सम्मान का ध्यान नही रखते। ये अधिकारी उनके सम्मान की रक्षा क्यों नहीं करते, जिसका कारण स्पष्ट नहीं है। अधिकारी पुस्तकालय कर्मियों के सम्मान के प्रति सजग हैं कि नही के प्रति निर्विकार भाव अथवा ज्ञात नहीं की जानकारी देने वाले पुस्तकालय कर्मियों की संख्या बहुत कम 9.4 प्रतिशत पाई गई।

कार्य मे हस्तक्षेप–

शासकीय महाविद्यालय के वरिष्ठ अधिकारियों का यह स्वभाव होता है कि वे कभी-कभी अनावश्यक रूप से अपने अधीनस्त के कार्यों मे हस्तक्षेप या टोका-टोकी कर कार्य में या तो व्यवधान पैदा करते है या कार्य की गुणवत्ता को प्रभावित करते हैं। इस संबन्ध में पुस्तकालयकर्मियों ने अपने अलग-अलग विचार व्यक्त किये हैं। उनके द्वारा दिये गये अभिमत को निम्न तालिका मे प्रस्तुत किया गया है।

तालिका क्रमांक 02, पुस्तकालयीन अधिकारियों द्वारा कर्मियों के कार्य में हस्तक्षेप संबंधी अभिमत का वर्गीकरण

क्र.	विवरण	संख्या	प्रतिशत
1.	हॉ	35	23.3
2.	नहीं	102	68.0
3.	ज्ञात नहीं	13	08.7
4.	योग	150	100.0

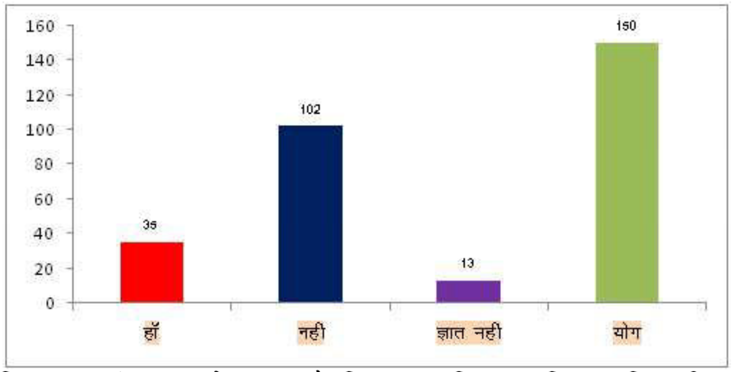

तालिका क्रमांक 02 से स्पष्ट है कि 68 प्रतिशत वरिष्ठ अधिकारी पुस्तकालय कर्मियों को दिशा निर्देश देने के पश्चात उनके कार्यो मे हस्तक्षेप नहीं करते। इससे यह प्रतीत होता है कि उन्हे उनके द्वारा किये गये कार्यों पर विश्वास है। इसी प्रकार हस्तक्षेप करने वाले अधिकारियों के सम्बन्ध में 23.3 प्रतिशत अभिमत हॉं में प्राप्त हुआ है। कार्यो मे हस्तक्षेप के सम्बन्ध में स्पष्ट जानकारी न देने वाले अथवा उस सबन्ध में कुछ भी चर्चा न करने वाले पुस्तकालय कर्मियों की संख्या 8.7 प्रतिशत है।

समस्या समाधान मे सहयोग–

कार्यालयीन कार्यों को सम्पादित करते समय विभिन्न प्रकार की समस्यायें अधिकारियों के सामने आती रहती है। इसमें वरिष्ठ अधिकारी एवं प्राचार्य अपने अधीनस्थ कर्मचारियों से सहयोग लेते हैं। इसी प्रकार महाविद्यालयों के अधिकारी एवं प्राचार्य अपने पुस्तकालयकर्मी से पुस्तकालय सम्बन्धी समस्याओं के समाधान मे सहायता लेने का प्रयास करते हैं। पुस्तकालयकर्मी भी अपनी क्षमता के अनुसार अपने वरिष्ठ अधिकारी एवं प्राचार्य को सहयोग प्रदान करते है। इस सम्बन्ध में प्राप्त जानकारी निम्नानुसार प्रदर्शित है।

तालिका क्रमांक 03 : पुस्तकालय कर्मियों द्वारा समस्या समाधान मे दिये जा रहे सहयोग संबंधी अभिमत का वर्गीकरण

क्र.	विवरण	संख्या	प्रतिशत
1.	हॉं	117	**78.0**
2.	नहीं	13	**08.7**
3.	ज्ञात नहीं	20	**13.3**
4.	योग	150	**100**

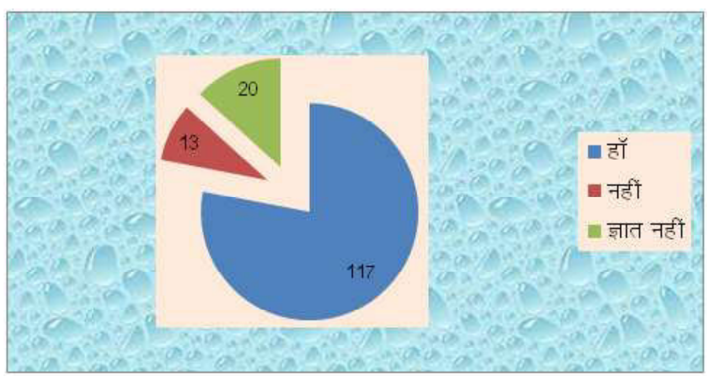

तालिका क्रमांक 03 पुस्तकालय में कार्यरत कर्मियों द्वारा अपने अधिकारी को कार्य में दिये जा रहे सहयोग को दर्शाती है। अध्ययन से स्पष्ट हुआ कि 78 प्रतिशत पुस्तकालय कर्मियों ने अपने अधिकारी एवं प्राचार्य को कार्य में सहयोग प्रदान करते हैं। जबकि 8.7 प्रतिशत पुस्तकालय कर्मी अपने अधिकारी एवं प्राचार्य को सहयोग प्रदान नहीं करते हैं। 13.3 प्रतिशत पुस्तकालय कर्मियों द्वारा इस सम्बन्ध में कोई अभिव्यक्ति नही दी गई है।

कार्य मे निर्देश देना–

मानव का स्वभाव है कि जब वह कोई कार्य अपने किसी व्यक्ति को सौपता है तो उस कार्य के सफल सम्पादित करने के लिये कार्य सौंपते समय स्पष्ट दिशा निर्देश भी देता है। इसी बात को ध्यान में रखकर पुस्तकालय कर्मियों से भी इस बात की जानकारी प्राप्त की गई। इस सम्बन्ध में संकलित आकड़ों का विवरण तालिका में प्रस्तुत किया गया है।

तालिका क्रमांक 04 : कार्य मे निर्देश

क्र.	विवरण	संख्या	प्रतिशत
1.	हॉ	101	67.4
2.	नहीं	33	22.0
3.	ज्ञात नहीं	16	10.6
4.	योग	150	100

तालिका क्रमांक-04 में दृष्टव्य कार्य मे निर्देश संबंधी अभिमत का मापन Likert Technique Three point Scale के आधार पर हॉ, नहीं, ज्ञात नहीं से किया गया। तालिका के माध्यम से पुस्तकालय कर्मियों को कार्य सौपते समय उनके अधिकारी से आवश्यक दिशा निर्देश दिये जाने संबंधी जानकारी का अध्ययन किया गया है। स्पष्ट है कि 67.4 प्रतिशत पुस्तकालय कर्मियों ने इस बात को स्वीकार किया है कि उनके अधिकारी कार्य सौपते समय आवश्यक दिशा निर्देश प्रदान करते हैं। 22.00 प्रतिशत पुस्तकालय कर्मियों ने यह बात स्वीकार की कि अधिकारी स्पष्ट दिशा निर्देश नहीं देते। दिशा निर्देश देने अथवा न देने के सम्बन्ध में 16 पुस्तकालय कर्मियों ने अपना कोई मत व्यक्त नहीं किया उनकी संख्या अल्यल्प 10.6 प्रतिशत है।

समस्याओं पर अधिकारियों का सहयोग–

समस्याओं के समाधान के लिये एक दूसरे से चर्चा करना मानव स्वभाव है। इसी बात को ध्यान में रख कर पुस्तकालय कर्मियों से यह जानकारी प्राप्त की गई कि वे भी अपनी समस्याओं के लिये अपने अधिकारियों से चर्चा करते हैं अथवा नहीं? इस संबन्ध में शासकीय महाविद्यालयों के पुस्तकालय कर्मियों से प्राप्त अभिमत को निम्न तालिका में प्रदर्शित किया गया है :-

तालिका क्रमांक 05 : समस्याओं पर अधिकारियों से सहयोग

क्रमांक	विवरण	संख्या	प्रतिशत
1.	हॉ	129	86.0
2.	नहीं	12	08.0
3.	ज्ञात नहीं	09	06.0
4.	योग	150	100.0

उपरोक्त तालिका 05 अध्ययन में समस्याओं पर अधिकारियों से प्राप्त सहयोग संबंधी अभिमत को दर्शाया गया है। अध्ययन के अनुसार 86 प्रतिशत पुस्तकालय कर्मियों को समस्याओं के निराकरण हेतु अपने अधिकारियों से सहयोग प्राप्त होता है। 08 प्रतिशत पुस्तकालय कर्मियों ने यह स्वीकार किया कि अधिकारियों से यथोचित सहयोग प्राप्त नही होता। इस सम्बन्ध में मौन अभिव्यक्ति वाले 06 प्रतिशत कर्मचारी पाये गये।

निष्कर्ष–

प्रस्तुत शोध 'मध्य प्रदेश के महाविद्यालयीन पुस्तकालयों की स्थिति का समीक्षात्मक अध्ययन' से प्राप्त निष्कर्ष का विवरण निम्नानुसार है–

तालिका कमांक 01 से ज्ञात होता है कि 62.0 प्रतिशत पुस्तकालय कर्मियों को उनके उच्च अधिकारी उनके सम्मान का ध्यान रखते हैं। 28.6 प्रतिशत पुस्तकालयकर्मियों का यह मानना है कि उनके अधिकारी उसके सम्मान का ध्यान नही रखते। ये अधिकारी उनके सम्मान की रक्षा क्यों नहीं करते, जिसका कारण स्पष्ट नहीं है।

तालिका कमांक 02 में पाया गया कि 68 प्रतिशत वरिष्ठ अधिकारी पुस्तकालय कर्मियों को दिशा निर्देश देने के पश्चात उनके कार्यो मे हस्तक्षेप नहीं करते। इससे यह प्रतीत होता है कि उन्हे उनके द्वारा किये गये कार्यों पर विश्वास है।

अध्ययन से स्पष्ट है कि 78 प्रतिशत पुस्तकालय कर्मियों ने अपने अधिकारी एवं प्राचार्य को कार्य में सहयोग प्रदान करते हैं। ऐसे पुस्तकालय कर्मी जो अपने अधिकारी एवं प्राचार्य को सहयोग प्रदान नहीं करते हैं उनकी संख्या अत्यल्प है।

67.4 प्रतिशत पुस्तकालय कर्मियों ने इस बात को स्वीकार किया है कि उनके अधिकारी कार्य सौपते समय आवश्यक दिशा निर्देश प्रदान करते हैं। 22.00 प्रतिशत पुस्तकालय कर्मियों ने यह बात स्वीकार की कि अधिकारी स्पष्ट दिशा निर्देश नहीं देते। दिशा निर्देश देने अथवा न देने के सम्बन्ध में 16 पुस्तकालय कर्मियों ने अपना कोई मत व्यक्त नहीं किया उनकी संख्या अल्पल्प 10.6 प्रतिशत है।

अध्ययन के अनुसार 86 प्रतिशत पुस्तकालय कर्मियों को समस्याओं के निराकरण हेतु अपने अधिकारियों से सहयोग प्राप्त होता है। 08 प्रतिशत पुस्तकालय कर्मियों ने यह स्वीकार किया कि अधिकारियों से यथोचित सहयोग प्राप्त नही होता।

सुझाव–

* पुस्तकालय मे स्थानाभाव बढता जा रहा है। अतः डॉ. रगनाथन के पॉचवे सूत्र ''पुस्तकालय बर्धनशील संस्था है'' को ध्यान मे रखते हुए पुस्तकालय भवन की व्यवस्था की जानी चाहिये।
* पुस्तकालय महाविद्यालय का केन्द्र विन्दु है। अतः शासन को महाविद्यालयों के पुस्तकालयों के विकास हेतु सार्थक प्रयास एवं वरीयता देना उचित है।
* अधिकारियों का व्यवहार पुस्तकालयीन कर्मियों के प्रति सौजन्यपूर्ण होना चाहिये तथा अधीनस्थ कर्मचारियों के आत्मसम्मान के विपरीत नहीं होना चाहिये।
* पुस्तकालय को गौरवपूर्ण स्थान दिलाने के लिये प्रतिस्पर्धात्मक कार्य प्रक्रिया अपनाई जाय।
* पुस्तकालयकर्मियों के लिये पदोन्नति के अवसर प्रदान करने हेतु नियम तैयार किया जाना चाहिये जिससे प्रत्येक पुस्तकालयकर्मी को कम से कम तीन पदोन्नति प्राप्त हो

सके।

* पुस्तकालयकर्मियों के प्रशिक्षण की व्यवस्था की व्यवस्था की जाय जिससे पुस्तकालयीन कार्य में गुणवत्ता एवं नई-नई तकनीक को प्रचलित करने में सहायता मिल सके।

===============

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची-

1. चतुर्वेदी, सीताराम. (1970). शिक्षा दर्शन. लखनऊः हिन्दी समिति, सूचना विभाग, उ.प्र.
2. जायसवाल, सीताराम. (1963). मनोविज्ञान की एतिहासिक रूपरेखा. लखनऊः हिन्दी समिति, सूचना विभाग, उ.प्र.
3. तोमर, लज्जाराम. (2000). भारतीय शिक्षा मनोविज्ञान के आधार. कुरूक्षेत्रः विद्याभारती प्रकाशन.
4. त्रिपाठी, लक्ष्मीकान्त. (2014). ने शासकीय अभियांत्रिकीय महाविद्यालयों के ग्रंथालयकर्मियों का मनोविश्लेषणात्मक अध्ययन. अप्रकाशित शोध प्रबन्ध.
5. पारेवाल, एल. एस. (1983). भारतीय सांख्यिकी. जयपुररू रमेश बुक डिपो.
6. पाण्डेय, कामता प्रसाद. (1989). शिक्षा मनोविज्ञान. मेरठः अमिताभ प्रकाशन.
7. राणा, मदन सिंह एवं गुप्ता, सौभाग्यवती. इलेक्ट्रानिक सूचना संसाधनः महत्व एवं सूचना अभिगम व पुर्नप्राप्ती हेतु उपयोगी तकनीकें ˙2010, 41, 1-14
8. Allport, Garden W. (1937). Personality: a psychological Interpretation. London Constable.
9. Atkinson, Jon W. (1966). An Introduction to motivation. New Jarsi: D. Chain Nast rend Co. Ink Princeton.
10. Datt. N.K. (1974) Psychological Foundation of Education. NewDelhi: Doaabo House.
11. Dholakiya, R. P. (2001). Internal Human Values and World Religion. NewDelhi: NCERT.
12. Kumar, P. G. S. (2003). Information Technology: Application. NewDelhi.
13. Mittal.R.L. (1963). Library Administration. Delhi: Matropolitan.
14. Sharma, C. K. (2002). Research Methodology. NewDelhi: Shri Publishor.
15. Sharma, Lokesh. (1992). Psychological Prospective of Library Professionals. Delhi: Sahitya Kendra Prakashan.

Research Journal of Arts, Management and Social Sciences,
Vol. XVIII, Hindi.-I, Year IX, March, 2018
UGC Sl. No. 2138, Journal No.48774, Impact Factor 2.996

बादामी गुफाओं के चित्रों का विश्लेषणात्मक अध्ययन

* अमित सिंह
** सुनीता

===

सारांश- ***स्थापत्य कला की भांति चित्रकला भी सामाजिक वातावरण की अभिव्यक्ति है अन्तर केवल इतना है कि स्थापत्य कला सर्वमान्य के लिए दृष्टिगोचर है जबकि चित्रकला प्रत्यक्ष, कुछ स्थान तक सीमित है। चित्रण कला के इतिहास में अजन्ता, बाघ गुफाओं के चित्रों के साथ-साथ बादामी गुफाओं के चित्र भी महत्वपूर्ण है। बादामी गुफाओं के चित्रों में लौकिकता के पीछे आध्यात्मिक और बौद्धिक तटस्थता के दर्शन होते है। बादामी गुफाओं का चित्रण विधान अजन्ता तथा बाघ के समान है। परन्तु चित्र उत्कृष्टता और मृदुता की दृष्टि से उच्च स्तर के नही है।***

===

चित्रकला इतिहासकार पर्सी ब्राउन ने बादामी गुफाओं के विषय में लिखा है कि बादामी गुफाओं के भीतर आकार उनमें वैभव को देखकर, मनुष्य सचमुच चकित हुए बिना ughaj g l d rkA[1]

चित्रकला के प्रकार-

प्रमुखतया चित्र-कला दो[2] प्रकार की होती है। 1. प्रत्यक्ष चित्रकला- इसके अन्तर्गत सामने रखी हुई वस्तु का चित्रण किया जाता है। 2. भावगभ्य चित्रकला - इसके अन्तर्गत कल्पना के आधार पर चित्र बनाये जाते है। भारतीय साहित्य में चित्रकला की इन दोनों का वर्णन है।

चित्रकला का विकास-

प्राचीन साहित्य तथा पुरातत्त्व के अवशेषों से चित्रकला की विकसित अवस्था का परिचय प्राप्त होता है। प्राचीन युग के चित्र भित्तियों और गुफायों में मिलते है। इन चित्रों को दो वर्गों में बांट सकते[3] हैं- वन्य और नागरिक। गुफाओं की भित्तियों पर कोयला, गेरु आदि से बनाये गये चित्र वन्य हैं। नागरिक चित्रकला के अनुपम उदाहरण हैं। ये दीर्घकालीन साधना और अभ्यास के प्रतिफल हैं। ये भी विभिन्न स्थानों पर गुफाओं और भित्तियों पर मिले हैं।

चित्रों के भेद- प्राचीन शास्त्रीय ग्रन्थों में चित्रों के भेदों का वर्णन किया गया है।

सत्यं च वैणिकं चैव नागरं मिश्रमेव च।
चित्रांक चतुर्विधं प्रोक्तं तस्य वक्ष्यामि लक्षणम्।।

'विष्णु धर्मोत्तरपुराण' में चार प्रकार[4] के चित्र बताए गये हैं - सत्य, वैणिक, नागर

=========================

* शोद्यार्थी, दृश्य कला विभाग, म.द.वि., रोहतक
** सहायक प्रोफेसर, इतिहास, अहीर महाविद्यालय, रेवाड़ी

और मिश्र। ये भेद चित्रा-रचना की उतपत्ति के अनुसार किये गए हैं।

चित्रों के अंग– प्राचीन साहित्य में चित्रों के छः[5] अंग कहे गए हैं-

रुपभेदाः प्रमाणनि भावलावण्ययोजनम्।
सदृश्यं वर्णिकामर्धैं इति चित्राषडर्धैंकम्।।

अर्थात् रुपभेद, प्रमाण, भाव, लावण्य, सादृश्य और वर्णिकाभ्र卐।

चित्रकला के लिए भित्ति को तैयार करना– चित्र रचना के लिए भित्ति को विशेष रुप से तैयार करना होता था। 'विष्णुध्र्मोत्तरपुराण' में इसकी विधि इस प्रकार दी गई है-

दीवार को सम करके चूने से पुतवाते हैं। इस पर एक लेप लगवाते हैं, जो भैंस के चमड़े को पानी में औटाकर बनता है। यह बज्रलेप है। गरम करने पर यह पिघल जाता है तथा दीवार पर लगाने पर सूख जाता है। बज्रलेप में श्वेत मिट्‌टी मिलाते है। तदनन्तर इस पर शंख का चूर्ण और मिश्री का चूर्ण लगाकर दीवार को चिकना करते हैं। नीलगिरि से प्राप्त भग नाम श्वेत द्रव्य का प्रयोग भी किया जाता है। चित्र के रंगों को स्थायित्व देने के लिए- ईटों का चूर्ण, साधारण मिट्‌टी, गुग्गुलु, मोम, महुये का रस, गुड़, कुसुम्भ का तेल और चूने का घोटकर, कच्चे बेल का तेल मिलाकर, अनुमान से बालुका डालकर, इससे दीवार को एक महीने तक धीरे-धीरे घोटना चाहिए।[6]

स्थिति–

बादामी की गुफाएँ[7] 'बीजापुर जिले' के अन्तर्गत 'आइहोल' के निकट 'महाराष्ट्र प्रान्त' में स्थित हैं। आज 'वात्यपिपुरम' नामक स्थान का आधुनिक नाम 'बादामी' है।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि :-

वाकाटक शासकों के पश्चात् दक्षिण में शक्तिशाली चालुक्य वंश का उदय हुआ। चालुक्य वंश में 'पुलकेशियन प्रथम' उसके पुत्र 'कीर्तिवर्मन' और 'कीर्तिवर्मन' का पुत्र 'पुलकेशियन द्वितीय' प्रतापी राजा हुये। कीर्तिवर्मन के मरणोपरांत उसका छोटा भाई 'मंगलेश' चालुक्य साम्राज्य का शासन बना और उसने 'वात्यपिपुरम' को अपनी राजधानी बनाया। कलाओं का महान् सरंक्षक होने की वजह से उसके राज्य काल में महाबलीपुरम, कांचीपुरम तथा बादामी की चौथी गुपफा बनकर तैयार हुई। यह गुफा चित्रकारी, वास्तु एवं शिल्पसज्जा (मुख्य मंडप) की दृष्टि से श्रेष्ठ मानी जाती है।

इस गुफा में मंगलेश' के शासन काल के बारहवें वर्ष का लेख[8] प्राप्त हुआ है, जिसका समय 579 ई. है। इसके आधार पर इस गुफा का समय 579 ई. निश्चित किया जाता है। इस अभिलेख से बादामी की गुफा के निर्माण के सम्बन्घ में पर्याप्त सूचना है, जिसके अनुसार चौथी गुफा के मुख्य मंडप में विष्णु की प्रतिमा भी स्थापित की गई और मन्दिर में पूजा-पाठ के लिये अनुदान स्वरुप 'लन्जीसवाड़ा' नामक ग्राम की जागीर इस मन्दिर के प्रबंध के लिये बाँधी गई।

बादामी के अलंकरण संबंधी अभिलेखों से स्पष्ट है कि मंगलेश की सभी के चित्रकार वाकाटकों के समय से चली आ रही परम्पराओं का पालन कर रहे थे।

बादामी चित्रों की खोज का श्रेय 'डॉ. स्टेला क्रेमरिश'[9] को है। चालुक्य द्वारा बादामी में चार गुफा मन्दिर हैं, जिनमें एक जैन धर्म से और तीन ब्राह्मण धर्म से संबंधित हैं। इस प्रकार ब्राह्मण धर्म से सम्बन्धित चित्रणों में अब तक के ज्ञात उदाहरणों में से ये

सबसे प्राचीनतम् हैं।

हालाँकि बादामी गुफा के चित्र काफी पुराने हैं और काल की इतनी लम्बी अवधि ने चित्रों को धुंधला अवश्य किया है, फिर भी उनका कलात्मक महत्त्व आज भी बरकरार है और चित्रों का कौशल, चारुता एवं बारीकी से की गई कारीगरी अनायास ही मन मोह लेती है।

बादामी की गुफाओं की शैली–

समालोचकों के अनुसार चित्रों की छः[10] शैलियां है - नागर, द्राविड, व्यन्तर बेसर कलधैं और यामुन। अनेक समालोचकों ने प्राचीन चित्रों की दो शैलियां कही है - बौद्ध और ब्राह्मण। जिन चित्रों में बौद्ध धर्म से सम्बन्धित चित्र है, वे बौद्धशाली के है। ब्राह्मण या हिन्दू धर्म से सम्बन्धित भक्तिप्रवण चित्र श्रृंघौर आदि भावों की अभिव्यक्ति चित्र ब्राह्माण शैली के है।

बादामी की शैली अजन्ता और बाघ की श्रेणी में आती है परन्तु उत्कृष्टता और मृदुता की दृष्टि से उस स्तर की नही हुई है। इन गुफा चित्रों की भावोत्पात्रता अपनी विशिष्टता के लिए प्रसिद्व हैं।

बादामी गुफाओं की विशेषताएँ–

सामान्य रुप से यदि इन गुफाओं का मूल्यांकन किया जाय तो इनकी शैली अजन्ता और बाघ शैलियों की श्रेणी में आती है परन्तु उत्कृष्टता और मृदुता की दृष्टि से उस स्तर की नही हुई है। इन गुफा चित्रों की भावोत्पत्राता अपनी विशिष्टता के लिए प्रसिद्ध हैं। इन गुफा चित्रों में परवर्ती चित्रों के विपरीत अतिभंग और पौने दो चश्म चेहरों का कम प्रयोग हुआ है। दुहरी भौहों का आलेखन इन चित्रों में विशेष रुप से पाया जाता है। एक विद्वान ने तो कहा है कि,[11] ''बादामी के चित्रों से स्पष्ट होता है कि भारतीय चित्र विधि अब परम्परा और रुढ़ियों से अनुबंद्ध होने लगी और स्वातन्त्र्य शिथिल हो गया है।'' इन भित्ति चित्रों में परिणाम कम है और रंगावली ज्यादा सीमित है। इतना अवश्य कहा जायेगा कि अजन्ता की ही भांति लौकिकता के पीछे आध्यत्मिकता और बौद्धिक तटस्थता के दर्शन बादामी में भी होते है और आकृतियों के चित्रण की प्रखरता की दृष्टि से बादामी अजन्ता से पीछे नही है।

बादामी गुफा के चित्र–

पहला दृश्य[12]:- प्रथम विशाल पैनल में महल का दृश्य अंकित है, जिनमें केन्द्र में प्रदर्शित सिंहासनारुढ़ राजा-रानी संगीत-नृत्य का आनन्द ले रहे हैं। कुछ दर्शक इस कार्यक्रम को उपर झरोखों से देख रहे हैं। केन्द्रीय आकृति कोमल, नीलिमा युक्त हरे रंग की है, जिसका धड़ और हाथ ही अवशिष्ट रह गये हैं। मुख की चित्रकारी समाप्त हो गई है, केवल मुकुट शेष है। शरीर पर चालुक्य पद्धति की अनेक मालाएँ और यज्ञोपवीत हैं, नीचे अन्य व्यक्ति बैठे हैं तथा इधर-उधर चँवर धरिणियाँ भी अंकित हैं।

बायी ओर 'इन्द्र सभा' का चित्रण है, जिसमें इन्द्र स्तम्भ युक्त मण्डप में सिंहासन पर बैठे हुये हैं। पीछे यवनिका के सदृश्य पर्दा भी टंगा है। स्त्रियों की संगीत मण्डली वाद्य-यंत्र बजा रही है और इनके मध्य एक युगल नृत्य द्वारा इन्द्र को आसक्त करने का प्रयत्न कर रहा है।

दूसरा दृश्य[13]:- दूसरे पैनल में सिंहासन पर एक राजा किंचित विश्राम की स्थिति में

लीलासन की मुद्रा में है। उसका एक पैर पाद-पीठ पर व दूसरा सिंहासन पर रखा है। निकट में अनेक राजकुमार बैठे हैं। एक दासी दण्ड लिये खड़ी है। दूसरी ओर रानी सिंहासन पर अलसायी मुद्रा में बैठी है, जिसका सिंहासन राजा के सिंहासन से कुछ नीचा है। चारों ओर शृंगार प्रसाधिकाएँ बिखरी पड़ी हैं। एक दासी रानी के पैर पर अलक्तक लगा रही है। रानी गौर वर्ण की है तथा उसके केश सुन्दर ढंग से संवारे गये हैं। उपरोक्त दृश्य सम्भवतः कीर्तिवर्मन परिवार का प्रतीत होता है। यूं भी मंगलेश अपने बड़े भाई कीर्तिवर्मन का अत्यध्कि सम्मान करता था और यह चित्र इसी का उदाहरण स्वरुप प्रमाण है।

शिलालेख में मंगलेश ने इस गुफा का समस्त वैभव अपने अग्रज को ही समर्पित किया है। गुफा के निकट ही 'वराह की प्रतिमा' है।

अन्य पैनल[14]:- बादामील गुफा के अन्य पैनलों में जो खण्डित चित्र बचे हैं, उनमें 'आकाशधारी विद्याधर' विशेष उल्लेखनीय है। इस चित्र की पृष्ठभूमि भ्रमणशील बादलों द्वारा चित्रित की गई है, जिसमें विद्याधर के उड़ते हुये युगलों का दृश्य अंकित है। यहाँ हाथों का अंकन मुद्रापूर्ण हुआ है।

एक स्थान पर खम्भे के सहारे खड़ी एक 'विरहिणी रमणी'[15] की आकृति भी अंकित है, जो किसी की स्मृति में लीन है। ऐसा प्रतीत होता है जैसे उसकी आँखों में वेदना का गहरा ज्वार भरा हुआ है। यह चित्र भावोत्पन्ना के लिये विशेष प्रसिद्ध है। शिव-पार्वती के अनके प्रसंग भी यहाँ चित्रित हैं।

बादामी भित्ति चित्रों की प्रतिकृतियाँ-

ललित कला अकदामी के निमन्त्रण पर भारत के प्रसिद्ध चित्रकार स्वर्गीय 'जे.एल. अहिवासी' तथा उनके सहायकों ने बादामी के भित्ति चित्रों की प्रतिकृतियाँ तैयार की।

बादामी चित्रों का विश्लेषणात्मक अध्ययन-

निष्कर्ष-

उपरोक्त चित्रों का यदि मूल्यांकन किया जाये तो बादामी के चित्र, कला की दृष्टि से बहुत अभिव्यक्तिपूर्ण हैं। इनका चित्रण विधान, बाघ और अजन्ता शैलियों से काफी मिलता-जुलता है। अजन्ता की ही भाँति लौकिकता के पीछे आध्यात्मिकता और बौद्धिक तटस्थता के दर्शन बादामी में भी होते हैं, किन्तु चित्र उत्कृष्टता और मृदुता की दृष्टि से उस स्तर के नहीं पाये गए हैं। आकृति रचना में कुछ अनुपातहीनता अवश्य दिखाई देती है। आकृतियों के चित्रण की भाव व्यंजना प्रखरता की दृष्टि से अति सुन्दर है।

कला इतिहासकार 'पर्सी ब्राउन' ने बादामी गुफाओं के विषय में लिखा है कि ''बादामी गुफाओं के भीतर आकार, उनके वैभव को देखकर, मनुष्य सचमुच चकित हुये बिना नहीं रहता।''

==============

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची-

1. रीता प्रताप, भारतीय चित्रकला एवं मुर्तिकला का इतिहास, जयपुर (2014), पृ. 97।
2. डॉ. बी.सी. पांडे, प्राचीन भारत का इतिहास, मेरठ 1974, पृ. 165।
3. रामजी उपाध्याय, प्राचीन भारतीय साहित्य की सांस्कृमिक भूमि।
4. विष्णुध्र्मोत्तर पुराण।

5. हजारी प्रसाद द्विवेदी, प्राचीन भारत के कलात्मक विनोद (1952), पृ. 64।
6. कामसूत्र, 1.3.16 पर जयमंगला टीका।
7. वाचस्पति गैरोला, भारतीय चित्रकला, दिल्ली (1990), पृ. 122।
8. रीता प्रताप, भारतीय चित्रकला एवं मुर्तिकला का इतिहास, जयपुर (2014), पृ. 95।
9. रीता प्रताप, भारतीय चित्रकला एवं मुर्तिकला का इतिहास, जयपुर (2014), पृ. 95।
10. द्विजेन्द्रनाथ शुक्ल, भारतीय स्थापत्य, पृ. 563।
11. विद्यासागर, उपाध्याय, भारतीय कला की कहानी, जयपुर, 1993, पृ.19।
12. रीता प्रताप, भारतीय चित्रकला एवं मुर्तिकला का इतिहास, जयपुर (2014), पृ. 95।
13. विद्यासागर, उपाध्याय, भारतीय कला की कहानी, जयपुर, 1993, पृ.19।
14. रीता प्रताप, भारतीय चित्रकला एवं मुर्तिकला का इतिहास, जयपुर (2014), पृ. 95।
15. विद्यासागर, उपाध्याय, भारतीय कला की कहानी, जयपुर, 1993, पृ.19।

Research Journal of Arts, Management and Social Sciences,
Vol. XVIII, Hindi.-I, Year IX, March, 2018
UGC Sl. No. 2138, Journal No.48774, Impact Factor 2.996

विष्णु पुराण में शिल्प एवं उद्योग का ऐतिहासिक अध्ययन

* अदिति रत्नावत

सारांश– *शिल्पियों के लिए अलग से व्यवहृत होने वाला आब्द 'कारू' था। मनुस्मृति में इस वर्ग के लिए कारू तथा कारूक दोनों ही शब्द प्राप्त होते हैं। विष्णु पुराण में एक स्थल पर प्राप्त विवरण से तेल निर्माण उद्योग के बारे में पता चलता है। स्वर्णकारों तथा आभूषण बनाने वालों का सर्वप्रथम उल्लेख बाजसनेय संहिता में प्राप्त होता है जो इस उद्योग की प्राचीनता का परिचायक है। कल्याणी दास ने अनेक ऐसे अभिलेखों को उद्धृत किया है जो स्वर्णकारों तथा उसकी गतिविधियों से सम्बन्धित है। आभूषण उद्योग के साथ एक और उद्योग जुड़ा हुआ था, वह था कीमती पत्थरों का, जिनका वर्णन पुराणों में मणियों के रूप में हुआ है। आभूषण उद्योग की ही भांति, वस्त्रोद्योग भी उन्नति पर था। साधारणतः तीन प्रकार के वस्त्र समाज में प्रचलित थे, पहला मृग चर्म तथा वत्कल जो गरीबों एवं श्रमिकों द्वारा प्रयुक्त होता था, दूसरी सूती वस्त्र जिसका प्रयोग सामान्य जन करते थे तथा तीसरा क्षीम अथवा रेशम था जो राजाओं तथा सामान्तों द्वारा प्रयुक्त होता था।*

शिल्पियों के लिए अलग से व्यवहृत होने वाला शब्द 'कारू' था। मनुस्मृति में इस वर्ग के लिए कारू[1] तथा कारूक[2] दोनों ही शब्द प्राप्त होते हैं। विष्णु पुराण में देवताओं के शिल्पी विश्वकर्मा को सहस्त्रों शिल्पों का कर्ता माना गया है।[3] विश्वकर्मा को समस्त शिल्पियों में श्रेष्ठ तथा उनके द्वारा आविष्कृत शिल्प विधा को बहुत से व्यक्तियों के जीवन निर्वहन का आधार वर्णित किया है।[4] पुराण का शिल्पियों से विश्वकर्मा को सम्बन्धित करना तथा शिल्प को बहुत से व्यक्तियों के जीवन निर्वहन का आधार वर्णित करना, शिल्प के विकास को ही प्रदर्शित करता है। वायु पुराण में भी शिल्प तथा शिल्पी को विश्वकर्मा से सम्बन्धित करते हुए, उसे मनुष्यों की जीविका का आधार वर्णित किया गया है।[5]

विष्णु पुराण में एक स्थल पर प्राप्त विवरण से तेल निर्माण उद्योग के बारे में पता चलता है। एक प्रसंग में विवृत्त है कि तिल में तेल स्वाभाविक करता है फिर भी वायु रूपी रश्मियां उसे घुमाती रहती है। यह क्रिया तेल संपीड़न के समान होती है जिसके लिए स्वयं घूमता हुआ भी चक्का घुमाया जाता है।[6] तेल उद्योग काफी उन्नतिशील था। काली और सफेद सरसों[7], तिल[8], अलसी[9] और इंगुदी[10] का तेल निकाला जाता था। इंगुद का तेल दीपक जलाने के अतिरिक्त फंसी फोड़ों[11] की चिकित्सा में काम लाया जाता था।[12] तेलियों की अपनी श्रेणियां थी। तैलियों की श्रेणियों के पास व्यक्ति, अपनी धनराशि को जमा कर देता था और जमा की गयी धनराशि का ब्याज भी आय से, श्रेणी मंदिर में दीपक जलाने का कार्य करती थी।[13] ब्राह्मण धर्म में दीप दान की महिमा वर्णित करते हुए, दीप प्रदान

* व्याख्याता (इतिहास) अलंकार पी.जी. गर्ल्स कॉलेज, जयपुर

करने वाले को स्वर्ण का अधिकारी वर्णित किया गया है।[14] दीप जलाने के इस महत्वपूर्ण कार्य को तैलिकों की श्रेणियों ही करती थी। तैलिक श्रेणियां कर का भुगतान 'तेल' के रूप में करती थी।[15]

विष्णु पुराण में एक स्थल पर विष्णु पुराण में विविध स्वरूपों एवं रूपों की व्याख्या करते हुए विदित है कि जिस प्रकार सुवर्ण भेद रहित और एक होकर भी कटक, मुकुट तथा कर्णिका आदि के भेद से नाना रूप प्रतीत होता है, उसी प्रकार एक ही हरि का देवता, मनुष्य और पशु आदि नाना विधि कलानाओं से निरूपित किया जाता है।[16] पुराण का यह कथन आभूषण निर्माण उद्योग की ओर संकेत करता है। एक अन्य स्थल पर विष्णु पुराण में सुवर्ण, मणि, रत्नादि अलंकारार्थ प्रयोजनीय उपकरणों के अभाव में, मात्र केश प्रसाधन कलियुगन हीन व्यवस्था का लक्षण घोषित है।[17] ऐसा प्रतीत होता है कि आभूषणों का भी सभी वर्गों में प्रयोग के कारण, इस शिल्प का विकास हुआ था। पुराणों में वर्णित है कि लक्ष्मी जब समुद्र से बाहर निकलीं तब विश्वकर्मा ने उनको दिव्य आभूषण प्रदान किये।[18] विष्णु पुराण में मुकुट[19], अपीड़[20], कुण्डल[21], कौत्सुभ मणि[22], वलय[23], कटक[24], केयूर[25], मुद्रिका[26] आदि आभूषणों का उल्लेख प्राप्त होता है। किरीट सिर पर धारण करने वाला आभूषण था, देवता एवं चक्रवर्ती राजा इसे धारण करते थे, मुकुट भी राजा एवं सामन्तों द्वारा सिर पर धारण किया जाना वाला आभूषण था। अजन्ता के भित्तिचित्रों में राजाओं तथा राजपुरुषों को मुकुटालंकृत प्रदर्शित किया जाता है।[27] स्त्री एवं पुरुष दोनों का ही कर्ण वेध संस्कार होता था।

अतः कुण्डल को दोनों वर्णों तथा समाज के सभी वर्णों द्वारा धारण किया जाता था।[28] अमरकोष के अनुसार कानों को लपेट कर इसको धारण करते थे।[29] जैन पुराणों में मणि कुण्डल, रत्न कुण्डल, मकराकृत कुण्डल, कुडल, मकरांकित कुण्डल तथा रत्न कुण्डल आदि विभिन्न प्रकार के कुण्डलों के भेदों को पता चलता है।[30] इसी प्रकार अन्य साक्ष्यों से पता चलता है कि हार कई प्रकार के होते थे तथा 505 लड़ियों वाले हार को विजयछन्दहार कहा जाता था।[31] जिसे अर्द्धचक्रवर्ती और बलभद्र आदि पुरुषों द्वारा प्रयुक्त किया जाता था।[32] जिसमें 108 लड़ियां होती थी, उसे हार कहा जाता था।[33] 64 लड़ियों वाले को अर्द्धहार[34] तथा 54 लड़ियों वाले को रश्मिहार,[35] सत्ताइस लड़ियों वाले को नक्षममालाहार,[36] चौबीस लड़ियों वाले को अर्द्धभाणवहार[37] कहा जाता था। नेमिचन्द्र शास्त्री ने हारों के विभिन्न 55 प्रकारों का वर्णन किया है।[38]

स्वर्णकारों तथा आभूषण बनाने वालों का सर्वप्रथम उल्लेख बाजसनेय संहिता[39] में प्राप्त होता है जो इस उद्योग की प्राचीनता का परिचायक है। कल्याणी दास ने[40] अनेक ऐसे अभिलेखों को उद्धृत किया है जो स्वर्णकारों तथा उसकी गतिविधियों से सम्बन्धित है। विभिन्न अवसरों में यहां तक कि ''बलि'' के अवसर पर भी स्वर्ण का प्रचुर मात्रा में प्रयोग किया जाता था।[41] अश्वमोघ ने स्वर्ण को शुद्ध करने तथा इससे विभिन्न प्रकार के आभूषणों के निर्माण का वर्णन किया है।[42] सोना संभवतः सबसे कीमती पुण्य अथवा धातु था, इसकी चोरी को महापातक माना गया है।[43] महापातक में ब्रह्म हत्या, सुरापान, गुरूतल्पगमन तथा ब्राह्मण से स्वर्ण की चोरी आते थे। मनु सामान्य चोरी की ही श्रेणी में स्वर्ण की चोरी रखते हैं।[44] विष्णु पुराण में भी स्वर्ण चोरी के प्रति कठोर रूख अपनाया गया है। पुराण के अनुसार स्वर्ण की चोरी करने वाला सूकर नरक में जाता है।[45] पूर्व

मध्यकालीन स्मृतियों में भी स्वर्ण चोरी के प्रति कठोर रूप अपनाया गया है।[46] इसकी व्याख्या सुवर्ण में आयी कमी के आलोक में की जा सकती है, रोम के साथ व्यापार में कमी तथा समुद्र यात्रा पर स्मृतियों द्वारा प्रतिबंध इसका एक कारण था।[47] कुषाण तथा गुप्त राजाओं ने बहुत से स्वर्ण मुद्राओं का प्रचलन कराया था। इन मुद्राओं का प्रचलन भारत तथा मध्य एवं पश्चिमी एशिया, इजिप्ट एवं रोम के मध्य प्रचलित आपसी व्यापारिक सम्बन्धों के लिए किया गया था। पूर्व मध्यकाल में स्वर्ण मुद्राओं की कमी विदेशी व्यापार में कमी की ओर संकेत करती है।[48]

आभूषण उद्योग के साथ एक और उद्योग जुड़ा हुआ था, वह था कीमती पत्थरों का, जिनका वर्णन पुराणों में मणियों के रूप में हुआ है। विष्णु पुराण में आभूषणों की अक्षीणता हेतु लक्ष्मी से प्रार्थना की गयी है।[49] पुराण में एक अन्य स्थल पर सुवर्ण, मणि तथा रत्न आदि का उल्लेख प्राप्त होता है।[50] इसके अतिरिक्त विष्णु को कौस्तुम[51] तथा स्यमन्तक[52] नामक मणि को धारण किया हुआ वर्णित किया गया है। महंगे और साधारण किस्म के रत्नों का प्रयोग, रत्न जडित आभूषणों तथा बर्तनों के निर्माण में किया जाता था।[53] दण्डी ने उल्लेख किया है कि धान की भूसी को चमकाने के काम में लाया जाता था।[54] वराह मिहिर ने हीरों, माणिक्य तथा मोतियों के गुण तथा उनके महत्व को वर्णित किया है।[55] आलोचित काल के ग्रन्थों में माणिक्य[56], नीलम[57], हीरा[58], वैदूर्य[59], पन्ना[60], फिरोजा[61] तथा स्फटिक[62] का उल्लेख प्राप्त होता है।

आभूषण उद्योग की ही भांति, वस्त्रोद्योग भी उन्नति पर था। साधारणतः तीन प्रकार के वस्त्र समाज में प्रचलित थे, पहला मृग चर्म तथा वत्कल जो गरीबों एवं श्रमिकों द्वारा प्रयुक्त होता था, दूसरी सती वस्त्र जिसका प्रयोग सामान्य जन करते थे तथा तीसरा क्षीम अथवा रेशम था जो राजाओं तथा सामान्तों द्वारा प्रयुक्त होता था। विष्णु पुराण में वर्णित है कि यज्ञानुष्ठान पर केशिध्वज ने मृग चर्म धारण किया था।[63] वायु पुराण में समुद्रशायी विष्णु का वस्त्र कृष्ण मृग चर्म बताया गया है।[64] मत्स्य पुराण भी कलियुग के संदर्भ में मृग चर्म वस्त्र का उल्लेख करता है।[65] कलियुग के संदर्भ में विष्णु पुराण वल्कल-बहुल वस्त्रों का उल्लेख करता है।[66] एक अन्य स्थल पर विहित है कि वानप्रस्थी को अपना परिधान और उत्तरीय वन सुलभ चर्म, कुश और काश से बनाना चाहिए।[67] ऐसा प्रतीत होता है कि कुछ रूढ़िवादी और परम्परावादी व्यक्तियों द्वारा मृग चर्म आदि से बने वस्त्रों का प्रयोग किया जाता रहा होगा, परन्तु इस संभावना से भी इंकार नहीं किया जा सकता कि ठंडे प्रदेशों में, बेगारी वाले मजदूर, निम्न वर्ग तथा आदिवासियों द्वारा इनका प्रयोग किया जाता रहा होगा। इत्सिंग काश्मीर से लेकर मध्य एशिया तक के लोगों ऊन एवं चमड़े से बने वस्त्रों वाला वर्णित करता है।[68]

विष्णु पुराण में श्रीकृष्ण को पीताम्बर धारण किए, वर्णित किया गया है।[69] इसी प्रकार बलराम के प्रसंग में उन्हें नीले वस्त्रों को धारण करने वाला वर्णित किया गया है।[70] यद्यपि कि विष्णु पुराण में रेशम का उल्लेख प्राप्त नहीं होता है। तथापि ऐसा प्रतीत होता है कि वे वस्त्र रेशम के बनते थे। पुराण में एक स्थल पर पीताम्बर को उज्ज्वल[71] वर्णित किया गया है तथा दूसरे स्थल पर निर्मित।[72] निश्चित रूप से यह रेशम से बना होगा क्योंकि जिस चमक और निर्मलता का विवरण प्रस्तुत किया गया है, वह रेशम का परिचायक है। मृदभाण्ड अथवा कुम्भकारी उद्योग, प्राचीन भारत के अनक लघु उद्योगों में से एक प्रमुख

उद्योग था, इस बात का प्रमाण, उत्खननों में प्राप्त साक्ष्य तथा साहित्यिक साक्ष्य, इस उद्योग की समृद्धि की ओर संकेत करते हैं। जातकों से पता चलता है कि कुछ ऐसे कुम्हार थे जो केवल राजभवन के लिए ही बर्तन का निर्माण करते थे और जिन्होंने अनेकों व्यक्तियों को अपनी सहायता के लिए लगा रखा था।[73] कुम्भकारों की अपनी श्रेणी थी, एक अभिलेख से इस उद्योग की समृद्धि और उन्नति के बारे में पता चलता है।[74] विष्णु पुराण में कच्चे घड़ों अथवा ईंटों को पकाने वालों का उल्लेख प्राप्त होता है।[75] कुम्भकारी से दो वस्तुएं जुड़ी हुई थी पहला दैनिक जीवन में प्रयोग होने वाले बर्तन इत्यादि तथा दूसरा मृण्मय मूर्तियां। जहां तक पहले वर्ग का प्रश्न है, यह उद्योग आलोचित युग में समृद्ध प्रतीत होता है। अहिछत्रा में हुए उत्खनन में दैनिक जीवन में प्रयोग आने वाली बहुत सी वस्तुएं दवात, लैम्प, तश्तरी, खाना पकाने वाले बर्तन तथा लोटा इत्यादि जो कि प्राचीनकाल एवं पूर्व मध्यकाल से सम्बन्धित प्राप्त हुई हैं[76], मृणमूर्तियों के बारे में देवांगना देसाई का मत है कि गुप्त एवं गुप्तोत्तर काल में व्यापार एवं वाणिज्य के पतन के कारण लोगों की क्रय शक्ति में ह्रास हुआ था, जिसके फलस्वरूप ''टेराकोटा'' उद्योग में पतन हो गया था।[77] नगरों के पतन के फलस्वरूप, इस उद्योग से सम्बन्धित व्यक्ति गांवों की ओर चले गये थे तथा ग्राम्य भृत्य बन गये थे जो अपना दाय, उत्पाद के रूप में पाते थे, नगद नहीं। ऐसी स्थिति में वे नगर के लिए नहीं अपितु ग्राम के लिए उत्पादन करते थे।[78] ऐसी स्थिति में बाजार के लिए विशेष उत्पादन का प्रश्न ही नहीं उठता है।[79] इस विषय में उल्लेखनीय है कि यह उद्योग आर्थिक रूप से निम्न वर्ग से सम्बन्धित था, अतः शहरों तथा व्यापार के पतन से इस पर उतना असर नहीं पड़ा होगा, जितना कि विद्वानों ने अवधारणा व्यक्त की है। मृणमूर्तियों तथा बर्तन उद्योग अपनी सहज उपलब्धता तथा सस्तेपन के कारण सामान्य जन में बहुत अधिक लोकप्रिय था।[80]

===============

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची–

1 अमरकोश 9, 10

2 वही 3, 189

3 वही 9, 19, वृहत्संहिता 5/75, 25/2

4 वही 9/20

5 अभिज्ञानशाकुन्तलम् अंक 4

6 फ्लीट : स्कन्दगुप्त का इंदौर लेख, पृ0 70, 8

7 सरकार से0इ0, स्कन्दगुप्त का इन्दौर ताम्रपत्र लेख पृ0 गोयल, श्रीराम, गुप्ताकलीन अभिलेख, पृ0 261

8 महा0अनु0 98/51

9 ए0इ0 1, पृ0 160

10 विष्णु पु0 3/7/16

11 वही 6/1/17

12 विष्णु पु0 1/9/104

13 वही 5/9/19, मुकुटाटोपमस्तकम्।

14 वही 5/6/32 बर्हिपत्रकृतापीडौ।

15 वही 5/18/41–स्फुरन्मकरकुण्डलम् 5/34/189 किरीटकुण्डलमधुरः।

16 वही, 1/22/68–विभर्ति कौत्सुभमणिरूपं भगवान्हरिः।

17 वही 5/13/51, 5/18/13

18 वही 4/15/13

19 वही, 4/15/13 केयूरहारकटकादिशोभित।

20 वही, 6/7/85, मुद्रिकारन्त भूषितम्
21 मोती चन्द्र : भारतीय भेष-भूषा, पझ्. 184
22 वझहस्प0 स्मझ0 संस्कार झलोक 101
23 अमरकोश 2/6/103-कुण्डलम् कर्णवेष्टनम्।
24 महा0 पु0 3/78, 3/102, 4/177, 16/33, 9/190, 33/124
25 महा पु0 16/57
26 वही 16/58, हरिवंश (जैन पु0) 7/89
27 वही 16/58
28 वही 16/58
29 वही 16/59
30 वही 16/59
31 वही 16/60
32 वही 16/61
33 शास्त्री, नेमिचन्द्र : आदि पुराण में प्रतिपादित भारत, पृ. 216
34 वा.सं. 30/7/17
35 दास (बाजपेयी) कल्याणी, अर्ली इन्सक्रिप्शन्स ऑफ मथुरा, पृ. 119-20
36 बन्धोपाध्याय, एन.सी. इकोनामिक लाइफ प्रोग्रेस इन एशियन्ट इण्डिया, भग-1, पृ. 154-55
37 सौनदरानंद 16/65
38 विष्णु 33/42
39 मनु 11/55, 3/257
40 विष्णु पु0 2/6/8
41 वही
42 ओशनस स्मृति, काणेः हि0घ0शा0, भाग-3, पझ0 934 पर उद्धृत
43 गोपाल, लल्लन जी, द इकॉनामिक लाइफ ऑफ नार्दन इण्डिया, पझ0 219
44 वही
45 विष्णु पु0 1/9/128
46 वही 6/1/17-सुवर्णमणिरलादी।
47 वही 1/22/68
48 वही 4/13/19
49 कादम्बरी (काले) पृ. 242
50 रायडर, डी0सी0, वही पृ. 171
51 बी0एस0
52 रायडर, वही पृ0 201
53 हर्ष चरित, पृ0 48
54 वही पृ0 117
55 वही पृ0 140
56 काद0 पृ0 19
57 वार्ट्स 1, पृ0 178
58 वही पृ0 178, हर्ष 230
59 विष्णु पु0 6/6/13-20
60 वायु पु0 25/32 कृष्णजनोत्तरासंगन्ददृशऽन्तर्जले हरिम्।
61 मत्स्य 144/72
62 विष्णु पु0 4/24/96 वल्कलपर्णचीरप्रावरण।
63 वही 3/9/20 चर्मकाश कुशैः कुर्यात्परिधानोत्तरीयके।
64 ताकाकाशुः वही पृ0 68
65 विष्णु पु0 5/17/21 - विभ्राणवाससी पीते।
66 वही 518/38 - दधान मसिते वस्त्रे।
67 वही 4/15/13 - उज्ज्वलपीतवस्त्रधार्थ।
68 वही 6/7/83 पीतनिर्मलवाससमृ

69 जातक 351

70 ल्यूडर्स लिस्ट नं. 1137

71 विष्णु 2/6/27-में चापकेषु वह्दिाः

72 ए. घोष तथा के.सी. पाणिग्रही एशियंट इण्डिया भाग-1, पृ. 37

73 देसाई, देवांगना, एशियंट इण्डियन टेरीकोटाज, हिस्ट्री एण्ड सोसाइटी, एस्सेज इन आनर ऑफ प्रोफेसर निहार रंजन रे, सम्पादित डी.पी. चट्टोपाध्याय, पृ. 163

74 शर्मा, आर.एस., इण्डियन फ्यूडलिज्म, पृ. 127

75 देसाई, देवांगना, वही पृ0 164

76 यादव, बी.एन.एस., सो.क.ना.इ. पझ. 266

77 विष्णु पु0 5/28/13 सहस्त्रमेकं निष्काणां रूक्मिणां विजितो बल।

78 वही 5/2/18 निष्क कोटिं समाददे।

79 वायु पु0 101/160, ब्रह्माण्ड पु0 4/2/162

80 शर्मा, आर.एस., द इण्डियन हिस्टारिकल रिव्यू भाग 1, 1974, पृ. 5

Research Journal of Arts, Management and Social Sciences,
Vol. XVIII, Hindi.-I, Year IX, March, 2018
UGC Sl. No. 2138, Journal No.48774, Impact Factor 2.996

गुप्तकालीन इतिहास के स्रोत

* संगीता सिंह

सारांश– *कुषाण साम्राज्य के विघटन के पश्चात् जिस विकेन्द्रीकरण के युग का प्रारम्भ हुआ वह चतुर्थ शताब्दी ईस्वी के प्रारम्भ तक चलता रहा। पश्चिमी पंजाब में यद्यपि कुषाण वंश का शासन था तथापि पूर्व की ओर उसका कोई प्रभाव नहीं था। गुजरात तथा मालवा के पश्चिमी भाग में शक अभी सक्रिय थे, परन्तु उनकी शक्ति का उत्तरोत्तर ह्रास होता जा रहा था। उत्तरी भारत के शेष भू-भाग में इस समय अनेक राज्यों एवं गणराज्यों का शासन था। सामान्यतः यह काल अराजकता, अव्यवस्था एवं दुर्बलता का काल था। देश में कोई ऐसी शक्तिशाली केन्द्रीय शक्ति नहीं थीं जो विभिन्न छोटे-बड़े राज्यों को विजित कर एकछत्र शासन-व्यवस्था की स्थापना कर सकती। यह काल किसी महान् सेनानायक की महत्वाकांक्षाओं की पूर्ति के लिये सर्वाधिक सुनहला अवसर प्रस्तुत कर रहा था। फलस्वरूप मगध के गुप्त राजवंश में ऐसे महान् सेनानायकों का उदय हुआ।*

गुप्त-इतिहास के साधन– भारतीय इतिहास में गुप्त शासकों ने पुनः सम्पूर्ण भारत को एक सूत्र में पिरोया। पूर्ववर्ती शासन काल में इतने विस्तृत भू-भाग में भारतीय नरेशों की शासन सत्ता स्थापित नहीं रही। ऐसे गुप्त वंशी शासकों ने सुव्यवस्था कायम कर देश की प्रगति में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया। ऐसे महान गुप्त शासकों ने अपने शासनकाल में अनेक निर्माण कार्य करवाए जिनके विवरण आज भी विभिन्न लेखों एवं पुरावशेषों में सुरक्षित हैं। गुप्त राजवंश का इतिहास हमें साहित्यिक तथा पुरातत्वीय दोनों ही प्रमाणों से ज्ञात होता है। साहित्यिक साधनों में पुराण सर्वप्रथम हैं। पुराणों में विष्णु, वायु तथा ब्रह्माण्ड पुराणों को हम गुप्त-इतिहास के पुनर्निर्माण में सहायक मान सकते हैं। इनसे गुप्तवंश के प्रारम्भिक इतिहास का कुछ ज्ञान प्राप्त होता है। विशाखदत्तकृत 'देवीचन्द्रगुप्तम्' नाटक से गुप्तवंशी नरेश रामगुप्त एवं चन्द्रगुप्त द्वितीय के विषय में कुछ सूचना मिलती है। अधिकांश विद्वान महाकवि कालिदास को गुप्तकालीन विभूति मानते हैं। उनकी अनेकानेक रचनाओं से गुप्तयुगीन समाज एवं संस्कृति पर सुन्दर प्रकाश पड़ता है। शूद्रककृत 'मृच्छकटिक' एवं वात्स्यायन के 'कामसूत्र' से भी गुप्तकालीन शासन व्यवस्था एवं नगर जीवन के विषय में रोचक सामग्री मिल जाती है।

भारतीय साहित्य के अतिरिक्त विदेशी यात्रियों का विवरण भी गुप्त-इतिहास के पुनर्निर्माण में सहायक हुआ है। ऐसे यात्रियों में फाहियान का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। वह चीनी यात्री था। फाहियान गुप्तनरेश चन्द्रगुप्त द्वितीय (375-415 ईस्वी) के शासन काल में भारत आया था। उसने मध्यदेश की जनता का वर्णन किया है। सातवीं

* रीवा (म.प्र.)

शती के चीनी यात्री हुएनसांग के विवरण से भी गुप्त इतिहास के विषय में कुछ सूचनायें मिलती हैं। उसने कुमारगुप्त प्रथम (शक्रादित्य), बुधगुप्त, बालादित्य आदि गुप्त शासकों का उल्लेख किया है। उसके विवरण से पता चलता है कि कुमार गुप्त ने ही नालन्दा महाविहार की स्थापना कारवायी थी। वह 'बालादित्य' को हूण नरेश मिहिरकुल का विजेता बताता है। इसकी पहचान नरसिंह गुप्त बालादित्य से की जाती है।

विभिन्न पुरातात्विक अवशेषों की सहायता से हम गुप्त वंशावली का निर्माण कर सकते हैं।

साहित्यिक साक्ष्यों के अतिरिक्त पुरातत्वीय प्रमाणों से भी हमें गुप्त राजवंश के इतिहास के पुनर्निर्माण में पर्याप्त सहायता मिलती है। इनका वर्गीकरण तीन भागों में किया जा सकता है- (1) अभिलेख, (2) सिक्के तथा (3) स्मारक। इनका विवरण इस प्रकार है-

(1) **अभिलेख**– अभिलेखों से सटीक जानकारी प्राप्त होती है क्योंकि वह तत्कालीन शासक द्वारा स्वयं रचित करवाई गई होती है अथवा उसके ही काल में किसी श्रेष्ठी जन द्वारा निर्मित करवायी जाती है। गुप्तकालीन अभिलेखों में सर्वप्रथम उल्लेख समुद्रगुप्त के प्रयाग स्तम्भलेख का किया जा सकता है। यह एक प्रशस्ति है जिससे समुद्रगुप्त के राज्याभिषेक, दिग्वजय तथा उसके व्यक्तित्व पर विशद प्रकाश पड़ता है। चन्द्रगुप्त द्वितीय के उदयगिरि से प्राप्त गुहालेख से उसकी दिग्विजय की सूचना प्राप्त होती है। कुमारगुप्त प्रथम के समय के लेख उत्तरी बंगाल से मिलते हैं जो इस बात का सूचक है कि इस समय तक सम्पूर्ण बंगाल का भाग गुप्तों के अधिकार में आ गया था। स्कन्दगुप्त के भितरी स्तम्भ-लेख से हूण आक्रमण की सूचना मिलती है। इसी सम्राट के जूनागढ़ से प्राप्त अभिलेख से पता चलता है कि उसने इतिहास-प्रसिद्ध सुदर्शन झील का पुनर्निर्माण करवाया था। इसके अलावा और भी अनेक अभिलेख एवं दानपत्र मिले हैं जिनसे गुप्त काल की अनेक महत्वपूर्ण बातों की जानकारी होती है। इन सभी अभिलेखों की भाषा विशुद्ध संस्कृत है तथा इनमें दी गयी तिथियाँ 'गुप्तसंवत्' की है। इतिहास के साथ ही साथ साहित्य की दृष्टि से भी गुप्त अभिलेखों का विशेष महत्व है। इनसे संस्कृत भाषा तथा साहित्य के पर्याप्त विकसित होने का प्रमाण मिलता है। हरिषेण द्वारा विरचित प्रयाग प्रशस्ति तो वस्तुतः एक चरित-काव्य ही है।

(2) **सिक्के**– अभिलेखों के अतिरिक्त सिक्के किसी इतिहास के ज्ञान के उत्तम स्रोत हैं। गुप्तवंशी राजाओं के अनेक सिक्के हमें प्राप्त होते हैं। ये स्वर्ण, रजत तथा तांबे के हैं। गुप्तकालीन स्वर्ण सिक्कों का सबसे बड़ा ढेर राजस्थान प्रान्त के बयाना से प्राप्त हुआ है। एलन[1], अल्टेकर[2] आदि विद्वानों ने गुप्तकालीन सिक्कों का विस्तृत अध्ययन किया है। अनेक सिक्कों पर तिथियाँ भी उत्कीर्ण मिलती हैं जिनके आधार पर हम तत्सम्बन्धी शासकों का तिथि निर्धारण कर सकते हैं। कुछ सिक्कों से कुछ विशिष्ट घटनाओं की सूचना मिलती है। जैसे एक प्रकार के स्वर्ण सिक्के के मुखभाग पर चन्द्रगुप्त एवं कुमारदेवी की आकृति तथा पृष्ठभाग पर 'लिच्छवयः' उत्कीर्ण मिलता है। इससे स्पष्ट होता है कि चन्द्रगुप्त ने लिच्छवि राजकन्या कुमारदेवी के साथ विवाह किया था। समुद्रगुप्त के अश्वमेध प्रकार के सिक्कों से उसके अश्वमेध यज्ञ की सूचना तथा चन्द्रगुप्त द्वितीय के व्याघ्र-हनन प्रकार के सिक्कों से उसकी पश्चिमी भारत (शक-प्रदेश) के विजय की सूचना मिलती है। मध्यप्रदेश के एरण तथा भिलसा से रामगुप्त के कुछ सिक्के मिलते हैं जिनसे हम उसकी ऐतिहासिकता

का पुनर्निर्माण करने में सहायता प्राप्त करते हैं।

कभी-कभी सिक्कों के अध्ययन से हमें उनके काल की राजनैतिक तथा आर्थिक दशा का भी ज्ञान प्राप्त होता है। जैसे कुमारगुप्त के उत्तराधिकारियों के सिक्कों से पतनोन्मुख आर्थिक दशा का आभास मिलता है। इनमें मिलावट की मात्रा अधिक है, जबकि प्रारम्भिक सिक्के शुद्ध स्वर्ण निर्मित हैं।[3]

(3) **स्मारक**– स्मारकों के अन्तर्गत प्राचीन पुरातात्विक अवशेष आते हैं। वे स्मारक किसी भी समय की राजनैतिक, आर्थिक तथा सामाजिक स्थिति को व्यक्त करते हैं। गुप्तकाल के अनेक मन्दिर, स्तम्भ, मूर्तियाँ एवं चैत्य-गृह (गुहा-मन्दिर) प्राप्त हुए हैं जिनसे तत्कालीन कला तथा स्थापत्य की उत्कृष्टता सूचित होती है। इनसे तत्कालीन सम्राटों एवं जनता के धार्मिक विश्वास को समझने में भी सहायता मिलती है। मन्दिरों में भूमरा का शिव मन्दिर (सतना), तिगवाँ (जबलपुर) का विष्णु मन्दिर, नचना-कुठार (मध्यप्रदेश का पन्ना जिला) का पार्वती मन्दिर, देवगढ़ (झांसी) का दशावतार मन्दिर, भितरगाँव (कानपुर) का मन्दिर तथा लाड़खान (ऐहोल के समीप) के मन्दिर विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। ये सभी मन्दिर अपनी निर्माण-शैली, आकार-प्रकार एवं सुदृढ़ता के लिये प्रसिद्ध है तथा वास्तुकला के भव्य नमूने हैं। मन्दिरों के अतिरिक्त सारनाथ, मथुरा, सुल्तानगंज, करमदण्डा, खोह, देवगढ़ आदि स्थानों से बुद्ध, शिव, विष्णु आदि देवताओं की मूर्तियाँ प्राप्त हुई हैं।[4] इनसे तत्कालीन तक्षणकला पर प्रकाश पड़ता है। साथ ही इन मूर्तियों में गुप्त नरेशों की धार्मिक सहिष्णुता भी सूचित होती है।

मन्दिर तथा मूर्तियों के साथ ही साथ बाघ (ग्वालियर, मध्यप्रदेश) तथा अजन्ता की कुछ गुफाओं (16वीं एवं 17वीं) के चित्र भी गुप्तकाल के ही माने जाते हैं। बाघ की गुफाओं के चित्र लौकिक जीवन से सम्बन्धित है जबकि अजन्ता के चित्रों का विषय धार्मिक है। इन चित्रों के माध्यम से गुप्तकालीन समाज की वेष-भूषा, श्रृंगार-प्रसाधन एवं धार्मिक विश्वास को समझने में सहायता मिलती है। साथ ही इनसे गुप्तयुगीन चित्रकला के पर्याप्त विकसित होने का भी प्रमाण उपलब्ध हो जाता है।

इस प्रकार साहित्य एवं पुरातत्व दोनों के माध्यम से हम 'गुप्तकालीन इतिहास का पुनर्निर्माण कर सकते हैं।

गुप्त राजवंश : प्रारम्भिक इतिहास–

गुप्त राजवंश की स्थापना लगभग 272 ईस्वी में महाराज गुप्त द्वारा की गयी थी। यह निश्चित रूप से नही कहा जा सकता है कि उसका नाम श्रीगुप्त था अथवा केवल गुप्त। उसका कोई भी लेख अथवा सिक्का नहीं मिलता। दो मुहरें जिनमें से एक के ऊपर संस्कृत तथा प्राकृत मिश्रित 'गुप्तस्य' तथा दूसरे के ऊपर संस्कृत में 'श्रीगुप्तस्य' अंकित है,[5] उससे संबंधित की जाती है परन्तु इस संबंध में निश्चित रूप से कुछ भी नहीं कहा जा सकता है।

गुप्तवंश का दूसरा शासक महाराज घटोत्कच हुआ जो श्रीगुप्त का पुत्र था। प्रभावती गुप्ता के पूना तथा सिद्धपुर ताम्रपत्रों में उसे ही गुप्त वंश का प्रथम शासक (आदिराज) बताया गया है। स्कन्दगुप्त के सुपिया (रीवा) के लेख में भी गुप्तों की वंशावली घटोत्कच के समय से ही प्रारम्भ होती है। इस आधार पर कुछ विद्वानों का सुझाव है कि वस्तुतः घटोत्कच ही इस वंश का संस्थापक था तथा गुप्त या श्रीगुप्त कोई आदि पूर्वज रहा होगा जिसके नाम का आविष्कार गुप्तवंश की उत्पत्ति बताने के लिये कर लिया गया होगा।

किन्तु इस प्रकार का निष्कर्ष तर्कसंगत नहीं है। गुप्त लेखों में इस वंश का प्रथम शासक श्रीगुप्त को ही कहा गया है। ऐसा प्रतीत होता है कि यद्यपि गुप्तवंश की स्थापना श्रीगुप्त ने की थी किन्तु उसके समय में यह वंश महत्वपूर्ण स्थिति में नहीं था। घटोत्कच के काल में ही सर्वप्रथम गुप्तों ने गंगाघाटी में राजनैतिक महत्ता प्राप्त की होगी। अल्तेकर तथा आर0जी0 बसाक का विचार है कि उसी के काल में गुप्तों का लिच्छवियों के साथ वैवाहिक संबंध स्थापित किया गया होगा। संभवतः इसी कारण कुछ लेखों में घटोत्कच को ही गुप्तवंश का आदि राजा कहा गया है। उसके भी कोई लेख अथवा सिक्के नहीं मिलते। इन दोनों शासकों की किसी भी उपलब्धि के विषय में हमें पता नहीं है। इन दोनों के नाम के पूर्व 'महाराज' की उपाधि को देखकर अधिकांश विद्वानों ने उनकी स्वतंत्र स्थिति में संदेह व्यक्त किया है तथा उन्हें सामन्त शासक बताया है। काशी प्रसाद जायसवाल का विचार है कि गुप्तों के पूर्व मगध पर लिच्छवियों का शासन था तथा प्रारम्भिक गुप्त नरेश उन्हीं के सामन्त थे। सुधाकर चट्टोपाध्याय के मतानुसार मगध पर तीसरी शती में मुरुण्डों का शासन था और महाराजगुप्त तथा घटोत्कच उन्हीं के सामन्त थे। लीट एवं बनर्जी की धारणा है कि वे शकों के सामन्त थे जो तृतीय शताब्दी में मगध के शासक थे। सर्वप्रथम चन्द्रगुप्त प्रथम ने ही गुप्तवंश को शकों की अधीनता से मुक्त किया था। इस प्रकार इन विविध मतमतान्तरों के बीच यह निश्चित रूप से बता सकना कठिन है कि प्रारम्भिक गुप्त नरेश किस सार्वभौम शक्ति की अधीनता स्वीकार करते थे। पुनश्च यह निश्चित नहीं कि वे सामन्त रहे ही हो। प्राचीन भारत में कई स्वतंत्र राजवंशों, जैसे लिच्छवियों, मघ, भारशिव, वाकाटक आदि के शासक भी केवल 'महाराज' की उपाधि ही ग्रहण करते थे। 'महाराजाधिराज' की उपाधि का प्रयोग सर्वप्रथम चन्द्रगुप्त प्रथम ने ही किया। ऐसा प्रतीत होता है कि शकों में प्रयुक्त क्षत्रप तथा महाक्षत्रप की उपाधियों के अनुकरण पर ही उसने ऐसा किया था। बाद के भारतीय शासकों ने इस परम्परा का अनुकरण किया तथा 'महाराज' की उपाधि सामन्त-स्थिति की सूचक बन गयी। वास्तविकता जो भी हो, इतना स्पष्ट है कि महाराज गुप्त तथा घटोत्कच अत्यन्त साधारण शासक थे जिनका राज्य संभवतः मगध के आस-पास ही सीमित था। इन दोनों राजाओं ने 319-20 ईस्वी के लगभग तक राज्य किया।

महाराज घटोत्कच का पुत्र और उत्तराधिकारी चन्द्रगुप्त प्रारम्भिक गुप्त शासकों में सर्वाधिक शक्तिशाली था। राज्यारोहण के पश्चात उसने अपनी महत्ता स्थापित करने के लिये अपने पूर्वजों के विपरीत 'महाराजाधिराज' की उपाधि ग्रहण की।

चन्द्रगुप्त ने लिच्छवियों के साथ संबंध स्थापित किए थे जिनका प्रमाण उसके स्वर्ण सिक्कों से मिलता है जिसे राजा-रानी प्रकार, विवाह प्रकार, लिच्छवी प्रकार आदि नामों से जाना जाता है।

गुप्त संवत् का प्रवर्तन-

चन्द्रगुप्त प्रथम को इतिहास में एक नये संवत् के प्रवर्तन का श्रेय भी दिया जाता है जिसे बाद के लेखों में 'गुप्त-संवत्' (गुप्त-प्रकाल)[6] कहा गया। लीट की गणना के अनुसार इस संवत् का प्रचलन 319-20 में किया गया था। इसके विपरीत शाम शास्त्री आदि विद्वान इसकी प्रारम्भ तिथि 200 अथवा 272 ईस्वी मानते हैं।

चन्द्रगुप्त प्रथम के पश्चात उसका सुयोग्य पुत्र समुद्रगुप्त साम्राज्य की गद्दी पर बैठा। वह लिच्छवि राजकुमारी कुमारदेवी से उत्पन्न हुआ था।[7] समुद्रगुप्त न केवल गुप्त वंश

के बल्कि सम्पूर्ण प्राचीन भारतीय इतिहास के महानतम शासकों में गिना जाता है। निःसंदेह उसका काल राजनैतिक तथा सांस्कृतिक दोनों ही दृष्टियों से गुप्त साम्राज्य के उत्कर्ष का काल माना जा सकता है।

स्रोत–

प्रयाग प्रशस्ति– समुद्रगुप्त के इतिहास का सर्वप्रमुख स्रोत प्रयाग में प्राप्त अभिलेख है जिसे 'इलाहाबाद स्तम्भलेख' अथवा प्रयाग प्रशस्ति कहा जाता है। इसकी रचना उसके संधिविग्रहिक सचिव हरिषेण ने की थी। कनिंघम के मतानुसार यह लेख मूलतः कौशाम्बी में खुदवाया गया था। इस मत के समर्थन में दो प्रमाण दिये गये हैं -

(1) अभिलेख के ऊपरी भाग में मौर्य शासक अशोक का एक लेख अंकित है जिसे उसने कौशाम्बी में खुदवाया था।

(2) चीनी यात्री ह्वेनसांग अपने प्रयाग विवरण में इसका उल्लेख नहीं करता।

मध्यकाल में मुगल शासक अकबर ने इसे कौशाम्बी से मंगाकर इलाहाबाद के किले में सुरक्षित करा दिया। इसमें अकबर के दरबारी बीरबल का भी लेख मिलता है।

प्रयाग प्रशस्ति के प्रारम्भ में अशोक का लेख मिलता है, इसमें बौद्ध संघ के विभेद को रोकने के लिये कौशाम्बी के महामात्रों को दिया गया आदेश है। तत्पश्चात समुद्रगुप्त का लेख अंकित है। यह ब्राह्मी लिपि में तथा विशुद्ध संस्कृत भाषा में लिखा हुआ है। प्रशस्ति की प्रारम्भिक पंक्तियाँ पद्यात्मक तथा बाद की गद्यात्मक है। इस प्रकार यह संस्कृत की चम्पू शैली का एक सुन्दर उदाहरण है। इसे काव्य कहा गया है। प्रशस्ति की भाषा प्रांजल एवं शैली मनोरम है। न केवल इतिहास अपितु साहित्य की दृष्टि से भी यह अभिलेख अत्यन्त महत्वपूर्ण है। प्रारम्भ में लीट ने यह मत व्यक्त किया था कि इस लेख की रचना समुद्रगुप्त की मृत्यु के पश्चात उसके किसी उत्तराधिकारी द्वारा करवायी गयी थी और इस प्रकार यह मरणोत्तर अभिलेख है। परन्तु आज इस मत से सहमत होना कठिन है। इसके तीन कारण हैं -

(1) इस लेख में समुद्रगुप्त की मृत्यु की तिथि नहीं दी गई है।

(2) इसमें अश्वमेध यज्ञ का उल्लेख नहीं मिलता जबकि समुद्रगुप्त के सिक्कों में पता चलता है कि उसने अश्वमेध यज्ञ किया था।

(3) अभिलेख के अन्त में यह उल्लिखित मिलता है कि 'इस काव्य की रचना उस व्यक्ति ने की है जो परमभट्टारक के चरणों का दास था तथा जिसकी बुद्धि स्वामी के समीप कार्यरत रहने के कारण खुल गयी थी।[8]

अतः उपर्युक्त प्रमाणों के प्रकाश में हम इस अभिलेख को मरणोत्तर नहीं मान सकते। वस्तुतः इसकी रचना समुद्रगुप्त के जीवन काल में ही की गयी थी। अभिलेख में समुद्रगुप्त के जीवन तथा कृतियों का विस्तृत विवरण प्राप्त होता है। कहा जा सकता है कि यदि यह लेख अप्राप्त होता तो समुद्रगुप्त जैसे महान शासक के विषय में हमारी जानकारी अधूरी रह जाती।

एरण का लेख– प्रयाग प्रशस्ति के अतिरिक्त मध्य प्रदेश के सागर जिले में स्थित एरण नामक स्थान से भी समुद्रगुप्त का एक लेख मिलता है जो खण्डित अवस्था में है। इसमें समुद्रगुप्त को पृथु राघव आदि राजाओं से बढ़कर दानी कहा गया है जो प्रसन्न होने पर कुबेर तथा रुष्ट होने पर यमराज के समान था। अभिलेख में उसकी पत्नी का नाम दत्तदेवी

मिलता है तथा उसे अनेक पुत्र पौत्रों से युक्त बताया गया है। इस लेख से यह भी पता चलता है कि ऐरिकिण प्रदेश (एरण) उसका 'भोगनगर' था।

उपर्युक्त लेखों के अतिरिक्त गया तथा नालन्दा से दो ताम्रलेख प्राप्त हुए हैं जिनमें क्रमशः गुप्त संवत 9 तथा 5 की तिथियाँ अंकित है। इनमें समुद्रगुप्त का नाम तथा उसकी कुछ उपलब्धियाँ उल्लिखित है। किन्तु इन लेखों में भाषा तथा व्याकरण संबंधी अनेक अशुद्धियाँ हैं और तिथि भी भ्रामक है। अतः लीट, डी0सी0 सरकार आदि विद्वानों ने इन दोनों ही ताम्रपत्रों को जाली घोषित किया है।[9]

मुद्रायें– समुद्रगुप्त की विविध प्रकार की मुद्रायें उसके जीवन एवं कार्यों पर सुन्दर प्रकाश डालती हैं। उसकी कुल छः प्रकार की स्वर्ण मुद्रायें हमें प्राप्त होती हैं -

(1) **गरुड़ प्रकार**– इसके मुख भाग पर अलंकृत वेष-भूषा में राजा की आकृति, गरुड़ध्वज, उसका नाम तथा मुद्रालेख 'सैकड़ों युद्धों को जीतने तथा रिपुओं का मर्दन करने वाला अजेय राजा स्वर्ग को जीतता है, (समश्शत विततविजयोजित- रिपुरिजतो दिवं जयति) उत्कीर्ण मिलता है। पृष्ठ भाग पर सिंहासनासीन देवी के साथ-साथ 'पराक्रम' अंकित है। इस प्रकार के सिक्के नागवंशी राजाओं के ऊपर उसकी विजय के संकेत देते हैं।

(2) **धनुर्धारी प्रकार**– इनके मुख भाग पर सम्राट धनुष-बाण लिये हुये खड़ा है तथा मुद्रालेख 'अजेय राजा पृथ्वी को जीतकर उत्तम कर्मों द्वारा स्वर्ग को जीतता है' (अप्रतिरथो विजित्य क्षिति सुचरितैः दिव जयति) उत्कीर्ण है। पृष्ठ भाग पर सिंहवाहिनी देवी के साथ उसकी उपाधि 'अप्रतिरथः' अंकित है।

(3) **परशु प्रकार**– मुख भाग पर बायें हाथ में परशु धारण किये हुये राजा का चित्र तथा मुद्रालेख 'कृतान्त परशु राजा राजाओं का विजेता तथा अजेय है' (कृतान्तपरशुर्जयतयजित राजजेताजितः) उत्कीर्ण है। पृष्ठ भाग पर देवी की आकृति तथा उसकी उपाधि 'कृतान्त परशु' अंकित है।

(4) **अश्वमेध प्रकार**– ये सिक्के समुद्रगुप्त द्वारा अश्वमेध यज्ञ किये जाने के प्रमाण हैं। इनके मुख भाग पर यज्ञ यूप में बंधे हुये घोड़े का चित्र तथा मुद्रालेख 'राजाधिराज पृथ्वी को जीतकर तथा अश्वमेध यज्ञ का अनुष्ठान कर स्वर्गलोक की विजय करता है' (राजाधिराजो पृथ्वी विजित्य दिवं जयत्या गृहीतवाजिमेधः) उत्कीर्ण है। पृष्ठ भाग पर राजमहिषी (दत्तदेवी) की आकृति के साथ-साथ 'अश्वमेध पराक्रम' अंकित है।

(5) **व्याघ्रहनन प्रकार**– मुख भाग पर धनुष बाण से व्याघ्र का आखेट करते हुये राजा की आकृति तथा उसकी उपाधि 'व्याघ्रपराक्रमः' अंकित है। पृष्ठ भाग पर मकरवाहिनी गंगा की आकृति के साथ-साथ 'राजा समुद्रगुप्त' उत्कीर्ण है। इस प्रकार के सिक्कों से जहाँ एक ओर उसका आखेट-प्रेम सूचित होता है, वहीं दूसरी ओर गंगा-घाटी की विजय भी इंगित होती है।

(6) **वीणावादन प्रकार**– मुख भाग पर वीणा बजाते हुये राजा की आकृति तथा मुद्रालेख 'महाराजाधिराज- श्रीसमुद्रगुप्त' उत्कीर्ण है। पृष्ठ भाग पर हाथ में कार्नकोपिया लिये हुये लक्ष्मी की आकृति अंकित है। इस प्रकार के सिक्कों से उसका संगीत-प्रेम सूचित होता है।

प्रारम्भ में विद्वानों का ऐसा विचार था कि समुद्रगुप्त की मृत्यु के पश्चात चन्द्रगुप्त द्वितीय विक्रमादित्य गुप्त साम्राज्य की गद्दी पर बैठा। परन्तु बाद में कुछ ऐसे साहित्यिक

एवं पुरातत्वीय प्रमाण प्रकाश में आये जिनके फलस्वरूप विद्वानों को अपनी धारणा बदलनी पड़ी तथा अब यह स्वीकार कर लिया गया कि समुद्रगुप्त तथा चन्द्रगुप्त के बीच रामगुप्त नामक व्यक्ति ने थोड़े समय के लिये शासन किया था।

साहित्यिक साक्ष्य– इस घटना का सर्वप्रथम उल्लेख विशाखदत्त के देवीचन्द्रगुप्तम् नाटक मे हुआ है। यह नाटक अपने मूल रूप में तो प्राप्त नहीं होता किन्तु इसके कुछ अंश उद्धरण के रूप में 'नाट्य दर्पण' में मिलते हैं जिसकी रचना रामचन्द्र एवं गुणचन्द्र ने की थी। इन उद्धरणों की ओर सर्वप्रथम सिलवां लेवी ने इतिहासकारों का ध्यान आकर्षित किया था। इन उद्धरणों से ज्ञात होता है कि रामगुप्त कायर एवं अपने कुल के लिये कलंक था।[10] शकों ने उसे परास्त कर उसकी पत्नी ध्रुवदेवी की माँग की। रामगुप्त अपनी प्रजा की रक्षा करने के लिये ध्रुवदेवी को देने के निमित्त तैयार हो गया।[11] परन्तु चन्द्रगुप्त द्वितीय ने छद्मवेश में जाकर शकपति को मार डाला। तत्पश्चात वह उन्मत्त अवस्था में विचरण करने लगा। एक बार राजमहल में जाकर उसने रामगुप्त को भी मार डाला। बाणभट्ट के हर्षचरित में इस घटना की चर्चा करते हुए बताया गया है कि 'अरिपुर में दूसरे की पत्नी का इच्छुक शकपति की स्त्रीवेशधारी चन्द्रगुप्त ने हत्या की।'[12] दसवीं सदी के लेखक राजशेखर की काव्यमीमांसा में इस घटना का उल्लेख मिलता है जहाँ रामगुप्त को शर्मगुप्त तथा शकाधिपति को खसाधिपति कहा गया है। इसके एक श्लोक के अनुसार 'शर्मगुप्त नामक राजा पराजित हो जाने के कारण अपनी पत्नी ध्रुवस्वामिनी को खसाधिपति को समर्पित करने के लिये तैयार हो गया था। उसी हिमालय पर्वतमाला में कार्मिकेय ने अपने शत्रुओं का संहार किया जिससे नगरवधुयें उसके यश का गान करने लगी।'[13] यहां कार्तिकेय से तात्पर्य चन्द्रगुप्त से ही है। भोज ने अपने ग्रंथ श्रृंगारप्रकाश में भी इस घटना का उल्लेख किया है। तदनुसार 'स्त्री का कपट वेश बनाकर, शकपति की हत्या करने के लिये चन्द्रगुप्त शत्रु के शिविर अलिपुर में गया था।'[14] वह चन्द्रगुप्त के भाई की भार्या के लिये इच्छुक होने के कारण स्त्रीवेषधारी चन्द्रगुप्त द्वारा मारा गया।[15] ग्यारहवीं शताब्दी ईस्वी की अरबी भाषा की पुस्तक मुंजमल-उत-तवारीख में भी इस घटना का उल्लेख मिलता है। इस ग्रंथ की रचना अबुल हसन अली ने की थी तथा इसकी ओर सर्वप्रथम अल्टेकर ने विद्वानों का ध्यान आकर्षित किया था। यहाँ हमें रव्वाल और वर्कमारीश नामक दो भाइयों की कथा मिलती है जो देवीचन्द्रगुप्तम् नाटक की रामगुप्त-चन्द्रगुप्त वाली कथा से साम्य रखती है। दोनों को देखने से ऐसा लगता है कि अरबी लेखक उसी कथनक को थोड़े बहुत परिवर्तनों के साथ पुनः प्रस्तुत कर रहा है। यहां भी चन्द्रगुप्त जैसी स्थिति में बर्कमारीश अपने भाई के शत्रुओं का विनाश करता है तथा अन्ततोगत्वा भाई की हत्या और उसकी पत्नी से विवाह कर राजा बन जाता है।

अनेक विद्वान विशाखदत्त को चन्द्रगुप्त का ही समकालीन मानते हैं। वह सामन्तकुल का था उसे पिता का नाम महाराज भाष्करदत्त तथा पितामह का नाम सामन्त वटेश्वरदत्त मिलता है। राजसभा में रहने के कारण उसे राजनैतिक घटनाओं की भी पर्याप्त जानकारी रही होगी। हर्षचरित का साक्ष्य निश्चयतः ऐतिहासिक प्रतीत होता है। बाण ऐतिहासिक लेखक थे। उन्होंने मौर्य नरेश बृहद्रथ की उसके सेनापति पुष्यमित्र शुंग द्वारा तथा राज्यवध् र्नि की गौड़ नरेश शशांक द्वारा हत्या की घटनाओं का भी उल्लेख किया है और ये विवरण पूर्णरूपेण ऐतिहासिक हैं। अतः हमें चन्द्रगुप्त-ध्रुवदेवी वाले विवरण में भी संदेह नहीं करना

चाहिए। राजशेखर भी राजकवि थे। परम्परा के अनुसार श्रृंगारप्रकाश का रचयिता भोज स्वयं सम्राट था। अतः उसके विवरण काव्यात्मक होते हुये भी ऐतिहासिक घटनाओं को सुरक्षित किये हुए हैं।

अभिलेखीय साक्ष्य– यद्यपि रामगुप्त का कोई अभिलेख नहीं मिलता तथापि राष्ट्रकूटवंश के तीन अभिलेखों - संजन, काम्बे तथा संगली - में परोक्ष रूप से देवीचन्द्रगुप्तम् नाटक में उल्लिखित घटना की ओर संकेत किया है। संजन लेख राष्ट्रकूट नरेश अमोघवर्ष प्रथम का है तथा उसकी तिथि 871 ईस्वी है। इसके अनुसार 'कलियुग में गुप्तवंश में एक दानी राजा हुआ जिसने भाई की हत्या कर उसके राज्य तथा उसकी पत्नी दोनों का अपहरण किया। उसने एक लाख की संख्या के स्थान पर एक करोड़ की संख्या का उल्लेख करवाया था।'[16] काम्बे तथा संगली (930 तथा 933 ईस्वी) के लेख गोविन्द चतुर्थ के समय के हैं। इनमें राष्ट्रकूट नरेश गोविन्द चतुर्थ, जिसने 'साहसांक' की उपाधि ग्रहण की थी, की तुलना 'साहसांक' नामक किसी अन्य राजा के साथ की गई है। तदनुसार 'वह केवल त्याग व अतुल साहस में ही साहसांक की समता रखता था। अन्यथा समर्थ होने पर भी उसने अग्रज के प्रति क्रूरता का व्यवहार नहीं किया था। भाई की पत्नी के साथ गमनादि कुचरित्रों से उसने अपकीर्ति भी नहीं प्राप्त की थी। भय के कारण शौच-अशौच का ध्यान न रखते हुए उसने पिशाच व्रत का भी अनुष्ठान नहीं किया[17]..... आदि।' यदि हम सावधानी पूर्वक इन पंक्तियों का अवलोकन करें तो स्पष्ट होगा कि यहां गोविन्द की तुलना जिस 'साहसांक' नामक राजा से की गयी है उससे तात्पर्य गुप्तवंशी सम्राट चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य से ही है जो देवीचन्द्रगुप्तम् के अनुसार अपने अग्रज का हत्यारा था तथा जिसने उसकी पत्नी और राज्य दोनों ही पर अधिकार कर लिया था। इन लेखों में राजा का नाम 'साहसांक' मिलता है जो चन्द्रगुप्त है। इन उल्लेखों से स्पष्ट है कि इस समय (9वी-10वी शती) तक देश में रामगुप्त-चन्द्रगुप्त के घटना की स्मृति बनी हुई थी। यहां लेखक यह दिखाना चाहता है कि उसका आश्रयदाता सम्राट गोविन्द त्याग तथा साहस के अतिरिक्त अन्य बातों में 'साहसांक' से बढ़ कर था।

यहां उल्लेखनीय है कि बेसनगर (विदिशा) के पास स्थित दुर्जनपुर नामक स्थान से तीन जैन मूर्तियाँ प्राप्त हुई है जिनकी चरण चोटियों पर गुप्तकालीन लिपि में तीन लेख उत्कीर्ण हैं। इनमें 'महाराजाधिराज रामगुप्त' नामक एक राजा का उल्लेख मिलता है। इन लेखों की लिपि समुद्रगुप्त के एरण तथा चन्द्रगुप्त के उदयगिरि से प्राप्त लेखों में प्रयुक्त लिपि के ही समान है। अतः हम इस शासक की पहचान रामगुप्त से कर सकते हैं। ऐसी स्थिति में यह भी स्वीकार करना पड़ेगा कि अपने वंश के शासकों के विपरीत रामगुप्त जैन मतानुयायी था और यही उसके सैनिक दृष्टि से निर्बल होने का कारण रहा होगा। लगता है कि जैनमत के पोषक राष्ट्रकूट प्रदर्शित करते हुये उसके छोटे भाई चन्द्रगुप्त की निन्दा की है।

===============

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची–

1. कैटलॉग ऑफ द क्वावन्स ऑफ द गुप्त डायनेस्टी, 1914
2. ऑफ द गुप्त एम्पायर, 1957
3. के. सी. श्रीवास्तव, प्राचीन भारत का इतिहास तथा संस्कृति, युनाइटेड बुक डिपो, इलाहाबाद, 2001-02, पृ.

338

4. वी. एस. अग्रवाल, गुप्ता आर्ट, पृ. 132-148
5. रैप्सन : जर्नल ऑफ रायल एशियाटिक सोसायटी, 1905 पृ. 814
6. गुप्त-प्रकाले गणना विभाग- स्कन्दगुप्त का जूनागढ़ अभिलेख
7. महाराजाधिराज-श्रीचन्द्रगुप्तपुत्रस्य लिच्छविदौहित्रस्य महादेव्यां कुमारदेव्यामुत्पन्नस्यमहाराजाधिराज श्रीसमुद्रगुप्त। -भितरी का लेख
8. काव्यमेशामेव परमभट्टाराकपादानां दासस्य समीपपरिसर्पणानुग्रहोन्मीलितमते । - प्रयाग पशस्ति
9. फ्लीट : कार्पस इन्स्क्रिप्सनम् इन्डिकेरम, पञ्ज. 256 तथा सरकार : सेलेक्ट इन्स्क्रिप्शन्स, पृ. 64-65
10. पत्युः क्लीवजनेचितेन चरितेनानेनपुंसः।
11. प्रकशतिनामा वासनाय शकस्य ध्रुवदेवी सम्प्रदानेऽयुपगते।
12. अरिपुरे च परकलत्रं कामुकें कामिनिवेशगुप्तः चन्द्रगुप्तः ञाकपति अ ाातयत्।
13. दत्वा रुद्धगतिः खसाधिपतये देवी ध्रुवस्वामिनी,
    यस्मात्खण्डित साहसो निववृते श्रीशर्मगुप्तो नञ्रपः।
    तस्मिन्नेव हिमालये गिरिगुहाकोणक्वणित्किन्नरे,
    गीयन्ते तव कार्तिकेय नगरस्त्रीणां गणैः कीर्तयः।।
14. स्त्रीवेशनिहतः चन्द्रगुप्तः शत्रो स्कन्धवारं अलिपुर शकपतिवधयागमत्।
15. शकानामाचार्यः शकाधिपतिः चन्द्रगुप्तभातृजायां प्रार्थयमानः ध्रुवदेवीवेशधारिणा चन्द्रगुप्तेन व्यापादितः।
16. हत्वा भ्रातरमेव राज्यमहरद्देवी च दीनस्तथा।
    लक्षं कोटिमलेखयन्किल कलौ दाता स गुप्तान्वयः।। - संजन का लेख
17. सामर्थे सति निन्दिता प्रविहिता नैवाग्रजे क्रूरता,
    बन्धुस्त्रीगमनादिभिः कुचरितैरावर्जितनायशः।
    शौचाशौचपरांगमुख न च भिया पैशाच्यमंगीकृतं,
    त्यागेनासमसाहसै च भवने यः साहसांकोऽभवत्।।   - काम्बे का लेख

Research Journal of Arts, Management and Social Sciences,
Vol. XVIII, Hindi.-I, Year IX, March, 2018
UGC Sl. No. 2138, Journal No.48774, Impact Factor 2.996

गुप्तकालीन चित्रकला - अजन्ता के विशेष संदर्भ में

* भूपेश

सारांश- *स्वर्णिम गुप्तकाल में जो कलात्मक विकास हुआ उससे न केवल अन्य विधाओं की उन्नति हुई वरन चित्रकला की उत्कृष्ट उन्नति हुई जिससे अजन्ता के चित्रों को पहचान मिली। जिससे प्रभावित होकर सल्तनतकाल तथा मुगल काल के साथ-साथ आधुनिक उन्नति का दौर प्रारम्भ हुआ तथा चित्रकला को नई पहचान मिली।*

स्थापत्य कला की भांति चित्रकला भी सामाजिक वातावरण की अभिव्यक्ति है। अंतर केवल इतना है कि स्थापत्य कला सर्वमान्य के लिए प्रत्यक्ष दृष्टिगोचर है जबकि चित्रकला अप्रत्यक्ष, कुछ स्थान तथा व्यक्ति तक ही सीमित है।[1] डॉ. ताराचंद के अनुसार, ''चित्रकला दो परस्पर विरोधी भावनाओं, दुःख-सुख, सफलता-असफलता, लोक-परलोक, जीवन के प्रति आकर्षण-त्याग, महत्वाकांक्षा तथा मार्ग के बीच समन्वय है।[2] विद्वानों ने इसका उदभव तथा विकास ई.पू. प्राचीन भारतीय साहित्य-विनयपटिक, महाभारत, रामायण तथा अभिज्ञान शाकुन्तलम में ढूंढने का प्रयास किया है।[3] चित्रकारों की कला की सुंदर अभिव्यक्ति गुफाओं की दीवारों पर की गई है। गौतम बुद्ध का सम्पूर्ण जीवन गुफाओं तथा चैत्य कक्ष में चित्रित किया गया है। डॉ. वासुदेव अग्रवाल ने लिखा है कि, ''गुप्तकाल में चित्रकारी अपने पूर्ण विकास को पहुंच गई थी।''[4] महाकवि कालिदास ने चित्रकला की शिक्षा देने के लिए 'चित्राचार्य' शब्द का प्रयोग किया है।[5]

चित्रकला के प्रकार-

प्रमुखतया चित्र-कला दो प्रकार[6] की होती है। 1. प्रत्यक्ष चित्रकला- इसके अन्तर्गत सामने रखी हुई वस्तु का चित्रण किया जाता है। 2. भावगभ्य चित्रकला- इसके अन्तर्गत कल्पना के आधार पर चित्र बनाये जाते है। भारतीय साहित्य में चित्रकला की इन दोनों का वर्णन है।

चित्रण-प्रणाली के आधार पर चित्रकला को दो कोटियों में विभाजित किया है। 1. फेस्को और 2. टेम्परा चित्रकला। फ्रेस्को चित्रकला में चित्र गीले पर ही अंकित किये जाते है। टेम्परा चित्रकला के अर्न्तगत चित्र रंगो और सफेदी के सम्मिश्रण से अंकित किये जाते है।

चित्र साधारणतया दीवारों पर बनाये जाते थे। इस प्रकार की चित्रकला मूरल पेंटिंग कहा जाता है। दीवारो से उभरी हुई मूर्तियों पर जो चित्रण किया जाता है उसे रिलीफ पेंटिंग कहते है। दीवार के अतिरिक्त चित्र कपड़े के ऊपर भी बनाये जा सकते है। इस प्रकार के चित्रित चित्र को चित्रपट के नाम से पुकारा जाता है। कभी-कभी का काठ के खंडो के

* शोधार्थी, इतिहास, कुरूक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरुक्षेत्र।

ऊपर चित्रकला का प्रदर्शन किया जाता है। ये चित्रफलक कहलाते है। वात्स्यायन[7] ने ग्रंथ में चित्रकला के निम्नलिंग अंग बताये है :-

1. रूप-भेद - इसके अन्तर्गत चित्रण के पूर्व विषय के आकार-प्रकार और उनकी विशेषताओं का भली-भांति अध्ययन कर लिया जाता है।
2. प्रमाण - इसमें विषय का अनुपात और दृष्टिकोण निर्धारित किया जाता है।
3. भाव - चित्रण में बाहय शरीर के चित्रण के साथ भाव निरूपण का बड़ा महत्व है।
4. लावण्य योजना - इसमें चित्र को सुंदर बनाने के साधनों पर विचार किया जाता है।
5. सादृश्य - इसके अन्तर्गत वस्तु और चित्र में समानता लाने की चेष्टा की जाती है।

भारतीय चित्रकला की विशेषताएं- भारतीय चित्रकला की निम्नलिखित विशेषताएँ[8] बताई जा सकती है।

1. **अनामिकता**- प्राचीन भारत के जितने भी चित्र मिलते है, उनके कलाकारों के नाम अज्ञात है। कलाकारों ने निस्पृह भाव से अपनी कला का प्रदर्शन किया है। उनमें व्यक्तिगत रूप से नाम कमाने की कोई इच्छा न थी।

2. **रेखा-प्रधानता**- भारतीय चित्रकला रेखा-प्रधान है। चित्रकारों ने इनी गिनी रेखाओं के संगठन से ऐसे आकार और भाव प्रस्तृत किये है जो नितान्त स्वाभाविक है।

3. **प्राचीरांकन**- भारतीय कला का प्रदर्शन अधिकांशतः प्राचीरों (दीवारों) पर हुआ है। चित्रपटों और चित्रफलकों के उदाहरण नहीं के बराबर है।

4. **असाम्प्रदायिकता**- भारतीय चित्रकला के अन्तर्गत अधिकांश किसी एक सम्प्रदाय का नही, वरन् समस्त जन-समूह की विचार धाराओं और स्थितियों का चित्रण हुआ है। स्वयं बौद्ध कलाकारों ने भी धार्मिक चित्रों के साथ ही साथ बहुसंख्यक असाम्प्रदाय चित्रों का निर्माण किया है।

5. **अभिव्यक्ति-प्रधानता**- चित्र प्रमुखतया तीन दृष्टिकोण से बनाये जाते है। जिन चित्रों में बाहय शरीर के प्रदर्शन के ऊपर जोर दिया जाता है वे स्वरूप प्रधान चित्र कहलाते है। इस प्रकार के चित्र प्रमुखतया प्राचीन चीन में बनते थे। इनमें बाहरी सुंदरता के प्रदर्शन पर अधिक महत्व दिया जाता था। कुछ चित्र आदर्श रूप प्रदर्शित करने के लिए बनाये जाते है। वे प्रतिरूप-प्रधान कहलाते है। इस प्रकार के चित्रों के अधिकांश उदाहरण प्राचीन यूनान में मिलते थे। यूनानी कलाकारों ने साधारण मनुष्यों के चित्रण के स्थान पर प्रमुखतया आदर्श देवी-देवताओं और आदर्श पुरुषों के ही चित्र अधिक बनाये थे। तीसरी कोटि के अन्तर्गत वे चित्र आते है जिनका उद्धेश्य बाहय स्वरूप की अपेक्षा आंतरिक भावनाओं के प्रदर्शन का अधिक होता है। ये चित्र भावाभिव्यक्ति प्रधान चित्र कहलाते है। प्राचीन भारत में प्रमुखतया ऐसे ही चित्रों का निर्माण हुआ था।

6. **सांकेतिक भाषा का प्रयोग**- भारतीय चित्रकारों ने अपने चित्रों में गांवो को प्रदर्शित करने के लिए अनेक संकेतो का प्रयोग किया है। उदारणार्थ हीनयानी चित्रकारों ने सिंहासन, पादुकाओं, घोड़े अथवा छत्र इत्यादि के द्वारा महात्मा बुद्ध के अस्तित्व को प्रकट किया है। इसी प्रकार गुप्तकालीन चित्रकारों ने गंगा और यमुना के चित्रों द्वारा दोआब की सांस्कृतिक उत्कृष्टता को सूचित किया है।

गुप्तकाल के पूर्व की चित्रकला[9]-

भारतवर्ष के प्राचीन साहित्य से प्रकट होता है कि भारतवर्ष में चित्रकला का इतिहास

अत्यन्त प्राचीन है। एक साहित्यिक उदाहरण का उल्लेख है कि यमराज ने एक मरे हुए व्यक्ति को वापिस करने से इंकार कर दिया। इस पर ब्रह्मा ने उस मृतक का एक चित्र तैयार करवाया और उसी में प्राण डाल दिये। इसी प्रकार के दूसरे साहित्यिक उदाहरण में कहा गया है कि उषा देवी ने स्वप्न में एक अत्यन्त सुंदर नवयुवक देखा। दूसरे दिन उसकी सखी चित्रलेखा ने संसार के सभी सुंदर देवताओं और नवयुवकों के चित्र बना डाले। उनमें से एक चित्र को देखकर उषा देवी ने स्वप्न में देखे हुए व्यक्ति को पहचान लिया। वह कृष्ण का पौत्र अनुरूद्ध था। कालान्तर में उसी के साथ उषा देवी का विवाह हुआ।

इसी प्रकार रामायण से प्रकट होता है कि अनेक भवनों की दीवारें चित्रों से अलंकृत की जाती थी। बौद्ध ग्रन्थ विनयपिटक से प्रकट होता है कि राजा ने एक चित्रागार बनवाया था। तिब्बती लेखक तारानाथ का कथन है कि महात्मा बुद्ध की मृत्यु के पूर्व ही चित्रकला की उन्नति हो चुकी थी।

इन साहित्यिक साक्ष्यों की पुष्टि प्राचीन काल के प्राप्त अनेक चित्रों से हो जाती है। इनमें सक कुछ पाषाणकालीन प्रतीत होते है- 1. मध्य प्रदेश की पहाडियों पर कुछ कन्दरायें मिली है। इनमें चित्रों की कुछ रेखाएं आज भी मौजूद है। 2. विन्ध्याचल की पहाडियों पर कुछ अस्पष्ट चित्रों के अवशेष है। मध्य प्रदेश के रायगढ के चित्रों में मनुष्यों, हिरणों, हाथियों और खरगोशों के चित्र अधिक साथ दिखाई देते है। कुछ चित्र शिकार के है। 4. मिर्जापुर में कुछ कन्दराये मिली है। उनके भीतर भी आखेट के कुछ चित्र मिले है। यह आश्चर्य की बात है कि ये चित्र स्पेन के कुछ प्राचीन चित्रों से मिलते जुलते है।

उपर्युक्त चित्रों की तिथि के विषय में कुछ निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता। हां, रायगढ़ की जोगीमारा कन्दरा के भीतर जो चित्र मिले है उनकी तिथि के विषय में विद्वानों ने कुछ अनुमान लगाया है। यह तिथि 100 ईसवी पूर्व के लगभग बताई जा सकती है।

गुप्तकाल में चित्रकला (अजन्ता के विशेष संदर्भ में)

गुप्तकालीन गुफाएं भी बहुत प्रसिद्ध है। इनमें से सबसे प्रसिद्ध अजन्ता की गुफाएं है। ये गुफाएं भूतपूर्व निजाम हैदराबाद में है। ये गुफाएं पहाड़ को काटकर बनाई गई है। इनमें बडे-बड़े कमरे है और इनकी दीवारों पर अत्यन्त सुंदर चित्रकारी है। अजन्ता में कुछ गुफाएं तो केवल उपासना के लिए बनाई गई थी और कुछ भिक्षुओं के रहने तथा अध्ययन करने के लिए।

प्रसिद्ध कलाविद राथेन्सटीन ने लिखा है कि, ''इन चट्टानों से कटे मंदिरों की सैकडो दीवारों एवं स्तम्भों पर हम विशाल नाटक देखते है जिस राजकुमारों, ऋषियां और नायकों तथा प्रत्येक प्रकार के पुरूषों तथा स्त्रियों ने विभिन्न पृष्ठभूमि में अभिनीत किया है।[10]

इस युग की चित्रकला के इतिहास प्रसिद्ध उदाहरण आधुनिक महाराष्ट्र प्रान्त के औरंगाबाद के फर्दापुर गांव से दक्षिण पश्चिम 4 मील की दूरी पर अजन्ता स्थित है।[11] यहां चट्टान काटकर 29 गुफाएं बनाई गई है। 1819 ई. में मद्रास सेना में कुछ यूरोपीय सैनिकों ने इनकी खोज की थी। 1824 ई. में जनरल सर जेम्स अलैग्जेंडर ने रायल ऐशियाटिक सोसायटी की पत्रिका के माध्यम से प्रथम बार इनका विवरण प्रकाशित कर संसार को अजन्ता के दुर्लभ चित्रों की जानकारी दी।[12]

अजन्ता की चित्रकला की विशेषताएं-

1. पेशेवर कलाकारों के अतिरिक्त उच्चवर्गों के पुरूष और महिलाएं तूलिका का प्रयोग करते थे।
2. अजन्ता के कलाकारों को मनुष्यों और पशुओं की आकृतियों के चित्रण में कमाल हांसिल था।
3. छतों, पाद-स्तंभों, दीवारों, खिड़कियों आदि की सजावटों को देखने से ही पता चल जाता है कि उस युग के कलाकार कितने दक्ष, कल्पनाशील और मर्मज्ञ थे।
4. अजन्ता के भित्ति-चित्रों की विषय-वस्तु धार्मिक चेतना को व्यक्त करती है।
5. अजन्ता में राजाओं, सामंतो, योद्धाओं और ऋषियों के जीवन के नाटकीय रूपों के भी दर्शन किये जा सकते है।
6. इन चित्रों में मुख्यतः उच्चवर्गीय जीवन-चेतना को व्यक्त किया गया है। इनमें ग्रामीण जीवन के दुःख दर्द की अभिव्यक्ति नही है।

अजन्ता के चित्र-

गुप्तकालीन चित्रकला के सर्वोत्कृष्ट उदाहरण[13] अजन्ता की गुफाओं में मिलते है। भारतीय चित्रकला के जो उदाहरण पहले दिये गये है, उनकी अपेक्षा अजन्ता की गुफाओं के उदाहरण कहीं अधिक विकसित हैं।

प्रारम्भ में अजन्ता की सभी 29 गुफाओं में चित्र बने थे, परन्तु अब एकमात्र 6 गुफाओं के अवशिष्ट रहे है, बाकी सब नष्ट हो गये है। ये चित्र पहली, दूसरी, नवीं, दसवीं, सोलहवीं गुफाओं में मिलते है। इन गुफाओं के चित्रों का काल भी भिन्न-भिन्न है। नवीं और दसवीं गुफाओं के चित्र सम्भवतः ईसा की प्रथम शताब्दी के है। सोलहवीं और सत्रहवीं गुफाओं के चित्र गुप्तकालीन है, परन्तु पहली और दूसरी गुफाओं के चित्र 626 ई. के लगभग के बताये जाते है। जो चित्र गुप्तकाल के है वे कला की दृष्टि से सर्वोत्कृष्ट है। इस विषय पर लिखते हुए डाक्टर वासुदेव अग्रवाल का मत है ''The art of painting reached its perfection in the Gupta age '

जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है, नवीं और दसवीं गुफाओं के चित्र सबसे अधिक प्राचीन है[14], परन्तु इसके बावजूद भी वे कला की दृष्टि से काफी सुन्दर है। यह महत्वपूर्ण बात है कि इन दोनों गुफाओं के अनेक चित्र भरहुत, सांची और अमरावती के दृश्यों से मिलते-जुलते है। इन चित्रों के अंकन में चित्रकार ने रेखाओं, उचित अनुपात और विभिन्न मुद्राओं का सहारा लिया है। इन समस्त चित्रों में सबसे सुन्दर चित्र एक जलूस का है जिसमें राजा, रानियां, सैनिक, सेवक तथा अनेक पशु जाते हुए दिखाये गये है। यह जलूस एक स्तूप के तोरण-द्वार के भीतर प्रवेश करता है। वहां राजा स्तूप की पूजा करता है। अपनी सूंड उठाकर स्तूप को प्रमाण करते हुए जो हाथी दिखाये गये है वे बड़े मनोरंजक प्रतीत होते है। इस चित्र में समूह-प्रदर्शन उच्च कोटि का है। डॉ. श्रीनिवासन ने इस चित्र की कला को "Art of High Order" के नाम से पुकारा है।

ऐसा प्रतीत होता है कि इसके पश्चात् लगभग 200 वर्षो का काल भारतीय कला का अवनति-काल था। इस काल में चित्रकला का कोई सुन्दर उदाहरण नहीं मिलता। लगभग 250 वर्षो के पश्चात कला का पुनरुद्वार होता है। गुफा नम्बर 10 में स्तम्भों के ऊपर के चित्र इसी नुपरूद्वार काल के है। इनकी तिथि 350 ई. पू. के लगभग की बताई

जाती है, परन्तु स्तम्भों पर स्त्रियों और पुरूषों के भी मिलते है। उनकी वेशभूषा पर गान्धार कला का प्रभाव दिखाई देता है।

16वीं और 17वीं गुफायें गुप्तकालीन है। इन गुफाओं में तीन प्रकार[15] के चित्र मिलते है। 1. आलेखन 2. वर्णन 3. अलंकरण

आलेखन के अन्तर्गत किसी एक व्यक्ति का चित्र अंकित किया गया है। अनेक चित्रों द्वारा कोई कथानक कहा गया है। अलंकरण के अन्तर्गत फूल पत्तियों, पशु, पक्षियों एवं अनेक अन्य साधनों से अलंकरण का काम किया गया है।

17वीं गुफा के चित्र वर्णन प्रधान है। उनमें चित्रों के द्वारा कथानक कहे गये है। ये चित्र बड़े ही ओजपूर्ण, सजीवन और स्वाभाविक है। डाक्टर वासुदेव शरण अग्रवाल ने इन चित्रों की बड़ी प्रशंसा की है।[16] इस गुफा का एक अत्यन्त महत्वपूर्ण चित्र माता और पुत्र का है। इसमें माता का वात्सल्य और पुत्र की सरलता देखते बनती है। हैवल ने इस चित्र की बड़ी प्रशंसा की है।[17] इसी गुफा का दूसरा चित्र वह है जिसमें एक राजा एक स्वर्ण-हंस की बातें सुन रहा है। इस चित्र के विषय में निवेदिता ने इस प्रकार कहा है, "Nowhere in the world could more beautiful painting be found than in the King listening to the Golden Goose in cave xvii".

इसी गुफा में दूसरा चित्र महात्मा बुद्ध के गृह-त्याग का है। महात्मा बुद्ध के मुख पर किसी प्रकार के उद्वेग का चिन्ह नहीं मिलता है। वे बड़े निर्लिप्त भाव से घर छोड़कर जा रहे है। इस चित्र के विषय में निवेदिता ने लिखा है, "This picture is perhaps the greatest imaginative presentation of Buddha that the world ever saw. Such a conceptioin could hardly occur twice" 16 नं0 गुफा में 6 कमरे तथा 16 स्तम्भ हैं। गुफाओं को चित्रशाला कहा गया है।[18]

16वीं गुफा के चित्र भी समान रूप से सुंदर और स्वाभाविक है। गुप्तकलीन चित्रकला के सबसे श्रेष्ठ नमूने अजन्ता की 16 नं0 की गुफा में एक मरणासन्न राजकुमारी का चित्र[19] बहुत वास्तविक ढंग से प्रस्तुत किया गया है। एक पति के विरह में मरती हुई राजकुमारी का चित्र है। उसके चारों ओर परिजन शोकाकुल अवस्था में खड़े है। विवशता से तथा नेत्रों में आंसू लिए उसकी ओर टकटकी लगाए हुए देख रहे है। एक सेविका उसे सहारा देकर ऊपर उठाये हुए है तथा दूसरी पंखा झुला रही है। एक स्त्री अत्यन्त आतुर होकर राजकुमारी का हाथ अपने हाथ में पकड़े हुए है। दूसरी ओर दो सेविकाएं हाथ में कलश लिये खड़ी है। राजकुमारी का सिर गिर रहा है, आंखे बंद है तथा शरीर का अंग प्रत्यंग पीड़ा से कराह रहा है। समीप खड़े परिजनों के मुखमंडल पर दु:ख का भाव अंकित है। विद्वानो ने इसकी पहचान बुद्ध के सौतेले भाई नन्द की पत्नी सुन्दरी से की है। चित्र देखते ही मनुष्य का मन करूणा से भर जाता है और उसे ऐसा आभास होने लगता है कि मृत्यु के सामने किसी की पेश नही चलती।

इसके विषय में ग्रिफिथ्स महोदय ने इस प्रकार लिखा है, "For pathos and sentiment and the unmistaken way of telling its story, this picture, I consider, cannot be surpassed in the history of art. The Florentine could have put better drawing and the Venetian better colour, but neither could have thrown greater expression".

पहली गुफा के एक चित्र में चालुक्य-नरेश पुलकेशी द्वितीय फारस नरेश खुसरों के

द्वारा भेजे गये राजदूत का स्वागत कर रहा है। इससे स्पष्ट हो जाता है कि वह चित्र 626-28 ई. के लगभग का है।

इसी गुफा में एक चित्र में बोधिसत्व पद्मपाणि दिखाये गये है।[20] यह चित्र भी बड़ा ही सजीव और स्वाभाविक है। डॉ. वासुदेवशरण अग्रवाल ने इन शब्दों में इस चित्र की प्रशंसा की है- "The great Bodhisattva Padmapani Avalokitesvara in cave I shows the highest attainment in the way of pictorial art"

दूसरी गुफा में जो चित्र मिले है वे कला की दृष्टि से हीन है। इन चित्रों को देखकर पर्सी ब्राउन महोदय ने अनुमान लगाया है कि इन्हें अपरिपक्व कलाकारों ने बनाया है।

निष्कर्ष-

निष्कर्ष रूप में यही कहा गया है कि स्वर्णिक गुप्तकाल में जो कलात्मक विकास हुआ उससे न केवल अन्य विधाओं की उन्नति हुई वरन चित्रकला की उत्कृष्ट उन्नति हुई। जिससे अजन्ता के चित्रों को पहचान मिली। जिससे प्रभावित होकर सल्तनतकाल तथा मुगल काल के साथ-साथ आधुनिक उन्नति का दौर प्रारम्भ हुआ तथा चित्रकला को नई पहचान मिली।

===============

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची-

1. एच.के.शेरवानी, कल्चरल ट्रेंडस इन मेडिवल इंडिया, पृ. 41
2. ताराचन्द, इनफुलेन्स आफ इस्लाम आन इंडियन कल्चर, इलाहाबाद, 1963, पृ. 258
3. वही, पृ. 258
4. डॉ. बी.एस.अग्रवाल, द वाकाटक-गुप्त ऐज
5. डॉ. वी.पी. सिन्हा, भारत का इतिहास, नई दिल्ली, 1998, पृ. 183
6. डॉ. वी.सी.पांडे, प्राचीन भारत का इतिहास, मेरठ, 1974, पृ. 165
7. डॉ. वी.पी. सिन्हा, भारत का इतिहास, नई दिल्ली, 1998, पृ. 183
8. डॉ. वी.सी.पांडे, प्राचीन भारत का इतिहास, मेरठ, 1974, पृ. 166
9. डॉ. वी.सी.पांडे, प्राचीन भारत का इतिहास, मेरठ, 1974, पृ. 167
10. डॉ. वी.पी. सिन्हा, भारत का इतिहास, नई दिल्ली, 1998, पृ. 183
11. के.सी. श्रीवास्तव, प्राचीन भारत का इतिहास एवं संस्कृति, इलाहाबाद, 2002, पृ. 476
12. वही, पृ. 476
13. डॉ. वी.सी.पांडे, प्राचीन भारत का इतिहास, मेरठ, 1974, पृ. 167
14. पर्सी ब्राऊन, इंडियन आर्किटैक्चर (बुद्धिष्टि एंड हिन्दू)
15. के.सी. श्रीवास्तव, प्राचीन भारत का इतिहास एवं संस्कृति, इलाहाबाद, 2002, पृ. 476
16. के.सी. श्रीवास्तव, प्राचीन भारत का इतिहास एवं संस्कृति, इलाहाबाद, 2002, पृ. 477
17. एल.पी.शर्मा, प्राचीन भारत, आगरा, 2001, पृ. 239
18. वी.बी.कृष्ण, प्राचीन तथा मध्यकालीन भारत, दिल्ली, 1985, पृ. 271
19. के.एल.मिगलानी, हिस्ट्री आफ इंडिया, नई दिल्ली, पृ. 111
20. डॉ. वी.सी.पांडे, प्राचीन भारत का इतिहास, मेरठ, 1974, पृ. 171

Research Journal of Arts, Management and Social Sciences,
Vol. XVIII, Hindi.-I, Year IX, March, 2018
UGC Sl. No. 2138, Journal No.48774, Impact Factor 2.996

चंदेल कालीन जल संग्रहण स्थापत्य

* चन्द्रमौलि शुक्ल

सारांश– *बुन्देलखण्ड का अधिकांश क्षेत्र विन्ध्य पर्वत की श्रेणियों पहाडियों, टोरियों वाला पथरीला, वनो, कटीली झाड़ियों से आच्छादित क्षेत्र है। यद्यपि इस क्षेत्र में समतल तथा उपजाऊ भूमि भी है, लेकिन यह तुलनात्मक रूप से कम है। यहॉं की पथरीला पठारी भूमि होने से वर्षा ;तु में तो जल की उपलब्धता रहती थी, लेकिन वर्षा ;तु के पश्चात यहॉं का संकट उत्पन्न हो जाता था। अधिकांश क्षेत्र जलहीन हो जाता था। ढालू भूमि होने के कारण वरसाती जल नदियों, नालों से वहता हुआ यमुना पहुँचता था। इससे जल का घोर संकट यहॉं के जन जीवन को कष्टप्रद बना देता था। चंदेल शासकों ने जल के संकट को दूर करने तथा वर्ष भर जल की उपलब्धता बनाए रखने के लिए जल संग्रहण के साधन निर्मित किए। उन्होंने इस जल एवं अविकसित बंजर विन्ध्य भूमि को विकसित करने जल की उपलब्धता सुनिश्चित करने हेतु तालाबों, तलईयों, पोखरों, कुओं तथा बावड़ियों का निर्माण करवाया।*

चंदेल कालीन जल स्थापत्य की प्रमुख विशेषताएं निम्नानुसार थी।

1. **दो पहाड़ियों के मध्य बधान बना कर तालाबों का निर्माण करवाना–** चंदेल कालीन शासकों के तालाबों के निर्माण की एक प्रमुख विशेषता यह थी कि इनके द्वारा बड़ी संख्या में तालाब दो पहाड़ों के मध्य के क्षेत्र में बधान बनाकर किया गया। इनके द्वारा उन्होंने पहाड़, पहाड़ियों एवं टोरियों के मध्य की खंधियों के मध्य से निर्मित नालों, नदियों में से व्यर्थ वहते हुए पानी को रोककर के जल का संग्रह किया गया। ऐसे तालाबों में पहाड़ियों तथा टोरियों का पानी तो वहकर आया ही भराव क्षेत्र के ऊपरी भागों में स्थित भूमि से भी पानी वहकर आया, इससे इन तालाबों को अधिक पानी प्राप्त हुआ।

2. **तालाबों के निर्माण में विशाल पाषाण खण्डों का प्रयोग–** चंदेलों द्वारा जो तालाब निर्मित किए गये उनकी बंधानों में विशाल आयताकार तथा वर्गाकार, चौड़े सपाट, पालदार, विशाल पाषाण खण्डों का प्रयोग किया गया। चूंकि बुन्देलखण्ड के अधिकांश भाग में पर्वत, पहाड़ियों, टोरियाँ स्थित है। अतः आसानी से यहॉं पाषाण उपलब्ध था। इनके खण्ड बनाकर तराश कर इनका उपयोग किया गया, कुछ पाषाण खण्ड अपने प्राकृतिक रूप में ही प्रयुक्त किए गये। यह पाषाण खण्ड तालाबों को सुदृष्टिता प्रदान करते थे।

3. **मध्य भाग में मिट्‌टी का भराव किया जाना–** तालाबों के बंधान की नींव विशाल पाषाण खण्डों से तैयार की जाती थी। सपाट, पालदार, शिलाखण्ड के ऊपर

---

* प्राध्यापक, इतिहास विभाग, शासकीय महाराजा महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.)

एक को दबाते हुए दूसरे शिलाखण्ड को रखा जाता था। यह शिलाखण्ड एक-एक करके एक दूसरे को दबाते हुए ऊपर की ओर लाए जाते थे और इसके मध्य भाग में मिट्टी भरी जाती थी। मिट्टी को पानी से भिगोकर उसकी कुटाई की जाती थी और फिर उसके ऊपर पाषण खण्डों का प्रयोग किया जाता था, ताकि तालाब की तेज लहरे बांध की मिट्टी तक न पहुंच सके और मिट्टी का क्षरण न हो।

4. **भीतरी भराव क्षेत्र में तालाब के बंधान की सुरक्षा हेतु विशेष उपाय**– चंदेल कालीन तालाबों के स्थापत्य में उनकी सुरक्षा पर विशेष ध्यान दिया गया था। इसके लिए ऐसे प्रबन्ध किए गये कि भीतरी भराव क्षेत्रमें जल के प्रवाह से तालाब की बांध सुरक्षित रहे। तालाब में जिन नाले, नदियों अथवा नदियों या समतल क्षेत्रों से बरसात में जल बहकर आता था। इससे तालाब के भीतरी भाग में जहॉ भी अधिक दबाव बनने की आशंका होती थी। वहाँ बंधान के भीतरी भराव क्षेत्र की ओर गुर्जनुमा गोलाई किए हुए पाषाण खण्डों से चादर, ओड़े कोहनी मोड़े बना दिए जाते थे। जो जल धराएं भराव क्षेत्र में वेग के साथ आती थी। वह सीधे बंधन का स्पर्श न करके इन कोहनियों, चादों या मोड़ों से टकरा कर दाए-वाएं फैल जाती थी। इस तरह यह चादे, कोहनी मोड़े तथा ओड़े पानी के दबाव तथा मार को स्वयं अपने ऊपर लेकर झेलती सहती रहती थी और बंधान को कोई नुकसान नहीं पहुंचने देती थी। यह सब भीतरी क्षेत्र में सुस्ता दीवार का कार्य करती थी। इससे कितना ही जल क्यों ने हो वर्षाकाल बंधान को नुकसान नहीं पहुंचता था।

5. **बंधान के अंतिम दोनों छोरों में अतिरिक्त जल निकास की व्यवस्था**– चंदेल कालीन तालाबों को वर्षा ऋतु में अधिक पानी के भराव से होने वाले खतरों को रोकने के लिए बंधान के दोनों ओर अंतिम छोरो में (किनारों में) पाखियॉ बना दी जाती थी। यह पाखियॉ नालीनुमा होती थी यह बंधान के मध्य से होकर बाहर की ओर पानी को अतिरिक्त जल को निकालने का कार्य करती थी। जल इन पाखियों से जल निकलना प्रारंभ होता था तो यह इस बात का प्रमाण था कि तालाब पूरी तरह से भर गया है यह पाखियॉ इन तकनीक से निर्मित की जाती थी कि कितना ही जल क्यों ने वर्षे बंधान के ऊपर से पानी नहीं निकल सकता था। अतिरिक्त जल पाखियों के माध्यम से ही यह अतिरिक्त जल बाहर निकलता था। बंधान की ऊचाई एवं तालाब के अतिरिक्त पानी के निकास की पाखियों में 10:7 (दस अनुपाते सात) का निर्माण देखने को मिलता है। तालाब की बंधान के दोनों अंतिम छोरों पर 10:7 में बनाई गई यह पाखियॉ तालाब का जल बंधान के ऊपर आने के पहले ही अतिरिक्त जल को तालाब के पिछले भाग में स्थित बहाव क्षेत्र अथवा किसानों के समतल खेतों में चला जाता था। इस तकनीक से इन तालाबों के बंधानों को अभेद्य सुरक्षा प्रदान की थी। कोई भी चंदेल कालीन तालाब की बंधान मध यभाग से फूटी नहीं देखी गई। वर्तमान में निर्मित बांधों से अतिरिक्त पानी के निकालने के लिए फाटकों की व्यवस्था की जाती है और अधिक वर्षा होने पर इनके माध्यम से यह अतिरिक्त जल बाहर छोड़ा जाता है। फिर भी कभी कभी कुछ बांध फूट जाते है। लेकिन चंदेल कालीन तालाबों की बंधानों को पाखियों के माध्यम से अतिरिक्त जल निकास की अभेद्य सुरक्षा प्रदान की गई थी।

6. **बंधानों की चौड़ाई अधिक होना**– चंदेल कालीन तालाबों की बंधानों की

चौड़ाई अधिक रखी जाती थी। सर्वेक्षण के दौरान मुझे चंदेल कालीन कोई भी ऐसा तालाब नहीं दिखा जिसकी चौड़ाई अधिक न होती हो दोनों ओर के अंतिम छोरों से प्रारंभ होकर यह चौड़ाई मध्य भाग तक निरंतर बढ़ती जाती थी और इन क्षेत्रों में विशाल आयताकार और वर्गाकार पाषाण खण्ड लगाये जाते थे। बंधानों की चौड़ाई अधिक होने से यह तालाब हजारों साल से सुरक्षित बने हुए है।

7. **तालाबों में घाटों का निर्माण**– चंदेल कालीन तालाबों के मध्य भाग में बहुत ही सुन्दर घाटों का निर्माण किया जाता था। मध्य भाग के तल से प्रारंभ करके बंधान के ऊपरी भाग तक तरासे गये पाषाण खण्डो की सीढ़ियाँ निर्मित की जाती थी। जिस तरह से नदी के किनारों में घाट निर्मित किए जाते थे वही तकनीक इन तालाबों के निर्माण में भी अपनाई जाती थी। जब तालाबों में जल भराव अधिक होता था तब ऊपरी भाग की कुछ सीढ़ियों को छोडकर शेष सभी सीढ़ियाँ पानी में डूबी रहती थी। जैसे जैसे तालाब का पानी कम होता जाता था, वैसे वैसे नीचे की सीढ़ियाँ निकलती आती थी। तालाबों में सामान्यतः अनेक घाट निर्मित किए जाते थे और यह घाट मध्य में एक दूसरे से अलग होते थे। इससे घाटों में भीड़ का संतुलन बना रहता था और लोग इनका उपयोग बिना किसी कठिनाई के करते थे। घाटों के सौन्दर्य में वृद्धि करने के लिए अनेक पत्थरों में नक्कासी की जाती थी और उनमें विभिन्न प्रकार की मूर्तियाँ पेड पौधो, फूलों तथा पशुओं की आकृतियाँ निर्मित की जाती थी। चंदेलों ने अपने तालाबों के निर्माण में सुदृष्टता के साथ-साथ उनकी सौन्दर्यता पर भी ध्यान दिया था।

8. **बालाबों की बंधानों के ऊपर कक्षों का निर्माण**– चंदेलों द्वारा निर्मित करवाये गये अधिकांश बडे तालाबों के बंधानों के ऊपर घाटों के लगे हुए कक्षों का निर्माण किया गया था। इन कक्षों में वहाँ स्थान के लिए आने वाले लोग अपने वस्त्र बदलते थे। इनमें स्नान के पूर्व अपने सूखे वस्त्रों को रखते रहे होगे और स्त्रियों को तालाबों में स्नान के बाद वस्त्र बदलने में सुविधा होती होगी। आज भी उस समय के अने तालाबों की बंधानों में यह कक्ष विद्यमान है। यह कक्ष भी पाषाण खण्डों द्वारा निर्मित किए जाते थे। इनकी छते इस तरह से बनाई जाती थी कि कक्षों के भीतर बरसात का जल न आ सके।

9. **बंधानों के ऊपर मंदिरों का निर्माण**– चंदेल कालीन तालाबों की बंधान के ऊपर विशेषकर मध्य भाग में विभिन्न देवी देवताओं के मंदिर का निर्माण किया जाता था। यह मंदिर विभिन्न देवी देवताओं जैसे दुर्गा, विष्णु, शिव तथा गणेश इत्यादि को समर्पित थे। तालाबों की बंधानों के ऊपर घाटों के समीप मंदिरों का निर्माण एक ओर तालाबों को सुरक्षित करता था दूसरी ओर इनके कारण वहाँ पवित्रता तथा स्वच्छता भी सुनिश्चित होती थी। मंदिर होने से वहाँ लोग गंदगी नहीं करते थे और भक्ति भाव, सामर्थ तथा अपनी आस्था के अनुसार पूजा पाठ भी करते थे। तालाबों की बंधानों पर मंदिर स्थापित होने से उनके आस-पास खुले स्थान पर शौच लघुशंका इत्यादि भी नहीं करते थे। इससे वहाँ का वातावरण दूषित नहीं होता था। यह मंदिर मुख्यतः तालाबों के मध्य में बनाए जाते थे। लेकिन कुछ तालाबों की बंधानों के कोहनियों या अंतिम छोरों पर भी बनाए जाते थे। डॉ. अयोध्या प्रसाद पाण्डेय लिखते है कि ''प्रत्येक मंदिर के साथ एक तालाब का निर्माण उस युग में एक नियम सा बन गया था मानो दर्शनार्थियों को मंदिर प्रवेश के पूर्व

पैर प्रक्षालन के लिए निर्मित हुए हो इस प्रकार का प्रबन्ध दक्षिण भारत के कुछ मंदिरों में है।''[1]

8. **तालाबों की बंधानों के समीप बस्तियों का बसाया जाना**– चंदेल कालीन अधिकांश तालाबों के समीप बस्तियाँ बसाई जाती थी। इससे तालाबों की सुरक्षा सुनिश्चित होती थी और लोगों को तालाब समीप होने से आसानी से पानी उपलब्ध होता था। तालाब समीप होने से बस्तियों में रहने वाले लोग दैनिक उपयोग तथा जानवरों के लिए जल का उपयोग करते थे और तालाब में आते-जाते नहाते, जानवरों को पानी पिलाते, अनाज धोते या पूजा पाठ करते हुए, तालाबों का भी निरीक्षण करते रहते थे कि कही तालाब गंदे तो नहीं हो रहे है या तालाब की बंधान को कोई क्षति तो नहीं पहुँच रही या तालाब का पानी अपनी सीमा से ऊपर तो नहीं बह रहा। कहीं तालाबों के पाखों में मिट्टी या अन्य कोई अवरोध तो नही आ गया। जिससे अतिरिक्त पानी का निकास न हो रहा हो। क्यों कि अगर तालाबों का अतिरिक्त पानी का निकास नहीं होगा तो बंधानों के टूटने का खतरा उत्पन्न हो जायेगा। इसलिए आवश्यक था कि लो यह देखे कि अतिरिक्त पानी जिन पाखों से निकलता है उसमें कोई अवरोध तो नहीं है। यदि अवरोध होता था तो वह उसको दूर करते थे। पाखों के समीप या बंधान के अन्य भागों में उगने वाले पौधे तथा झाडियों को भी वे साफ कर सकते थे। जो तालाबों को प्रदूषित करने के साथ-साथ अतिरिक्त पानी के निकास में अवरोध पैदा करते थे। इस तरह से तालाबों के समीप बस्तियों के बसाने से तालाबों तथा लोगों दोनों को लाभ होता था।

9. **तालाबों में संकेत चिन्हों का निर्माण**– चंदेल कालीन तालाबों के वस्तुकारों ने तालाबों का निर्माण करते समय यह भी ध्यान रखा कि लोगों को यह पता रहे कि इस तालाब में कहाँ किस स्थान पर कितना पानी है। इसकी गहराई कितनी है, कितना पानी भर जाने पर यह माना जाए कि तालाब पूरा भर चुका है। इसके लिए तालाब के सम्पूर्ण भराव क्षेत्र तथा घाटों में विभिन्न संकेत चिन्ह निर्मित किए जाते थे। अनेक तालाबों के मध्य कुओं का निर्माण कर उनकी बंधान के ऊपर स्तंभ निर्मित किए गए थे। इन स्तभों में चिन्ह बनाए जाते थे, जो यह संकेत देते थे कि तालाब में कितना पानी है। तालाब के बंधान में जो घाट निर्मित होते थे। उनकी सीढियों पर भी तालाब में कितना जल भर गया है या कितना जल शेष है का संकेत चिन्ह निर्मित किया जाता था। यह संकेत चिन्ह अतिरिक्त पानी के निकास की जो नाली होती थी, उसकी सतह से मिलान कर निर्मित किए जाते थे। इन संकेतों को परखी खम्भा, हथनी, कुडी, चरई इत्यादि नामों से जाना जाता था। परखी खम्भा का निर्माण इस लेवल पर किया जाता था कि जैसे ही परखी पानी में डूबी अतिरिक्त पानी के निकास की नाली से तालाब का अतिरिक्त जल कलने लगता था। यदि परखी खम्भा डूबने के बाद भी अतिरिक्त पानी का निकास नाली से नहीं होता था तो यह माना जाता था कि नाली में कहीं अवरोध है और इस अवरोध को दूर कर दिया जाता था। तालाबों में संकेत चिन्ह होने से लोगों को पानी की गहराई का भी पता चलता था। इससे बच्चों तथा उन लोगों को सुरक्षा प्राप्त होती थी, जो तैरना नहीं जानते थे। तालाब के पानी में कहाँ तक प्रवेश करना है यह संकेत चिन्हों के माध्यम से लोगों को पता रहता था। ग्रीष्म ऋतु में जब तालाबों का पानी कम होने लगता था तब भी यह संकेत चिन्ह लोगों को सावधान करते थे कि कितना पानी तालाब में रह गया है।

10. **पानी पीने के लिए जानवरों की सुविधा का ध्यान रखना**– चंदेल कालीन तालाबों की बंधानों में मनुष्यों के सुविधा तथा उपयोग के लिए जहॉ एक ओर घाटों का निर्माण किया गया सीढियॉ निर्मित की गई। संकेत चिन्हों की व्यवस्था की गई, वहीं दूसरी ओर यह भी ध्यान में रखा गया कि जानवर आसानी से तालाब में पहुंचकर चल पी सके। इसके लिए बंधानों के दोनों किनारों पर इनका निर्माण इस तरह से किया जाता था कि ऊपर से नीचे की ओर पत्थर एक दूसरे का स्पर्श करते हुए एक निश्चित अनुपात में लगाए जाते थे। जानवरों की पहुंच पानी तक बनाने के लिए यह ध्यान रखा जाता था कि जहॉ वह पानी पी रहे है वहॉ पहुंचने के मार्ग में तालाब के अंदर कीचड़ न हो, साथ ही उनके पैर कीचड़ में न धसे। इससे पालतू तथा वन जीव सरलता से तालाब में पहुंच कर पानी पी सकते थे। चंदेल वास्तुकारों ने यह ध्यान रखा कि मानव के साथ-साथ पशुओं को भी आसानी से जल उपलब्ध हो सके।

11. **तालाबों के भराव क्षेत्र में मिट्टी का जमाव रोकने के उपाय**– चंदेल कालीन वास्तुकारों तथा शासन ने यह ध्यान रखा कि तालाबों के भीतर मिट्टी बहकर न आ पाये। क्यों कि मिट्टी बहकर आने से तालाबों का भराव क्षेत्र कम होता, वे उथले हो जाते और तालाबों की जल भण्डारण क्षमता कम हो जाती और उनमें कीचड़ की बहुतायत हो जाती, इससे तालाबों को भारी नुकसान पहुंचता। इसलिए इस बात का ध्यान रखा गया कि तालाबों के आगे के क्षेत्र में कृषि के लिए भूमि का उपयोग नहीं किया गया। तालाबों के अग्र क्षेत्र में स्थित भूमि अगर जोती जाती तो खेतों की मिट्टी तथा घास-फूस पानी के साथ बहकर तालाब के भराव क्षेत्र में जमा होती इससे निसंदेह जल भण्डारण कम हो जाता इसलिए तालाबों के अग्र भाग में स्थित भूमि को परती छोड दिया जाता था अर्थात उसकी जुताई नहीं की जाती थी और यह चारागाही वन क्षेत्र के रूप में सुरक्षित हो जाता था। यह ध्यान रखा जाता था कि तालाबों के भराव क्षेत्र में निर्वाध रूप से वर्षा का जल आ सके, लेकिन उसके साथ मिट्टी न आ पाये। अग्रभाग में कृषि न होने से मिट्टी नहीं आ पाती थी और भूमि का कटाव भी नहीं हो पाता था।

12. **बंधानों के दाएं वाएं तथा पृष्ठ भाग में कृषि कार्य होना**– चंदेल कालीन तालाबों के दाएं वाएं तथा पृष्ठ भाग में स्थित भूमि में कृषक कृषि कार्य करते थे। इन स्थानों पर तालाबों का पानी भी पहुंच जाता था। बंधानों के पृष्ठ भाग में स्थित तराई की समतल भूमि पर कृषि कार्य करने से उत्पादन अधिक होता था। चंदेल कालीन अनेक तालाबों में यह भी व्यवस्था थी कि अतिरिक्त पानी जिन नालियों से बहकर जाता था, उन नालियों से भी छोटी नालियॉ निकाली जाती थी। ताकि यह पानी खेतों में पहुंचाया जा सके। चंदेल शासक कृषकों एवं कृषि के विकास पर विशेष ध्यान देते थे। उन्होंने सम्पूर्ण बुन्देलखण्ड क्षेत्र में जिस तरह से तालाबों का जाल बिछा दिया था। उससे निःसंदेह कृषकों की स्थिति में सुधार हुआ। चंदेल कालीन अनेक अभिलेखों से भी यह ज्ञात होता है कि चंदेल शासकों ने कृषि विकास, बिस्तार, विकास एवं उसकी सिंचाई के लिए भी जल संग्रहण की व्यवस्था की थी। खजुराहो के विक्रम संवत 1011 के अभिलेख में सिंचाई व्यवस्था पर प्रकाश डाला गया है इस अभिलेख से यह ज्ञात होता है कि चंदेल शासक कृषकों एवं कृषि विकास के लिए समर्पित थे। इससे समाज में सम्पन्नता आई। तालाबों के निर्माण, नहरों की खुदाई और मरम्मत में बड़ी संख्या में मजदूरों को काम मिला इससे

उनकी आय में वृद्धि हुई।

13. **गहरी तथा चौड़ी नींव का निर्माण**– चंदेल कालीन तालाबों के बंधान के निर्माण के लिए गहरी तथा सुदृढ़ नींव का निर्माण किया जाता था। जिन स्थानों पर तालाबों का निर्माण होता था वहाँ पहले गहरी खाईनुमा खुदाई की जाती थी। उसमें बड़े बड़े पत्थरों का भरा जाता था। दो पत्थरों के बीच में खाली स्थान पर छोटे-छोटे पत्थरों को भरा जाता था। फिर इनके ऊपर से कुटाई की जाती थी। बंधान के मध्य तथा दोनों छोर तक नींव की गइराई का ध्यान रखा जाता था। यह गहरी होने के साथ-साथ चौड़ी भी होती थी ताकि इसके ऊपर निर्मित बधान पानी को रोक सके और वह टूटेना। बुन्देलखण्ड पहाड़ी क्षेत्र है यहाँ तालाबों के निर्माण की सभी सुविधायें उपलब्ध थी। डॉ. आयोध्या प्रसाद पाण्डेय लिखते है कि ''सौभाग्य से बुन्देलखण्ड एक पहाडी क्षेत्र है और वहाँ तालाब के निर्माण के सभी साधन सुलभ है।''[2] चन्देल काल में बुन्देलखण्ड के लगभग हर गाँव में निर्मित करवाये गये तालाब अत्यंत सुदृढ़ थे और इनकी सुदृष्णता में नीव की गहराई तथा चौड़ाई की महत्वपूर्ण भूमिका थी।

14. **चंदेल कालीन तालाबों का निर्माण कुशल शिल्पियों द्वारा किया जाना**– चंदेल कालीन तालाबों का निर्माण अत्यंत कुशल शिल्पियों द्वारा किया गया था। तालाबों की सुन्दरता, सुदृष्णता जल भराव क्षेत्र में निश्चित अनुपात में संकेत चिन्हों का निर्माण तालाबों में तराश कर लगाये गये पत्थर, सुन्दर घाट, सीढ़ियाँ और तालाबों के बधान पर भव्य मंदिरों का निर्माण इस बात का प्रतीक है कि तत्कालीन शिल्पी तालाबों के निर्माण में कुशल तथा पारांगत थे। डॉ. अयोध्या प्रसाद पाण्डेय लिखिते है कि ''मैदान तथा पहाड़ियों में समान रूप हो बुन्देलखण्ड भर में तालाब पाये जाते है ऐसा प्रतीत होता है कि चंदेलों के पास अनेक कुशल शिल्पी थे जिनकी सेवाओं का उपयोग उन्होंने जिस क्षेत्र में भी चाहा सफलतापूर्वक किया।''[3]

15. **तालाबों का नामकरण देवी देवताओं निर्माण कर्त्ताओं या स्थानों के नाम पर**– चंदेल कालीन तालाबों की मुख्य विशेषता उनके नाम देवी देवताओं या निर्माण कर्त्ताओं या जिस स्थान में स्थित है उसके नाम पर रखे गये। डॉ. अयोध्या प्रसाद पाण्डेय लिखते है ''चंदेल कालीन तालाबों की मुख्य विशेषता उनका मंदिरों से संयोजन था। इन तालाबों में खड़े हुए पत्थरों का उपयोग किया गया है। अधिकांश तालाब किसी न किसी देवी देवताओं के नाम से प्रसिद्ध है जैसे शिव सागर, राम सागर आदि किन्तु ऐसे भी तालाब है जो अपने निर्माणकर्त्ता अथवा जिस स्थान में स्थित है उसके नाम से प्रसिद्ध है।''[4]

16. **सुन्दर सुदृढ़ तथा विशिष्ट तकनीक से कुओं तथा बावडियों का निर्माण**– चंदेल शासकों ने जहाँ एक ओर तालाबों का निर्माण करवाया वहीं दूसरी ओर उनके द्वारा बड़ी संख्या में कुओं तथा बावडियों का निर्माण कराया गया। उस काल में अधिकांश कुंए गहरे होते थे उनकी दीवार की बंधाई में पत्थरों तथा ईटों का प्रयोग किया जाता था। पत्थर तराशे हुए होते थे। कुओं के निर्माण में यह ध्यान रखा गया कि उनमें वारह माह पानी उपलब्ध रहे। कुओं के ऊपरी भाग में चबूतरे (जगत) निर्मित किए जाते थे। इसके ऊपर कुओं के दोनों किनारों को जोड़ते हुए विशाल तराशे गये पाषाणखण्ड रखे जाते थे जिनसे आसानी से पानी निकाला जा सके। कुओं को बाधते समय दीवारों में

बीच-बीच पत्थर बाहर निकले हुए पत्थर गाढ़ दिये जाते थे, तथा आलों का भी निर्माण किया जाता था ताकि कुओं में उतरने चढ़ने में सुविधा रहे। कुओं की भॉति बावड़ियों के निर्माण में उनकी सुन्दरता सुदृष्ढ़ता तथा जल के भराव क्षेत्र का विशेष ध्यान रखा जाता था। बावडियों को निर्मित करते समय सर्वप्रथम भूमि की गहराई तक खुदाई की जाती थी फिर उसे तराशे गये सुन्दर पाषाणखण्डों से बाधा जाता था। और नीचे तक सीढ़ियों का निर्माण किया जाता था। बावडियों के सीढ़ियों से सटे चारो ओर सुन्दर स्तंभों वाले कक्ष निर्मित किए जाते थे। सीढ़ियों का विन्यास अत्यन्त मनोहारी होता था यह बावडियॉ वर्ष भर स्वच्छ पानी उपलब्ध कराती थी। यह ध्यान रखा जाता था कि कुओं तथा बावड़ियों के भीतर गंदा पानी न आये। कुओं तथा बावड़ियों में सामान्यतः भूमि के अंदर प्राकृतिक जल धाराओं का पानी आता था। इन जल धाराओं को वर्तमान में बुन्देलखण्ड क्षेत्र में झिर कहा जाता है। प्राकृतिक जल धाराओं से जल प्राप्त होने से जल स्वच्छ बना रहता था। बावडियों तथा कुओं के पास भी मंदिरों का निर्माण कराया जाता था। इससे कुओं तथा बावडियों की स्वच्छता तथा पवित्रता सुनिश्चित होती थी। चंदेल कालीन बावडियों को किसी देवी देवता या प्रसिद्ध व्यक्ति के नाम पर जाना जाता था। कुछ को कुण्ड नाम दिया जाता था। जैसे भीम कुण्ड, अर्जुन कुण्ड, देवी कुण्ड, इत्यादि। चंदेल कालीन कुछ बावडियॉ ऐसी निर्मित करवाई गई, जिनमें सीढ़ियॉ नहीं थी। ऐसी बावडियॉ टीकमगढ़ जिले में स्थित जतारा में निर्मित करवाई गई थी। इनका निर्माण इस तरह से किया गया था कि जानवरों की पहुंच आसनी से बावडियों के पानी तक हो सके। इन बावडियों में धरातलिय क्षेत्र में पत्थर लगाये जाते थे। यह भूमि से नीचे की ओर जाते थे।

17. **तालाबों कुओं तथा बावडियों के निर्माण में राज्य की आय का एक बड़ा भाग खर्च किया जाना**– बुन्देलखण्ड क्षेत्र पहाडियों तथा वनों से अच्छादित था। यहॉ कि भूमि का एक बड़ा भाग पथरीला है। फिर भी चंदेल शासकों ने कृषकों एवं कृषि के विकास के लिए विशेष ध्यान दिया उन्हें प्रजा के कष्टों की चिन्ता थी इसलिए कुओं, बावडियों तथा तालाबों के निर्माण में अपनी आय का एक बड़ा भाग व्यय किया। डॉ. काशी प्रसाद त्रिपाठी लिखते है ''चंदेल राजाओं के सरोवरों, किलो, महलों, मंदिरों तथा बावडियों के निर्माण पर अकूत धन खर्च किया।''5 चंदेलों द्वारा तालाबों के निर्माण पर जो अत्यधिक धन व्यय किया गया वह धन का सही और जन हित में व्यय था। इससे बुन्देलखण्ड के जलहीन क्षेत्र को जल प्राप्त हुआ और जल से लोगों का जीवन सरल हुआ।

18. **श्रृंखला बद्ध तालाबों का निर्माण**– चंदेल काल में अनेक स्थानों पर श्रृंखला बद्ध रूप में भी तालाबों का निर्माण किया गया यह तालाब गांव व नगरों में ऊपर से नीचे की ओर बनाये गये। पहले एक तालाब गांव व नगरों में ऊपर से नीचे की ओर बनाये गये। पहले एक तालाब के बधान के बाद दूसरा तालाब, फिर आगे इसी तरह से तालाब निर्मित किए जाते रहे पहले तालाब के भर जाने पर उसका अतिरिक्त जल पाखी (नाली) के माध्यम से दूसरे तालाब में आता था। उसके भर जाने पर इसी तरह से आगे के तालाब में जाता था। इसके अतिरिक्त आजू-बाजू से भी जल के भराव की व्यवस्था थी। इस तरह से तालाबों का निर्माण करने से अधिक जल का संग्रह होता था। जिसका उपयोग दैनिक आवश्यकताओं को पूरा करने के साथ-साथ सिंचाई में भी भरपूर होता था

और जल स्तर पभी ऊपर बना रहता था। महोबा, खजुराहो, अजयगढ़, रसिन, इत्यादि स्थानों श्रंखला बद्ध रूप से तालाबों का निर्माण किया गया। डॉ. आयोध्या प्रसाद पाण्डेय लिखते है कि ''रसिन में किवदन्ति के आधार पर वहॉ अस्सी (80) तालाब थे कनिंघम ने अपनी रिपोर्ट में 19 (उन्नीस) तालाबों की सूची दी है।''[6]

===============

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची–

1. डॉ0 अयोध्या प्रसाद पाण्डेय ''चंदेल कालीन बुन्देलखण्ड का इतिहास'' पृष्ठ 211
2. डॉ0 अयोध्या प्रसाद पाण्डेय ''चंदेल कालीन बुन्देलखण्ड का इतिहास'' पृष्ठ 211
3. वही
4. डॉ0 अयोध्या प्रसाद पाण्डेय ''चंदेल कालीन बुन्देलखण्ड का इतिहास'' पृष्ठ 211
5. डॉ0 काशी प्रसाद त्रिपाठी, बुन्देलखण्ड के तालाबों एवं जल प्रबंधन का इतिहास पृ0 22
6. डॉ0 अयोध्या प्रसाद पाण्डेय ''चंदेल कालीन बुन्देलखण्ड का इतिहास'' पृष्ठ 213

Research Journal of Arts, Management and Social Sciences,
Vol. XVIII, Hindi.-I, Year IX, March, 2018
UGC Sl. No. 2138, Journal No.48774, Impact Factor 2.996

जयपुर राज्य में शिक्षा कार्य व जनचेतना 1920–1947

* पिंकी यादव

==

सारांश– *जयपुर राज्य सामाजिक कार्यकर्ताओं व जयपुर राज्य प्रजामण्डल के मूल कार्यक्रम में लोकशिक्षा के विकास व विस्तार को एक सहयोग कार्यक्रम के रूप में अपनाकर महत्वपूर्ण कार्य किया गया था। तथा सभी कार्यकर्ता राज्य प्रजामण्डल लोक शिक्षा के विकास व विस्तार के लिए पूर्णतः कृत संकल्प थे। इस दिशा में प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से कार्य करना उनके कार्यक्रम का एक अंग बन गया था, क्योंकि दोनों के पास निरन्तर धन का अभाव रहता था। इसलिए इनके द्वारा हालांकि सीधे विद्यालयों की स्थापना का कार्य नहीं किया जा सका लेकिन फिर भी जयपुर राज्य के सामाजिक कार्यकर्ताओं व प्रजामण्डल से सम्बद्ध जो कुछ प्रवासी व्यापारीयों ने शिक्षा के कार्य को समुन्नत बनाने व चेतना प्रसारित करने में महत्वपूर्ण योगदान दिया। इनमें हम स्वयं प्रजामण्डल के अध्यक्ष जमुनालाल बजाज के अलावा घनश्यामदास बिडला, सीताराम सेकसरिया, भागीरथ कनोडिया व नवलगढ के सेठ रामेदव पोद्दार का विशेष रूप से उल्लेख कर सकते है। जिन्होंने जयपुर राज्य के क्षेत्र में तथा विशेष रूप से शेखावटी मण्डल में लोकशिक्षा के विकास व विस्तार के लिए प्रयत्न किया। जिनके कार्य की विवेचना पूर्व में की जा चुकी है। इसी कार्यक्रम से प्रेरणा लेकर प्रजामण्डल के एक प्रमुख कार्यकर्ता पण्डित हीरालाल शास्त्री ने भी वनस्थली ग्राम में स्त्री शिक्षा का एक छोटा सा प्रयोग 1935 में वनस्थली विद्यापीठ की स्थापना से आरम्भ किया और धीरे धीरे यह संस्था और संस्था के प्रति शास्त्री जी का शैक्षिक काम निरन्तर विकसित व विस्तारित होता चला गया। स्वतन्त्रता से पूर्व वनस्थली का बालिका विद्यालय, महिला शिक्षा का एक अभूतपूर्व केन्द्र न केवल राजस्थान के लिए बना वरन् उसकी ख्याती सम्पूर्ण भारत में विस्तारित हुयी। जयपुर राज्य में 1930 के पश्चात् कन्या विद्यालयों का निरन्तर विस्तार हुआ था। 1933 में कन्या विद्यालयों की संख्या जो 18 थी 1940 में बढकर 38 हो गयी थी। निश्चित रूप से इसके कारण आम क्षेत्रों में प्राथमिक शिक्षा का विस्तार हुआ तथा महिला शिक्षा हरिजन एवम् दलितों की शिक्षा के लिए भी उपयुक्त वातावरण बना था जो कि निश्चित रूप से जयपुर राज्य की जनता में जनचेतना जागृत करने वाला प्रमुख कार्यक्रम सिद्ध हुआ।*

==

राजस्थान में 1818 से पहले शिक्षा का प्रसार निजी व्यक्तियों व संस्थाओं के योगदान व उपयोगिता पर निर्भर करता था। 19वी सदी के मध्य में शिक्षण संस्थाऐं प्रारम्भिक व उच्च स्तर पर जातियों और धर्म के अनुसार होती थी जैसे चटशालाऐ, पाठशालऐं, हिन्दुओं तथा मन्दिरों द्वारा चलाई जाती थी, उपासरे जैनियों द्वारा तथा सकतब

========================

* जयपुर राजस्थान।

मुसलमानों द्वारा चलाये जाते थे।[1] ब्रुक एज.जी.जी के अनुसार उस समय जयपुर राज्य में ही 500 स्कूल थे जो पीढियों से चले आ रहे थे। ये स्कूल जनता की आवश्यकता पूर्ति हेतु व्यापार, वाणिज्य, पैसे का हिसाब किताब आदि विषय पर पर्याप्त शिक्षा प्रदान करते थे। उच्च शिक्षा मीमांसा, व्याकरण विषय व धार्मिक ज्ञान को बढाने वाली थी इस समय अध्यापकों का वेतन मन्दिरों, मस्जिदें व सामाजिक संगठनो द्वारा दिया जाता था। लड़कियों की प्रारम्भिक शिक्षा भिन्न नहीं थी लेकिन उच्च शिक्षा घर पर ही मौखिक व आनौपचारिक होती थी जिसमें लड़कियों को सांस्कृतिक व धार्मिक मूल्यों के साथ-साथ गायन व नृत्य की शिक्षा अनिवार्य रूप से दी जाती थी। डा0 राजकुमारी कौल ने लम्बी सूची रानियों व राजकुमारीयों की दी है जिनका साहित्यक ज्ञान काफी था। उनमें से कुछ की मौलिक रचनाऐं जयपुर संग्रहालय में हस्तलिखित ग्रन्थों के रूप में उपलब्ध हैं।जयपुर संग्रहालय के चित्रों में स्त्रियों की घुडसवारी की योग्यता पता चलती है व रानियों के प्रशासन संचालन की क्षमता का तो बहुत स्थानों पर वर्णन है। इसलिए लडकियों की शिक्षा की व्यापकता से इन्कार करना अऐतिहासिक होगा।[2]

अंग्रेजी सत्ता की स्थापना के पश्चात् आधुनिक शिक्षा प्रणाली का प्रसार हुआ तथा इस शिक्षा का मुख्य उद्देश्य पश्चिमी देशों के इतिहास व अग्रेजी भाषा के ज्ञान को देना, प्रचारित, प्रसारित करना था। 19 सदीं के अन्त में भारत में कुछ स्कूल व महाविद्यालय खोले इस क्रम में राजस्थान में भी अजमेर, जयपुर, जोधपुर में महाविद्यालय खुले। 1901 के पश्चात् राज्यों के सीमित साधनों को अग्रेजी शिक्षा के प्रसार में लगा दिया गया जिसमें पारम्परिक शिक्षा संस्थाओं व लड़कियों की शिक्षा पर विपरीत प्रभाव पड़ा क्योकि जहाँ पारम्परिक शिक्षण संस्थाओं के साधन कम हो गये वहीं समाज में यह माना जाता था कि निम्न वर्गो को ईसाई धर्म की ओर आकर्षित करने के लिए ये शिक्षण संस्थान खोले गये हैं। जिससें अच्छे परिवारों की लड़कियों ने इन शिक्षण संस्थाओं में जाना कम कर दिया। कुछ सामाजिक भेदभाव भी आधुनिक शिक्षा प्रसार में बाधक बने।[3]

जयपुर राज्य में इस सन्दर्भ में 20 वीं शताब्दी के आरम्भ में यद्यपि अंग्रेजी शिक्षा के प्रसार हेतु जयपुर व प्रमुख नगरों में कुछ माध्यमिक विद्यालयों की स्थापना हो चुकी थी लेकिन वास्तविक स्थिति यह थी कि ये विद्यालय सामान्य जन की शिक्षा के लिए पर्याप्त नहीं थें। इस अपर्याप्तता को प्रायः सभी सामाजिक कार्यकर्ताओं ने महसूस किया व शिक्षा में सुधार पर अपने-अपने स्तर पर प्रयास किये। 1920 के पश्चात् सभी सामाजिक कार्यकर्ताओं ने शिक्षा पर कार्य करना इसलिए भी आवश्यक समझा था क्योंकि इस समय लोक शिक्षा के विकास व विस्तार पर सरकारी खर्च बहुत कम किया जाता था।[4] उदाहरण के लिए सेठ जमुनालाल बजाज ने सीकर के ए.आर.ख्वाजा. को पत्र लिखकर सीकर क्षेत्र में लोक शिक्षा के विस्तार की कमी पर चिन्ता जताई थी। इसके लिये ए. आर. ख्वाजा ने भी इस संदर्भ में कार्य करने के लिए आश्वस्त किया था।[5] इसी संदर्भ में उल्लेखनीय बात यह है कि जमुनालाल बजाज ने सीकर में स्थित माधव स्कूल को अपने प्रयत्न से हाई स्कूल बनाने की चेष्टा की थी जो कि उनकी इस क्षेत्र में शिक्षा के विकास के प्रति जिज्ञासा का प्रतीक है।[6]

जयपुर राज्य के क्षेत्र में समाज सुधारकों ने निजी क्षेत्र में शिक्षा के विकास पर अधिक बल दिया था इसका मूल कारण यह था कि 1920 के पश्चात् जिस प्रकार ब्रिटिश

भारत में अंग्रेजी शिक्षा पद्धति के विरूद्ध एक विचार पनपा था कि समाज में ऐसी शिक्षा व्यवस्था स्थापित की जाए जो कि सही अर्थ में भारतवासियों में राष्ट्रीय चेतना का भाव पैदा कर सके इसलिए कुछ राष्ट्रीय शिक्षण संस्थाओं की स्थापना हुयी थी, इनमें हम बंगाल में रवीन्द्र नाथ टैगोर द्वारा स्थापित शान्ती निकेतन, बनारस में स्थापित काशी विद्यापीठ, दिल्ली में जामिया मिलिया इस्लामिया तथा गुजरात विद्यापीठ का उल्लेख कर सकते हैं। 1920 के पश्चात् महात्मा गांधी ने भी राष्ट्रीय शिक्षा के प्रसार पर बल दिया और इसलिए ही देशी राज्यों में जो भी समाज सुधार कार्य आरम्भ हुए उनमें शिक्षा को प्रमुख स्थान दिया गया था। प्रायः सभी समाज सुधारको ने शिक्षा के महत्व को स्वीकारा।[7]

जुमनालाल बजाज व सीताराम सेकसरिया ने शेखावटी क्षेत्र के मारवाडी व्यापारियों को अपने-अपने मूल निवास स्थान में अपनी क्षमता के अनुसार शिक्षा के लिए विद्यालय व महाविद्यालयों की स्थापना के लिए प्रोत्साहित किया था। इसी का नतीजा था कि सेठ गोपी कृष्ण रामका ने 1920 में डीडवाना में श्री राम प्राइमरी स्कूल की स्थापना की। ऐसे ही 1923 में शेखावटी क्षेत्र के बासवा ग्राम में वहां के जैन समुदाय ने एक प्राथमिक विद्यालय स्थापित किया। 1924 में रामकृष्ण डालमिया ने अपने गांव डालमिया में प्राथमिक विद्यालय स्थापित किया था। इसी प्रकार फतेहपुर में सेठ गोरखराम चामडिया ने एक कन्या प्राथमिक विद्यालय स्थापित किया। 1926 में शिक्षा मण्डल शेखावटी ने ग्राम वलूदा जायरी दूधवा पाटन व मण्डरेला में प्राथमिक विद्यालय स्थापित किया। 1929 में चिडावा के सेठ सूरजमल शिव प्रसाद ने शेखावटी के लगभग 50 गांवों में प्राथमिक विद्यालय स्थापित किये थे। यह क्रम आगे भी चलता रहा तथा इस कार्य में उल्लेखनीय योगदान सेठ धनश्यामदास बिडला ने किया जबकि उन्होंने अपने मूलस्थान पिलानी में बिडला एजुकेशन ट्रस्ट की स्थापना की। इसके अन्तर्गत 1935 से लेकर 1942 तक शेखावटी क्षेत्र में अनेक गांवों में प्राथमिक विद्यालय स्थापित किये थे। इन गांवों में हम कुछ का उल्लेख कर सकते है जैसे- ग्राम डांडर, दूधवा, देहरौल, मल्हार, रामपुरा, चनवारा, लेसर, कोहरू, देवराला, डॉडरिया, धादोती, बीवासर, हनुमानपुरा, झुन्झुनु, मोहनपुरा, कांकरिया, झारी, छिपलाता, कैरू, नीमकाथाना, स्वरूपसर, मूँढीयागढ, सोनासर, बथेरा, कलियाणी, गोठ, पूरणवास, सिहोरा, देवगांव, ढाँणी, दंगियाँ, बसन्दा, बाहारू, सनवालोद, मॉडलगढ़, टोडॉ, रामसिसर, खेडासर, खण्डूम्बरा, बरसिंहपुरा, मानसिंह की ढाणी, खेडो, सखारी, भिरूदाँ, दूल्हा की ढाँणी, भोणासर व बरनी।[8]

निजी क्षेत्र में मिडिल विद्यालय एवम् हाईस्कूल के स्तर के विद्यालयों की भी स्थापना हुयी थी। टीकमाणी परिवार ने राजगढ में 1928 में एक मिडिल विद्यालय स्थापित कराया। ऐसे ही बींजराज रामेश्वरलाल ने 1928 में एक मिडिल विद्यालय की स्थापना की थी। 1930 में सेठ बिहारी जमुनादास ने बिसाऊ में राधाकृष्ण बिहारीलाल माध्यमिक स्कूल की स्थापना की। सेठ रामकृष्ण परशुराम रामपुरिया ने खण्डेला में माध्यमिक स्कूल की स्थापना की। 1931 में फतेहपुर में चाँवडिया परिवार ने चाँवडिया मिडिल स्कूल स्थापित किया। 1932 में रूईया परिवार ने रामगढ में रूईया मिडिल स्कूल स्थापित किया। पोद्दार परिवार ने 1933 में नवलगढ पोद्दार हाईस्कूल की स्थापना की। 1936 में सेठ विष्णुदयाल सुरेखा ने फतेहपुर में सुरेखा मिडिलस्कूल की स्थाना की। ऐसे ही हरिराम गोयनका ने ढूमदोडा में 1938 में मिडिल स्कूल स्थापित किया। सेठ बृजलाल विशेष ने 1940 में

लक्ष्मणगढ में एक हाईस्कूल की स्थापना की। सेठ गाविन्दराज बजाज ने 1941 में ए.बी. माध्यमिक स्कूल बिसाऊ में स्थापित किया। 1943 में जयपुर में जैन समाज ने भी श्वेताम्बर मिडिल स्कूल व तेरापन्थी मिडिल स्कूल स्थापित किया।

निजी क्षेत्र में कन्या पाठशालाओं की स्थापना बहुत कम हुयी। जयपुर में 1918 में जैन समाज ने सुबोध बालिका स्कूल स्थापित किया। 1925 में जैन श्वेताम्बर समाज ने वीर बालिका माध्यमिक विद्यालय स्थापित किया। 1930 में सूरजनारायण सेठी ने भी महावीर जैन माध्यमिक विद्यालय स्थाापित किया। आमेर के सेठ रामप्रसाद ने 1934 में कालाडेरा में एक कन्या पाठशाला स्थापित की थी। ऐसे ही 1941 में श्रीमति लक्ष्मीदेवी सोगाणी ने जयपुर में मेला विद्यालय स्थापित किया। इस विवेचना से यह स्पष्ट है कि 1920 के पश्चात् जयपुर राज्य के अन्तर्गत जयपुर के बाहर रहने वाले प्रवासी मारवाडी व्यापारियों ने जनचेतना विकसित करने की दृष्टि से लोकशिक्षा के विकास व विस्तार पर बल दिया था और उसके लिए प्रशन्सात्मक सहयोग भी दिया।[9]

जयपुर राज्य में महिला जीवन को पूर्ण समुन्नत रूप प्रदान करने में पण्डित हीरालाल शास्त्री का महत्वपूर्ण योग रहा है। यह एक संयोग की बात थी कि वनस्थली ग्राम में ग्रामसुधार कार्यक्रम को चलाने के लिए जिस जीवन कुटीर संस्था की स्थापना की गयी थी उसी के अर्न्तगत उन्होंने बालिकाओं की शिक्षा के लिए 1935 में शिक्षा कुटीर की स्थापना की। जिसके पीछे मूल प्रेरणास्त्रोत उनकी प्यारी बेटी शान्ताबाई थी, जो अचानक अकाल मृत्यु से शान्त हुयी थी। शिक्षा कुटीर में एक आदर्श, महिला शिक्षा के सिद्धान्त को अपनाकर कार्य आरम्भ हुआ। जिसमें कई वर्षो तक कन्याओं को निःशुल्क शिक्षा देने की व्यवस्था की गई। इस शिक्षा व्यवस्था की विशेषता यह थी कि इसमें कन्याओं के बहुमुखी विकास पर विशेष ध्यान दिया जाता था। इस कार्य की महत्ता इस तथ्य से स्पष्ट होती है कि इस निर्जन ग्राम में महिला शिक्षा चलाने का जो काम शास्त्री जी ने किया था, उसके प्रति उनके अनेक प्रभाववान मिलने वालों ने निरन्तर सन्देह व्यक्त किया पर इससे उनके मन की निष्ठा कमजोर नहीं हुयी थी। इसलिए यह महिला शिक्षा का कार्य निरन्तर बढता चला गया। कुछ समय बाद शिक्षा कुटीर का नाम राजस्थान बालिका विद्यालय कर दिया गया। 1938 में जयपुर में प्रजामण्डल का पहला अधिवेशन हुआ था तो उसमें वनस्थली की छात्राओं ने भी भाग लिया। स्वतन्त्रता के पूर्व वनस्थली की शिक्षा व्यवस्था राष्ट्रीय भावना से निरन्तर प्रेरित रही। समय के साथ यह शिक्षण संस्था निरन्तर विकसित होती गयी तथा यहां हाईस्कूल, इन्टरमीडिएट, बी.ए. एम.ए. स्तर की कक्षाऐं आरम्भ करके कन्याओं को पूर्ण शिक्षा सुविधा उपलब्ध कराने की व्यवस्था की गई। यह ठीक है कि इस संस्था का कार्यक्षेत्र सीमित था तथा संख्यात्मक दृष्टि से इसमें अधिक कन्याओं को शिक्षा की सुविधा नहीं दी जा सकती थी परन्तु उस समय को देखते हुए जबकि घर ने रहते हुए भी कन्याओं को शिक्षा देने की कल्पना नहीं की जाती थी। वनस्थली के शिक्षा कार्यक्रम की महत्ता अधिक बढ जाती है। इस संस्था ने उस समय महिला नवोत्थान के लिए एक अभूतपूर्व आर्दश प्रस्तुत किया जिससे समाज में महिलाओं के प्रति दृष्टिकोण को बदलने में अवश्य मदद मिली।[10]

वैसे जयपुर राज्य प्रजामण्डल से सम्बद्ध प्रायः सभी कर्मठ कार्यकर्ताओं ने लोकशिक्षा के विकास के लिए अपने अपने स्तर पर प्रयास किया था। श्री दौलतमल भण्डारी ने अपने

सार्वजनिक कार्य में जनशिक्षा के विकास के लिए सक्षम व समर्थ लोगों को निरन्तर प्रेरित किया था। श्री रेवाशंकर शर्मा ने पिछड़ी जातियों में उत्थान के लिए हरिजन पाठशाला के कार्य में महत्वपूर्ण योगदान दिया था। उन्होंने यथासंभव जयपुर राज्य के क्षेत्र में नारी शिक्षा के विकास के लिए भी कार्य किया था। ऐसे ही हम शान्ती स्वरूप डाटा व मुक्तिलाल मोदी का भी उल्लेख कर सकते हैं। जिन्होंने प्रजामण्डल के कार्यो का दायित्व निभाते हुए लोगों में सामाजिक व राजनीतिक चेतना पैदा करने के लिए लोकशिक्षा के विकास पर बल दिया था।[11]

यह एक स्पष्ट तथ्य है कि 1936 में जब जयपुर राज्य प्रजामण्डल का पुनर्गठन किया गया था तो प्रजामण्डल के विधान में भी संशोधन किया था तथा प्रजामण्डल को अधिक जन आधार प्रदान करने के लिए उसके कार्यक्रम में रचनात्मक कार्यो का अधिक से अधिक समावेश करने का निश्चय किया गया। प्रजामण्डल का एक प्रमुख उद्देश्य यह भी निश्चय किया गया था कि जनता में शिक्षा का सार्वजनिक विकास किया जाए व उनके बौद्धिक विकास के लिए वाचनालय पुस्तकालय खोले जाए। इसमें यह बात स्पष्ट थी कि जयपुर राज्य पर उस वातावरण का असर था जो कि समाज सुधार के कार्यक्रम के कारण धीरे धीरे लोगों के मन में चेतना पैदा कर रहा था। 1940 के पश्चात् जयपुर में महारानी गायत्री देवी पब्लिक स्कूल कन्या शिक्षा के लिए अंग्रेजी माध्यम से शिक्षा देने का एक आधार बनी। ऐसे ही महाविद्यालय स्तर की शिक्षा देने के लिए महारानी इन्टरमीडिएट कॉलेज स्थापित किया जिसे 1947 में महाविद्यालय के रूप में परिवर्तित कर दिया गया था।[12]

जयपुर राज्य प्रजामण्डल के कार्यकर्ताओं के द्वारा पिछडी जाति के विकास व विस्तार के लिए भी अलग से शिक्षा देने का प्रयत्न किया गया था। यद्यपि इस सन्दर्भ में पर्यान्त आंकडो का अभाव है परन्तु प्रजामण्डल से सम्बन्धित कर्मठ कार्यकर्ताओं के साक्षात्कार के दौरान यह तत्व उभर कर सामने आया कि सभी ने हरिजनों व दलितों को शिक्षित करने का प्रयास किया था। मुक्तिलाल मोदी, शान्ती स्वरूप डॉटा, रूपचन्द्र सोगाणी, दौलतमल भण्डारी आदि सभी इस बात का स्वीकारते हैं कि प्रजामण्डल ने इस क्षेत्र में प्रत्यक्ष व परोक्ष रूप से महत्वपूर्ण कार्य किया था।[12] हकीम मोहम्मद इब्राहिम के अनुसार हरिजनों हेतु न केवल सामाजिक कार्यकर्ता रात्रि पाठशाला चलाकर अक्षर ज्ञान देते बल्कि उन्होंने स्वयं ने मुस्लिम बच्चों के स्कूलों में हरिजनों बच्चों को दाखिल करवाकर शिक्षित करने का प्रयास किया था।[13]

उपरोक्त विवेचना से यह स्पष्ट है कि जयपुर राज्य सामाजिक कार्यकर्ताओं व जयपुर राज्य प्रजामण्डल के मूल कार्यक्रम में लोकशिक्षा के विकास व विस्तार को एक सहयोग कार्यक्रम के रूप में अपनाकर महत्वपूर्ण कार्य किया गया था। तथा सभी कार्यकर्ताराज्य प्रजामण्डल लोक शिक्षा के विकास व विस्तार के लिए पूर्णतः कृत संकल्प थे। इस दिशा में प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से कार्य करना उनके कार्यक्रम का एक अंग बन गया था, क्योंकि दोनों के पास निरन्तर धन का अभाव रहता था। इसलिए इनके द्वाराहालांकि सीधे विद्यालयों की स्थापना का कार्य नहीं किया जा सका लेकिन फिर भी जयपुर राज्य के सामाजिक कार्यकर्ताओं व प्रजामण्डल से सम्बद्ध जो कुछ प्रवासी व्यापारीयों ने शिक्षा के कार्य को समुन्नत बनाने व चेतना प्रसारित करने में महत्वपूर्ण योगदान दिया। इनमें हम स्वयं प्रजामण्डल के अध्यक्ष जमुनालाल बजाज के अलावा घनश्यामदास बिडला, सीताराम

सेकसरिया, भागीरथ कनोडिया व नवलगढ के सेठ रामेदव पोद्दार का विशेष रूप से उल्लेख कर सकते है। जिन्होंने जयपुर राज्य के क्षेत्र में तथा विशेष रूप से शेखावटी मण्डल में लोकशिक्षा के विकास व विस्तार के लिए प्रयत्न किया। जिनके कार्य की विवेचना पूर्व में की जा चुकी है। इसी कार्यक्रम से प्रेरणा लेकर प्रजामण्डल के एक प्रमुख कार्यकर्ता पण्डित हीरालाल शास्त्री ने भी वनस्थली ग्राम में स्त्री शिक्षा का एक छोटा सा प्रयोग 1935 में वनस्थली विद्यापीठ की स्थापना से आरम्भ किया और धीरे धीरे यह संस्था और संस्था के प्रति शास्त्री जी का शैक्षिक काम निरन्तर विकसित व विस्तारित होता चला गया। स्वतन्त्रता से पूर्व वनस्थली का बालिका विद्यालय, महिला शिक्षा का एक अभूतपूर्व केन्द्र न केवल राजस्थान के लिए बना वरन् उसकी ख्याती सम्पूर्ण भारत में विस्तारित हुयी।[14] जयपुर राज्य में 1930 के पश्चात् कन्या विद्यालयों का निरन्तर विस्तार हुआ था। 1933 में कन्या विद्यालयों की संख्या जो 18 थी 1940 में बढकर 38 हो गयी थी। निश्चित रूप से इसके कारण आम क्षेत्रों में प्राथमिक शिक्षा का विस्तार हुआ तथा महिला शिक्षा हरिजन एवम् दलितों की शिक्षा के लिए भी उपयुक्त वातावरण बना था जो कि निश्चित रूप से जयपुर राज्य की जनता में जनचेतना जागृत करने वाला प्रमुख कार्यक्रम सिद्ध हुआ।[15]

==============

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची-

1. डॉ. एम.एस. जैन, आधुनिक राजस्थान का इतिहास-पंचशील प्रकाशन जयपुर 1988 पृ. 275
2. डॉ. एम.एस. जैन, आधुनिक राजस्थान का इतिहास-पंचशील प्रकाशन जयपुर 1988 पृ. 276
3. सन्तोष यादव, उन्नीसवीं और बीसवीं शताब्दी में स्त्रियों की स्थिति- प्रिन्टवेंलपब्लिशर्स 1987-पृष्ठ 168-169
4. जी.सी. शर्मा, हिस्ट्री ऑफ एजुकेशन इन राजस्थान
5. जमुनालाल बजाज पेपर्स, पत्र व्यवहार- देशी रियासतों के कार्यकताओं से सीकर के ए.आर. ख्वाजा से पृष्ठ 6, 7
6. जमुनालाल बजाज पेपर्स-पत्र व्यवहार- ए. आर. ख्वाजा का जमुनालाल बजाज से-पृ. 9,10
7. ताराचन्द - भारतीय स्वतन्त्रता आन्दोलन का इतिहास खण्ड II-सूचना और प्रसारण मन्त्रालय भारत सरकार 1891 पृष्ठ 168-185
8. एस.एन. तिवारी- रोल ऑफ बिजनेश कम्यूनिटी इन फ्रीडम मूवमेन्ट- आलेख पब्लिशर्स एम.आई.आर.जयपुर 1991 - पृष्ठ 158-166
9. एस.एन. तिवारी- रोल ऑफ बिजनेश कम्यूनिटी इन फ्रीडम मूवमेन्ट- आलेख पब्लिशर्स एम.आई.आर.जयपुर 1991-पृष्ठ 167- 175
10. पण्डित हीरालाल शास्त्री - प्रत्यक्ष जीवन शास्त्र - आदित्य ग्रन्थमाला पुष्प 5-1974 पृष्ठ 58-64
11. समाजिक कार्यकर्ता दौलतमल भण्डारी, रेवाशंकर शर्मा, मुक्तिलाल मोदी, शान्तस्वरूप डाटा सेमेरे द्वारा लिये गये निजी साक्षात्कार के आधार पर
12. 1. भगवान दास केला- देशी राज्य में जनजाग्रति - भारतीय ग्रन्थमाल दारागंज इलाहाबाद 1948 - पृष्ठ 252-253
    2. पण्डित हीरालाल शास्त्री- जयपुर राज्य प्रजामण्डल की तृतीय वार्षिक रिपोर्ट 1941
13. समाजिक कार्यकर्ताओं हकीम मोहम्मद इब्राहिम के साथ मेरे द्वारा लिये गये निजी साक्षात्कार के आधार पर
14. 1. एस.एन.तिवारी- रोल ऑफ बिजनेश कम्यूनिशीयन फ्रीडम मूवमेन्ट- आलेख पब्लिशर्स एम. आई.आर. जयपुर 1991- पृष्ठ 167 से 175
    2. पण्डित हीरालाल शास्त्री- प्रत्यक्ष जीवन शास्त्र- आदित्य ग्रन्थमाला पुष्प 5-1974 पृ. 58-64
15. सन्तोष यादव- उन्नीसवीं और बीसवीं में स्त्रियों की स्थिति-प्रिन्ट वैल पब्लिशर्स 1987 पृष्ठ 49-62

Research Journal of Arts, Management and Social Sciences,
Vol. XVIII, Hindi.-I, Year IX, March, 2018
UGC Sl. No. 2138, Journal No.48774, Impact Factor 2.996

नागार्जुन के उपन्यास में सामाजिक यथार्थ

* सरिता नागवंशी

सारांश- सामाजिक यथार्थ का अर्थ होता है, समाज की वास्तविक अवस्था का यथार्थ चित्रण। परंतु साहित्य के अंदर किसी भी वस्तु का तद्भव चित्र उतार कर रख देना कठिन होता है, क्योंकि साहित्यक चित्र कैमरे द्वारा लिया गया चित्र नहीं होता बल्कि वह साहित्यकार की कूँची के द्वारा चित्रित किया गया ऐसा चित्र होता है, जिसमें साहित्यकार के अनुभव एवं कल्पना के सुन्दर रंग ढले होते है। सामाजिक विषमताओं, भ्रष्टाचारों तथा वैयक्तिक स्वार्थी से आक्रान्त, पीड़ित समाज की दयनीय परिस्थितियों को उसके वास्तविक रूप में समाज के सामने प्रस्तुत करना सामाजिक यथार्थवाद का प्रधान लक्ष्य है। सामाजिक यथार्थवादी साहित्यकार समाज और व्यक्ति के पारस्परिक सम्बन्धों उसके प्रत्येक आचार-विचारों तथा उसकी राष्ट्रीय आर्थिक एवं नैतिक अवस्थाओं का मूल्याकंन तत्कालीन परिस्थितियों के आधार पर करता है। वह केवल, समाज जैसा है, जैसा ही उसका वर्णन मात्र नहीं कर देता, बल्कि उसको इस रूप में प्रस्तुत करता हैं, जिससे पाठक युग के सत्य एवं समाज में होने वाले कार्य-व्यापारों के औचित्य तथा अनौचित्य को सरलता से परख सकें।

मिथिलांचल की भूमि से नागार्जुन का प्रत्यक्ष संबंध रहा हैं उनका जन्म निम्न मध्यवर्गीय ब्राह्मण समाज में हुआ था। वह समाज की परंपराओं और रूढ़ियों से अच्छी तरह से परिचित थे। बाबा नागार्जुन के उपन्यास में चित्रित ग्रामीण समाज अत्यंत पिछड़ा हुआ था। समाज अनेक प्रकार की सामाजिक समस्याओं में जकड़ा हुआ था। विधवा विवाह, अनमेल विवाह, वेश्यावृत्ति बहुविवाह प्रथा, नारी का क्रय-विक्रय, जातिवाद, छुआछूत की समस्या ने ग्रामीण समाज की जड़ो को खोखला बना दिया था। बाबा नागार्जुन का उपन्यास रतिनाथ की चाची उस समय के सामाजिक यथार्थ को दर्शाने वाला प्रमुख उपन्यास है। ग्रामीण समाज में तरूण विधवा की स्थिति अत्यन्त दयनीय थी। गौरी के पिता चुम्मन झा ने कुलीनता की दृष्टि से बड़े परिवार में, मगर आर्थिक दृष्टि से विपन्न मैथिल ब्राह्मण परिवार के दमे के रोगी और प्रकृति से सुस्त व्यक्ति से गौरी का विवाह कर दिया। जो एक पुत्र उमानाथ और एक पुत्री प्रतिभामा को छोड़कर इस संसार से विदा ले चुका था। रूढ़िवादी पारंपरिक समाजों में विधवाओं को कोई सुरक्षा प्राप्त नहीं होती। गौरी के साथ भी ऐसा ही हुआ गौरी का देवर जयनाथ रूग्ण मानसिकता का कामुक चरित्र वाला व्यक्ति था, जो गौरी को अपनी कामवासना का शिकार बनाता हैं और गौरी के गर्भवती होने पर वहाँ से भाग जाता है। उसके जीवन की सबसे बड़ी विडम्बना यह है, कि यद्यपि जयनाथ द्वारा उसका सतीत्व नष्ट होता हैं, किंतु समाज में बदनाम गौरी होती है।

* अतिथि विद्वान, हिन्दी, राजमाता सिंधिया शा. स्नात्कोत्तर कन्या महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.)

''स्त्रियों की विशेषकर ग्रामीण स्त्रियों का स्वभाव होता है, कि वे एक दूसरे को नीचा दिखाने का अवसर ढूढंती रहती है। कोई छोटी सी भी बात क्यों न हो यदि गाँव की एक स्त्री को मालूम हुई तो गाँव तमाम में फैल जाती है। गौरी के कलंक की बात भी इसी प्रकार फैलने में देर न लगी। गाँव की स्त्रियां सजातीय होने पर भी गौरी के साथ सहानुभूति प्रदर्शित करने अथवा किसी प्रकार की सहायता देने की अपेक्षा उसका मखौल ही उड़ाती है।''[1] गौरी का सामाजिक बहिष्कार किया जाता है। ''उमानाथ की माँ व्यभिचारिणी है, पतिता है, भ्रष्टा है, कुल्टा है, उससे हमें किसी प्रकार का संबंध नहीं रखना चाहिए। बोल-चाल बन्द। बात-विचार बन्द। प्रत्येक विचार बन्द।''[2]

सामंती समाज व्यवस्था में कुलीन वर्ग में बहुविवाह सामाजिक प्रतिष्ठा का विषय माना जाता था। सामंतो से लेकर जमींदारों में यह प्रथा प्रचलित थी। बहुविवाह प्रथा के कारण समाज में नारी पर अत्याचार एवं शोषण बढ़ गए थे। पारो उपन्यास में लूचझा एक ऐसे स्थार्थी और भ्रष्ट व्यक्ति है जो नवयुवतियों को बूढ़े लोगों से शादी कराके अपना जीवनयापन करते है, और स्यं दो-दो पत्नियाँ रखकर नारी के शोषण और उत्पीड़न को बढ़ाते है। ''तिब्बत में जैसे बहुपति प्रथा अभी तक जायज और जीवंत है, उसी तरह रतिनाथ की मिथिला में बहुपत्नी प्रथा जायज और जीवित है। सौराठ इन लोगों का बड़ा बाजार है।''[3]

मिथिलांचल के समाज अनेक सामाजिक एवं आर्थिक विषमताएँ मौजूद है, जिससे आर्थिक अभाव ने जन्म लिया है। ग्रामीण समाज आर्थिक अभाव, परिस्थितियों के कारण नारी विक्रय के लिए बाध्य है। वही दूसरी ओर उच्च वर्ग का समाज खासतौर पर ब्राह्मण वर्ग कुलीनता के अहंकार के कारण अपनी लड़कियों का विक्रय करते है। पारो उपन्यास में पुद्धी चौधरी ऐसे ही ब्राह्मण है, जो कुलीनता के झूठे दिखावे के कारण अपनी छोटी सी बेटी को अट्ठावन साल के बूढ़े से बांध दिया है। ''गाँव के पंडित पुद्धि चौधरी ने अपनी कली जैसी लड़की के लिए अट्ठावन वर्षो का वर ला दिया। कारण कि उसने आठ सौ रूपये उन्हें दिए।''[4] ये ऐसा जालिम समाज था, जो धन प्राप्ति की लालच में अपनी फूल जैसी बेटी का जीवन बर्बाद कर देते थे। नयी पौध उपन्यास के खोंखा पंडित ऐसे ही लालची और स्वार्थी पंडित थे, जो पैसों के लोभ के कारण अपनी सारी लड़कियों को बेच चुके थे, अब चौदह वर्षीय विसेसरी का विवाह सौराठ की सभा में साठ साल के चतुरानन चौधरी से तय कर आये है। इससे पूर्व भी वह रामसेरी को छोड़कर बाकी ''छहों बेटियों को बेच चुके थे। महेसरी से उन्हें 1100/- मिले थे। भुवनेसरी से 800/- मिले थे। गुनेसरी से 600/- मिले थे। गुंजेसरी से 1000/- मिले थे। बानेसरी से 600/- मिले थे। धनेसरी से 900/- मिले थे। और अव बिसेसरी का नम्बर था। फसल तैयार खड़ी थी कटने भर का विलंब था।''[5]

समाज में आर्थिक परिस्थितियाँ ही थी, जो बाद में अनमेल विवाह का कारण बनती है। उग्रतारा उपन्यास में आर्थिक परिस्थितियों के दबाब के कारण न चाहते हुए भी उगनी को भभीखन सिंह सिपाही से विवाह करना पड़ता है। यह विवाह उसके लिए बलात्कार से कम नहीं था। ''ठीक है, भभीखन सिंह ने वैदिक विधियों से शादी की थी। ठीक है, आधे घंटे तक अग्नि में आहुतियां डाली गई थी। तोला-भर सिन्दूर मांग के बीचों बीच कई दिनों तक जमा रहा.....लेकिन स्त्री-पुरूष के बीच उम्र का इतना बड़ा फासला किस तरह मखौल

उड़ा रहा था, विवाह संस्कारों का !''[6] उगनी पति के रूप में भभीखन सिंह से संतुष्ट नहीं थी, उसमें उसे 'घरवाला' तो मिल रहा था, पति नहीं मिल रहा था। पति और पत्नि के बीच यदि उम्र का ज्यादा फासला हो तो, दोनों एक दूसरे से सामंजस्य नहीं बैठा पाते है। इस अनमेल विवाह का बाद में यह दुष्परिणाम होता है या तो पत्नी किसी के साथ भाग जाती है, या उसकी असमय मृत्यु हो जाती है।

मैथिल ब्राह्मण समाज में पंडितों की अनमेल विवाह सम्पन्न कराने में महत्वपूर्ण भूमिका रही है। यह अपनी लालची प्रवृत्ति और धन प्राप्ति की लालसा में लड़कियों का जीवन अंधकारमय कर देते थे। ''पंडित लोग भी क्या कम जुल्मी होते है। घटकराज लूच झा ऐसे ही है। लूच झा ने पारो के लिए पैंतालीस वर्षीय चुल्हाई चौधरी को चुना है। पढ़ाई-लिखाई मामूली जमीन-जायदाद पर्याप्त है। समाज का ढांचा ऐसा है, कि यहां वर की उम्र कितनी भी हो, लंगड़ा रहे या अन्धा, लूला रहे या काना, कोढ़ी रहे या पगला, बूढ़ा हो या प्रौढ़ पति साक्षात परमेश्वर होता हैं, यही शिक्षा तो अपने यहां छुटपने से ही औरतों को मिलती है। लूच झा के प्रयत्नों से पारो की शादी पैंतालीस वर्षीय चुल्हाई चौधरी से हो जाती है।''[7]

समाज में लड़कियों की स्थिति अच्छी नहीं थी, कहीं परिवार के दबाब के कारण लड़कियों को अपने से दुगनी तिगुनी उम्र के व्यक्ति से शादी करनी पड़ती थी, तो कहीं परिस्थितिवश अपने शरीर बेचने को बाध्य थी। कुंभीपाक उपन्यास की भुवन और चम्पा के साथ ऐसा ही हुआ। भुवन और चम्पा परिस्थितिवश अपना शरीर बेचने को बाध्य होती है। एक नहीं अनगिनत नारियाँ है, जो इसी तरह वेश्याओं का जीवन जीती है। संजीवन आश्रम में विधवाओं, अनाथ और समाज से प्रताड़ित नारियों को आश्रय दिया जाता है, मगर आश्रम की वास्तविकता क्या है। वह चम्पा अच्छी तरह जानती है। चम्पा आर्य-समाजी मगर धर्मभीरू रायसाहब को बताती है, कि इस आश्रम शब्द से घबराती हूँ..... अब तो ये आश्रम अनैतिकता के अड्डे है - स्वार्थियों के अखाड़े। हमारी जैसी मूक असहाय बकरियों को ही नहीं, आप जैसे आर्दशवादी धर्मभीरू बैलों की भी बलि इन आश्रमों के अन्दर चढ़ती आयी है।''[8]

बाबा नागार्जुन के उपन्यासों में चित्रित मिथिलांचल के समाज में जातिवाद का बोलवाला था। उच्चजाति के लोग निम्नजाति के साथ तरह-तरह के अत्याचार करते थे। बलचनमा उपन्यास में बलचनमा मैथिल ब्राह्मण जाति के बारे में कहता है - ''तिरहुतिया बांभन बड़े खटकर्मी होते है छोटी जाति वालों का छुआ नहीं खायेंगें।''[9] भारतीय सजाज में ब्राह्मण ही सर्वेसर्वा है।

निम्न जाति के व्यक्ति को शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार नहीं था। यह अधिकार उच्च वर्ग ने अपने पास सुरक्षित रखा था। उच्च वर्ग नहीं चाहता था, कि निम्न वर्ग शिक्षा प्राप्त कर उनसे आगे बढ़े अपने अधिकारों के प्रति सचेत हो। बलचनमा उपन्यास में मलिकाइन की नंद निम्न वर्ग की शिक्षा के विषय में कहती है- ''नौकर-चाकर जितना नासमझा रहे उतना अच्छा भाभी ! हमारे अजिया-ससुर का कहना था, कि छोटी जात वालों को जो एक आखर भी ज्ञान देता है। उसका अपना ही तेज घटता है, और जो कोई शूद्र को समूची पोथी पढ़ा दे उसके पित्तर स्वर्ग छोड़कर नरक में रहने को मजबूर होते है। असल मुसीबत यह होती हैं, कि पढ़-लिखकर नौकर तुम्हारी बटलोई रगड़ने को बैठा नहीं

रह जायेगा और फिर इन्हें पढ़ाने-लिखाने से फायदा ही क्या?''[10]

समाज में ब्राह्मण वर्ग यह सहन नहीं कर सकता था, कि निम्न वर्ग का कोई व्यक्ति संस्कृत के श्लोक सीख जाये ऐसा करने पर उसे कड़ी से कड़ी सजा भुगतनी पड़ती थी। ''शूद्र है, तो शूद्र की भाँती रहे।''[11] ''नागार्जुन का ग्रामीण समाज मुख्यत: तीन भागों में विभक्त था उच्च, मध्य और निम्न वर्गो में ग्रामीण व्यक्ति का सामाजिक जीवन अनेक प्रकार की रूढ़ियों एवं परंपराओं से जकड़ा हुआ था।''[12]

==============

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची-

1. डॉ. ज्ञान अस्थाना - हिन्दी उपन्यासों में ग्राम समस्याएं, पृ. 201
2. नागार्जुन - रतिनाथ की चाची पृ. 60
3. तेजसिंह - नागार्जुन का कथा-साहित्य पृ. 65
4. नागार्जुन - पारो, पृ. 38
5. नागार्जुन - नई पौध, पृ. 4
6. नागार्जुन - उग्रतारा, पृ. 38
7. तेजसिंह - नागार्जुन का कथा-साहित्य, पृ. 63
8. तेजसिंह - नागार्जुन का कथा-साहित्य पृ. 69
9. नागार्जुन - बलचनमा पृ. 45
10. नागार्जुन - बलचनमा पृ. 115
11. नागार्जुन - रतिनाथ की चाची पृ. 50
12. तेजसिंह - नागार्जुन का कथा-साहित्य, पृ. 60

Research Journal of Arts, Management and Social Sciences,
Vol. XVIII, Hindi.-I, Year IX, March, 2018
UGC Sl. No. 2138, Journal No.48774, Impact Factor 2.996

हिमांशु जोशी के साहित्य में आंचलिकता

* रामनरेश जाटव

सारांश– *हिन्दी में आंचलिक कथाकारों की लम्बी परम्परा की एक कड़ी है। हिमांशु जोशी की कहानियों में आंचलिकता के बढ़ते हुए सन्दर्भ मिलते हैं, जो भावगत और शैलीगत धरातल पर दिखाई देते हैं। हिमांशु जोशी जी की आंचलिक कहानियों का मूल केन्द्र रहा है।*

ग्रामांचल में हिमांशु जोशी स्वयं लिखते हैं - ''बर्फ! पहाड़! जंगल! कच्ची-कच्ची पगडंडियाँ! टूटे-फूटे घर पुआल के! गोबर-मिट्टी से लिपे ऊबड़-खाबड़ पत्थरों के! घरों से उठता हुआ उदास धुआँ। गहरी हिम शीतल घाटियों से बिखरता हुआ ठण्डा कुहासा! दिन-रात तेज गति से उछलती-भागती नदियाँ! उन कूल कगारों पर सैंकड़ों वर्षों से बसे लोग! ठण्डे से ठिठुरते हुए बेहाल! उनके छोटे-छोटे सुख-दुःख! दुःख ही दुःख![1]'' उनकी रचनाओं में आंचलिकता का पुट एक सहज प्रक्रिया के फलस्वरूप आया है। मूलतः ग्रामांचल से जुड़े हुए रहने के कारण लेखक के लिए यह एक सहज गुण रहा है। सत्रांस उसमें कुछ नहीं है। स्वयं रचनाकार के अनुसार- ''इसका प्रमुख कारण यह है कि मैं मूलतः गाँवों में ही रहने वाला हूँ। जो जिन्दगी मैंने जी है, उसका प्रतिबिम्ब साहित्य में होना स्वाभाविक है। अनुभूतियाँ अतीत से आती हैं न।''[2] इस तरह वे अपनी कहानियाँ गाँव की झलक मानते हैं।

जोशी जी गाँव की समस्याओं में साहित्य की जड़ें खोजने का प्रयास करते रहे, उनके दुःखों को अपना दुःख समझते कहानियों के जरिए वाणी देने का प्रयास करते रहे। दिल्ली जैसे महानगर में वास करते हुए भी उनको ग्रामीण परिवेश का मोह नहीं छोड़ पा रहा है। वे स्वयं लिखते हैं - ''मुझे कभी-कभी लगता है, जिस वातावरण में मैं पैदा हुआ, पला, बढ़ा, धूलभरा धुँधला वह अतीत अभी तक, इतनी कृत्रिमता के बीच जीते हुए भी कहीं जीवित है। अपने आँगन से गुजरती गाय, डंगरों के झुण्ड आज भी कभी-कभी मुझे सहज दीख पड़ते हैं। उनके चलने से उड़ती हुई धूल, उनके गले में बँधी घंटियों के स्वर, उनके रँभाने की आवाजें इतनी दूरी से भी मुझे पुलकित कर देती है। मेरे अन्दर मेरे जीवित रहने का अहसास मुझे अपार सुख, अपार सन्तुष्टि में आकण्ठ डुबो देता है।''[3]

इसी तरह जोशी जी महानगरीय कृत्रिम वातावरण में जीवनयापन करते हुए भी गाँव का मोह त्याग नहीं पाये और इसीलिए उनकी कहानियों का आंचलिक परिवेश सीधा-सादा एवं सामान्य जनजीवन का परिवेश रहा है। 'नयी बात', 'अपने ही करीब में', 'रथचक्र', 'कटी हुई किरणें', 'हरे सूरज का देश', 'सीमा से और कुछ आगे', 'पाषाण गाथा', 'एतसास', 'छोटी इ', 'देखे हुए दिन', 'इस बार बर्फ गिरी तो', 'न जानना', 'आँखें', 'एक

* शोध छात्र (हिन्दी विभाग) राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर

वटवृक्ष था', 'तपस्या', 'कटी हुई किरणें', 'अन्ततः', 'फासला', 'रास्ता रुक गया' है, जोशी जी अपनी श्रेष्ठ आंचलिक कहानियाँ मेरे समग्र साहित्य की एक प्रकार से पहचान है। इनमें धूल भी होगी, धुआँ भी। अनगढ़ता भी मिलेगी। फिर भी ये मेरी अपनी हैं। नितान्त अपनी-अपनी जी हुई। देखी हुई। सुनी हुई। अपने अस्तित्व की एक पहचान।''[4] इसी प्रकार ये कहानियाँ उनकी साहित्य-सेवा की एक पहचान हैं। जोशी जी ने अपने आंचलिक परिवेश में ग्रामीण अंचल के साथ-साथ महानगरीय परिवेश पर भी प्रकाश डाला है।

अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से जोशी जी की आंचलिक कहानियों का विभाजन निम्न रूप से किया जा रहा है - सामाजिक चित्रण, वर्गगत चित्रण, आर्थिक व्यवस्था का चित्रण, राजनीतिक चित्रण, धार्मिक एवं सांस्कृतिक चित्रण, कहानियों में अभिव्यक्त भौगोलिकता।

सामाजिक चित्रण-

हिमांशु जोशी जी की कहानियों में अपने परिवेश के प्रति एक संस्कारगत लगाव और आकर्षण दृष्टिगोचर होता है। रचनाकार के मन पर पड़ी वे बचपन की स्मृतियाँ धुल नहीं सकी हैं। अन्तहीन संघर्ष के बाद भी दो जून की रोटी को मोहताज पात्र इन कहानियों के ही नहीं, वे अपने समाज से उत्पन्न उनके शैशव काल के साथी भी रहे हैं। इसी तरह उनकी कहानियों के पात्र एवं परिवेश कुमाऊँ का पर्वतीय परिवेश है।

वर्गगत चित्रण-

आंचलिक कहानी-साहित्य में वर्गीय चित्रण उभरकर आया है। 'मनुष्य चिन्ह', 'अपने ही कस्बे में', 'काला धुआं' कहानियों में पटवारी, पेशकार तथा पुलिस ऐसे घृणित उच्च स्तर के पदाधिकारी हैं जो कानून तथा अधिकारों की शक्ति के कारण निर्भीक भ्रष्टाचारी बन जाते हैं। गाँव, कस्बे के अंचलवासी निकृष्ट से लगते हैं। 'मनुष्य चिन्ह' में पटवारी, पेशकार, तहसीलदार, कलेक्टर तथा हाकिम उच्च वर्ग के प्रतिनिधि पात्र रहे हैं।

निम्नवर्गीय व्यक्तियों का शारीरिक एवं मानसिक शोषण उच्च स्तरीय व्यक्तियों द्वारा होता है तथा मालिकों द्वारा श्रमिकों का शोषण भी जोशी जी ने मध्य एवं निम्न वर्ग का दुर्भाग्य कहा है। शारीरिक शोषण का यथार्थ रूप में चित्रण जोशी जी की कहानी 'मनुष्य चिन्ह' में मिलता है। गांव की बहू-बेटियों को बचाने के लिए गरीब, अभागिन गोविन्दी की बलि दे दी जाती है। इस कहानी में ग्रामीण परिवेश और कायर समाज, स्वार्थ एवं ईर्ष्या का सहज चित्रण मिलता है। किसुनवा के इजा गाँव में यह बात बता देती है कि किरपुआ ने गोविन्दी के साथ 'शरम बात' की पूछताछ के दौरान गोविन्दी के शरीर का बार-बार शोषण किया है। परन्तु वह मौन रह जाती है। कोई प्रतिकार नहीं करती। पूछताछ के बहाने वासना के दरिन्दों का कहीं कोई विरोध करता नहीं नजर आता। परन्तु गोविन्दी का मौन ही ग्रामीण परिवेश की नारी का जीवन्त उदाहरण प्रस्तुत करता है। ग्रामीण परिवेश में पंच परमेश्वर होता है। पटवारी खुदा और गांव वाले पालनहार होने के कारण गोविन्दी जैसी बाल विधवा को प्रतिकार की बात तो दूर, कसमसा पाना भी संभव नहीं हो सकता-यही बात अतिशय लगती है।

'अन्ततः' व्यक्ति का अस्तित्व टूटने की कहानी है। बिरजू एवं उसकी माँ बिनिया में आदर्श मिलता है। बिरजू एक यथार्थवादी पात्र है। वह राम की लीला करने वाले पात्र को स्वयं राम होने की कल्पना करता है परन्तु वास्तव में वह राम की भूमिका निभाने वाले स्वयं

में रावण है। आदर्शों की दुहाई देते समाज में शोषण और भ्रष्टाचार निभाने वाला स्वयं में रावण है। आदर्शों की दुहाई देते समाज में शोषण और भ्रष्टाचार का अन्त नहीं है, यह देखकर बिरजू जैसे न जाने कितने ही किशोर चेतनाओं का अन्त होता है। इसी संदर्भ में डॉ. विवेकीराय का मत है - ''कहानी व्यापक अर्थ में भारत माता के कोटि-कोटि सर्वहारा बिरजुओं के संदर्भ में एक शक्तिशाली व्यंग्य बन जाती है।'' इसी तरह बिरजू समाज में व्याप्त कुरीतियों में आदर्शों को ढूंढ़ता रहा। परन्तु उसे अन्त में मृत्यु का वरण करने के लिए विवश होना पड़ा। यहां कथाकार ने बिरजू के माध्यम से आज के सर्वहारा युवा पीढ़ी पर प्रकाश डाला है।

खेतिहर मालिकों द्वारा श्रमिकों का शोषण 'काला धुआं' कहानी में मिलता है। कहानी का भजन अभावग्रस्तता के कारण विक्षिप्त होकर अपने बच्चे की हत्या कर देता है। गांव वाले उसे मारते हैं, दुत्कारते हैं एवं थूकते हैं। उसकी जवान सुन्दर स्त्री की ओर देखते हुए गांव वाले कहते हैं - ''जो बाप अपने बच्चों के लिए कफन तक के पैसे न जुटा सके, जिस मर्द के जीते-जी औरत दूसरों के खेत में काम करके, दूसरों की जूठन पर अपने बच्चों का पेट पाले, वह बाप बाप कहलाने योग्य नहीं है।'' ऐसा कहकर उसे और मरे हुए बच्चे पर मिट्टी का तेल छिड़ककर मार देना चाहते हैं और चौधरी का लड़का औरत के लिए सब कुछ करने के लिए तैयार हो जाता है क्योंकि वह उसे बहुत चाहता है। इसी तरह असहाय साधनहीन नारी के पास रोने-सुबकने के अतिरिक्त कोई मार्ग नहीं होता। चौधरी गांव का कर्ता-धर्ता है। इस प्रकार जोशी जी ने साधनहीन नारी का हृदय विदारक चित्रण किया है।

'अन्ततः' कहानी का विक्षिप्त बिरजू अपने पगलाये मद में अपनी माँ से पूछता है - ''माई तू आज किसके खेत में काम करने गयी?'' उसके मन में जमींदार के प्रति घोर प्रतिक्रिया उत्पन्न होती है। वह तिमंजिले में तिजारत करने वाले प्रधान के लिए अपशब्द प्रयोग करने में आघात नहीं मानता। भगीरथ मुदर्रिस समझाने लगता है - ''सुमेर प्रधान का घर जलाने को कहता है। कहीं सुन मिला तो खाल उधेड़ देंगे तेरी। जानता नहीं, महाजन है। दो गांव के प्रधान।'' अर्थात् समय कुछ भी कर सकता है। कहानियों में अर्थव्यवस्था के कर्णधार एवं उत्पादन के मूल स्त्रोत, भूमि के स्वामी जमींदारों की आर्थिक स्थिति एवं ग्रामीण जनता के साथ उनके व्यवहार का चित्रण मिलता है। जोशी जी की आंचलिक कहानियों में उपर्युक्त सभी गुण पाये जाते हैं।

विवाह पद्धतियाँ– सामाजिक चित्रण में विवाह पद्धतियाँ भी अपना प्रभाव डालती है। सामाजिक स्तरीकरण में विवाह एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है। आंचलिकता का विवेचन करते समय विवाह पद्धतियों को छोड़ नहीं सकते। इसी परिप्रेक्ष्य में जोशी की कहानियों में अभिव्यक्त विवाह पद्धतियों पर प्रकाश डाला जा रहा है -

ब्राह्म हिन्दू विवाह– आधुनिक हिन्दू समाज में विवाह विधि ब्राह्म विवाह की है। इसमें मुख्य धार्मिक संस्कार, पाणिग्रहण और सप्तपदी है। 'रथचक्र' नामक कहानी में जितू की माँ उसके विवाह के लिए लगन ढूंढ़ने की बात करती है। हिन्दू विवाह में संस्कार के रूप में लगन भी संस्कार है। इस कहानी में ब्राह्म विवाह के संस्कार इसलिए मानते हैं कि जितू के लिए बहू ढूंढ़ ली गयी। बड़े भाई तपन को लिख दिया गया और एक शुभ समय में शादी का दिन भी तय कर दिया गया। लगन का ढूंढ़ा जाना, सुसमय की धारणा आदि

धार्मिक संस्कारों के प्रतीक हैं।

गान्धर्व विवाह– गान्धर्व विवाह नारी और पुरुष के परस्पर प्रेम के फलस्वरूप उत्पन्न होता है। 'कटी हुई किरणें' कहानी में रजियानी तथा हरपतिया का विवाह इसी श्रेणी में आ सकता है। एक का पति रूठ गया, दूसरे की पत्नी स्वर्ग सिधार गयी उन दोनों में प्रेम हो जाता है और विवाह बन्धन में बँध गये। इस कहानी में जोशी जी ने गान्धर्व विवाह की ओर संकेत किया है।

अर्न्तजातीय विवाह– 'कटी हुई किरणें' कहानी में गान्धर्व विवाह के साथ-साथ अन्तर्जातीय विवाह पर भी प्रकाश डाला गया है। कहानी का नायक हरपतिया जात से लोहार है तथा रजियानी मलतार मुसलमान है। दोनों में प्रेम होता है और विवाह कर लेते हैं।

इस प्रकार हिमांशु जोशी के साहित्य में आंचलिकता के अनेक संदर्भ प्राप्त होते हैं।

===============

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची–

1. आंचलिकता और हिन्दी उपन्यास-डॉ. नगीना जैन, पृ. 5
2. सत्रह आंचलिक कहानियां-राजेन्द्र अवस्थी शोध ग्रंथ-सुनीता राघव, पृ. 6
3. श्रेष्ठ आंचलिक कहानियां 'दो शब्द'-हिमांशु जोशी, पृ. 8
4. निजी भेंटवार्ता से जोशी जी के निवास स्थान दिल्ली में दिनांक 13.03.02
5. श्रेष्ठ आंचलिक कहानियां - 'दो शब्द'-हिमांशु जोशी, पृ. 11
6. वही, पृ. 11
7. हिन्दी कहानी-समीक्षा और संदर्भ, पृ. 47
8. जलते हुए डैने तथा अन्य कहानियां-काला धुआं, कहानी-हिमांशु जोशी, पृ. 94

Research Journal of Arts, Management and Social Sciences,
Vol. XVIII, Hindi.-I, Year IX, March, 2018
UGC Sl. No. 2138, Journal No.48774, Impact Factor 2.996

रस चिन्तन की अवधारणा

* अरुणा पाठक

सारांश– *मानवीय भावनाओं में रस का स्थान (प्राण वायु) के समान है, जिस प्रकार प्राणवायु के बिना जीवन का संचार रुक जाता है, उसी प्रकार मानवीय जीवन बिना भावों के संभव नहीं है, क्योंकि यदि हम अपना मस्तिष्क का प्रयोग सोचने में या कुछ काम करने में प्रयोग कर रहे हैं, तब भी कोई न कोई भाव हमारे मस्तिष्क या हृदय में चल रहा होता है, जैसे यदि हम प्रसन्न हैं तो भाव प्रसन्नता (उत्साह) का भाव चल रहा है या हम दुःखी हैं तो करुण रस का यदि हम अपना गृहकार्य या कोई भी कार्य कर रहे हैं, तो भी काम की तृप्ति या संतुष्टि की भाव भी हमारे मन में है। कहने का तात्पर्य कि हम दैनिक जीवन में करने वाले हर काम में हमें एक रस का आनंद प्राप्त होता है, तो वही एक दशा जो हमें जीवन का उद्देश्य पूरा करने में सहायक सिद्ध होती है, वह भाव दशा ही रस है।*

रस एक ऐसी अवस्था है जिसमें मानव डूबा रहता है, चाहे वह कोई भी कार्य करें, जिस प्रकार वायु के बिना जीवन संसार संभव नहीं है, उसी प्रकार बिना रस दशा या भावों के बिना जीवन सम्भव नहीं हैं।

रस का प्रयोग भिन्न अर्थों में–

रस का प्रयोग जीवन में कई तरह से होता है, ''रस'' का अर्थ ''आनंद'' है। जब हम रस की चर्चा करते हैं, अनार या आम का रस, भोजन का रस, खट्टा, मीठा, तीखा, रस, कडबा, रस तो वह एक पदार्थ की तरह का रस है, जिसे हम दैनिक जीवन में प्रयोग करते हैं। इन्हें हमने 'षटरस' की मान्यता दी गई है। जिससे हमें भोजन के रस, कटु, तीखा, अम्ल, लवण तथा मधुर रसों का ज्ञान होता है।

यह रस हमारे जीवन का अंग है, रस का अर्थ है, तरल अर्थात हमेशा संचारित रहने वाला जल की तरह जिस तरह जल हमारे जीवन का आवश्यक अंग है, वैसे जीवन के भिन्न-भिन्न दृष्टिकोण में रस का समावेश है, बस उनका रूप अलग-अलग है।

वेदों में रस का प्रादुर्भाव– वेदों में मधु, दुग्ध, सोम, जल आदि के लिए रस का प्रयोग किया गया है और इन्हें पदार्थ रस कहा गया है। वेदों में ही सबसे पहले रस की कल्पना की गयी है।

ऋग्वेद में रस कभी गो-क्षीर के लिए कभी सोमरस के हेतु रसयुक्तता को प्रगट करने के लिए प्रयुक्त हुआ है। वेदकाल में रस केवल मधु या सोमरस अथवा दुग्ध या जल का ही अर्थ देता रहा।

वेदों में रस स्वाद का आधार लेकर उपनिषद काल में यही रस जीवन का आधार

* अतिथि विद्वान, हिन्दी, एम.एल.सी.टी. कॉलेज, इटौरा, रीवा (म.प्र.)

लेकर मुख्यार्थ को बोधक मानकर प्राणस्वरूप माना जाने लगा, ''वृह्दारण्यकोपनिषद्'' में रस को सारभूत कहा गया है। इसी आधार पर आगे चलकर आयुर्वेद में द्रव्य गुण, धातु शक्ति पदार्थ स्वाद के लिए ''रस'' संज्ञा ग्राहय हुई है।

वेदों में रस शब्द का प्रयोग रसायन, या पारद के अर्थ में करते हैं पूर्वकाल में रस का प्रयोग वीर्य का अर्थ ग्रहण किया गया, कभी जल के रूप में, कुमारशिरीष ने इसे पृथ्वी, जल, वायु, आकाश, और अग्नि में निहित गुण माना जाता है, आत्रेय पुनर्वसु ने षडरस के अर्थ में इनका प्रयोग ''जल'' बताया है, निमि ने षडरसो के अतिरिक्त क्षार, को भी रस माना जाता है।

आयुर्वेद में यह भी बताया गया है, भाव चेष्टा लेह तथा पेय इन चार प्रकार के भोजनों के भोग द्वारा नाना रस की उत्पत्ति होती है, रस को श्वेत शीतल, मधुर, स्निग्ध और गतिशील बताया जाता है, रस और शरीर और धातुओं का पुष्टिकर्ता है। रस की न्यूनता ही अजीर्णता का कारण है, तथापि यह संर्वदेह चर है।

रस शब्द का प्रयोग प्रसंगानुसार भिन्न-भिन्न अर्थो में प्रयोग किया गया है, इन्द्रिय सम्पर्क का बोधक होकर भी रस में आनंद अथवा स्वाद का भाव निहित है तैतरीय उपनिषद में ब्रह्म को ही रस रूप कहा गया है।

वेदों में रस-

छान्दोग्योपनिषद में रस के आठ प्रकार का उल्लेख करते हुए क्रमशः स्थूल से सूक्ष्म होने की संपूर्ण प्रक्रिया का विवरण प्रस्तुत किया गया है। ''इन भूतो का रस पृथ्वी हैं पृथ्वी का रस जल है। जल का रस उस पर निर्भर रहने वाली औषधियां हैं। औषधियों का रस पुरूष है। पुरूष का रस वाणी है। वाणी का रस ऋचा का रस साम है। साम का रस उद्‌गीथ है।

भारतीय शब्दकोष में रस-

कोष लेखकों ने इस शब्द को प्रायः उक्त सभी अर्थो को एक स्थान पर संचित करने का प्रयत्न किया है ''विश्वकोष'' में गंध, रस, स्वाद, विष, राग, श्रृगार, द्रव, वीर्य अम्बु तथा पारद आदि के साथ रस का शब्द का प्रयोग किया गया है। अमर कोषाकार ने ही वर्ग रूप गंध आदि के साथ रस का वर्णन किया है।

1. रूप शब्दो गंध रस र्स्पशाच्च विषया अभी।
2. रसो गंध रसे, स्वादे तिकायो विषरागयो।
   श्रृगारादौ द्रवे वीर्य देह धात्वम्बु पारदे।।

वाणी का रस-

माधुर्य का द्योतक है, कभी-कभी यह रस नेत्रो से छलकर प्रेम का स्वरूप धारण कर लेता है, अतएव व्यवहार में रस भोगना, रस छलकना, जीवन में भंगिमा जैसे प्रीति भाव के व्यंजक शब्दों का प्रयोग प्रचलित है। कभी रस रूप हो जाता है, कभी रंसरंग रसकेति, या रसरीति कहकर रतिभाव के साथ उसका अभिव्यंजन किया जाता है।

जब रस ''रूपरस'' हो जाता है तो सौन्दर्य की विशेष चमत्कार, तरलता, का विचार उसके साथ जुड़ जाता है। इस रूपरेखा को प्रेमी पीते हुए नहीं आधाता, रत्नाकर ने व्यथित गोपिकाओं का वर्णन रूप रस चर्चा में किया है।

''रूपरस पीबत अघात न हुते जो तब सोई अब आंस है, उबरि गिरबौ करे।।'' उ. श.कभी-कभी यह रस भक्तिके लिए राम या कृष्ण कथा का रस और बातून के लिए बतरस कानों में झरा करता है। इस रूप में आनंद का स्वरूप धारण कर लेता है यह बतरस ही था, जिसके लालच में बिहारी की राधिका भी कृष्ण को छकाने के लिए नये-नये प्रयोग करती है।

बतरस लालच लाल की मुरली धरी लुकाय।
सौह करे, भौहीन हसें देन कहै नटि जाय।।

साहित्य में रस–

साहित्य शास्त्रीय दृष्टिकोण- विद्वांनों ने भरत मुनि के ही रस साहित्य चर्चा करने का श्रेय दिया है। भरत मुनि का 'नाटय शास्त्र' (चतुर्थ शताब्दी) का ही प्राचीनतम उपलब्ध ग्रंथ है, जिससे काव्य शास्त्रीय रस सिद्धांत का सूत्रपात होता है, भारत ने नाट्य को पॉचवॉ वेद माना है, उसकी सामग्री वेदों से ही ग्रहण की गई है, जैसे की भारतीय परंपरा के अनुरूप ही भरत मुनि ने रस को अथर्ववेद से ग्रहीत माना है।

इसके अलावा उन्होनें ब्रम्हा, द्रुहिण सदाशिव, भरत, ब्रम्हा भरत आदि भरत वृद्ध तण्डु नन्दि, नन्दिकेश्वर वासुकि शीहोदत्ति शिलालिन् कृशाश्च आदि पूर्ववर्ती नाट्यचर्यो एवं रसाचार्यों का ऋण स्वीकार किया है। रस ही नाट्यशास्त्र में प्रधान है।

भारतीय रस परम्परा– भरत मुनि ने लिखा है कि उनसे पूर्व रस की दो परंम्परायें प्रचलित थी।

एक द्रहिण की जो शांत रस नामक नवा रस भी मानते थे। भरत मुनि द्रहिण की अष्ठ रस वाली परंपरा को भी यथा स्थान आधार ग्रहण किया है। वासुकि शान्त रस को नौवॉ रस मानते थे। यथा स्थान वासुकि की परंपरा को भी आधार ग्रहण किया है।

उपसंहार–

रस का विवेचन भरत ने नाट्यशास्त्र रस के रूप में किया है, उनके अनुसार रस नाट्य की परिणति है, किन्तु प्रयोगसिद्धि के लिए नाट्य में अनेक बातों की आवश्यकता होती है, जैसे- आठ रस, उनचास भाव, चतुर्विध अभिनय, द्विविध धर्मी, चार वृत्तिया चार प्रवृत्तियां, द्विविध सिद्धि स्वर, आतोध, गान, संगीत तथा विविध रंग आदि मुनि के अनुसार ये सब मिलकर नाट्य संग्रह है। अपने ग्रन्थ में उन्होंने इन सब विषयों का उचित वर्णन किया है।

भरत मुनि ने सम्पूर्ण कलाओं के सन्दर्भ में रस निरूपण किया है भरत मुनि ने निभ्रन्ति रूप में रस के महत्व पर बल देते हुये कहा है कि रस के बिना कोई अर्थ प्रर्वतित नहीं हो सकता है भरतमुनि रस को नाट्य का सारभूत तत्व मानते थे।

भरत ने सम्पूर्ण रस प्रपंच के आधारभूत विषय को दो भागों में दी है जो इस प्रकार है- नाट्य में रस की निष्पति और नाट्य रस का प्रेक्षक द्वारा अस्वाद यहाँ पर दो प्रश्न उपस्थित है -

1. रस इति क पदार्थ अर्थात रस क्या पदार्थ हैं
2. कथा मस्वाघाते रस अर्थात रस का अस्वाद कि तरह से होता है

पहले प्रश्न का उत्तर देते हुए भरत मुनि ने कहा है कि जिस प्रकार नाना व्यंजनों औषधियों और द्रव्यों के संयोग से रस की निष्पत्ति होती है जिस प्रकार गुणों एवं द्रव्यों

से (षट व्यंजनों एवं औषधियों से रस) उत्पन्न होते हैं उसी प्रकार कवि हृदयगत भावों से अर्थात विभवादि रूप को प्राप्त होने पर रस का आस्वाद लेते हैं।

भरत का विचार है कि नट का कार्य कुशल माली के समान है। माली उपवन के भिन्न रंगों वाले पुष्पों को चुनकर उनकी एक दूसरे के साथ अत्यन्त योग्यता पूर्वक गूँथता हुआ उन्हें माला का रूप देता है। नट भी भावों के प्रदर्शन के हेतु विविध अभिनय भेदों का उपयोग करता है, ऐसा करने से उसे रस के संपन्न करने में सफलता प्राप्त होती है।

===============

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची-

1. ऋग्वेद 1/37/5
2. जन्म रसस्य वावृधे। ऋ. । -37 5 ।
3. स्वादो रसो मधुपेयो वराय। -ऋ. 6 -44 - 21
4. प्राणों व अंगाना रस /''वृहदारण्यकोपनिषद''
5. दासगुप्त ए हिस्ट्री आफ इंडियन फिलासपी'' भाग -2 पृ. 357
6. दास गुप्ता ए हिन्दी आफ इंडिया फिलासपी, भाग 2 पृ. 357
7. रसो वै सः तैतरीयोपनिषद 2/7
8. एषां भूताना पृथ्वी रसः । पृत्रिव्या आपो रस। अपामोषधयो रसः। औषधनि पुरूषों रसः। पुरूषस्य वाग रसः। वाच ऋृग रस। ऋच साम रसः। साम वाग रसः। वाच ऋग रस। ऋच साम रसः। साम उद्गीयो रसः
9. छान्दोग्योपनिषद 1 /8-3
10. रस सिद्धान्त व स्वरूप विश्लेषण आनंद प्रकाश दीक्षित पृष्ठ क्रमांक 2-3
11. अमरकोष - 291
12. विश्वशब्दकोष से रस सिद्धान्त व स्वरूप विश्लेषण आनंद प्रकाश दीक्षित पृष्ठ क्रमांक 3
13. रस सिद्धांत एवं सोन्दर्य शास्त्र - निर्मल जैन पृ.सं. 21-22
14. न हि रसाहते कश्चिदर्थ : प्रर्वतते- ना. शा. चौपाई -0-7
15. रस सिद्धांत एवं सोन्दर्य शास्त्र- निर्मला जैन पृ.सं.22-23
16. रसाभाव ब्रम्हाभिनया धार्मोवृति प्रवत्त।
17. सिद्धिः स्वरास्त गद्योत गाने रंगयव संग्रह- नास्यशास्त्र भाग 1, 6। 10
18. विभावानुभाव संचारि संयोगदृस निष्पातिः- नाट्यशास्त्र , भरत मुनि
19. न हि रसासृते कश्चिदर्थ प्रवर्तते, वही पृ. 272
20. रस सिद्धान्त और सौन्दर्य शास्त्र निर्मला जैन पृ. 22-23
21. यथा हि नाना व्यंजनौषधि द्रव्य संयोगाद्रसनिष्पति, तब नाना भावोपगयाद्रस निष्पति यथा हि गुऽादिभद्रव्यैजनै रौषधिमिश्च
22. षडवदयो रसा निर्वव्यन्ते तथा नाना भावोप गता अपि स्थायिनो भावा रसत्वमाप्नुवन्तीति। आत्रह रस इति कः पदार्थः। अच्यते आस्वाघत्वात् वही पृ. 287-88
23. नाना विधैयर्यथापुष्पैमल्थिं ग्रथ्नति माल्यकृत अगोंपागर सैभविस्तथा नाट्य प्रयोजयेत्।। विधि 26-109

Research Journal of Arts, Management and Social Sciences,
Vol. XVIII, Hindi.-I, Year IX, March, 2018
UGC Sl. No. 2138, Journal No.48774, Impact Factor 2.996

भारतीय संस्कृति में मृत्यु : एक महोत्सव

* राजेश कुमार शुक्ल

सारांश- *भारतीय संस्कृति में मृत्यु के सम्बन्ध में जो विचार हैं, वह बहुत ही मधुर एवं भव्य हैं। हमारे मनीषियों ने मृत्यु को जीवन रूपी वृक्ष में लगा हुआ मधुर फल माना है। उन्होंने जीवन और मृत्यु को वस्तुत : एक ही रूप में देखा है। उनकी मान्यता है कि रात्रि में ही आखिर अरूणोदय होता है और अरूणोदय में ही अन्त में रात्रि का निर्माण होता है। जीवन में मृत्यु का फल लगता है और मृत्यु में जीवन का। गीता में कहा गया है मरना मानों वस्त्र उतार कर फेकना है। काम करते-करते जैसे वस्त्र पुराने हो जाते हैं, फट जाते हैं, तब हम नवीन वस्त्र धारण करते हैं। वैसे ही त्रिभुवन की माता हमें नया शरीर रूपी वस्त्र लेने के लिए बुलाती हैं। वह हमें उठा लेती है, फिर हमें नया शरीर वस्त्र पहना कर इस संसार के प्रागंण में खेलने के लिए छोड़ देती है और दूर से तमाशा देखती है।*

कुछ जीव जन्म लेने के पुर्व ही तो कुछ बाल्यावस्था में और कुछ जीव युवावस्था में ही मर जाते हैं। मॉ उन्हें कपड़े पहना कर भेज देती है, लेकिन उसे वह कपड़ा अच्छा नहीं लगता है तो जल्दी ही वह उसे वापस बुला लेती है और उसे नये कपड़े पहना देती है। हमारी मॉ कोई भिखारिन नही है। उसका भंण्डार तो अनन्त वस्त्रों से भरा हुआ है। मॉ के दिये कपड़े को फाड़ना अच्छा नहीं है। जहॉ तक संभव हो बड़ी सावधानी के साथ इस कपड़े का उपयोग करना चाहिए। हमें उसे स्वच्छ, पवित्र रखना चाहिए और सेवा करते-करते ही उसे फटने देना चाहिए।

भारतीय धर्म शास्त्रों में शरीर की तुलना मटके से की गई है। यदि कोई मर जाता है या मटका फूट जाता है इसमें रोने की कौन सी बात है ? जब सभी को मरना है या फूटना है तब मरे हुये के लिये शोक करने से क्या लाभ। इस संसार में कोई चीज सदा नही बनी रहती। उन्नति के बाद पतन, मिलने के बाद बिछुड़ना, जीने के बाद मरना हुआ ही करता है। काल के आने पर कोई नही बच सकता। यह मटका तो सेवा करने के लिए मिला था आकार में कुछ मटका छोटा होता है तो कुछ बड़ा। कुम्हार अनेक प्रकार के मटके बनाता है। वह फूटे हुये मटके को फिर ठीक करता है, वह मटका फिर पानी पिलाने लगता है। संसार का क्रम इसी प्रकार चल रहा है।

जिस प्रकार पतंग के फट जाने पर बच्चे कागज लेकर दूसरी पतंग बना लेते है, उसी प्रकार भगवान, जीव रूपी पतंग को किसी अदृश्य छत पर बैठ कर लगातार उड़ा रहा है। वह उसे ऊपर-नीचे खींच रहा है। यदि पतंग फट जाती है तो वह फिर उसे ठीक कर देता है। नया कागज और नया रंग। वह फिर उसे उड़ाता है। अनेक रंग, अनेक आकार और

* अध्यापक, शासकीय हाईस्कूल माहिदल कला, रामपुर बाघेलान।

अनेक धर्म के ये करोड़ो पतंग हमेशा उड़ रहे हैं, फट रहे हैं और नये आ रहे है। यह है संसार का एक विराट खेल। संसार के इस विराट खेल में है, मृत्यु तो मानों एक महायात्रा है, महाप्रस्थान (महानिर्माण) है, या महानिद्रा है, जैसे हम प्रतिदिन के परिश्रम के बाद नींद में सो जाते हैं। नींद में सोना एक प्रकार का लघुमरण है। सारे जीवन के श्रम के बाद भी हम इसी प्रकार नींद लेते हैं। प्रतिदिन की नीद छः घंटे की होती है किन्तु यह नींद लम्बी होती है। उसे चिरनिद्रा कहते है। मृत्यु का आशय माँ की गोद में जाकर सो जाना है। छोटा बच्चा दिन भर उछलता-कूदता है, रोता है, गिरता है। किन्तु रात्रि ही माँ उसे धीरे से उठा लेती है, उसके खिलौने इधर-उधर बिखरे पड़े रहते है। माँ उसे गोदी में लेकर सुला देती है। माँ की गर्मी को पाकर बच्चा ताजगी प्राप्त करता है और सुबह दोगुने उत्साह से खेलने लगता है। यही हाल जीव का है। संसार में थके हुए जीव को वह माता उठा लेती है। बच्चे की इच्छा न होने पर भी कभी-कभी माँ उसे उठा लेती है। बच्चा अपने मित्र की ओर, अपने सांसारिक खिलौने की ओर आशा भरी नजरों से देखने लगता है। लेकिन माँ तो बच्चे के हित को जानती है, वह उस रोते हुये बच्चे को ले लेती है, अपनी गोद में सुला देती है, और जीवन रस पिला कर फिर खेलने के लिए भेज देती है।

देहान्तरण यानी काल आने पर ही मनुष्य पैदा होता है या मरता है। काल की गति अमिट है। काल ही के प्रभाव से सब कुछ उत्पन्न होता है और काल ही के प्रभाव से सब नष्ट हो जाता है। काल जब आता है तब किसी से मिलना या बिछुड़ना मनुष्य के इच्छा के अधीन नही रहता। अपने जीवन में हम जो भी करते हैं, उसकी परीक्षा मृत्यु के समय होती है। मृत्यु के समय शरीर के सारे कार्य रुक जाते हैं और मन सही दशा मे नहीं रहता है। शरीर के बिनष्ट हो जाने पर भी आत्मा तथा परमात्मा का अस्तित्व बना रहता है और वे अनेक प्रकार के चर तथा अचर रुपों में सदैव आते जाते रहते हैं।

यह जीव वास्तव में, शाश्वत है, वह उत्पन्न नहीं होता और शरीर में स्थित रहकर भी, वह दिव्य तथा शाश्वत बना रहता है। वह किसी भौतिक कार्य में प्रवृत्त नही होता।

सूर्य की भाँति शरीर के भीतर स्थित यह आत्मा सारे शरीर को चेतना से प्रकाशित करता रहता है। मनुष्य को यह शरीर उसकी पूर्व इच्छाओं के अनुसार प्राप्त होता है। इच्छाओं की पूर्ति के लिये ही यह शरीर प्राप्त होता है, जिससे वह इच्छानुसार कार्य करता है। इन्ही इच्छाओं के कारण ही मनुष्य दुख भोगता है और सुख भी पाता है। आत्मा शरीर का स्वामी है और शरीर का विनाश हो जाने पर वह अन्यत्र देहान्तरण कर जाता है। मृत्यु मानों अपने मायके जाने के समान है। जैसे दो दिन को मायके गयी हुई लड़की प्रेम,उत्साह, आनन्द और स्वतंत्रता को प्राप्त करके पुनः ससुराल वापस आ जाती है। उसी प्रकार उस जगत माता के पास जाकर पुनः वापस आना ही मृत्यु है। जैसे स्कूल से भयभीत बच्चा पानी पीने के बहाने बीच रास्ते से ही घर वापस आ जाता है, उसे माँ के प्रेम की भूख रहती है। माँ उन्हे प्रेम से देखती है। उनकी पीठ पर हाथ फेरती है, उन्हें मिठाई देती है और कहती है जाओ बच्चा स्कूल पढ़ने, बच्चा हसते खेलते प्रसन्नता पुर्वक स्कूल में आ जाता है और अपना पाठ याद करने लगता है। उसी प्रकार हम जीव संसार के स्कूल से घबराये हुये माँ को देखने की आशा लगाये रखते हैं। वे (जीव) माँ के पास जाते हैं और भरपूर प्रेम रस पीकर फिर संसार के स्कूल में आकर अपना विद्या पाठ पढ़ने लगते हैं।

मृत्यु मानों विश्राम है, मृत्यु मानों अनन्त में स्नान करना है। जैसे थके एवं घबराये

हुये लोग गॉव के बाहर के तालाब पर जाकर तैर आते हैं, समुद्र में गोता लगा आते हैं, नदी के पानी में नाच-कूद आते हैं, इससे उनकी थकान मिट जाती हैं। जीवन में डूबने से जीवन प्राप्त होता है। मृत्यु का मतलब है? डुबकी लगना। संसार का थका जीव अनन्त जीवन के समुद्र में गोता लगा आता है। यह गोता लगाने के लिए जाना ही मृत्यु है। यह एक प्रकार की छुट्टी है। मृत्यु का मतलब ही है अनन्त जीवन में तैरने के लिये प्राप्त हुई छुट्टी। उस जीवन में नहा धोकर फिर ताजगी प्राप्त करके हम संसार में कर्म करने के लिये आ जाते हैं।

जैसे ऊँचे शिखर वाले महादेव जी के मंदिर में जाने के लिये सीढ़ियॉ बनी रहती हैं। उसी प्रकार पूर्णता के शिखर की ओर जाने के लिये जन्म मरण की सीढ़ियो पर पैर रखकर जीव जाता है। मरण मानों एक कदम ही है। मरण मानों एक प्रगति ही है। मरण का अर्थ है-आगे जाना। भगवान की ओर ले जाने वाली सीढ़ियों को हम प्रणाम करते हैं। हमें वे सीढ़ियॉ पवित्र लगती हैं। ध्येय का साधन प्रतीत होती हैं। उसी प्रकार मृत्यु भी पवित्र और मंगल है। वह अपने ध्येय के पास ले जाने वाली है।

मृत्यु मानों एक प्रकार का विस्मरण है। संसार में जितना स्मरण का महत्व है उतना ही विस्मरण का भी, जन्म लेने के बाद से हमने जो-जो बातें कीं, जो-जो सुना, जो-जो देखा, जो-जो हमारे मन में आया यदि उन सबका हमें हमेशा स्मरण रहे तो कितना बड़ा बोझ हो जायेगा। हम उस प्रचण्ड पर्वत के नींचे कुचल जायेंगे, यह जीवन असत्य हो जायेगा। जैसे हजार प्रकार का धन्धा करने वाला व्यापारी अन्त में इतना ही ध्यान रखता है कि उसे इस व्यापार से कितना लाभ हुआ या हानि हुई, यही हाल जीवन का भी है, मरण मानों जीवन के व्यापार में लाभ-हानि देखने का क्षण है, साठ-सत्तर वर्षो से दुकान चल रही है, उसका हिसाब-किताब देखने का क्षण ही मानों मृत्यु है। उस लाभ-हानि के अनुभव से लाभ उठाकर हम फिर दुकान लगाते हैं। मॉ की आज्ञा लेकर फिर व्यापार आरंभ करते है। प्रेम से भरी हुई मॉ, स्वतंत्रता देने वाली मॉ कभी कोई प्रतिबन्ध नहीं लगाती।

इस भू लोक में यदि मृत्यु न होती तो यह संसार कुरूप दिखाई देता। मृत्यु के कारण ही संसार में सुन्दरता है, मृत्यु के कारण ही संसार में प्रेम है। यदि हम अमर होते तो एक दुसरे की बात भी न पूछते, हम सब पत्थरों जैसे दूर-दूर पड़े रहते। मनुष्य हमेशा मन में यह विचार करता है कि कल तो हमें जाना ही पड़ेगा, फिर दुर्व्यवहार क्यों करें? वह अपना व्यवहार मधुर बनाता हैं। जैसे भाई के बिछुड़ने पर भाई कहता है मेरा भाई कहाँ है, क्या मैं अब अकेला ही खेंलूॅ, अकेला ही नदी के किनारे घूॅमू, अकेला ही तितलियों के पीछे भागू, मेरा भाई कहाँ है? यदि मैं उसके जीवन काल में उसे प्यार करता तो कितना अच्छा रहता। लेकिन अब क्या? फिर भी मृत्यु उपकार करने वाली है। जो काम जीवन से नही होता, वह कभी-कभी मृत्यु से हो जाता है। ईसा के जीवन में जो नही हुआ, वह उनके सूली पर जाने से हो गया। मृत्यु में अनन्त जीवन होता है।

मृत्यु को हम अंधेरा मानते हैं। लेकिन मृत्यु तो अमर प्रकाश है। मृत्यु का अर्थ है निर्वाण। भगवान बुद्ध कहते थे अपना निर्माण कीजिए, तभी संसार के साथ सच्चा प्रेम करना आ सकेगा। अपने को भूल जाओ। अपनी आशा-आकांक्षा, स्वार्थ और लोभ को भूल जाओ तभी सच्चा अमर जीवन प्राप्त कर सकोगे। अपनी सारी आसक्ति और स्वार्थी वासनाओं को भूलना ही मानों मृत्यु है। इस मृत्यु का हम इस जीवन में भी अनुभव प्राप्त

कर सकते हैं। जो एक बार इस मृत्यु को अनुभव कर लेता है, उसकी फिर मृत्यु नही होती। जीवित होते हुए भी जो मरना सीखता है, वह चिरंजीव होता है।

अमावस्या के दिन हमें अंधेरा दिखाई देता है। ऐसा प्रतीत होता है कि चंद्रमा नहीं है। लेकिन समुद्र में ज्वार अमावस्या के ही दिन आता है। अमावस्या के दिन सूर्य-चंद्र की भेंट होती है। चंद्र-सूर्य से एक रूप हो जाता है। इसी प्रकार मृत्यु मानों जीवन की अमावस्या है। जीव ईश्वर से मिल जाता है। वह ईश्वर में विलीन हो जाता है। जैसे अमावस्या के दिन सबसे बड़ा ज्वार आता है। वैसे ही मृत्यु का अर्थ है जीवन में विलिन हो जाना। मृत्यु की अमावस्या मानों जीवन की बड़ी पूर्णिमा हैं। मृत्यु हमें सावधान करती, यह बात स्पष्ट रूप से समझ में आ जाती है कि हमें सब कुछ छोड़कर जाना है, मृत्यु के समय मनुष्य को गद्धी से कम्बल पर उतार लिया जाता है। उसका मतलब यह है कि भगवान के द्वार पर नम्र बन कर ही जाना चाहिए। क्योंकि आते समय हम कम्बल पर आये थे और जाते समय भी हमें कम्बल पर जाना चाहिए। जन्म लेते समय हम बालक थे, और मरते समय भी बालक, अन्तर इतना ही है कि जन्म लेते ही माॅ से दूर हो जाने के कारण रोये थे, लेकिन अब मृत्यु के समय फिर माॅ के पास जाना है, इसलिए हँसते हुए जाना चाहिए। जन्म के समय हम रोये थे और संसार मुझ पर हॅसा था। अब ऐसी करनी करके मुझे इस संसार से बिदा होना चाहिए कि हम हॅसे और लोग हमारी मधुर स्मृति में रोये।

जब तुम जन्मे जगत में जगत हॅसा तुम रोये।
अब ऐसी करनी कर चलो की तुम विहँसो जग रोये।।

हमने कैसा जीवन बिताया उसकी परीक्षा ही मृत्यु है हमारी मृत्यु से हमारे काम की कीमत ऑकी जायेगी। जो मरते समय रोयेगा, उसका जीवन रूदन पूर्ण ही समझना चाहिए। जो मरते समय हॅसेगा उसका जीवन कृतार्थ समझना चाहिए। मृत्यु तो मानों नव जीवन का आरंभ है। यह एक महोत्सव है। आत्मा और परमात्मा का मिलन बिन्दु है। मृत्यु मानों प्रियतम के पास जाना है। इसलिए नहा धोकर पूरा श्रृंगार करके साजन के घर चलना चाहिए, क्योंकि फिर वहाॅ से अब यहाॅ नही आना होगा।

इस प्रकार मृत्यु मानों आनन्द है, मृत्यु मानों पुराने वस्त्र निकालना है, मृत्यु मानों चिर विवाह है, मृत्यु मानों चिरनिद्रा है। अतः बुद्धिमान मनुष्य को जीवन के परिवर्तनों पर शोक नहीं करना चाहिए। परिवार और समाज कुछ समय के लिए मिलकर फिर पृथक-पृथक गंतव्य को चाले जाते है। इस संसार में (यद्दृष्टिं तद्नष्टं) सभी दिखायी देने वाली चीजें नष्ट होने वाली हैं। इस लिए बुद्धिमान व्यक्ति को शोक नही करना चाहिए। क्योंकि शोक से व्यक्ति सुखी नहीं हों सकता, इससें उनकी शक्ति क्षींण होने लगती है और उसका ध्येय कभी पूर्ण नही होता। यह संसार तो संयोग और वियोग का सुन्दर समन्वय है। संयोग का अंत वियोग में होता है और वियोग का अंत संयोग में। अतएव विवेकी व्यक्ति को सदैव अनासक्त भाव से जीवन व्यतीत करना चाहिए।

उसे यह मालुम है कि भौतिक शरीर का अस्तित्व चेतना युक्त आत्मा के कारण है। भौतिक शरीर चेतना रहित होने पर मृतक हो जाता है और शरीर में इस चेतना को किसी भौतिक उपचार से वापास नहीं लाया जा सकता। मृत्यु की दवा कौन कर सकता है। यह शरीर तो केवल आत्मा द्वारा ही चालित होता है जो भौतिक शरीर से सर्वथा भिन्न होता है। फलतः इस परिवर्तनशील एवं नाशवान शरीर पर विद्वान लोग कभी शोक नही करते, उनका

सम्पूर्ण ध्येय तो अपने चौकोर व्यक्तित्व का निर्माण करना होता हैं, जिससे वे बाहर और भीतर दोनों जगतों में, सम्यक रूप से अपना विकास कर सकें।

**

Research Journal of Arts, Management and Social Sciences,
Vol. XVIII, Hindi.-I, Year IX, March, 2018
UGC Sl. No. 2138, Journal No.48774, Impact Factor 2.996

प्रेमचंद के उपन्यासों में नारी पात्रों द्वारा किया गया संघर्ष

* राजकुमार पाण्डेय

सारांश– *प्रेमचंद जी ने उपन्यासों में ऐसे सशक्त नारी पात्रों का वर्णन किया है जो कि अंत तक समझौता नही करती है और संघर्ष करती रहती है। और कुछ ऐसे भी नारी पात्र है जो कि किसी कारणवश संघर्ष नही कर पाती जैसे कि आर्थिक, सामाजिक और अन्य कारणों से उन्हें समझौता करना पडता है। प्रेमचंद जी का ऐसा कोई उपन्यास नही होगा जिसमें कि संघर्षशील नारी पात्र न हो। उपन्यासों में ऐसी ही कुछ नारी पात्र है जो कि सशक्त होते हुए भी संघर्ष करती है।*

प्रेमचंद के स्त्रीपात्र सामंत वर्ग, मध्यवर्ग तथा कृषक वर्ग के रूप में भिन्न संस्कारों के आधार पर बाँटे हुए थे। गरीब अथवा निम्नवर्ग की मेहनतकश औरते निर्णय लेने में शहरी बंधुओ से अपेक्षाकृत अधिक स्वतंत्र थी। धनिया, झुनिया, मुन्नी, सलोनी, सिलिया, नोहरी इत्यादि ऐसी ही स्त्रियाँ है। जबकि मध्यवर्गीय नारियों की कामभावना तथा आर्थिक अधिकारों को उनके वर्ग की सामंती परंपरायें बुरी तरह जकड़ी हुई थी। प्रेमंचद के कुछ स्त्री-चरित्रों में आत्म संस्कार भी दिखाया है। जालपा और जोहरा के चरित्र में शहर की रंगीन तितली मालती ग्रामीण जनता की पीड़ा को देखकर सेवाभाव से भर जाती है। चारित्रिक परिवर्तन का यह भी एक रूप है। हमारा समाज बदल रहा है इसमें संघर्ष की तैयारियां फूट रही है। इसका असर कथा-साहित्य के नारी पात्रों पर पड़ना स्वाभाविक है। निम्न लिखित नारी पात्रों के द्वारा किये गये संघर्ष का विवेचन निम्नवत है।

श्रद्धा–

प्रेमाश्रम में 14 वर्षो तक श्रद्धा जिस तपश्चर्या में लगी रहती है वह रूढ धारणाओं की अभ्यस्त विवशता के कारण है। वस्तुतः वह अपने आप में वस्तुनिष्ठ समस्या नही है यह भी सामाजिक तंत्र की किसी विसंगति से उसका संबंध नही है इसके साथ यह उल्लेख है कि इस तपश्चर्या की कोई प्राप्ति निधिक सार्थकता भी नही है फिर भी यह मान लेना होगा कि प्रेमचंद ने अपने समय की एक यथार्थ स्थिति को 'श्रद्धा' के माध्यम से निर्दिष्ट करना चाहा है। समुद्र पार से पढ़कर लौटे हुए तरूणों को जिन कौटुम्बिक विसंगतियों से जूझना पड़ता था उसका एक रूप संभवतः ऐसा भी था। हो सकता है, लेखक ने अपनी ओर से बात कुछ बढाकर कही हो पर उसका उस समय के यथार्थ से कुछ न कुछ संबंध माना जा सकता है, चाहे उसका रूप कितना ही विरल क्यों न रहा हो। यह सत्य है कि श्रद्धा को मानसिक यंत्रणा झेलनी पड़ी वह उसके सौ साल पहले किसी को नही झेलनी पड़ी होगी अर्थात् उसकी समस्या का संबंध इतिहास के उस युग से है। जब भारतीय विदेशों में शिक्षा

* अतिथि विद्वान, हिन्दी साहित्य, राजमाता सिंधिया शास. स्नात. कन्या महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.)

पाने के लिए जाने लगे थे।

इन्दू– प्रेमचंद के 'रंगभूमि' उपन्यास में एक से अधिक प्रसंग है, पर विचार योग्य प्रसंग राजा महेंद्र कुमार की पत्नी इंदु का है। इंदु की समस्या दाम्पत्य के असामंजस्य को लेकर है।

आधुनिक बोध के कारण ही इंदु को राजा महेंद्र प्रताप के आचरण से आक्रोश होता है। यदि वह मध्यकालीन नारी की विचार-धारा से अनुप्रमाणित होती तो उसे अपने व्यक्तित्व की स्वतंत्रता का बोध ही नही होता। उसके लिए यह सोचना संभव नही होता कि उसने ''विवाह किया है आत्मा नही बेची है।'' इंदु को उँची शिक्षा और नयी संस्कृति ने आत्म सजग बनाया है। उसकी असंगति परंपरागत व्यवहारों और अभिनव अपेक्षाओं के विपरीत संबंध के कारण है। बहुत संभव है कि राजा साहब पति की परंपरागत एकाधिकार चेतना के कारण यह अनुभव नही कर पाते कि वे पत्नी पर अन्याय कर रहे है। दाम्पत्य की गाड़ी के दोनों पहिये रूप-रंग, आकार प्रकार में एक दूसरे से भिन्न है। अतः पति-पत्नी में मेल नही हो पाता, यह स्वाभाविक है। प्रेमचंद बड़ी बारीकी के साथ आधुनिक युग की शिक्षित पत्नी के मर्म को छूते ही नही, उसकी व्यथा को इस प्रकार प्रकट करते है कि उसके प्रति किसी भी अनुभूतिशील व्यक्ति को पूरी सहानुभूति होगी।

निर्मला– निर्मला में अनमेल विवाह की समस्या के साथ-साथ विमाता का भी प्रश्न उठाया गया है। निर्मला और मंसाराम की आयु में अधिक अंतर नही है। अतः पति तोताराम को पत्नी पर संदेह होता है जिसका मूल्य, पुत्र मंसाराम को जीवन देकर चुकाना पड़ता है। जहाँ तक हो सकता है कि वह अपने अन्य पुत्रों जियाराम और सियाराम को समझाने की और राह पर लाने की चेष्टा करती है परंतु उसके निस्वार्थ भाव को विमाता के नाम के साथ ही संलग्न कुटिल भावना के कारण न तो पति ही समझ पाता है और न कर्कशा ननद रूकमणी। फलस्वरूप चोर जियाराम आत्महत्या कर लेता है और सियाराम साधु संत की संगति में घर छोड़कर निकल जाता है। निर्मला पति का क्रोध सहती है उसका लांछन भी झेलती है और अपनी छोटी पुत्री मुन्नी के भविष्य के लिए चिंतित रहती है। वह जानती है कि आर्थिक विपन्नता के कारण ही उसको अयोग्य पात्र के पल्ले बांध दिया गया है। मृत्यु शैय्या पर भी वह कन्या की चिंता में निमग्न है, जीवन संग्राम में हारे थके बुझे स्वर में ननद से याचना करती है कि ''बच्ची को कुंवारी रखना पर कुपात्र के गले में न मढ़ना।

निर्मला की इस उक्ति में अपनी माता कल्याणी के जीवन की समस्या भी निहित है माँ अपनी पुत्री के भविष्य के लिए चिंतित अवश्य रहती है, परंतु दरिद्र विधवा माँ संतान के लिए कुछ नही कर सकती। युवती कन्या घर में नही बैठाई जा सकती, और अब अच्छे घर की जरूरत न थी। उसे कुँए में झोंकना था निर्मला के प्रति पाठक की सहानुभूति सदा जाग्रत रहती है क्योंकि वह अपनी मानसिक दुर्बलता को मंसाराम के प्रति आकर्षण को जानकर भी घर और परिवार, पुत्र और पति से विच्छिन्न नही होती। निर्मला के चारित्रिक गठन में वह दुर्बल अंश विद्यमान है और वह इसे स्वीकार करती है।

सकीना– ''कर्मभूमि'' की सकीना टोपियाँ काटकर, साडियाँ बनाकर, सिलाई-बुनाई करके अपने दारिद्रय से संघर्ष करती है, वह अपने प्रेमी अमरकांत से आर्थिक सहायता नहीं लेना चाहती। आत्म सम्मान उसमें भरा हुआ है। वह प्रेम और आर्थिक विपन्नता को साथ-साथ देख नही पाती, अमरकांत उसके लिए साड़ियाँ ले आता है। तो उसे स्वीकार नही

करना चाहती, परंतु जब वह उसके लिए सिलाई का काम लाता है तो सहर्ष स्वीकार कर लेती है।

उपर्युक्त घटनाओं से यह विदित होता है आर्थिक कष्टों की निवृत्ति के लिए भी पति-पत्नी दोनो वर्ग बँटे हुए थे। संस्कारगत प्रभाव और अभिजात वर्ग के कारण ही पत्नी के अर्थ स्वतंत्र पर आक्रोश पाया जाता है। इस प्रसंग में यह भी उल्लेख है कि इन छोटे मोटे कामों का कोई व्यापक प्रभाव नही पड़ता, स्थिति की गंभीरता किसी प्रकार की कौटुम्बिक समस्या से अधिक गंभीर नही हो पाती।

पूर्णा– ''प्रतिज्ञा'' उपन्यास में ''पूर्णा'' के माध्यम से पहली बार वस्तुतः विधवा नारी की समस्याओं का पर्याप्त प्रतिफलन दिखलाई पड़ता है। पूर्णा आर्थिक असुविधाओं के संदर्भ में अपने सतीत्व की रक्षा के लिए चेष्टा करती हुई सामाजिक और मनोवैज्ञानिक संगतियों को सामने लाती है।

''प्रतिज्ञा'' उपन्यास की पूर्णा पुनर्विवाह नही करना चाहती। अपितु वनिता भवन में रहकर जनसेवा तथा भक्तिमार्ग अपनाकर वह उदात्तीकृत रूप में हमारे समक्ष आती है। तत्युगीन समाज में जहाँ स्त्री को संभ्रांत सामाजिक जीवन यापन करने में कष्ट साध्य प्रयत्न करना पड़ता था, विधवा पूर्णा की समस्या का निदान और क्या हो सकता था ? यह भी सत्य है कि विधवा नारी की समस्या का उचित एवं व्यवहारिक समाधान वनिता भवन अथवा विधवा-आश्रमों की स्थापना से ही नही हो जाता क्योंकि अंततः विधवा-आश्रम भी उन विशाल काराग्रहों की भाँति है। जहाँ ऊँची दीवारों पर खड़ी कर नैतिक घुटन से विवश विधवाओं को बंद कर दिया जाता है। वस्तुतः नारी को उस मानवीय सहानुभूति प्रेम और संरक्षण की आवश्यकता है। जिससे उसके व्यक्तित्व का समादर हो सके जिससे उसे मानव समझा जा सके। वनिता भवनों के निर्माण से मानवता के इस लक्ष्य को नही पाया जा सकता।

जालपा– जालपा गबन उपन्यास की नायिका है। वह दीनदयाल की इकलौती पुत्री मुंशीदयानाथ की पुत्र वधु और रमानाथ की पत्नी है। उसका लालन-पालन बड़े लाड़ प्यार से हुआ। वह एक साधारण ग्राम बालिका है। पिता उसकी प्रत्येक इच्छा को पूरा करने के लिए प्रयत्नशील रहता है। उसमें चरमातीत आभूषण प्रियता है। उसकी यह प्रवृत्ति ही क्रमशः विकसित होती हुई कथानक का आधार बनती है। बचपन में उसे साधारण बिल्लौरी हार प्राणाधिक प्रिय था।

आभूषण प्रियता जालपा की समस्या का मूल बीज है, जो उसके आपत्तियों का निमित्त बनता है। इस अर्थ में जालपा की समस्या औपन्यासिक पत्नियों की समस्या के संदर्भ में विलक्षण है। पति के रूपया गबन करने के बाद जालपा का हृदय परिवर्तन गाँधीवाद की देन भले हो, परंतु जिस अमिट साहस और प्रत्युत्पन्नमति से वह स्थिति संभालती है, सराहनीय है। वह परिस्थितियों के सम्मुख पराजित नही होती, संघर्ष करती है और पति के पापों का प्रायश्चित स्वयं उदान्तीकृत रूप में कर पथभ्रष्ट पति को स्वस्थ जीवन दृष्टि भी देती है। मध्यवर्गीय खोखली मर्यादाओं और प्रदर्शन-वृत्ति का केचुल उतारकर सहज भाव से जीने का उपक्रम करती है।

धनिया– गोदान उपन्यास की धनिया कर्मठ ग्रामीण हिन्दू-गृहिणी की समस्त विशेषताएँ लेकर गोदान के कथा-पट पर अवतरित हुई है। अति साहस, धैर्य और आत्मविश्वास से वह

देवी एवं मानुषी आपत्तियों के भयानक थपेड़ों से संघर्ष लेती हुई होरी के कदम से कदम मिलाकर जीवन संग्राम में चलती रहती है। उसकी कर्मठता, त्याग और साहस पाठकों को आकर्षित कर लेता है। धनिया का व्यक्तित्व कठपुतली मात्र न होकर एक कर्मठ ग्राम्य नारी का जीवित रूप है। धनिया के चरित्र का संक्षिप्त लेखा-जोखा इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है।

धनिया और होरी के चरित्र में भिन्नता है। परंतु वह उसकी सच्ची सह-धर्मिणी बनकर संघर्षो की भीषण लपटों में इसे शीतल छाया प्रदान करती है। होरी जहाॅं अन्याय को सिर झुकाकर स्वीकार कर लेता है। वहां धनिया अन्याय का डटकर विरोध करती है। वह जीवन संघर्ष में साहस के साथ संघर्ष झेलती है। भीषण संघर्ष असमय में ही उसे वृद्ध बना देते है। अभी उसकी आयु छत्तीस वर्ष की थी। पर सारे बाल पक गये थे, चेहरे पर झुर्रियाँ पड़ गई थी सारी देह ढल गई थी, सुंदर गेहूँआ रंग सांवला हो गया और आंखों से कम सुझने लगा था।

धनिया के व्यक्तित्व में कोमलता और पौरूषता का अद्भुत मिश्रण हुआ है। उसका संघर्षशील साहसिक व्यक्तित्व उसे बहुत ऊँचा उठा देता है। धनिया जहाँ एक पति पारायण नारी है, वहाँ पुत्र वात्सल्य माँ भी है। असहायों की सहायता में वह जितनी कोमल एवं उदार है, अत्याचारियों और ढोगियों की बखिया उधेड़ने में वह उतनी ही अधिक कठोर है। वह एक स्वाभिमानी और कर्मठ नारी महान आदर्श है। धनिया को कथानक में नायिका का स्थान प्राप्त है। ग्राम्य जीवन की समस्त घटनावली उसी के केंद्र बिंदु है। धनिया हर समय संघर्ष करती वह कभी भी समझौता नही करती पूरा समय संघर्षमय काटती है। अतः यह गोदान उपन्यास की संघर्षवादी नारी पात्र है।

नारियों के द्वारा किया गया संघर्ष विचारणीय है सोचनीय है चाहे वह शिक्षा के क्षेत्र में हो या दहेज के रूप में हो या आर्थिक, राजनैतिक, सामाजिक दृष्टि में हो कथा में एक नया मोड़ ला देती है इसका सीधा प्रभाव वर्तमान समय भी पड़ता है शायद आज भी नारियों की दशा सोचनीय और विचारणीय है कथा पर इस प्रकार प्रभाव डालती है कथा में नारी को एक माता के रूप में, एक पुत्री के रूप में, पुत्र वधु के रूप में संघर्ष करते देखा गया है और वर्तमान समय में भी यह स्थिति परिस्थिति है आज भी नारियों के द्वारा एक ओर संघर्ष किया जाता है और दूसरी ओर उनके अधिकारों का दुरूपयोग किया जाता है।

===============

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची-

1. प्रेमचंद का नारी चित्रण - डॉ. गीता लाल
2. प्रेमचंद के उपन्यास में समसामयिक परिस्थितियों का प्रतिफलन - डॉ. सरोज प्रसाद
3. प्रेमचंद युगीन भारतीय समाज - डॉ. इंद्रमोहन सिन्हा
4. प्रेमचंद चिंतन और कला - डॉ. इन्द्रनाथ मदान
5. गोदान - प्रेमचंद
6. निर्मला - प्रेमचंद
7. गबन - प्रेमचंद
8. सेवासंदन - प्रेमचंद
9. कर्मभूमि - प्रेमचंद
10. प्रतिज्ञा - प्रेमचंद

11. प्रेमाश्रम - प्रेमचंद
12. रंगभूमि - प्रेमचंद
13. हिन्दी उपन्यास - डॉ. शिवनारायण श्रीवास्तव

Research Journal of Arts, Management and Social Sciences,
Vol. XVIII, Hindi.-I, Year IX, March, 2018
UGC Sl. No. 2138, Journal No.48774, Impact Factor 2.996

छत्तीसगढ़ी लोकगीतों में नारी भावना

* जी.पी. जायसवाल

सारांश– *छत्तीसगढ़ी लोकगीतों में नारी हृदयगत सभी कोमल भावनाएँ एवं संवेदनाएँ अपने विविध मर्मस्पर्शी रूपों में दृष्टिगोचर होती है। इन गीतों में नारी अन्तर्मन की वेदना, सुख-दुख, हर्ष-विषाद, आशा-निराशा, आनन्द-उमंग हास-परिहास, भविष्य के संजोये सुन्दर व सुखद सपने आदि भावनाओं का मार्मिक एवं वास्तविक चित्रण बखूबी से हुआ है। जन्मगीत, लोरी गीत, बाल लोकगीत, विवाह गीत, भोजली गीत, सुआ गीत, ददरिया गीत, करमा गीत, गौरा-गौरी, गीतों में स्थान, देशकाल, परिस्थिति एवं वातावरण के अनुरूप नारी भावनाओं की सुन्दर अभिव्यक्ति हुई है।*

शोध पद्धति– प्रस्तुत शोध आलेख में मैने द्वितीयक स्रोतों का प्रयोग किया है। इसके अंतर्गत मैने छत्तीसगढ़ी लोक साहित्य पर उपलब्ध कृतियों, लेखों के साथ छत्तीसगढ़ अंचल में प्रचलित छत्तीसगढ़ी लोकगीतों के आधार पर तथ्य संकलन किया है।

छत्तीसगढ़ी लोक साहित्य में लोकगीत सर्वाधिक प्राचीन विधा है। इसका कारण यह है कि लोकगीत मनुष्य के जन्म से ही उसके साथ जुड़े हुए हैं। छत्तीसगढ़ के जनजीवन में छत्तीसगढ़ी लोक गीत प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है। छत्तीसगढ़ के जनजीवन में होने वाले विभिन्न पर्वो, त्योहारों, संस्कारों, उत्सवों और ऋतुओं के अवसर पर कलकंठ से ये गीत बरबस फूट पड़ते हैं। वस्तुतः लोकगीत लोकजीवन का श्रृंगार ही नहीं उसकी आत्मा भी है। लोकगीतों में कवि की नहीं वरन् जन समाज की वाणी मुखरित होती है। इन गीतों में मानव हृदय में उठने वाले भावों की सुंदर अभिव्यक्ति होती है। छत्तीसगढ़ी लोक गीतों के संदर्भ में डॉ. शकुंतला वर्मा ने लिखा है-'' छत्तीसगढ़ी लोकगीतों की परम्परा इंसान के आदिम युग से चली आ रही है। युगों की छाप उसके भावों पर पड़ी और वह अपने जीवन को ईमानदारी से अपनी बोलियों से प्रकाशित करता हुआ आज भी परिस्थियों से संघर्ष करता हुआ चला आ रहा है। उसने समय पर शोषण के विरूद्ध अपने गीतों में आवाज उठाई, अपने श्रम का परिहार गीतों के सहारे किया, नया उत्साह,नई लगन गीतों द्वारा प्राप्त की और इतना ही नहीं, मन की छिपी हुई मीठी बातों के सुख और दुख को उन्हीं गीतों में ढाला।''[1] डॉ. अनुसूइया अग्रवाल के शब्दों में -''छत्तीसगढ़ मेहनतकश अंचल है। यहां नर-नारी सभी जी-तोड़ मेहनत करते हैं। यही कारण है कि छत्तीसगढ़ के अधिकांश लोकगीतों का जन्म घरों में चक्की पीसते, झाड़ू लगाते, बर्तन मांजते, कपड़े धोते, रोटी पकाते, हँसते-रोते और कभी खिलखिलाते हुए हुआ है। यहां के लोक गीतों की रचना में पुरूषों से अधिक नारियों

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी), संत गुरू घासीदास शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कुरूद, जिला-धमतरी (छ.ग.)

का सामूहिक प्रयास है। फुरसत के क्षणों में यहां की स्त्रियां गीत जोड़ती, टेक गुनगुनाती और अंतरा बनाती हैं। यही कारण है कि यहां के लोकगीतों में नारी के चित्र अधिक मिलते हैं। कहीं नारी चतुर गृहिणी है, कहीं स्नेहिल सास, कहीं भावुक सहधर्मिणी तो कहीं मंगलकामना करने वाली बहन, कहीं दुलारी बेटी तो कहीं सुखद क्षणों की प्रियतमा है। और तो और कर्कशा सास, चुगलखोर ननद, ईर्ष्यालु जेठानी, हृदयहीन सौतेली मां,..... दुष्ट भावज और सौतिया डाह से परिपूर्ण सौत का चित्र भी इन लोक गीतों में अंकित है।''[2]

छत्तीसगढ़ी लोकगीतों में नारी हृदयगत सभी कोमल भावनाएँ एवं संवेदनाएँ अपने विविध मर्मस्पर्शी रूपों में दृष्टिगोचर होती है। इन गीतों में नारी अन्तर्मन की वेदना, सुख-दुख, हर्ष-विषाद, आशा-निराशा, आनन्द-उमंग हास-परिहास, भविष्य के संजोये सुन्दर व सुखद सपने आदि भावनाओं का मार्मिक एवं वास्तविक चित्रण बखूबी से हुआ है। जन्मगीत, लोरी गीत, बाल लोकगीत, विवाह गीत, भोजली गीत, सुआ गीत, ददरिया गीत, करमा गीत, गौरा-गौरी, गीतों में स्थान, देशकाल, परिस्थिति एवं वातावरण के अनुरूप नारी भावनाओं की सुन्दर अभिव्यक्ति हुई है।

छत्तीसगढ़ी लोकगीतों में नारी भावना का सम्यक विवेचन इस प्रकार है-

जन्म गीतों में नारी भावना- छत्तीसगढ़ में पुत्र या पुत्री के जन्म को एक संस्कार की तरह मनाया जाता है। यहाँ की नारी अपनी सम्पूर्णता मातृत्व सुख प्राप्त करने में समझती है। गर्भाधान से लेकर संतान के जन्म होने तक पूरे नौ माह की अवधि के गीत जन्म गीत के अन्तर्गत आते हैं। छत्तीसगढ़ में प्रथम गर्भाधान से लेकर गर्भ के सातवें माह में सधौरी संस्कार होता है, जिसमें सात प्रकार की रोटियाँ (खुरमी, पपची, लाडू, बिड़िया कुसली, सोहारी और करी के लाडु) गर्भवती को खिलाई जाती है। इन गीतों में एक ओर नारी के संतान जन्म देने की अपार खुशी के भाव झलकता है तो दूसरी ओर गर्भाधान से संतान जन्मोत्सव तक पूरे नौ महीने तक आनन्दमयी कष्ट का सामना करने का भाव प्रकट होता है।

सोहर गीतों में गर्भिणी नारी के हृदय की दशा का मार्मिक वर्णन हुआ है। जब पति द्वारा अपने गर्भवती पत्नी को मधु और पीपर पीने को कहा जाता है तब पत्नी के मना करने पर पति के द्वारा दूसरा विवाह करने की बात सुनकर पत्नी कहती है-

"पीपर के झार पहर भर, मधु के दुई पहर हो।
सउती के झार जनम भर, सेजरी बटौंतिन हो।।''[3]

लोरी गीतों में नारी भावना- लोरी गीतों में संतान के प्रति माँ का सुन्दर वात्सल्य झलकता है। इन गीतों में बच्चों को मीठी नींद सुलाने के लिए माताओं के द्वारा कर्ण प्रिय एवं मधुर गीत गाये जाते हैं। ये गीत दादी और बहन के द्वारा भी गाये जाते हैं।

''निंदिया तोला आवे रे, निंदिया तोला आवे रे
सुति जाबे सुति जाबे, बाबू सुति जाबे रे
झनि रोबे झनि रोबे, बाबू झनि रोबे रे।
कोन तोला मारिन बाबू ,कोन तोला पीटिन रे।
कोन तोला अंगुरी के बाबू छइयां देखाइन रे।
चंदा मामा आवनी, दूध भात खावनी।
बाबू के मुँह में गप के, नोनी के मुँह में गप के।।''[4]

बाल लोक गीतों में नारी भावना– बाल लोक गीतो में बाल मनोभाव के रूप में नारी भावना का दिग्दर्शन होता है। बालिकाओं के द्वारा फुगड़ी खेलते हुए गीत गाये जाते हैं। उसमे नारी जीवन के उल्लास व विषाद का वर्णन होता है। पांच - छः लड़कियाँ पंजों के बल बैठ कर पंजों को आगे पीछे खिसकाती है तथा इस प्रकार गीत गाती हैं-

''गोबर दे बछरू गोबर दे
चारों खूंट ला लिपन दे
चारों देरानिन ल बइठन दे
अपन खाथे गुदा गुदा
मोला देथे बीजा बीजा
एक बीजा ला का करहूँ
रहि जाहों तीजा
तीजा के बिहान दिन सरी सरी लुगरा
हेर दे भौजी कपाट के खीला
चींव चींव करें मंजूर के पीला
एक गोड़ मा लाल भाजी,एक गोड़ मा कपूर
कतेक ला मानों मैं देवर ससुर
राजा के पुतरी
खेल फगनी फुगड़ी।''[5]

विवाह गीतों में नारी भावना– छत्तीसगढ़ में जन्म संस्कार के बाद विवाह संस्कार महत्वपूर्ण होता है। विवाह के सभी रस्मों मे जैसे-चुलमाटी, तेलचघी, मायमौरी, नहडोरी, परघनी, भड़ौनी, भांवर, दाइज, बिदा में गीत गाये जाते हैं। इनमें नारी भावना का चित्रण होता है। विवाह संस्कार का बीजारोपण मँगनी से होता है।

चुलमाटी गीत– चुलमाटी के अवसर पर मिट्टी खोदते समय सभी नारी इस प्रकार गीत गाते हैं-

''तोला माटी कोड़े ल, तोला माटी कोड़े ल नई आवय मीत धीरे धीरे
धीरे-धीरे तोर कनिहा ला ढील धीरे-धीरे।''[6]

तेलचघनी गीत– चुलमाटी के उपरान्त दूसरी विधि हल्दी तेल चढ़ाने की होती है । यह कार्य वर-वधु दोनों पक्षों में होता हैं। विवाह मंडप मे वर-कन्या को पीढ़े पर बिठाकर सुवासिनें पांच बार, हल्दी का लेपन करती हैं और गीत गाती हैं-

''एक तेल चढ़िगे हो, हरियर हरियर
मड़वा म दुलरु तोर बदन कुमलाय
राम लखन के राम ओ लखन के दाई तेल चढत हे
कहँवा के दियना मोर होवत हे अंजोर।''[7]

कन्या पक्ष में भी हल्दी चढ़ाते इस प्रकार गीत गाते हैं-

''घर ले ओ निकले हरियर हरियर
मंडवा म दुलरी के बदन कुमलाय।''[8]

भड़ौनी गीत– बारात आगमन के बाद रातीभाजी खिलाते समय महिलाएँ भड़ौनी गीत (गारी गीत) गाती हैं। इसमें हास-परिहास की योजना रहती हैं। ये गालियाँ रागद्वेष से मुक्त

प्रेम की प्रतीक मानी जाती है। समधी -समधिन और वर-वधु को लक्ष्यकर ये गीत गाये जाते हैं-

''बने बने तोला जानेंव समधी,मंडवा मं डारेंव बांस रे।
झाला पाला लुगरा लाए,जरय तुहर नाक रे ।।
दार करे चाउर करे लगिन ला डराये रे
बेटा के बिहाव करे,बाजा ल डराये रे।।''[9]

टीकावन गीत- टीकावन के समय मंडप के नीचे वर-कन्या के पैर पखारे जाते हैं और उस समय कन्या पक्ष वाले व परिजन - स्वजन अनेक उपहार देते हैं। इसी समय नारियों के द्वारा गीत गाये जाते हैं-

''दाई तोर टीके नोनी अचहर पचहर
ददा तोर टीके धेनु गाय हो
भइया तोर टीके नोनी लिली हंसा घोड़वा
भौजी टीके आठ मासा सोना हो।''[10]

बिदा गीत- बिदाई की बेला का दृश्य बड़ा कारूणिक होता है। इन गीतों में ममतामयी मां व बिदा होती हुई बेटी प्रेमी पिता स्नेही भाई एंव संगी सहेली आदि की मनोदशा का हृदय विदारक चित्रण होता है। माता विदाई दुःख से दुखित होकर यहाँ तक कह डालती हैं-

''बिटिया के संचरत जान पाइतेंव
अंडी के पान ला खा लेतेंव
कोखिया ला पार लेतेंव बांझ।''[11]

माँ बिदा होती हुई अपनी बेटी को समझाकर आशीर्वाद देते हुए कहती हैं-

''मंगनी करेव बेटी, जचनी करेंव ओ
बर करेंव बेटी, बिहाव करेंव ओ
जा जा बेटी कमाबे खाबे ओ
मार दिही बेटी, रिसाय जाबे ओ
मना लिही बेटी तो मान जाबे ओ
जाँवर जोडी संगे बुढ़ा जाबें ओ
सुख दुःख के रद्दा नहक जाबे ओ।''[12]

पं. श्यामलाल चतुर्वेदी के 'बेटी के बिदा' कविता, पं. दानेश्वर शर्मा के 'बेटी की विदा' कविता डाँ. विमल कुमार पाठक के 'बेटी जाथे ससुरार' कविता में बेटी बिदा की वेदना का मार्मिक चित्रण देखने को मिलता है। पं. दानेश्वर शर्मा की कविता में बेटी वेदना इस प्रकार प्रकट हुई हैं-

''कइसे के बेटी ओ तोला मैं भेजेंव,
पसरा के मोती ला दहरा मा फेंकव।
मोंगरा सांही बेटी फूलत रेहे
अंगना मा खेलत कूदत रेहे।
चिरगुन चिरइ जस चहकत रेहे।
कइसे के पहिली के सुरता ला मेटव
कइसे के बेटी ....।।''[13]

भोजली गीतों में नारी भावना– छत्तीसगढ़ अंचल मे भोजली त्योहार स्त्रियों के लिये विशेष उत्साह-उमंग और आमोद-प्रमोद लेकर आता है। यह पर्व श्रावण मास में शुक्ल पंचमी से राखी तक मनाया जाता है। पंचमी के दिन भोजली बोई जाती है और राखी के दिन विसर्जित की जाती है। छोटी कन्याओं एवं महिलाओं के द्वारा गेहू, जौ, धान एवं उड़द के कुछ दानों को टोकरी में खाद मिश्रित मिट्टी रखकर बो दिया जाता है। उगे हुए पौधे भोजली देवी के नाम से संबोधित किये जाते हैं। ग्राम बालाएँ व स्त्रियाँ इसी अवसर पर भोजली देवी के प्रति अपनी अन्तर्श्रद्धा व्यक्त करते हुए भोजली गीत गाती है। वे देवी गंगा के प्रति अपनी भावनाएँ प्रकट करती हैं और प्रार्थना करती है-

''देवी गंगा, देवी गंगा लहर तुरंगा, ओ लहर तुरंगा।
हमरो भोजली दाई के भींजे आठो अंगा।।''[14]

भोजली विसर्जन के समय नारियों एवं ग्राम बालाओं के हृदय में वियोग जन्य करुणा के भाव बरबस ही फूट पड़ते हैं-

''सासा खेलेन पासा खेलेन, अउ खेलेन डंडा।
अतेक सुघ्घर भोजली ल, कइसे करबो ठण्डा।।''[15]

इन गीतो में जीवन दर्शन की अभिव्यक्ति भी देखने को मिलती है। जीवन की नश्वरता की ओर संकेत करते हुए नारी गीत गाती हैं-

''नान नान हंसिया के बड़े-बड़े, बेंठ।
जियत जागत रहिबो भोजली हो जाही भेंट।।''[16]

सुआ गीतो में नारी भावना– सुआ गीत छत्तीसगढ़ का सबसे लोकप्रिय नृत्य-गीत है। इसे पं. मुकुटधर पाण्डेय ने छत्तीसगढ़ का गरबा नृत्य कहा है। इन गीतो में नारी जाति की आत्मा ही बोल उठती हैं। इन गीतों में नारी जीवन की समस्त विषमताओं का चित्रण होता हैं। सुआ गीतो में नारियाँ सुआ (सुग्गे) को संबोधित करते हुए अपने जीवन के सुख-दुख, हर्ष-विषाद और न जाने कितनी ही बातें कह जाती हैं। इस नृत्य में नारियाँ वृत्ताकार गोल चक्कर में झुक-झुककर एवं घुम-घुमकर तालियाँ बजाती हुई गीत गाती है। वृत्त के मध्य में एक टोकरी में धान भर कर सुग्गे की मृतिका की प्रतिमा रखी जाती है और उसी को संबोधित करते हुए गीत गाती हैं। नारी को अपने जीवन में कभी इतनी पीड़ा सहन करनी पड़ती है कि वह नारी जीवन को ही व्यर्थ मानती हैं। वे चन्दा और सूरज के पैर पकड़कर प्रार्थना करती हुई वरदान मांगती है कि उसे भावी जीवन में फिर नारी जीवन न दे।

''पइयाँ परत हँव मैं चंदा सूरज के
मोला तिरिया जनम झनि दे सुआ रे
तिरिया जनम मोर अति कलपना रे
मोला तिरिया जनम झनि दे सुआ रे।।''[17]

पति वियोग से पीड़ित पत्नी की दशा का वर्णन इस प्रकार हुआ है-

''पहिली गवन के डेहरी पइठारे,
रे सुअना छोड़ चल दिये व्यापार
काखर संग रहिहंव काखर संग खेलिहंव
रे सुअना काला देख रहवं मन बांध।।''[18]

ददरिया गीतों में नारी वेदना– ददरिया गीत को छत्तीसगढ़ का प्रणय गीत भी कहा जाता हैं। इनमें कहीं प्रेम का उन्माद होता है तो कहीं वियोग की पीड़ा होती हैं। खेतों खलिहानों में, आषाढ़ की वर्षा में, सावन भादों में, कभी खेतो की निंदाई, कभी बुवाई और कभी कटाई करते हुए सहृदय ग्रामीण इन गीतों को गाकर श्रम का परिहार करते हैं। नायिका नायक के बाट जोहते-जोहते उदास होकर कहती हैं-

''फुटहा हे मंदिर कलस नइंये।
चार दिन के अवइया, दरस नइंये।।''[19]

कभी विरह व्यथित नायिका को रोटी पकाते समय उसके पति का स्मरण आ जाता हैं तब वह भावी कल्पना करती हैं कि जब मैं रोटी पकाती रहूँगी तो उस समय मैं अपने पति को समीप में बैठाकर देखते रहूँगी और आनन्द प्राप्त करुँगी।

''तवा म रोटी सेंकत रहतेंव।
तोला तीर मा बइठार के देखत रहितेंव।।''[20]

करमा गीतों में नारी भावना– करमा नृत्य-गीत है। इन गीतों में प्रेम भावना के संयोग एवं वियोग दोनो दशाओं का हृदयग्राही चित्रण होता हैं। नारी पति वियोग से दुखित होकर पुकार उठती हैं-

''चोला रोवत हे राम बिन देखे परान।
दादर-झावर झोढ़ी ढूढ़ो डोंगर बीच मंझाय।
सब पतरेन तोला ढूढ़ो, कहाँ लुके हे जाय।
चोला रोवत हे राम-----------।''[21]

गौरी–गौरा गीतों में नारी भावना– यह गीत दीपावली पर्व के अवसर पर गाया जाता हैं। गौरा (महादेव) गौरी (पार्वती) की प्रतिमा बनाकर गौरा चौरा में स्थापित किया जाता है। इस अवसर नारियाँ धार्मिक भावना से ओत-प्रोत होकर गौरा-गौरी गीत गाती हैं-

''एक पतरी रैनी झैनी
राय रतन दुर्गा देवी
तोर शीतल छाँव माय
जागो गौरी जागो गौरा
जागो शहर के लोग।।''[22]

अतः कहा जा सकता हैं कि छत्तीसगढ़ी लोक गीतो में नारी के समस्त मनोभावों का मार्मिक, कारुणिक व वास्तविक चित्रण हुआ है। कहीं नारी जीवन की हास-परिहास व व्यथा-कथा हैं तो कहीं अन्तर्मन की विरह दशा हैं तो कहीं पुनर्मिलन की आशा है।

===============

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची–

1. साहू, डॉ.बी.एल, छत्तीसगढ़ी भाषा और साहित्य, भावना प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण(सन 2003, पृ.-98-99
2. अग्रवाल, डॉ. अनसूया, छत्तीसगढ़ लोक साहित्यः अर्थ और व्याप्ति,शताक्षी प्रकाशन रायपुर, संस्करण-2011, पृ.-39
3. शुक्ल,डॉ.दयाशंकर,छत्तीसगढ़ लोक साहित्य का अध्ययन, वैभव प्रकाशन रायपुर, (छ.ग) द्वितीय संस्करण 2011, पृ.-140
4. वही,पृ-198

5. नायडु, डॉ. हनुमंत, छत्तीसगढ़ी लोक गीत, विश्व भारती प्रकाशन नागपुर, संस्करण, 2011, पृ.-17
6. शुक्ल, डॉ. दयाशंकर, छत्तीसगढ़ लोक साहित्य का अध्ययन, वैभव प्रकाशन रायपुर, (छ.ग) द्वितीय संस्करण 2011, पृ. -154
7. वही, पृ. -154
8. लहरे, डॉ.एन.के.,शास. लाल चक्रधर महा.अंबागढ़ चौकी में 3 व 4 दिस. 2012 को आयोजित शोध संगोष्ठी में प्रकाशित कृति, पृ.-26
9. शुक्ल, डॉ. दयाशंकर, छत्तीसगढ़ लोक साहित्य का अध्ययन, वैभव प्रकाशन रायपुर, (छ.ग) द्वितीय संस्करण 2011, पृ. -164
10. साहू, डॉ.बी.एल, छत्तीसगढ़ी भाषा और साहित्य, भावना प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण(सन 2003, पृ.-111
11. वही पृ.-111,112
12. वही पृ.-112
13. शुक्ल, डॉ. दयाशंकर, छत्तीसगढ़ लोक साहित्य का अध्ययन, वैभव प्रकाशन रायपुर, (छ.ग) द्वितीय संस्करण 201, पृ.-93
14. कसार, सं. जमुना प्रसाद, छत्तीसगढ़ी गीत, लोक कंठ का कलकल निनाद, श्री प्रकाशन आदर्श नगर दुर्ग (छ. ग.) पृ. -182
15. वही पृ.-182
16. वही, पृ.-184
17. शुक्ल, डॉ. दयाशंकर, छत्तीसगढ़ लोक साहित्य का अध्ययन, वैभव प्रकाशन रायपुर, (छ.ग) द्वितीय संस्करण 2011, पृ.-175
18. कसार, सं. जमुना प्रसाद छत्तीसगढी गीत, लोक कंठ का कलकल निनाद, श्री प्रकाशन आदर्श नगर दुर्ग (छ. ग.) पृ.-59
19. शर्मा,डॉं. निरूपमा,छत्तीसगढ़ का ददरिया,छत्तीसगढ़ महिला साहित्य कला एवं विकास परिषद् निरूपमजगन्नाथ रायपुर, प्रथम संस्करण, पृ.-54
20. वही, भूमिका से
21. शुक्ल, डॉ. दयाशंकर, छत्तीसगढ़ लोक साहित्य का अध्ययन, वैभव प्रकाशन रायपुर, (छ.ग) द्वितीय संस्करण 2011, पृ.-211
22. वही, पृ.-193

Research Journal of Arts, Management and Social Sciences,
Vol. XVIII, Hindi.-I, Year IX, March, 2018
UGC Sl. No. 2138, Journal No.48774, Impact Factor 2.996

नारी सशक्तीकरण के विशेष संदर्भ में नागार्जुन के उपन्यासों का अध्ययन

** इन्दिरा कुमारी

सारांश- *हिन्दी साहित्य के इतिहास में उपन्यासकार नागार्जुन का अप्रतिम स्थान है। अपने उपन्यासों के माध्यम से नागार्जुन ने प्रगतिशील चेतना को प्रतिबिम्बित करते हुए प्रेमचंदीय परम्परा को अक्षुण्ण बनाए रखा। उनके उपन्यासों में नारी अस्मिता, आधी आबादी के सशक्तीकरण और उसकी स्वाधीनता के प्रखर स्वर मिलते हैं।*

नागार्जुन, सामाजिक सरोकारों को केन्द्र में रखकर साहित्य सृजन करने वाले रचनाकारों में से हैं। हिन्दी उपन्यास में जनोन्मुखी रचनाधर्मिता की जो परम्परा प्रेमचन्द से प्रारम्भ हुई थी उसे पुष्ट करने वाले रचनाकारों में नागार्जुन का नाम भी प्रमुखता से लिया जाता है।

'रतिनाथ की चाची' से प्रारम्भ कर उन्होंने कुल तेरह उपन्यासों की रचना की। सभी रचनाओं में समाज में व्याप्त विभिन्न प्रकार की वंचनाओं को प्रमुखता से चित्रित किया गया है। समस्यामूलक रचनाओं में रचनाकार सामान्यतः समस्याओं को केन्द्र में रखते हैं और पात्रों को समस्या निरूपण के माध्यम के तौर पर ही प्रस्तुत किया जाता है। किन्तु नागार्जुन ने अपने पात्रों को सिर्फ समस्या निरूपण के माध्यम के रूप में ही प्रस्तुत नहीं किया है, अपितु उनकी रचनाओं में समस्याओं और पात्रों की निजता दोनों को ही प्रमुखता मिली है। सभी रचनाओं में व्यक्ति और समाज दोनों ही प्रमुखता से साथ-साथ कथानक को गति देते चलते हैं। नागार्जुन के उपन्यासों के संदर्भ में बात अगर नारी पात्रों की हो तो सर्वप्रथम चर्चा 'रतिनाथ की चाची' की होगी। विधवा, अकेली और आर्थिक विपन्नता से ग्रस्त होने के बावजूद गौरी (रतिनाथ की चाची) किसी खास सहानुभूति के बल पर नहीं, अपितु उत्कट जिजीविषा के बल पर जीवन यापन करती दिखाई पड़ती है। देवर के साथ बनने वाले शारीरिक संबंध के फलस्वरूप ठहरे गर्भ से उपजी प्रतिकूल परिस्थितियों में थोड़ा विचलित होकर भी

''चाची ने अपने को और कड़ा कर लिया कोई भी हो घबराना नहीं चाहिए। बदनामी तो फैल ही गयी, अब और इससे अधिक क्या होगा?''[1]

दूसरी ओर उपर्युक्त परिस्थितियों के जनक अपने देवर जयनाथ की अकर्मण्यता, लापरवाही एवं दायित्व हीनता के संबंध में सोचकर चाची को सारी पुरूष जाति पर घृणा हो गयी- ''इस मुसीबत का सामना जिसे करना चाहिए वह कहीं यों बाबा वैद्यनाथ और काशी विश्वनाथ के इर्द-गिर्द गाल बजाता फिरे, छि''[2]

* सहायक प्राध्यापक, एल.पी.शाही डिग्री महाविद्यालय, मुजफरपुर (बिहार)

परिस्थितियों के वशीभूत रतिनाथ की चाची (गौरी) तो थोड़ी दुर्बल प्रतीत होती है, किन्तु, गौरी की माँ को उपन्यासकार ने पर्याप्त सशक्त बताया है-

''गौरी की माँ समाज के लिए बाघिन थी। इतना बड़ा कुकाण्ड हो जाने पर भी तरकुल्लवा में किसी ने गौरी की माँ को खुल्लम खुल्ला कहा नहीं। गर्भ गिराने के ठीक ग्यारहवें दिन उसने सत्यनारायण की पूजा की। गांव भर को आमंत्रित किया था। पाँच-छः ही थे जो नहीं आए''[3]

ऐसा नहीं कि आर्थिक एवं सामाजिक दृष्टि से प्रश्रय प्राप्त होने के कारण गौरी की माँ ही इतनी सशक्त थी। आर्थिक एवं सामाजिक दृष्टि से वंचित समाज में भी नारी अस्मिता की पहचान नागार्जुन ने अपने उपन्यास में कर लिया-

''मिट्टी तेल लेकर माँ जब उनके पास पहुँची तो उस बेचारी की पीठ पर उन्होंने कसकर चार लात जमाई। मेरी माँ रोई नहीं ऐंचकर रह गयी।...........आँगन को सूना पाकर मालिक ने पीछे उसे पानी भरने की रस्सी से हाथ-पीठ कसकर पलंग से बांध दिया। अब वह फूट-फूटकर रोने लगी तो मालिक ने गुर्राकर कहा-बोल साली, अपनी बेटी को यहाँ ले आएगी कि नहीं, बोल!

वह बेचारी क्या जवाब देती, अपनी जान के डर से लोग क्या नहीं कर जाते हैं, मगर मेरी माँ दिलेर थी। हमारी दादी की तरह बात-बात में दाँत निपोरना उसने नहीं सीखा था। तबीयत की झगडालू नहीं होने पर भी अपनी आन-बान की वह बहुत पक्की थी।

''उस रोज वैसी हालत में भी मालिक हमारी माँ से किसी तरह का वचन न ले सके। हाय गोसैयाँ करके हमारी माँ ने सारा दरद, सारी पीर निकाली, घड़ों आँसू बहाए फिर भी उस बहादुर औरत ने इस शर्त पर मालिक की कैद से छूटना न चाहा कि रेवनी को हमारे पास लाना होगा।''[4]

विधि का विधान मानकर स्वयं विषपान कर भी पुरूषों को अमृत पान कराने वाली नागार्जुन की कथा नायिका 'नई पौध' की विसेसरी के रूप में भिन्न मनःस्थिति दर्शाती है-

''बिसेसरी बेखबर नहीं थी। उसे अच्छी तरह मालूम था कि नाना आज रात एक कसाई को ला रहे हैं, धूमधाम से अपनी नतनी का जिबह कराएंगे........जब से बूढ़े दुल्हे की बात सुनी है, तब से उसकी कलेजी भुन रही है। अब तक अपनी बैचेनी को जब्त किए हुए थी, इसके बाद धीरज ने जवाब दे दिया।''[5]

'रतिनाथ की चाची', 'बलचनमा' एवं 'नई पौध' के बाद के उपन्यासों में कथापात्र सामाजिक स्थापनाओं, वर्जनाओं एवं बनी बनायी राह पर चुपचाप चलने के आग्रह के बजाए अपने दृष्टिकोण को वरीयता देते दिखाई पड़ते हैं। 'वरूण के बेटे' की कथा नायिका तो पति को छोड़ किसी अन्य से विवाह अथवा एकल जीवन जीने तक की बात सोच डालती है-

''उसके दिमाग में एक युवक मछुए का डरपोक चेहरा नाच उठा...........अपने बौड़म पति का प्रभावहीन मुखडा। ....कुसुम कक्कड़ का दीप्त मुखमण्डल याद आया। लात मारो सालों को उसने कहा था। ....मनुहार से गीली मंगल की आँखे। गिड़गिड़ाता हुआ चिल्लाई.....................नहीं अब वह कभी उस नशाखोर बुड्ढे की लात-बात बर्दास्त करने नहीं जाएगी....................फिर से शादी कर लेगी किसी दिलेर नेकचलन और मेहनतकश जवान से.....................और बगैर मर्द के कोई औरत अकेली

जिंदगी नहीं गुजार सकती है क्या?''[6]

नागार्जुन के उपन्यासों में नारी पात्र ईमान और चारित्रिक दृढ़ता का परिचय देते हुए सामुदायिक चेतना एवं दायित्व बोध से भी ओतप्रोत दिखती है- ''.................दुहाई मालिक की। दुहाई सरकार की। यह अनाज वापस रख लीजिए। यह मामूली गेहूँ नहीं है कि आसानी से हजम होगा। धरम का अनाज है मालिक। अब इस वक्त मैं झूठ कैसे कहूँ कि हमारे घर में कुछ नहीं है। पच्चीस रूपया है हाथ पर, दो-पौने दो मन गेहूँ हुआ सरकार। तो झूठ-मूठ मैं कैसे कहूँ कि छटाँक भर भी दाना नहीं है घर में।''[7]

निम्नवर्गीय जीवन से ताल्लुक रखने वाली यह स्त्री पूर्ण रूपेण आत्मत्याग से परिचालित न होते हुए भी स्थापित सामाजिक एवं राजनैतिक व्यवस्था में एक आदर्श तलाश ही लेती है। तलाश की यह प्रक्रिया अन्तर्जगत और बाह्यजगत दोनों में ही स्पष्ट तौर पर देखी जा सकती है। औपन्यासिक कथा क्रम में ऐसी नारी पात्र जिस जगह की तलाश में हैं, वे परिवार में भी हैं, समाज में भी और राजनैतिक पहचान वाली अस्मिता में भी-

''संबोधन में कई लोगों से कई बार मधुरी-मधुरी सुनकर साहब ने मधुरी से कहा मोहन माँझी ने आखिर तुम्हें भी कम्युनिज्म का पाठ पढ़ा ही दिया।..................

अच्छा तो है।................राजनीति ही तो एक चीज थी जिसे गाँवों की हमारी बहु-बेटियों ने अब तक अपने पास फटकने नहीं दिया था, लेकिन तुम तो देखता हूँ..... ....प्लीज एक्सक्यूज मी.....................अपनी टूटी-फूटी हिन्दी में लेकिन ओज-भरे ढंग से मधुरी ने जवाब दिया तो इसमें हर्ज क्या है हजूर। जिन्दगी और जहान औरतों के लिए नहीं है क्या?''[8]

नागार्जुन की औपन्यासिक कृतियों का रचनाकाल सामान्यतया उन्नीसवीं सदी के चौथे दशक से आठवे दशक के बीच का है जिसमें स्त्रियों की अस्मिता से जुड़ा प्रश्न अनिवार्यतः परिवार से जुड़ा प्रश्न भी होता था। इन प्रश्नों में परिवार में स्त्रियों की वास्तविक स्थिति से लेकर उनके ब्याह, बेमेल विवाह एवं वैधव्य से उपजे दारूण दुख, बिकौआ विवाह और पुरूषों की घोर अकर्मण्यता से जुड़ी उनकी व्यथा-कथा मार्मिक लगती है-

''क्वाँरियों के लिए शादी एक तरह की वैतरणी है। डर केवल इसी किनारे है, प्राण की रक्षा उस पार जाने से ही संभव है। वही तो, पाये अब भुतही नदी पार कर चुकी है। ठीक ही तो कहा अपर्णा ने। मैं क्या औरत हूँ, समय पर शादी की चिंता तो औरतों के लिए न की जाए, पुरूष के लिए क्या? उसके लिए तो शादी न हुई होली और दीपावली हो गई।''[9]

प्रचलित व्यवस्था के प्रति आक्रोश स्पष्ट दिखता है। हालांकि, नागार्जुन अपनी दूसरी औपन्यासिक कृति में ही बेमेल विवाह एवं उससे उपजी सामाजिक विद्रुपताओं को प्रगतिशील चेतना का एक प्रमुख प्रश्न बना देते हैं। गाँवों में ही जवान नई चेतना के साथ संगठित होकर व्याप्त बुराईयों के खिलाफ सक्रिय होते हैं- ''बिसेसरी उस गँवई 'बमपाटी' की अनियमित सदस्या थी, पिछले छः महीने से। वे एक-दूसरे की दिक्कतों से पूर्ण परिचित थे। खेल-मनोरंजन, सोच-विचार, सुख-दुःख...........कभी-कभी नाश्ता-पानी भी बहुत सी बातों में वे परस्पर आत्मीय बन चुके थे। आज दुपहर तक माहे और दिगम्बर भाभी के पास बैठे थे, यह तय करके ही उठे थे कि बिसेसरी का ब्याह उस बूढ़े से कदापि न होने

देंगे। बिसेसरी गो कि पहले ही वहाँ से उठ आई थी मगर मन उसका अच्छी तरह मान गया था कि मेर गला ये लोग नहीं कटने देंगे।''[10]

यहाँ यह देखना सर्वाधिक रोचक है कि अंततः बिसेसरी की शादी बूढ़े चौधरी साहब से नहीं होने देने में 'बमपाटी' कामयाब हो जाती है। नारी की अस्मिता के प्रति बढ़ती हुई यह चेतना एवं आधुनिकता न सिर्फ पाठकीय संतोष का भाव उत्पन्न करती है, अपितु लेखकीय प्रगतिशीलता की निरन्तरता की अनिवार्य धारा का निर्वहन भी करती दिखती है। प्रगतिशीलता की यह निरन्तरता न सिर्फ परिस्थितियों के अंकन आरेखन तक सीमित रहती है, अपितु बेमेल विवाह एवं वैधव्य से उपजी सामाजिक विद्रुपताओं के समाधान के रूप में पुनर्विवाह का विकल्प भी प्रस्तुत करती है।

नागार्जुन के उपन्यासों में ऐसे कई विकल्पों वाले पात्र हैं। 'नई पौध' की 'माहे की भाभी' और 'बिसेसरी' 'पारो' की 'पारो उर्फ पार्वती', 'बलचनमा' की 'बलचनमा की माँ', 'वरूण के बेटे' की 'माधुरी', 'कुम्भीपाक' की 'निर्मला' और 'चम्पा', 'उग्रतारा' की 'नर्मदेश्वर की भाभी' और 'जमनिया का बाबा' की 'इमरितिया' जैसे पात्र परम्परा से सम्बद्ध होते हुए भी परम्परा को गले में पत्थर की तरह नहीं लटकने देते। 'उग्रतारा' की भाभी की दिलेरी और उनके कार्य नये खून वालों को जोश दिलाते हैं। नारी समाज में भाभी के कार्य क्रांतिकारी एवं समाज पर किए जाने वाले उपकार के रूप में देखे जाते थे- ''................वस्तुतः भाभी के उपकार आधा दर्जन से क्या कम होंगे। उगनी के मन से ग्लानि को धो-पोंछकर साफ कर देना क्या मामूली उपकार था? माँ को समझा-बुझाकर लड़की को दूसरी शादी के लिए तैयार करना क्या मामूली उपकार था? पुरानी पीढ़ी की महिलाओं के संयुक्त मोर्चे में दरार डालना क्या मामूली उपकार था?..........'' स्वप्नदर्शी, भावुक किशोर मन को संकल्पशील दृढ़ युवक मन में बदल देना क्या मामूली उपकार था?[11]

नई पीढ़ी में आधुनिकता की चेतना एक स्वाभाविक प्रक्रिया है। यह राष्ट्रीय संघर्ष और उसके बाद की पीढ़ी में सामान्य तौर पर देखी जाती है। हर नयी पीढ़ी अपनी पुरानी पीढ़ी की अपेक्षा परम्परागत बंधन को तोड़ने की दिशा में एक कदम आगे दिखाई पड़ती है। नागार्जुन के उपन्यासों में भी यह स्थिति साफ-साफ दिखाई पड़ती है। किन्तु अस्मिता के प्रश्न को परे रखकर भी जीवन को अपनी शर्तों पर जी लेने की उत्कटता का अद्‌भुत रूप नागार्जुन के पात्रों में देखने को मिल जाता है।

नारी सशक्तिकरण के विभिन्न तत्वों में एक महत्वपूर्ण तत्व है आर्थिक स्वावलम्बन। प्रकारान्तर से कहें तो गृहस्थी की गाड़ी को खींचने में नारी का आर्थिक योगदान परिवार और समाज में आधी आबादी की स्थिति में निरन्तर सुधार का कारक बनता है। साठ के दशक के आरंभिक वर्षो में ही एक नारी पात्र भावी संभावनाओं को इस तरह अभिव्यक्त करती है- ''देहात या शहर में मजदूर लोग अपनी औरतों को बहुत आजादी देते हैं। गिरस्ती की गाड़ी को मर्द-औरत इस वर्ग में बराबर-बराबर खींचते हैं। वह हल चलाता है तो यह ठेला फोड़ती है। वह दीवार.............यह ईंट ढ़ोती है। आश्रम के मेहतर का कहीं पैर कट गया, दो महीने काम पर नहीं आया। मैने मेहतरानी से पूछा, कैस चलाती हो? झाडू दिखलाकर ठसक भी आवाज में बोली यही मर्द है मेरा, अपने बच्चों को मैं इसी की कमाई खिलाती हूँ बहिनजी। वो साल भर भी बिस्तर पकड़े रहेगा तो भी हाय-हाय नहीं मचाऊँगी.

.... राय साहब ने उल्लसित होकर कहा, ''बस, बस यही आत्मविश्वास मैं स्त्रियों में देखना चाहता हूँ चंपा।............हम बड़ी जात वालों ने महिलाओं को पंगु बना रखा है. ....कॉलेज से निकलते ही लड़कियाँ बहू बन जाए और लेटी-बैठी सारा दिन उपन्यास पढ़ती रहे, रेड़ियो सुनती रहे, तो यह आत्मविश्वास कहाँ से आएगा?''
जाहिर है, यह आत्मविश्वास आर्थिक स्वावलम्बन से ही उपजा है।

''चम्पा बोली, पहले तो खैर स्त्रियों को इतनी भी आजादी नहीं थी, रामायण...... ....की बात नहीं लेती हूँ। आगे उद्योग-धंधे बढ़ेंगे, खेती बढ़ेगी, जहालत और गरीबी हटेगी, साधारण जनता का जीवन सुखमय होगा.................तब स्त्रियाँ भी इस दुर्दशा से छुटकारा पायेगी, नहीं चाचा?

चम्पा की यही कामना वस्तुतः नागार्जुन के सभी नारी पात्रों का अभीष्ट है। तभी तो ये सभी परम्परा और परिस्थितियों से उपजे संघर्षों और तनावों के बावजूद सपनों को जिन्दा रखे हुए आगे बढ़ती हैं। कहते हैं कि सबसे खतरनाक होता है हमारे सपनों का मर जाना और नागार्जुन के पात्र चरम अवसाद के क्षणों में भी सपने को नहीं छोड़ते।

इस प्रकार स्पष्ट है कि अपनी पहली औपन्यासिक कृति से ही नागार्जुन के नारी पात्र नारी की अस्मिता के मूलभूत प्रश्नों एवं उसकी आधुनिकता के रास्ते दोनों ही को साथ लेकर चलते हैं। आधुनिकता की यह राह कदम-दर-कदम नारी स्वतंत्रता की ओर बढ़ती है जो कहीं-कहीं स्वच्छंदता की सीमा तक जाती दिखाई पड़ती है। उन्नीसवीं सदी के छठे दशक में प्रकाशित उपन्यास 'कुम्भीपाक' तक आकर यह स्वच्छंदता चम्पा के रूप में मुखर हो उठती है।

स्त्री विमर्श के विस्तृत दस्तावेज के रूप में प्रस्तुत 'कुम्भीपाक' एवं 'उग्रतारा' जैसी रचनाओं में नारी सशक्तिकरण के महत्वपूर्ण तत्व आत्मसम्मान, आत्मनिर्भरता और उससे उपजा आत्मविश्वास स्पष्ट दिखाई पड़ने लगते हैं। चम्पा और प्रकारान्तर से उपन्यासकार को वर्ष 1960 में ही यह विश्वास हो चलता है कि खेती-बाड़ी और उद्योग-धन्धों के विकास के साथ गरीबी हटेगी और स्त्रियाँ अपनी दुर्दशा से छुटकारा पाएगी। चम्पा के इस विश्वास से राय साहब जैसे परम्परावादी पात्र भी सहमति जताते हैं।

''अवश्य पाऐंगी छुटकारा...............बल्कि यों कहो कि आज भी स्त्रियों को साथ लिए बिना हम आगे नहीं बढ़ेंगे। ....अब यह सब नहीं चलेगा चम्पा।''

राय साहब जैसे परम्परागत प्रतिनिधि पात्र की यह स्वीकारोक्ति वस्तुतः उस यथार्थ की स्वीकृति है जिसे प्राप्त करने और पुरूष प्रधान समाज में उसे मान्यता दिलाने हेतु आधी आबादी ने परिवार, समाज और राष्ट्र के स्तर पर भी वर्षो संघर्ष किया। यह स्वीकारोक्ति इस सत्य की भी स्वीकृति है कि एक सशक्त महिला राष्ट्र के लिए सम्पदा होती है और वह परिवार और समाज की समृद्धि में पर्याप्त सहयोग करती है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि नागार्जुन के उपन्यास अस्मिता और सशक्तिकरण के लिए आधी आबादी के क्रमिक एवं निरन्तर संघर्ष के दस्तावेज हैं। ये उपन्यास और इनके नारी पात्र इस दृष्टि से भी विशिष्ट हैं कि महिला सशक्तीकरण के वे सभी तत्व जो बीसवीं सदी के अंतिम एवं इक्कीसवीं सदी के आरम्भिक वर्षो में प्रकाशित रचनाओं में दिखाई पड़ते हैं, बीसवीं सदी के पांचवे और छठे दशक में रचित एवं प्रकाशित इन रचनाओं में ही विविधता एवं प्रचुरता में मिल जाते हैं। इनका साहित्यिक विधा की अमूल्य निधि के रूप

में तो महत्व है ही, समकालीन सामाजिक-आर्थिक इतिहास के अध्ययन की दृष्टि से भी ये पर्याप्त महत्वपूर्ण हैं।

निष्कर्ष-

1. नागार्जुन के उपन्यासों में नारी सशक्तिकरण के अतिशय महत्वपूर्ण आयाम मिलते हैं।
2. इनके उपन्यास नारी विमर्श हेतु महत्वपूर्ण दस्तावेज हैं।
3. नागार्जुन के उपन्यास नारी अस्मिता के जीवन्त अभिलेख हैं।

===============

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची-

1. नागार्जुन रचनावली भाग-4-रतिनाथ की चाची, पृ0 17, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली
2. नागार्जुन रचनावली भाग-4-रतिनाथ की चाची, पृ0 13, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली
3. नागार्जुन रचनावली भाग-4-रतिनाथ की चाची, पृ0 49-50, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली
4. नागार्जुन रचनावली भाग-4-'बलचनमा', पृ0 173-174, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली
5. नागार्जुन रचनावली भाग-4 'नई पौध', पृ0 267 राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली
6. नागार्जुन रचनावली भाग-4 'वरूण के बेटे', पृ0 518, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली
7. नागार्जुन रचनावली भाग-5 'दुःखमोचन', पृ0 42, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली
8. नागार्जुन रचनावली भाग-4 'वरूण के बेटे', पृ0 521, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली
9. नागार्जुन रचनावली भाग-4 'पारो', पृ0 543, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली
10. नागार्जुन रचनावली भाग-4 'नई पौध', पृ0 274, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली
11. नागार्जुन रचनावली भाग-5 'उग्र तारा', पृ0 317-318, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली

Research Journal of Arts, Management and Social Sciences,
Vol. XVIII, Hindi.-I, Year IX, March, 2018
UGC Sl. No. 2138, Journal No.48774, Impact Factor 2.996

परम प्रकाश ने बुलाया

* प्रज्ञा मिश्रा

अत्याचार, अपराध, अंधाधुन्द
ऑंधी और अंधकार।
दर्द देना दानवों का कुत्सित
कदाचार और भ्रष्टाचार।।
स्वाभिमान को कुचल कर
झुलसती आग में झोंक कर।
इंसान के कृतिकार्य को फाड़कर
झाड़कर, झटकार कर
फूँककर, फुहारे में भिगाकर,
बहाकर, ज्ञान के गौरव को
कुचल कर गर्त में डालकर।।
चक्रव्यूह में फंसाकर
प्रह्लाद को बिठाकर
बुआ कुटिल तंत्र ने छुपाकर
प्रचण्ड आग में जलाने का
षड्यन्त्र रचाकर ....

=========================

* प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष, संस्कृत विभाग, महात्मा गांधी ग्रामोदय विश्वविद्यालय, चित्रकूट

प्रतिभा रोती, छटपटाती,
तड़पती, मर जाती!
पर, परम प्रकाश आया
हृदय से लगाया
काल चक्र के क्रूर
पंजों से बचाया।।
अपने मस्तक पर लगाया
चंदा की चाँदनी बनाया।
सुकून दिलाया
चिर, चिरंतन शांति, शीतल
सरस, सघन, सांद्र,
संतुलन से सजाया।
परम प्रकाश ने बुलाया
हृदय बिन्दु बनाया।

18-19 जनवरी, 2018

अंगारों पै जां ....

किसी की चीख पै शब्दों की
चिनगारी सुलगती है।
हृदय के दाग़ देने से
ज्वाला सी सुलगती है।।
किसी के आँसुओं का आलम कि
दिल से वाह मिलती है।
चमत्कारों का ये मौसम
जां अंगारों पै बसती है।।
चलो एतवार करते हैं कि

तुम सुधरोगे पर देखो

चलो एतवार करते हैं
न सुधरोगे मगर देखो।

खराबी तुममें न रहती
तुम्हारी रग़ में बसती है।

सुधरना काया होती है
मगर छाया सुधरती है।

माया मौज़ का मतलब
ये मेरा दिल समझता है।

ये तेरा दिल नहीं समझा
जो मस्ती में ही रहता है।

जिम्मेदारी ज़माने की
गज़ब लोगों को मिलती है।

जो नैया खेने बैठे हैं
वही नैया डुबोते हैं।

किसी की चीख़ पै शब्दों की
चिनगारी सुलगती है।

हृदय के दाग देने से
ज्वाला सी सुलगती है।।

21 जनवरी 2018

भीषण भटकीयता.......काली कमनीयता

भव्यता भवनीयता भीषण भटकीयता।
भवनों की कीर्तिका काली कमनीयता।।

कौआ की कॉव-कॉव कोयल के गॉव-गॉव।
अमुआ की छॉव-छॉव मादक मदमीयता।

झूठी संगीतिका झंकीयता और प्रीतिका।।
भव्यता भवनीयता भीषण भटकीयता।
भवनों की कीर्तिका काली कमनीयता।।
कर्कशता कंस है विशुद्ध विध्वंस है।
पूरा पाखण्ड है दिखावे का मंच है।
सच्चा प्रपंच है नाटक नृशंस है।
झूठी राष्ट्रीयता गार्गीयता और नीतिका।।
भव्यता भवनीयता भीषण भटकीयता।
भवनों की कीर्तिका काली कमनीयता।।

.....21 जनवरी 2018

सच्चाई हूँ...........

वसंत पंचमी ....

चंदन हूँ, अभिनंदन हूँ,
सच्चाई का वंदन हूँ।
मेरी सच्चाई छुप न सकेगी
पाखंडी धूर्त दरिंदों से।
मानवता पर वो कलंक,
करते रहते पल-पल प्रपंच।
पहले चुनते, फिर हैं धुनते,
फिर लिखित अक्षरों को धुलते।
फिर निर्णय रोज बदलते हैं,
फिर मानवता को छलते हैं।
फिर सच्चाई के दाम लगाते,

रिश्तों को आड़े रखवाते
फिर निर्णय को बदला देते,
अच्छाई को कुचला देते।
मरवा देते, चिनवा देते,
मेरे मुख को सिलवा देते।
साँस खरीदी, साँच खरीदा,
इन्सानों का ज्ञान खरीदा।।
मानवता का मान खरीदा
एक कफ़न का दाम खरीदा।।
मानव को मानव के ख़ातिर,
रिश्तों का सम्मान खरीदा।
फिर शतरंजों के प्यादों सा,
आपस में लड़वा देते।
ऐसे अधिकारी अपराधी
अत्याचारी भ्रष्टाचारी
श्रीपुरुषों से राम बचाए
चुन-चुन कर डंडे लगवाए।
फिर सच्चाई का बाग बनाए।।
बगिया में सच को बुबवाए
और सच्चाई के फूल खिलाए।
वासंती वो रंग खिलाए
खुशियाँ चेहरे पर ले आए
वसंतपंचमी ऐसे मनवाए।
ऐसे चंदन रोज लगाए
सच्चाई का महल बनाए।
वासंती बगिया में वो
सुरदेवी का धाम बनाए।
बस, यही सच्चाई कहती है
उसकी पवित्रता बची रहे
और सत् सतीत्व कोई छू न सके।
कोई रावण इस चंदन को
वंदन को अभिनंदन
को जो छू लेगा वो जल जाए।
वो तड़प-तड़प कर मर जाए।।
मेरी सच्चाई छुप न सकेगी
पाखण्डी धूर्त दरिंदों से ......।
चंदन हूँ, अभिनंदन हूँ,
सच्चाई का वंदन हूँ।

भारत माँ का कुन्दन हूँ।

हिमजा होगी शिखर ऊँचाई

हिमजा है वह शक्तिदायनी
जिसको शिव की शक्ति प्राप्त है।
हिमजा है हिमकण सी सुन्दर
जिसको सबकी भक्ति प्राप्त है।

हिमजा हिम्मत की इच्छाई
हिमजा सागर की गहराई।
हिमजा हिमगिरि की सच्चाई
हिमजा सब जन की सुनवाई।

हिमजा लक्ष्यों की तरुणाई
लक्ष्य साधने की शिक्षाई।
हिमजा हंसमुख गुड़िया है
हिमजा ताकत की पुड़िया है।

हिमजा सब में जान फूँकती।
हिमजा हममें हुनर सिखाती।
हिमजा रत्नों में सुखदायी।
हिमजा संगीतों की शहनाई।

हिमजा हिम्मत बन मुस्काती
हिमजा होगी शिखर उँचाई
सबसे लम्बी बड़ी सिखाई।
सब शिक्षा उससे ले लेंगे।
सब उसकी संगत सीखेंगे।

सब घर-घर की खुशहाली
हर इंसानों की मुस्काई।
हिमजा है वह शक्ति दायनी
जिसको सबकी भक्ति प्राप्त है।
जिसको शिवकी शक्ति प्राप्त है।

मृगनयनी को मान दिला दो ....

हे प्रभु राम, हे प्रभु राम, तुमको शत-शत करूँ प्रणाम।
तुम मेरे मन महक मिला दो, बहकों को रस्ता दिखला दो।
हमको सच्चे काम सिखा दो, सीधा रस्ता उन्हें सुझा दो।
सुख की दुनिया सैर करा दो, दुःख सागर से दूर करा दो।
दुर्योधन को भीम बना दो, झूठों को सच पाठ पढ़ा दो।
हे प्रभु राम हे प्रभु राम, तुमको शत-शत करूँ प्रणाम।
तुम मेरे मन महक मिला दो, बहकों को रस्ता दिखला दो।
कपट नीति को दूर भगा दो, राजनीति उनको समझा दो।
राजे रजवाडे हटवा दो, कर्तव्यों की चाल सिखा दो।
चालाकों को दूर भगा दो, भारी भरकम काम करा दो।
हे प्रभु राम हे प्रभु राम, तुमको शत-शत करूँ प्रणाम।
तुम मेरे मन महक मिला दो, बहकों को रस्ता दिखला दो।
अत्याचारी को समझा दो, न समझे उसको फिकवा दो।
चोरों को चाबुक लगवा दो, नौ दो ग्यारह उन्हें करा दो।
खोज-खोज रावण जलवा दो, बीच राह में उसे मिटा दो।
हे प्रभु राम हे प्रभु राम, तुमको शत-शत करूँ प्रणाम।
तुम मेरे मन महक मिला दो, बहकों को रस्ता दिखला दो।

जंगल में मंगल मनवा दो, सबके बिछडे मीत मिला दो।
मृगनयनी को मान दिला दो, मानवता की जीत करा दो।
पूरन कर दो मेरे काम मेरे मन मंदिर भगवान्।
हे प्रभु राम हे प्रभु राम तुमको शत-शत करूँ प्रणाम।
तुम मेरे मन महक मिला दो बहकों को रस्ता दिखला दो।

....26 जनवरी 2018

अभी आजादी मिली नहीं........
अंग्रेजी ये जली नहीं.............

पूर्वजों की बात है
अपूर्व ही प्रभात है।
अकिंचन सौगात पर,
अघात ही आघात है।

लेख ये लिखा नहीं,
देख से दिखा नहीं।
रेत के ये काव्य का,
कोई किला मिला नहीं।

सिलसिला रुका नहीं,
मान ये मिला नहीं।
अभी आजादी मिली नहीं,
अंग्रेजी ये जली नहीं।

जिनके कारण भारतवासी
सब खुशियाँ कुर्बान किये।
भगतसिंह, राजगुरु, बिस्मिल
हसते जान दिये।

उन घृणित कायरों की भाषा को,
हमने क्यों ये मान दिये?
अभी आजादी मिली नहीं,
अंग्रेजी ये जली नहीं।

पत्राचारों की भाषा को,
राजतंत्र की परिभाषा को।
लिखा-पढ़ी की जन भाषा को,
हिन्दी को सम्मान मिले

सारे अक्षर धाम बने।
मलयालम, गुजराती, मराठी,
बुन्देली, अवधी, बंगाली
तमिल, तेलगू और कन्नड़,

संस्कृत, पंजाबी, राजस्थानी
हिन्दुस्तानी हर भाषा को
मान मिले, सम्मान मिले।
भारत की हर बोली

भाषा और विभाषा में
काम करो और नाम करो।
गणित ज्ञान विज्ञान को,
सारे तंत्र निदान को

सारे पत्र-प्रपत्रों को
सारे शपथ पत्रों को
सारे राज पत्रों को,
दूरभाष संभाष को

आवेदन प्रकार को
अंग्रेजी में लिखो नहीं
अभी आजादी मिली नहीं
अंग्रेजी ये जली नहीं

अंग्रेजी विद्यालय को,
कार्यालय, पुस्तकालय को
सभी दूरदर्शन वालों को,
सभी धनाड्य प्रवर्गों को,

मध्यम और न्यूनतम को,
अंग्रेजी से मुक्त करो,

अपनी भाषा युक्त करो।
अभी आजादी मिली नहीं
अंग्रेजी ये जली नहीं।
चिकित्सा वालों को,
अभियंता आचार्यों को
विश्वविद्यालय अनुदान आयोग,
जिलाधीश मुख्यालय को
सुरक्षा अधीक्षक को,
यातायात प्रतीक्षक को
महाविद्यालय वालों को,
ग्रामों और धामों को
नगर और राजधानी को,
बची सभी कहानी को
अंग्रजी से मुक्त करो,
अपनी भाषा युक्त करो
अभी आजादी मिली नहीं
अंग्रेजी ये जली नहीं।
याद करो पूर्वजों को
उनके सच्चे कर्मों को
बलिदानों उपकारों को,
जो हम पर उधार हैं,
हम पर जो सत्कार है
अपनी भाषा अपनी बोली,
गॉव-गॉव में अनमोली
बंधन अंग्रेजी का छोडो,
बच्चों को गणितज्ञ बनाओ
वैज्ञानिक अभियंता बनाओ
नेता, अभिनेता अध्यापक,
देश का सच्चा भक्त विनायक
चिकित्सक आचार्य, नियंतक
परतंत्रता को छोड़ो तुम,
अपना रास्ता मोड़ो तुम
जंजीरों को तोड़ो तुम,
आजादी को ढूंढ़ों तुम
वन्देमातरम् बोलो तुम
अंग्रेजी ये मिटी नही,
धिसी पिटी और कटी नहीं
मिट्टी में ये मिली नही,

अभी आजादी मिली नहीं,
अंग्रेजी ये जली नहीं।
आजादी को पाओ तुम,
वन्दे मातरम् गाओ तुम ....

28 जनवरी, 2018

शिवरात्रि

शिवरात्रि के पावन दिन पर
हर हर हर हर्षाया।
गौरी प्यारी गोरी तुम्हारी
गौरव गुन गुन गाया।।

शिव डमरू के डम डम डम
से ऊँकार मुस्काया।
पार्वती शिव परिणय का
रात्रि महोत्सव आया।

तुम सबके हो अन्तर्यामी
तुम सबसे हो ज्ञानी ध्यानी
पार्वती तुम्हरी महारानी
पर्वत की है हिम हिय रानी

सबसे प्यारी छबि उनकी है
सबसे न्यारी कृति उनकी है
तुम दोनों श्रमसाध्य सभी के
तुम दोनों संभाष सभी के

तुम रिश्तों में जान फूँकते

तुम से सब हैं राह पूछते
तुम सबके मस्तक पर रहते।
हिय में बसते जिय को कसते
राम नाम तुमको अति प्यारा
दीन दु:खी सबसे है प्यारा
शिव रात्रि के पावन दिन
पर हर हर हर हर्षाया
गौरी प्यारी गोरी तुम्हारी
गौरव गुन गुन गाया।
गौरी को तुम मान हो देते
स्वामिनि का सम्मान हो देते
गौरी शक्ति तुम्हारी है
भोली भक्ति हमारी है।
सारी अच्छाई तुममें है
कोरी सच्चाई तुममें है।
कष्टों को तुम दूर भगाते
मेरा मन मजबूत बनाते
प्रेम प्रीति सबको सिखलाते
नारी जन आधार बताते
नारी को सम्मान दिलाते
यही पाठ सबको समझाते
शिवरात्रि के पावन दिन
पर हर हर हर हर्षाया।
गौरी प्यारी गोरी तुम्हारी
गौरव गुन गुन गाया।।
शक्ति बिन शिव रिक्त रहेगा
भक्ति से न सिक्त रहेगा।
अतः शक्ति को साथ रखो
घर-घर में सौहार्द्र रखो
सत्कर्मों का दास बनो।
दुर्जन का संत्रास बनो।
सत्कर्मों के कर्मो से
भूमण्डल पर राज करो।
पति-पत्नी में प्रेम रहे
अधिकार रहे, सम्मान रहे
यही शिवरात्रि कहती है
यही भक्ति भव तरती है।
शिव रात्रि के पावन दिन

पर हर हर हर हर्षाया।
गौरी प्यारी गोरी तुम्हारी
गौरव गुन गन गाया।।

मैया मुझको ज्ञान दिला दो

मैया मुझको ज्ञान दिला दो
विद्या का सम्मान दिला दो।

अच्छी-अच्छी बात सिखा दो।
सत्कृत्यों से प्रीति बढ़ा दो।
मैया मुझको ज्ञान दिला दो
विद्या का सम्मान दिला दो।
मैया तू है भोली-भाली
भक्तों की करती रखवाली
भक्तों को भगवान् दिला दो

मैया मुझको ज्ञान दिला दो
विद्या का सम्मान दिला दो।

मैया तुम हो धवल धारणी
श्वेताम्बरी वीणा वरदायनीं
मैया मुझको ज्ञान दिला दो
विद्या का सम्मान दिला दो।
मैया मैल मिटा दो मेरा
मेरे मधुवन को महका दो
ममता मानवता सिखला दो

मैया मुझको ज्ञान दिला दो
विद्या का सम्मान दिला दो।

होली

हू तू तू हू तू तू होली हो गई।
हंगामा-हंगामा हम से कर गई।।

रंगों की रास रात दिन कर गई।
रानी के राजा की पगड़ी रंग गई।।
हू तू तू हू तू तू होली हो गई।
हंगामा-हंगामा हम से कर गई।।

चंदा की चाँदी चमकचम चढ़ गई।
सूरज की लाली चुनरिया रंग गई।।
हू तू तू हू तू तू होली हो गई।
हंगामा-हंगामा हम से कर गई।।

कान्हा को राधा सलोनी लग गई ।
माखन सी गोरी श्याम रंग रंग गई।।
हू तू तू हू तू तू होली हो गई।
हंगामा-हंगामा हम से कर गई।।

**

* सभी कवितायें डॉ. प्रज्ञा मिश्रा, प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष संस्कृत विभाग, की मौलिक रचनायें हैं।

ISSN 0975-4083

JOURNAL OF
Centre for Research Studies
Rewa-486001 (M.P.) India

Registered under M.P. Society Registration Act,
1973, Reg. No. 1802,Year-1997
www.researchjournal.in

Editor : Prof. Braj Gopal, Publisher - Gayatri Publications, Rewa (M.P.)